भारत के प्रमुख
पर्यटन उत्पाद
मनोज दीक्षित
निशीथ राय

प्राकृतिक छटायें, नयनाभिराम दृश्यावली, अक्षत नैसर्गिक सौन्दर्य, प्राचीन महल, किले एवं भवन एवं ऐसे ही अनेक ऐसी वस्तुऐं वे अवसर प्रदान करती हैं जिससे एक जिज्ञासु पर्यटक अपनी पिपासा को शान्त कर सकता है। परन्तु ये सब स्वतः ही पर्यटन उत्पाद नहीं कहे जा सकते। पर्यटन की दृष्टि से ये सब आकर्षण मात्र हैं। जब तक पर्यटन के दो अन्य अवयव-पहुँच (accessibility) एवं आवासन (accommodation) भी उपलब्ध न हों इसे 'पर्यटन उत्पाद' की संरचना की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

भारत के प्रमुख पर्यटन उत्पादों पर उपलब्ध साहित्य में अनेकों मतभेद हैं। प्रस्तुत पुस्तक में भारत के उन सभी पर्यटन उत्पादों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है जिन्हें आधुनिक पर्यटन व्यवसाय में महत्वपूर्ण माना गया है। साथ ही, इस पुस्तक में पारम्परिक उत्पादों को ही स्थान नहीं दिया गया है, यथा-ज्योतिर्लिंग, जनजातीय नृत्य, भोज्य पदार्थ आदि वरन् पुस्तक में उन आधुनिक उत्पादों का भी विस्तृत वर्णन किया गया है जिन्हें पर्यटन उत्पाद की पुस्तकों में समुचित स्थान नहीं मिला है-जैसे संगोष्ठी एवं सम्मेलन।

इस पुस्तक को हिन्दी भाषा में इसलिये रचित किया गया है कि इससे पर्यटन साहित्य उन लोगों तक पहुँच सके जिन तक यह अब तक नहीं पहुँचा है। उत्तर प्रदेश से प्रकाशित होने के कारण इस पुस्तक में उत्तर प्रदेश पर एक अध्याय अलग से भी जोड़ा गया है।

भारत के प्रमुख

पर्यटन उत्पाद

लेखक

मनोज दीक्षित निशीथ राय

न्यू रॉयल बुक कम्पनी
लखनऊ

संस्करण : 2002

प्रकाशक
न्यू रॉयल बुक कम्पनी
प्रथम तल, शाह बिजनेस सेन्टर
32/16, बाल्मीकी मार्ग, लालबाग
लखनऊ-226 001 ☎:285607

आई. एस. बी. एन. - 81-85936-31-5

मूल्य - 595/ रुपये

टाईपसैट
आर्क-टेक कम्प्यूटर्स
से०-आई, जानकीपुरम्, लखनऊ
दूरभाष : 365244

मुद्रक :
नार्दर्न आफसेट प्रेस,
राजाजीपुरम्, लखनऊ।
फोन : 419790, 240858

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

अध्याय-1

पर्यटन उत्पाद
(Tourism Products)

पर्यटन एक जटिल विषय है। वस्तुतः इसे एक विषय मात्र न कहकर कई विषयों एवं संबंधों का एक संगम कहा जाना चाहिए। यह विषय एवं उनके संबंध, लोगों द्वारा विभिन्न गंतव्य स्थानों पर गमनागमन और उनके इन स्थानों पर आवास से उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार, पूर्व स्थिति में एक गतिशील तत्व- अर्थात यात्रा, और बाद की स्थिति में एक स्थाई तत्व- अर्थात आवास विद्यमान हैं। पर्यटन एक भिन्न प्रकार की गतिविधि है क्योंकि पर्यटकों की गतिविधियां उन स्थानों की आवासीय एवं कार्यरत जनसंख्या से भिन्न होती हैं जिन स्थानों की एक पर्यटक यात्रा करता है अथवा जहां ठहरता है। इसलिए पर्यटक गतिविधियों एवं सामान्य गतिविधियों में अंतर करना आसान होता है। लोगों का आवागमन अस्थाई और प्रकृति में मात्र थोड़ी अवधि के लिए होता है। पर्यटन एक गैर-आमदनी (non remunerative) की गतिविधि है। पर्यटक विभिन्न स्थानों की यात्रा करते हैं। ऐसी यात्रा, कार्य के एवज में भुगतान प्राप्त करने के उद्देश्य से नहीं की जाती। इसमें नौकरी करने का कोई उद्देश्य नहीं होता और न ही व्यापार अथवा व्यवसाय का कोई विचार होता है।

पर्यटन एक बहुआयामी विषय है। इस प्रकार की कई और विभिन्न प्रकार की गतिविधियां होती हैं जो पर्यटकों की व्यापक सेवा हेतु पृथक एवं स्वतंत्र रूप से सहयोग करती हैं। पर्यटन गतिविधियों का एक स्पष्ट क्षेत्र नहीं होता। यद्यपि ये गतिविधियां पृथक किन्तु अंतर्निर्भर होती हैं, जिनके लिए सहकारी प्रयासों और साझा नीतियों की आवश्यकता होती है।

पर्यटन अपने आप में एक बड़ा उद्योग है जिनमें कई गतिविधियां सम्मिलित होती है; जैसे-

वायु सेवा (Airlines)
जल यात्रा सेवा (Cruise-Liners)
बहुराष्ट्रीय होटल श्रृंखला (Multinational Hotel Chain)
भ्रमण-संचालक (Tour Operators)
यात्रा अभिकर्ता (Travel Agents)
अवकाश दुकानें (Holiday Shops)

पर्यटन उद्योग, पूर्णतः स्पष्ट ऋतुगत लय द्वारा परिलक्षित होती है। आकस्मिक कार्य एवं ऋतुगत बेरोजगारी उद्योग के विशिष्टता द्योतक लक्षण हैं, विशेषकर रिसार्ट (Resort) क्षेत्रों में। यह उद्योग, ग्राहकों (पर्यटकों) तथा विचारों की परिवर्तन शीलता से स्पष्ट रूप से प्रभावित होता है। पर्यटन एक उतना बड़ा उद्योग नहीं है जितना बड़ा कि यह एक बाजार है। यह वस्तुओं का उत्पादन नहीं करता वरन् सेवाएं उत्पादित करता है। यह मुख्यतः एक सेवागत उद्योग है।

परिभाषा एवं संकल्पना-

वे उत्पाद, जो आवास के सामान्य स्थानों के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर आराम, प्रसन्नता अथवा व्यवसाय की आवश्यकताओं की तुष्टि करते हैं, पर्यटन उत्पाद कहलाते हैं।

सामान्य रूप में, पर्यटन उत्पाद एक ऐसी वस्तु, स्थान, व्यक्ति, घटना अथवा संस्था हो सकता है जो पर्यटकों की आवश्यकताओं की तुष्टि करे। प्रदत्त किया गया उत्पाद, में आवश्यकताओं की संतुष्टि के संदर्भ में, ग्राहक के लिए एक अंतर्निहित मूल्य होना चाहिए। इसलिए, एक उत्पाद में आवश्यकताओं की तुष्टिकारी क्षमताएं होती है। इस उत्पाद का अन्य किसी मूल्य के साथ इस प्रकार का विनिमय हो सकता है, जिससे आपूर्तिकर्ता और उत्पाद के ग्राहक दोनों ही के लिए एक परस्पर संतुष्टि उत्पन्न हो।

पर्यटन उत्पाद एक 'वस्तु' हो सकता है जैसे, मैसूर का चंदन का कार्य, राजस्थान की संगमरमर तराशी, तमिलनाडु का सीपी तथा शंख का कार्य (Shell

work), हैदराबाद के मोती। दिल्ली, मुंबई, बंगलौर की तरह यह एक 'स्थान' हो सकता है। यह भारत भवन जैसी एक 'संस्था' हो सकती है। पण्डित रवि शंकर की तरह यह एक व्यक्ति; केरल की महान हाथी दौड़, केरल की नेहरू ट्राफी दौड़, खजुराहों का नृत्य समारोह भी पर्यटन उत्पाद का एक स्वरूप है। 'पर्यटन उत्पाद' में स्क्यूबा डाइविंग (Scuba diving) हिमालय में पर्वतारोहण, योग आदि जैसी गतिविधियां भी सम्मिलित हैं।

फिलिप कोटलर के अनुसार, ''एक उत्पाद कुछ ऐसा है जिसे बाजार में ध्यानाकर्षण, उपयोग अथवा उपभोग हेतु प्रदान किया जा सकता हो, जो एक आवश्यकता अथवा मांग की तुष्टि पूर्ति कर सकता हो''। ("A product is anything that can be offered to a market for attention, use or consumption that might satisfy a want or need")

यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि अधिकतर उत्पाद, भौतिक उत्पाद हैं किंतु उत्पादों में सेवाएं भी सम्मिलित हैं और इसलिए हम कभी-कभी उन्हें सेवा जनित उत्पाद कहते हैं।

एलडरसन जेड० रो के अनुसार, ''एक उत्पाद उपयोगिताओं का ऐसा गठ्ठर है जिसमें विभिन्न उत्पाद लक्षण और संबद्ध सेवाएं सम्मिलित हों'' ("A product is a bundle of utilities consisting of various products features and accompanying services"

– Alderson Z. Wroe)

मेडलिक एस० एवं वी०टी०सी० मिडिल्टन के अनुसार-

"जहां तक पर्यटन का संबंध है, जो उत्पाद वह खरीदता है उसमें उसके घर छोड़ने के समय से लेकर घर वापस आने तक के समय तक के अनुभव सम्मिलित होते हैं।''

"As far as tourism is concerned, the product he buys covers the complete experience from the time he leaves home to the time he returns to it"

– Medlick S, & V.T.C., Middleton

पर्यटन उत्पाद के घटक

पर्यटन उद्योग अंर्तसंबंधित सेवाओं का एक संपूर्ण समूह उपलब्ध कराता है। इसमें यातायात, आकर्षण और खान-पान के महत्वपूर्ण उत्पाद घटक सम्मिलित हैं, और इसके अतिरिक्त इसमें परिधीय जन एवं निजी सेवाएं भी सम्मिलित हैं। फोस्टर (Foster) के अनुसार पर्यटन उत्पादों में सेवाओं और यातायात सुविधाओं की एक वृहद श्रंखला सम्मिलित है, और इसके अतिरिक्त यह एक गैर-भौतिकीय अस्पश्र्य वस्तु भी है।

विभिन्न विशेषज्ञों के दृष्टिकोण यह स्पष्ट करते हैं कि पर्यटन, एक सेवागत उत्पाद, विभिन्न स्पश्र्य (Tangible) एवं अस्पश्र्य (Intangible) तत्वों का मिश्रण है। ये उत्पाद अंर्तसंबंधित सेवाओं का एमूह, एक संपूर्ण अनुभव और केन्द्रीय एवं परिधीय सेवाओं का एक मिश्रण है। पर्यटन संबंधी पाठ्य-सामग्रियों के लेखकों द्वारा पर्यटन को एक सेवा जनित उत्पाद के रूप में बारंबार स्वीकार किया गया।

(Schmoll 1977; Foster, 1985; Middleton, 1988)

पर्यटन उत्पाद का एक दृष्य

पर्यटन उत्पाद

केन्द्रीय सेवाएं	परिधीय निजी सेवाएं	परिधीय जन सेवाएं
यातायात	यात्रा बीमा	सरकारी संगठन
वायु, समुद्र, रेल,	विपणन-छपाई, विज्ञापन	क्षेत्रीय संगठन
कोच, भाड़े की कार		
आकर्षण	यात्रा एजेंट	सूचना केन्द्र
पार्क, चिड़ियाघर,	साहित्य के वितरक	उपनगर/परिषद
सांस्कृतिक विरासत	टेली-टेक्सट	जन शिक्षण एवं
के केन्द्र,	प्रेस्टेल थोक विक्रेता	प्रशिक्षण संस्थाएं
स्मारक, राजकीय	यात्रा	जन बन्दरगाह
गृह, भौतिक	कोच संचालक	हवाई अड्डे, वीसा
प्राकृतिक दृष्य	निजी शिक्षण एवं	एवं पासपोर्ट कार्यालय

केन्द्रीय सेवाएं	परिधीय निजी सेवाएं	परिधीय जन सेवाएं
आवास		
प्रशिक्षण संस्थाएं	सीमाकर एवं आबकारी	
	होटल, मोटल,निजी	
	बन्दरगाह,	सेवाएं
अतिथि गृह,अपार्टमेंट	हवाई अड्डा	पुलिस, चिकित्सकीय,
।वेला, केबिन, चैलेट्स	समुद्र बैंकिंग-यात्रा चेक,	
कैम्प, काफिला स्थल	मुद्रा दुकानें	
खान-पान		
रेस्त्रां, मोटर वे		स्वच्छता, सफाई
सेवाएं, कैफे,		
फास्ट-फूट केन्द्र		

स्त्रोत : निम्नलिखित पुस्तकों से परिवर्तित

Gilbert, D.C., Conceptual Issues in the Marketing of Tourism, p-7; & Jha, S.M., Services Marketing, p-185 HPH, 1994

पर्यटन उत्पाद में स्पर्श्य (Tangible) एवं अस्पर्श्य (Intangible) दोनों ही घटक होते हैं। प्राकृतिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक संसाधन, ढांचा एवं निर्माण स्पर्श्य (tangible) होते हैं। विशिष्ट मानकों के प्रावधानों के अंतर्गत उनका मूल्यांकन एवं मापन किया जा सकता है। अस्पर्श्य आयाम का नहीं। किसी स्थान के वातावरण एवं स्वागत और मित्रता के भाव के गठन के लिए वे सब एकजुट हो जाते हैं।

यह कहा जा सकता है कि अस्पर्श्य (Intangible) तत्व पर्यटक उत्पाद को उसका जीवन, रंग और उत्तेजना प्रदान करते हैं। सभी स्पर्श्य आयाम, वे चाहे कितने भी अच्छे हों, सम्पूर्ण संतुष्टि नहीं प्रदान कर सकते। पर्यटकों की प्रतिक्रिया उनके हुए व्यवहार महसूस होने से निर्णयकारी ढंग से प्रभावित होती है। प्रत्येक उत्तरोत्तर घटना एवं परिस्थिति जिसका अनुभव पर्यटक करता है, सुमेलित होने

चाहिए। कुशलता एवं मनोरंजन के संपूर्ण भावों को उत्पन्न करने में उसका सहयोग होना चाहिए। पर्यटन सहस्वरता इस बात का निर्णय करेगी कि पर्यटक ने संपूर्ण उत्पाद कितनी अच्छी तरह स्वीकृत किया। सहस्वरता का अर्थ यह भी है कि पूरक पर्यटन सुविधाओं एवम सेवाओं के मध्य गुणवत्ता एवं क्षमता की समतुल्यता हो।

पर्यटन उत्पाद
(Tourism Products)

स्पर्श्य तत्व (Tangible Elements)	अस्पर्श्य तत्व (Intangible Elements)
↓	↓
पर्यटन संरक्षण (Tourism Patrimony)	आतिथ्य नम्रता (Hospitality Courtesy)
↓	↓
ढांचा गत सुविधायें (Infrastructure)	मित्रवत्/सहृदयता (friendliness/warmth)
↓	↓
वृहद ढाँचा (Superstructure)	वातावरण (Atmosphere/Ambiance)
↓	↓
अवचेतन चरित्र का सब कुछ (Everything of an objective character)	चेतन चरित्र का सब कुछ (Everything of a subjective character)

उत्पाद जीवन-चक्र

पर्यटन उत्पाद समेत सभी उत्पादों को एक जीवन-चक्र से होकर गुजरना होता है। उत्पाद पहले लाया जाता है, बढ़ता है, परिपक्व होता है, समतल हो जाता है और फिर इसका स्तर घटता है। गिरावट के बिंदु पर उत्पाद को पुनर्जीवित करने हेतु कार्यवाही की आवश्यकता होती है और इससे जीवनकाल और बढ़ जाता है। यह निम्न रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित है। कार्य के विभिन्न प्रभावों के अनुसार, रेखा विभिन्न आकारों की होगी।

(जीवन चक्र के विचार का दृष्टांत चित्र)
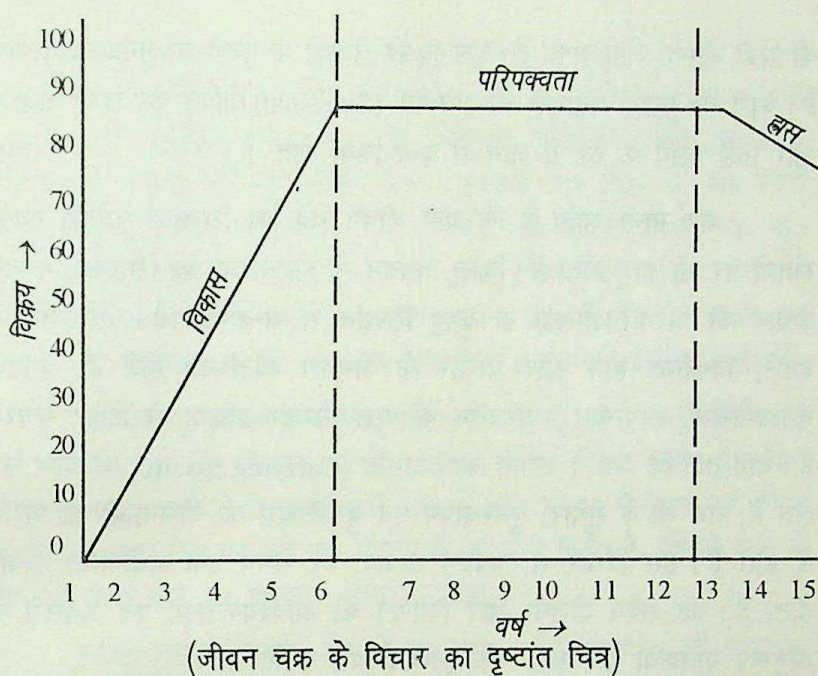
समकालीन चलन के अनुसार कई उत्पाद उठते और गिरते हैं। एक उत्पाद अपना आकर्षण खो भी सकता है।

रेस्त्रां, परिवर्तित रुझानों एवं स्वाद रूचियों के प्रति कुख्यात रूप से मार्मिक होते हैं। सभी अभिकल्प परिवर्तित होते हुए मूल्यों के सापेक्ष होते है। चाहे वे कला में हो अथवा वस्त्रों, वास्तुकला, अन्तर्सज्जा तथा फर्नीचर में।

हम प्रकृति में भी ही चक्रकारी लय-जीवन की ऋतुएं, क्षीण हो जाना और निरंतर नवीनीकरण-देखते हैं। यह चक्रकारी प्रभाव को एक विशेष दार्शनिक आकर्षण प्रदान करता है। टिके रहने के लिए, चीजों को एक नए चेहरे और एक नए प्रारूप की आवश्यकता होती है। जो पुराना है वह फिर से कायाकल्प हो नवीन हो उठता है। यह एक पूरा मोड़ लेता है और फिर वहीं आ ठहरता है जहां से इसने आरंभ किया था।

परिणामस्वरूप फैशन पुनर्जीवित हो उठते हैं। पुरानी चीज आधुनिक हो जाती है। पुराने होटलों का नवीनीकरण हो जाता है और वह अपने पूर्ववर्ती गौरव

की सभी सीमाएं लांघ जाता है। भूले-बिसरे लेखकों के कृत्यों का पुर्नप्रकाशन होता है। कारों की पुरानी बनावटों को शास्त्रीय (Classical) घोषित कर दिया जाता है और उन्हें मलबे के ढेर में जाने से बचा लिया जाता है।

यह माना जाता है कि यही जीवन चक्र का सिद्धान्त पर्यटक स्थलों स्थानों पर भी लागू होता है। किन्तु, पर्यटन में जीवन चक्र का सिद्धान्त, पर्यटन उत्पाद की परिवर्तनशीलता के वृहद् सिद्धांत से सम्बन्धित है। जैसे जैसे वे बढ़ते, विकसित होते और बाजार के अनुरूप व्यवस्थित होते हैं, पर्यटक गंतव्य-स्थल, सामान्यतः, परिवर्तन की एक निरंतर प्रक्रिया से होकर गुजरते हैं। यहां तक कि जब वे अपनी वहन क्षमता (Carrying cpacity) को प्राप्त कर लेते हैं, तब भी वे सुधार, पुनर्स्थापन एवं पुनर्विकास की योजनाओं की परिधि में होते हैं। इस विचार से, पर्यटन उत्पाद, हर समय एक अर्धनिर्मित उत्पाद होता है। यह सदैव योजना और विपणन की आवश्यकताओं एवं अवसरों के अनुरूप प्रतिक्रिया कर स्वयं को पुनर्व्यवस्थित करता है।

पर्यटन उत्पाद के महत्वपूर्ण लक्षण

पर्यटन उत्पाद, विभिन्न स्पर्श्य (tangible) एवं अस्पर्श्य (Intangible) तत्वों का मिश्रण होते हैं। पर्यटन उत्पादों में निम्नलिखित महत्वपूर्ण लक्षण होते हैं :

1. अस्पर्श्यता (Intangibility) :

पर्यटन उत्पाद मूलतः एक सेवा है, न कि एक स्पष्ट वस्तु। सेवाएं अथवा सेवा उत्पाद दिखते नहीं हैं और न ही उनहें छुआ जा सकता है। जो दिखता है, वह उनका प्रभाव होता है। एक मार्ग निर्देशक (guide) की टिप्पणियों को सुना जा सकता है। एक यात्रा अभिकर्ता, स्थान -अ से स्थान -ब तक के लिए टिकट उपलब्ध कराता है। टिकट मात्र एक कागज का टुकड़ा होता है, सेवा के उपयोग हेतु एक प्रवेश पत्र। एक वायु सेवा, यातायात, आराम और सुविधा उपलब्ध कराती है।

एक स्पर्श्य (tangible) उत्पाद, भौतिक रूप से विक्रेता द्वारा बेचा और

क्रेता द्वारा प्राप्त किया जाता है। जबकि एक अस्पर्श्य उत्पाद में, भौतिक कुछ भी नहीं होता जिसका लेन-देन क्रेता और विक्रेता के मध्य होता हो। एक पथ प्रदर्शक (guide), यात्रा मार्गदर्शक (Tour escort), दुभाषिया, चिकित्सक अथवा शिक्षक की सेवाएं बहुत अस्पष्ट होती हैं क्योंकि सेवा प्रदानकर्ता और क्रेता के मध्य किसी भौतिक वस्तु का हस्तांतरण नहीं होता। किन्तु वायु सेवा, होटल अथवा रेस्त्रां, कुछ स्पष्ट उत्पादों की मदद से सेवाएं प्रदान करते हैं। वायु. सेवाओं का वायुयान, होटल के कमरे और रेस्त्रां में परोसा जाने वाला भोजन स्पष्ट उत्पाद हैं जिनका उपयोग इन संस्थाओं द्वारा यातायात, आवास और खान-पान सेवाएं प्रदान करने हेतु किया जाता है।

अस्पर्श्यता, उन लोगों के लिए विशेष कठिनाइयां उत्पन्न करती है जिनका कार्य पर्यटन उत्पाद के विपणन की है। वाशिंग मशीन अथवा अन्य उपभोक्ता (टिकाऊ) वस्तुएं खरीदने से पहले भावी क्रेताओं द्वारा इसका निरीक्षण नहीं किया जा सकता। यात्रा सेवा का क्रय एक सट्टेबाजी का पूँजी निवेष है, जिसमें क्रेता के लिए एक उच्च स्तर का विश्वास सम्मिलित होता है।

अस्पष्टताकारी लक्षण, सेवाओं की समझ और आकलन की समस्याएं उत्पन्न करता है। सेवाएं वे वायदे होती हैं जिनका आकलन उपयोग के बाद ही किया जा सकता है, उससे पूर्व नहीं। उत्पादों का पहले उत्पादन होता है, फिर विक्रय और तब उपभोग होता है। सेवााएं पहले बेची जाती हैं, तब उत्पादित होती हैं और फिर साथ ही साथ उपभोग की जाती हैं।

2. अपृथक्करणशीलता (Inseparability) :

सेवाओं को, सेवाएं प्रदान करने वाले व्यक्ति से पृथक करना सम्भव नहीं है। एक आकर्षण को समझाने के लिए एक पथ प्रदर्शक उपस्थित रहना चाहिए। संचार सेवाएं प्रदान करने के लिए एक दुभाषिए को व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहना ही चाहिए। एक शिक्षक जो व्यक्तिगत रूप से कक्षा से अनुपस्थित है, शिक्षण प्रदान नहीं कर रहा है। एक वायुयान चालक को उपस्थित रहना ही पड़ता है ताकि वह आपको आपके गंतव्य स्थान तक उड़ा ले जा सके। परस्पर संतोषकारी विनिमय के लिए, सेवा प्रदानकर्ताओं और सेवा उपयोगकर्ताओं, दोनों ही को भौतिक रूप से उपस्थित रहना ही होता है। इसलिए, सेवा विनिमय प्रणाली, उत्पादन एवं सेवा प्रदान करने हेतु यह आवश्यकता उत्पन्न करती है कि सेवा प्रदानकर्ता व्यक्तिगत एवं भौतिक रूप से उपस्थित रहे।

3. क्षयशीलता (Perishability):

पर्यटन उत्पादों में उच्च क्षयशीलता होती है। यदि उत्पादों का उपयोग न हो, तो मौका हाथ से निकल जाता है यदि किसी विशेष स्थान की यात्रा न करें तो अवसर चला जाता है। यह पर्यटन के व्यापार को विपरीत ढंग से प्रभावित करता है। होटल के कमरे और वायुयान की सीटें जो बिक नहीं पाईं, बाद में बेंचने के लिए भण्डारित नहीं की जा सकतीं, जैसा कि स्पर्श्य उत्पादों के बारे में होता है। यह होटल के कमरों अथवा वायुयान की सीटों को भरने हेतु और अधिक प्रयासों की आवश्यकता उत्पन्न करता है। स्वभावतः, पर्यटन हेतु समस्याएं अनोखी हैं, जो विपणनकर्ताओं के लिए विशेष कौशल का आह्वाहन करती हैं। क्षयशीलता के कारण होटलों अथवा यातायात उत्पन्न करने वाली संस्थाओं द्वारा भारी छूट प्रदान की जाती है।

4. उपयोगकर्ता की उपस्थिति अनिवार्य (User's presence essential):

सेवाओं के उपयोग हेतु यह अनिवार्य है कि उपयोगकर्ता व्यक्तिगत अथवा भौतिक रूप से स्थलों पर आएं। इसे उपयोगकर्ताओं के पास नहीं लाया जा सकता, बल्कि उपयोगकर्ताओं को उत्पाद तक ले जाना होगा। यह उत्पाद को सही ढंग से प्रस्तुत करने की आवश्कता उत्पन्न करता है। यहां विपणनकर्ताओं को उपयोगकर्ताओं के व्यवहार, स्वाद की प्राथमिकताओं, पसन्द और नापसन्द के गहन अध्ययन की आवश्यकता होती है ताकि अपेक्षाओं और वास्तविकताओं में समानता हो और संतुष्टि संभव हो सके।

5. स्वामित्व का अभाव (Absence of Ownership) :

जब आप एक कार खरीदते हैं तो कार का स्वामित्व आपको हस्तांतरित हो जाता है, किन्तु जब आप एक टैक्सी भाड़े पर लेते हैं तो आप पूर्व-निर्धारित कीमत (भाड़े) पर एक पूर्व-निर्धारित गंतव्य स्थान तक जाने का अपना अधिकार मात्र खरीदते हैं। होटल के कमरों का उपयोग किया जा सकता है किन्तु अतिथि द्वारा उनका स्वामित्व हासिल नहीं किया जा सकता। 'Palace-on-Wheels', दिल्ली से राजस्थान तक की यात्रा का अथवा वायुयान का एक टिकट आपको प्रदान की गई सेवाओं का उपयोग करने की अनुमति देता है। किन्तु आप उसके स्वामित्व से

वंचित रहते है। उत्पाद खरीदे जाते हैं और उसका स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो जाता है। सेवाएं, उपभोग के लिए खरीदी जा सकती हैं किन्तु स्वामित्व उसी व्यक्ति अथवा संस्था के पास रहता है जो सेवाएं प्रदान करता है। इस प्रकार, एक नृत्य देख कर अपना मनोरंजन किया जा सकता है, किन्तु नर्तक/नर्तकी पर स्वामित्व नहीं हासिल किया जा सकता है।

6. परिवर्तनशीलता अथवा विजातीयता (Variability or Heterogenity):

पर्यटन एक सजातीय उत्पाद नहीं, क्योंकि एक टेलीविजन सेट से भिन्न इसमें समय के अनुसार मानकों और गुणवत्ता में परिवर्तन की प्रवृत्ति होती है। एक भ्रमण पैकेज अथवा हवाई जहाज में एक उड़ान निरंतरतः समान मानक का नहीं हो सकता। यह कहना सही होगा कि एक धचकोलों भरी उड़ान, यात्रा के सुख को दुःस्वप्न में बदल सकती है, जैसे कि समुद्र के किनारे पर बिताई जा रही छुट्टियां लगातार हो रही बरसात से बेकार हो जाती हैं। यह सभी कठिनाइयां इस तथ्य के कारण होती हैं कि वह विभिन्न उत्पादों का एक सार-संग्रह होती हैं।

परिवर्तनशीलता का एक अन्य कारण यह है कि पर्यटन उत्पाद, सेवाओं के उपयोग को भी सम्मिलित करता है। सेवाएं व्यक्तियों पर आधारित उत्पाद होती हैं। सेवाएं उस व्यक्ति से पृथक नहीं की जा सकती जो उन्हें प्रदान करता है। वे व्यक्तियों द्वारा उत्पादित एवं प्रस्तावित होती है। इसके कारण सेवाओं की गुणवत्ता व्यक्तियों के अनुसार तथा उसी व्यक्ति द्वारा समय-समय पर भिन्न होती है। फिर भी, वही एक वायुयान परिचालिका, सुबह और शाम को गुणात्मक रूप से समान सेवा प्रदान अथवा निष्पादित नहीं कर सकेगी। उसकी सेवा उसकी शारीरिक और मानसिक स्थिति, उसकी मनःस्थिति, उसके आस-पास के वातावरण इत्यादि द्वारा प्रभावित होती है।

इसलिए सेवाओं का मानकीकरण नहीं किया जा सकता। सेवाओं में परिवर्तनशीलता का एक अन्य कारण सेवा के उत्पादन, वितरण एवं उपभोग प्रणाली की प्रक्रिया में, ग्राहक अथवा अतिथि को सम्मिलित करना भी होता है। एक उत्सव में गाने बजाने वाला एक संगीतकार एक समान रूप से अपना प्रदर्शन नहीं कर सकता। उसका प्रदर्शन श्रोताओं की प्रशंसा के स्तर, उसके सह-कलाकारों के प्रदर्शन और आयोजन में उसके अपने जुड़ाव पर निर्भर करता है। प्रदर्शन के समय

उसकी व्यक्तिगत, शारीरिक और मानसिक स्थिति महत्वपूर्ण एवं परिवर्तनीय है। अतः सेवाएं व्यक्तिओं और समय के अनुसार परिवर्तित होती रहती हैं।

7. आकर्षण में मुख्यतः मनोवैज्ञानिक (Largely Psychological in Attractions) :

पर्यटन उत्पाद अपने आकर्षण में मुख्यतः मनोवैज्ञानिक होते हैं क्योंकि जब एक पर्यटक विदेश की यात्रा का एक पैकेज खरीदता है तो वह सेवाओं के मात्र एक साधारण संग्रह से भी कुछ अधिक खरीदता है, जैसे हवाई जहाज में एक सीट, होटल का कमरा, दिन में तीन समय का भोजन, एक समुद्र तट की धूप में बैठने का अवसर। इसके अतिरिक्त, वह एक अपरिचित वातावरण के अस्थाई उपयोग, अपूर्व नयनाभिराम प्रदेश, क्षेत्र की संस्कृति और परंपरा और अन्य अप्रत्यक्ष लाभ भी खरीदता है। छुट्टियों की योजना और पुर्वानुमान यात्रा के समान ही आनन्द का भाग हो सकती है; बाद में अनुभवों का संस्मरण, और स्लाइडों, वीडियो अथवा चित्रों का पुनरावलोकन, अनुभवों का विस्तार हो सकती है। यह सभी उत्पाद का भाग होते हैं, जो इस प्रकार एक मनोवैज्ञानिक एवं साथ ही एक भौतिक अनुभव होता है।

8. बड़ा जोखिम भरा उत्पाद (Highly Risky Product):

उपयोग के लिये जोखिम बढ़ जाता है क्योंकि क्रय, उत्पाद के वास्तविक उपभोग से पहले घटित हो सकता है। किसी भी सेवा के क्रम में संयोग का एक तत्व भी उपस्थित होता है। एक उत्तम होटल का अनुभव, गन्तव्य स्थान के लिए ली गई निराशाजनक उड़ान द्वारा चौपट हो सकता है और समुद्र तट पर छुट्टियों लगातार बरसात द्वारा सत्यानाश हो सकता है।

9. कठोर पूर्ति अवयव (Supply components Rigid) :

पर्यटन में पूर्ति अवयवों की कठोरता एवं लचीलेपन के लिए कई घटक उत्तरदायी होते हैं, जैसे रेलवे, सड़कें, हवाई अड्डे इत्यादि। यह इस तथ्य के कारण हैं कि यह सभी पूंजी बोधक (capital intensive) विषय होते हैं, और पूर्ण होने अथवा खुलने में समय लेते हैं। इसके अतिरिक्त, एक बार

सुविधाएं उत्पन्न हो जाती हैं, अन्य उपयोग कर्ताओं के लिए कोई अन्य परिवर्तन नहीं हो सकते। एक कम उपयोग किया गया अंतर्राष्ट्रीय मानक का हवाई अड्डा, एक कम उपयोग किया गया हवाई अड्डा ही रहता है। एक होटल जो अधिभोग (occupancy) के व्यावहारिक स्तरों पर खरा नहीं उतरा, सफलतापूर्वक एक निवास-स्थान के रूप में उपभोग नहीं किया जा सकता। मांग का कम आंकलन साख को क्षति पहुंचा सकता है और छवि की समस्या उत्पन्न कर सकता है, क्योंकि अतिरिक्त सुविधाएं उत्पन्न करने में वर्षों लग जाते हैं।

10. मांग अस्थिर होती है (Demand is Instable):

यह कहना उचित है कि पर्यटन उत्पाद, मांग की अस्थिरता के अधीन होते हैं। यह जोखिम के परिमाण को बढ़ाता है, और पर्यटन नियोजन में बहुआयामी समस्याएं उत्पन्न करता है। इसके लिए कई घटक उत्तरदायी होते हैं जैसे मौसम के परिवर्तन और मांग का बहुत अधिक लचीलापन, बाध्य एवं वातावरण के घटकों, जैसे आर्थिक मंदी एवं तेजी, का तत्काल असर मांग को घटाते अथवा बढ़ाते हैं। मेजबान देशों में आकस्मिक राजनैतिक परिवर्तन, सीमाओं को बन्द अथवा खोल सकते है। इसके अतिरिक्त मांग के ढांचे में गुणात्मक अथवा परिमाणात्मक परिवर्तन भी बगैर किन्हीं कारणों के पाए जाते हैं। पर्यटन का व्यवसाय मांग की ऋतुनिष्ठता के अधीन होता है। निश्चित रूप से यह आदत, मौसम अथवा परंपरा के कारण होता है।

पर्यटन उत्पादों का वर्गीकरण

1. प्राकृतिक पर्यटन उत्पाद (Natural Tourism Product):

इसमें प्राकृतिक संसाधन, जैसे क्षेत्र की जलवायु इसकी पृष्ठभूमि, भू-परिदृश्य और प्राकृतिक पर्यावरण। प्राकृतिक संसाधन, एक गंतव्य स्थान के आकर्षणों का सामान्यतः अति महत्वपूर्ण अथवा प्रमुख तत्व होता है, समुद्रतटीय रिसार्ट, स्की रिसार्ट और स्पा (Spa) कुछ स्पष्ट उदाहरण हैं। प्राकृतिक संसाधन इस प्रकार हैं:

(a) ग्रामीण क्षेत्र

(b) जलवायु — तापमान, वर्षा, हिमपात, खुलीधूप के दिन।

(c) प्राकृतिक सौंदर्य - भूखण्डों की बनावट, पहाड़ियां, चट्टाने, संकरी घाटियां, मैदानी क्षेत्र।

(d) जल - झील, तालाब, नदियां, जलप्रपात, जल - स्त्रोत

(e) पुष्प वनस्पति तथा जीवजन्तु

(f) वन्य प्राणी

(g) समुद्र-तट

(h) द्वीप

(i) स्पा (Spa) (स्वास्थ्यकारी जल क्षेत्र)

(j) दृष्टा आकर्षण

2. मानव निर्मित पर्यटन उत्पाद (Man-made Tourism Product):

मानव निर्मित पर्यटन उत्पाद, मानव द्वारा सुख, अवकाश अथवा कार्य हेतु निर्मित किए जाते हैं। मानव-निर्मित उत्पादों में निम्नलिखित सम्मिलित हैं :

(a) संस्कृति

- पुरातत्वीय रुचि के क्षेत्र
- ऐतिहासिक इमारतें व स्मारक
- ऐतिहासिक महत्व के स्थान
- संग्रहालय व कला दीर्घा
- राजनैतिक व शैक्षिक संस्थाएं
- धार्मिक संस्थाएं

(b) परम्पराएं

- मेले व उत्सव
- कला व हस्तशिल्प
- नृत्य
- संगीत
- लोक साहित्य
- स्थानीय जीवन व प्रथाएं

(c) मनोरंजन

- मनोरंजक व विश्राम स्थल
- खेल-कूद
- चिड़ियाघर व सामुद्रिक जीव-गृह (Oceanariums)
- रात्रि-जीवन
- रसोई

3. सम्मिश्रित पर्यटन उत्पाद (Symbiotic Tourism Product):

कुछ पर्यटन उत्पाद किसी भी श्रेणी में नहीं आते। वन्य प्राणी शरण-स्थल, सामुद्रिक-स्थल, वायु एवं जल क्रीड़ा, और पुष्प उत्सव, ऐसे पर्यटन उत्पादों के कुछ उदाहरण हैं जो प्रकृति एवं मानव का सम्मिश्रण है। प्रकृति ने संसाधन उपलब्ध कराए और मानव ने उनके प्रबन्धन द्वारा उन्हें पर्यटन उत्पादों में परिवर्तित कर दिया। उदाहरणतः राष्ट्रीय पार्कों को यथासंभव सुंदरता की उनकी प्राकृतिक स्थिति में रखा जाता है, किंतु वहां तक पहुंच, पार्किंग सुविधाएं, सीमित आवास, कूड़ेदान, इत्यादि प्रदान कर उनका प्रबंधन किया जाता है। किंतु फिर भी, पर्यटन उत्पाद की इस श्रेणी में मुख्य आकर्षण प्रकृति ही है। यह उत्पाद, प्रकृति एवं मानव का सम्मिश्रण होते हैं।

4. घटना आधारित पर्यटन उत्पाद (Event-Based Tourism Products):

जहां अवसर ही एक आकर्षण होता है, वे घटना अथवा कार्यक्रम-आधारित पर्यटन उत्पाद होते हैं। अवसर, पर्यटकों को दर्शकों के रूप में और सहभागियों के रूप, और कभी-कभी दोनों ही रूपों में आकर्षित करता है। जैसलमेर का ऊँट पोलो, अहमदाबाद की पतंगबाजी पर्यटकों को दर्शकों एवं सहभागियों, दोनों ही रूप में आकर्षित करते हैं। जबकि, सर्प-नौका-दौड़ (Snake-Boat race) देखकर मनोरंजन किया जा सकता है। जोखिम भरे खेलों में पर्यटक सहभागी हो सकते हैं। अवसर के आकर्षण अस्थाई होते हैं, और प्रायः किसी गंतव्य स्थान पर पर्यटकों की संख्या बढ़ाने के लिए तैयार किए जाते हैं। कुछ अवसर आयोजन बहुत थोड़े समय के लिए होते हैं, जैसे गणतंत्र दिवस परेड, जबकि अन्य कई दिनों तक चलते रह सकते हैं, जैसे खजुराहो नृत्य समारोह, अथवा कुछ माह तक भी जैसे नौचन्दी का मेला। एक गंतव्य स्थान पर्यटकों द्वारा बहुत कम प्रशंसित होगा, किन्तु फिर भी

यह समारोह की तैयारी द्वारा पर्यटकों को आकर्षित करने में सफल हो सकता है, जैसे एक असाधारण प्रदर्शिनी।

5. स्थल-आधारित पर्यटन उत्पाद (Site-based Tourism Products):

जब आकर्षण, एक स्थान अथवा एक स्थल होता है तो यह एक स्थल-आधारित पर्यटन उत्पाद कहलाता है। स्थल के आकर्षण अपनी प्रकृति में स्थाई होते हैं। स्थल-आधारित पर्यटन उत्पाद के उदाहरण निम्न-लिखित हैं : ताज महल, गोवा के समुद्र तट, कन्याकुमारी का सूर्यास्त, मुम्बई, खजुराहों के मंदिर एक स्थल-आधारित गंतव्य-स्थान, अपने मौसम-काल का विस्तार, एक आफ-सीजन समारोह अथवा अवसर को तैयार (mount) करके कर सकता है।

6. सांतत्यक पर्यटन उत्पाद (Continuum Tourism Product):

पर्यटन उत्पाद को प्राकृतिक अथवा मानव-निर्मित, अवसर अथवा स्थल-आधारित, की श्रेणियों में वर्गीकृत करने के स्थान पर इसे गतिविधि (activity) से परिधि क्षेत्र (circuits) तक की एक निरंतर श्रेणी (continuous range) के रूप में भी समझा जा सकता है। यह वर्गीकरण, पर्यटन उत्पादों को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:

(a) गतिविधि (activity)
(b) अवसर (evemt)
(c) गंतव्य स्थान (destination)
(d) पैकेज (Package)
(e) परिधि-क्षेत्र (Circuits)

(a) गतिविधि :

गतिविधि-आधारित पर्यटन उत्पादों के लिए पर्यटकों की क्रियाशील सहभागिता की आवश्यकता होती है। गंतव्य स्थान पर पर्यटकों द्वारा विभिन्न गतिविधियां अपनाई जाती हैं। कई पर्यटकों के लिए गंतव्य स्थान पर खरीददारी एक मनचाही गतिविधि हो सकती है। योग, ध्यान अथवा जोखिम भरे खेल अपनाना जैसे पैरासेलिंग, ग्लाइडिंग, इत्यादि। गतिविधि-आधारित पर्यटन उत्पाद, प्रकृति, सेवाओं अथवा लोगों का सहयोग लेते है।

(b) अवसर/घटनाएं :

कुछ विशिष्ट अवसर पर्यटकों के लिए आकर्षण होते हैं। वे इन अवसरों (समारोहों/उत्सवों) का अवलोकन कर अथवा उनमें भाग लेकर, तो कभी कभी दोनों माध्यमों से सुखानुभूति प्राप्त कर सकते हैं। ये अवसर, केरल की नौका दौड़, राजस्थान का पुष्कर मेला, कुंभ मेला, पर्वतारोहण अथवा ट्रेकिंग हो सकते हैं।

(c) स्थल :

एक स्थल विशेष स्थान पर स्थित होता है और आकर्षण प्रदान करता है। ताज महल, महाबलिपुरम के समुद्र-तटीय मंदिर, कोणार्क का सूर्य मंदिर, गोवा के समुद्र तट, वाराणसी के घाट, कोवलम समुद्र तट का सूर्यास्त, अजंता की गुफाएं आदि गतिविधि-आधारित पर्यटन उत्पादों के कुछ उदाहरण हैं।

(d) गंतव्य स्थान :

कुछ जगहें (शहर) अपने आप में पर्यटक आकर्षण होते हैं। वे न ही मात्र विशेष स्थल अथवा अवसर के लिए आकर्षण होते हैं वरन् वे पर्यटकों को एक करिश्मा (charisma) भी प्रदान करते हैं। दिल्ली, मुम्बई, जयपुर कुछ पर्यटक शहर हैं।

गंतव्य स्थान और आकर्षण, प्रकृति में ग्रन्थिल (nodal) अथवा रेखाकार (linear) हो सकते हैं। ग्रंथिल (nodal) गंतव्य स्थान वह होता है जिसमें क्षेत्र के आकर्षण भौगोलिक रूप से निकटतः वर्गीकृत होते हैं। समुद्र-तट के रिसार्ट (resorts) और शहर ग्रंथिल आकर्षण के उदाहरण हैं। दूसरी ओर रेखाकार (linear) गंतव्य स्थान वे होते हैं जिसमें आकर्षण एक विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में बगैर किसी विशिष्ट केन्द्रबिन्दु के फैले होते हैं।

(e) पैकेज :

सभी पर्यटक, अलग से अथवा एक सम्मिलित यात्रा के रूप में, पर्यटन उत्पाद के विभिन्न अवयवों को खरीदते हैं। पर्यटक मस्तिष्क के तीन मुख्य अवयवः गंतव्य स्थान पर सुविधाएं, जैसे आवास; भोजन; मनोरंजन और गंतव्य स्थान तक पहुंच। पर्यटकों को बेचे जाने वाले उत्पाद मात्र सेवाएं, देश का एक द्रष्यपटल, यात्रा,

मनोरंजन, आवास सुविधाएं, इत्यादि होते हैं। अतः मुख्य उत्पाद, आकर्षण, आवास, यातायात, मनोरंजन, रेस्त्रां और खरीद-फरोख्त होते हैं। यातायात उत्पाद, संसाधनों (प्राकृतिक अथवा मानव निर्मित) और सेवाओं का सम्मिश्रण होते है, और इस प्रकार एक पैकेज।

(f) परिधि-क्षेत्र :

परिधि-क्षेत्र (circuit) ऐसे गंतव्य स्थानों और स्थलों की एक श्रंखला होती है जो पर्यटकों को समग्र रूप में प्रदान की जाती है। परिधि क्षेत्र, पर्यटकों को लाभ प्रदान करते हैं। प्रक्षव पर्यटन गंतव्य-स्थान अपने आकर्षण तो प्रदान करते ही हैं, किंतु प्रस्ताव की गुणवत्ता, गंतव्य-स्थानों कसी श्रंखला के प्रस्ताव के द्वारा और अधिक बढ़ जाती है। उदहरण के लिए प्रसिद्ध स्वर्णिम त्रिकोण (Golden Triangle), एक ऐसा परिधि-क्षेत्र है जो दिल्ली, आगरा और जयपुर का आकर्षण प्रदान करता है। पैकेज कार्यक्रम और परिधि-क्षेत्र दोनों को सम्मिलित कर एक ऐसा पर्यटन उत्पाद बनाया जा सकता है जो एक एक स्थल के आकर्षणों के सम्मिलित योग से अधिक आकर्षक हो। प्रसिद्ध रेल गाड़ी 'पैलेस-आन-व्हील्स' इसी प्रकार का एक पैकेज कार्यक्रम और परिधि-क्षेत्र प्रदान करता है, जो पर्यटक चाहता है।

प्रेरक तत्व और पर्यटन उत्पाद

(Motivators and Tourism Product)

प्रेरणा, व्यक्ति की अनुभूत आवश्यकताओं अथवा इच्छाओं से उत्पन्न होती है। पर्यटन प्रेरकों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है:

(a) सुखानुभूति, मनोरंजन
(b) आराम, अवकाश
(c) स्वास्थ्य
(d) मित्रों और सम्बन्धियों से भेंट
(e) शिक्षा
(f) कार्य, व्यवसाय, व्यापार
(g) विशेष रुचि
(h) नवीनता और अनोखे अनुभव
(i) धार्मिकता

	प्रेरक	पर्यटन उत्पाद
1.	सुखानुभूति और मनोरंजन	मेले, वन्यजीवन, खेल, स्मारक
2.	अवकाश और आराम	समुद्र-तट, योग, ध्यान, पर्वतीय रिसार्ट, द्वीप रिसार्ट
3.	स्वास्थ	स्पा (Spa) (स्वास्थ्यकारी-जल स्थल)
4.	शिक्षा	विरासत, संस्कृति, परंपरा
5.	कार्य, व्यवसाय, व्यापार	सेमिनार, कान्फ्रेंस, सम्मेलन
6.	मित्रों एवं रिश्तेदारों से भेंट	खरीदारी, प्रतीक चिन्ह, मेले और उत्सव
7.	धार्मिक	पवित्र स्थानों की तीर्थ यात्रा
8.	विशेष रुचि	साहसिक

□□□

अध्याय-2

भारत के पर्यटन उत्पाद
(Tourism Products of India)

भारत की आश्चर्यजनक विविधता वह प्रत्येक वस्तु अथवा आकर्षण प्रदान करती है जो एक व्यक्ति अपनी छुट्टियों में चाहता है। उत्तर में विशाल हिमालय की श्रंखलाओं से बंधित, और तीन समुद्रों से घिरे एक शानदार तटवर्ती रेखा के किनारों से सज्जित भारत, भूदृश्यों, शानदार ऐतिहासिक स्थलों और शाही नगरों, स्वर्णिम समुद्र-तटों, कुहरेदार पर्वतीय स्थलों, रंगबिरंगे लोगों, समृद्ध संस्कृतियों एवं उत्सवों को एक गरिमापूर्ण परिदृश्य है।

ऐतिहासिक धरोहर से परिपूर्ण विशाल सांस्कृतिक कोष भारत को अन्य गंतव्य स्थानों से पृथक करता है। भारत की पौराणिक संस्कृति और प्राकृतिक कोषों का भण्डार, विश्व की सभ्यता और इतिहास में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान रखता है। भारत में ऐसे स्थल है जहां पर्यटकों का परिचय, हर कदम पर इतिहास से होता है। यह स्वर्णिम त्रिकोण (golden triangle) में आसानी से दिखता है। (दिल्ली, जयपुर और आगरा)। दिल्ली, भारत की राजधानी, देश का प्रमुख प्रवेश द्वार है। यह मोहक विषमताओं का शहर है, इसके स्मारक और भवन आपको सदियों पूर्व के सात पौराणिक नगरों की ओर ले जाते हैं, जो यहां स्थित थे। सदियों पूर्व आधुनिक दिल्ली और उसके आस-पास के क्षेत्रों ने मध्य ग्यारहवीं शताब्दी में लालकोट बनते देखा, अलाउद्दीन खिलजी द्वारा सीरी बनते, तुगलक द्वारा तुगलकाबाद और फिरोजाबाद बनते, उसके बाद लोधी का नगर बनते देखा, और उसके बाद बना शाहजहाँनाबाद, शाहजहां के अंतर्गत मुगलों की राजधानी।

नई दिल्ली, अंग्रेजों द्वारा पीछे छोड़ी गई विरासत को प्रतिबिंबित करती है। दिल्ली की उपस्थिति की धड़कन एक व्यक्ति को मौन अतीत की ओर विचार

को प्रेरित करती है। तुलनात्मक रूप से, नई दिल्ली एक ऐसा शहर है जो सहस्त्राब्दि के मानकों पर खरा उतरने का भरपूर प्रयास कर रहा है।

आगरा, ताज महल का शहर है, जहां मुगल काल के अनेक और ऐतिहासिक स्थल हैं।

गुलाबी शहर, जयपुर, 1727 में महाराज सवाई जय सिंह-द्वितीय ने बनवाया। विश्व में यही एक अकेला शहर है, जो इसे विभाजित करते नौ आयताकार खण्डों द्वारा ब्रह्माण्ड के नौ भागों के प्रतीक रूप में प्रस्तुत करता है। बीते कल के महल और किले जो शाही शोभायात्राओं और वैभव के प्रत्यक्ष गवाह थे, आज स्मारकों के रूप में जीवित हैं, जिन्हें इस गुलाबी शहर के लोगों की जीवन-शैली में स्वाभाविक रूप से स्वीकार कर लिया गया है। साइकिलों, कारों और बसों के व्यस्त यातायात के अतिरिक्त और कुछ भी बदला हुआ नहीं दिखाई देता।

विरासत (Heritage)

भारतीय ऐतिहासिक संस्कृति और प्राकृतिक कोषों का भण्डार, विश्व की सभ्यता और इतिहास में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

ताज महल, आगरे का किला, और फतेहपुर सीकरी, कोणार्क का सूर्य मंदिर, खजुराहों के मंदिर, महाबलीपुरम के स्मारक, वृद्धीश्वर मंदिर, हंपी स्मारक, अजंता और एलोरा की गुफाएं जैसे कुछ स्मारक विश्व विरासत स्मारक (World Heritage Monuments) घोषित किए जा चुके हैं। (विस्तृत विवरण विरासत पर्यटन नामक अध्याय में)

इन स्मारकों के अतिरिक्त, ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कई मंदिर, किले, महल, स्तूप, मकबरे भी देश भर में फैले हैं।

संगीत एवं नृत्य :

भारतीय शास्त्रीय संगीत अपने शांतक गुणों और बारीकियों के कारण जाना जाता है। प्रसिद्ध संगीतज्ञ वाद्ययंत्रीय अतिरंजिका के आधिक्य प्रदान करते हैं जिसमें काश्मीर के जलतरंग से लेकर तमिलनाडु का मृदंग सम्मिलित है।

प्रदर्शनकारी कलाओं में सर्वप्रमुख भारत के शास्त्रीय नृत्य है। भंवरनुमा रंगों, स्वर्णाभूषणों और धारा-प्रवाह गतिविधि के शानदार एकल अथवा सामूहिक प्रदर्शन में प्रत्येक नृत्य शैली अपने सौन्दर्य के लिए पूर्णतः प्रशंसनीय है। भरतनाट्यम, ओडिसी, कत्थकली, कुचिपुड़ी, मोहिनीअट्टम - यह तथा देश भर के विभिन्न राज्यों में जन्में शास्त्रीय नृत्य की विभिन्न शैलियां - सभी धार्मिक पूजन-अर्चन की शैलियाँ हैं।

संगीत एवं नृत्य की शास्त्रीय विचारधारा के अतिरिक्त, लोक संगीत और नृत्य की भी एक विशाल परंपरा है।

चित्रकला :

भारतीय चित्रकला की शुरुआत आदि मानव की चट्टानों और गुफाओं में की गई कलाकृतियों से होती है। होशंगाबाद, मिर्जापुर और बुम्बेटका जैसे स्थानों पर यह आज भी जीवित हैं।

भारत की सूक्ष्म चित्रकला परंपरा का प्राचीनतम् तथा कदाचित सर्वोत्कृष्ट उदाहरण अजन्ता की गुफाओं में पाया जाता है। भित्ति-चित्र परंपरा कुछ कम मात्रा में चालुक्याई बादामी गुफाओं (6ठीं शताब्दी), पल्लव पणमलाई (7वीं शताब्दी), चोल तंजौर (12 वीं शताब्दी) में जारी रही। यह परंपरा केरल में 18 वीं शताब्दी के मध्य तक जारी रही।

हस्तलिपि चित्रकला बंगाल और नेपाल से आई जो मुख्यतः बौद्ध कथाओं का वर्णन करती थी। मुगलों के आगमन के साथ लघु-चित्रकला की विभिन्न विचारधाराएं उभरीं, जिनमें से प्रत्येक की एक भिन्न शैली थी।

अंग्रेजी शासनकाल में, ईस्टइंडिया कम्पनी ने भारतीय कलाकारों को तेल और जलरंगों से नयनाभिराम प्राकृतिक दृश्यों की चित्रकारी हेतु नियुक्त किया।

पर्व :

संपूर्ण वर्ष भर अनगिनत मेलों और उत्सवों समेत, भारत सदैव ही उल्लासमय उत्सवों के साथ जीवंत रहता है।

दीपावली : एक रंगबिरंगा दस दिनों लम्बा उत्सव, संपूर्ण भारतवर्ष में अक्टूबर/नवम्बर मनाया जाता है।

होली : रंगों का त्योहार (फरवरी-मार्च), उत्तर भारत।
बैसाखी : हिंदू नव वर्ष (अप्रैल) का आरंभ, उत्तर भारत।
ओणम : केरल का फसल-कटाई उत्सव (सितम्बर), जो रंगबिरंगी नौकाओं की दौड़ से जीवन्त हो उठता है।
रेगिस्तान के उत्सव : जैसलमेर, राजस्थान (फरवरी)
पुष्कर मेला : अजमेर,राजस्थान (नवम्बर)
पोंगल : तमिलनाडु का फसल-कटाई उत्सव (जनवरी)
सूरजकुण्ड हस्तकला मेला : दिल्ली (फरवरी)
लद्दाख और सिक्किम के बुद्ध-विहार पर्व

खरीदारी :

भारत की वृहद् सांस्कृतिक विविधता ने शैलियों और कीमतों की सच्ची विलक्षण भिन्नताओं से युक्त, हस्तशिल्प का एक भरपूर खजाना प्रदान किया है। भारत में आप महीन जरी, झिलमिलाता रेशम, ऊनी, सूती, और अन्य वस्त्रों की भरपूर श्रंखला, लखनऊ का चिकन और जरदोजी का काम, गुजरात और राजस्थान का शीशे का काम देख और खरीद सकते हैं। विभिन्न समुदायों की भूमि के रूप में भारत जातीय परिधानों का देश है। सोना, चांदी, आभूषणों, बहुमूल्य और अर्ध-बहुमूल्य पत्थरों की आश्चर्यजनक भिन्नता उपलब्ध है। सोना, चांदी, तांबा, पीतल और फूल को बारीकी से निर्मित आकृतियों, मूर्तियों, आभूषणों और उपयोगी वस्तुओं का रूप दिया जाता है। भारत के कुशल कुम्भकारों द्वारा उपयोगी और सजावटी मूल्य की नयनाभिराम वस्तुएं निर्मित की जाती हैं। उत्तर प्रदेश में खुर्जा और चिनहट की कुम्भकारी, राजस्थान की नीली कुम्भकारी, और आगरा का संगमरमर का काम प्रसिद्ध है। बिहार की मधुबनी चित्रकला, राजस्थान की सूक्ष्म चित्रकला, काष्ठ कला भी खरीदारी हेतु महत्वपूर्ण वस्तुएं हैं। खरीदारी में गुणवत्ता, भिन्नता और पैसे के बदले मूल्य के दृष्टिकोण से भारत विख्यात है।

रसोई :

भारतीय रसोई समृद्ध, विविध, मसालेदार और तीखी होती है। प्रत्येक राज्य की अपनी एक विशेषता होती है। उत्तर में, मुख्य भोजन में चपटी रोटियों की एक संपूर्ण श्रेणी सम्मिलित है, जैसे पूरी, चपाती, नान और पराठे। दक्षिण में

चावल पर आधारित खाना-खजाना प्रत्येक भोजन का एक महत्वपूर्ण भाग होता है- फूली हुई सफेद इडलियां, डोसे, दालें संपूर्ण भारतवर्ष में सामान्यतः पाई जाती हैं।

भारत के कई रुचिकर पाक पदार्थ भूतकाल के महान शाही दरबारों से निकलकर आये हैं। उत्तर भारत की रसोई महान मुगलों से सर्वाधिक प्रभावित हुई जो सालन, कोरमे और स्वादिष्ट तंदूरी नुस्खों-विभिन्न कबाबों और मसालेदार भुने मुर्गों के स्वाद से भरपूर है।

अन्य शाही रसोई में काश्मीर का वाजवान, अवध की दम-पुख्त रसोई और हैदराबाद के पुलाव और बिरयानी सम्मिलित हैं।

गोवा, केरल और पश्चिम बंगाल के तटीय राज्य समुद्री-भोजन में समृद्ध हैं।

आवास :

भारत प्रत्येक व्यक्ति के बजट और जीवन शैली के अनुरूप आवास की असामान्य विविधता और संपूर्ण श्रंखला प्रदान करता है। सभी मुख्य शहरों और गंतव्य स्थानों पर अंतर्राष्ट्रीय मानकों से मेल खाते होटल हैं, जिनमें पांच सितारा डीलक्स होटलों से लेकर सामान्य बजट आवास तक की श्रंखला सम्मिलित है। समुद्र तटीय रिसार्ट होटल, सभी रुचियों और बजट के अनुसार उपलब्ध हैं। कई पूर्ववर्ती रजवाड़ों के स्थानों की यात्रा का सबसे रुचिकर आयाम ''पैलेस होटलों'' (होटलों में परिवर्तित महलों) में आवास होता है। तीर्थ स्थानों पर धर्मशालाएं, सामुदायिक आवास, भारत को अनुभव करने का एक अनोखा तरीका है। भारत के कई यूथ हास्टल सस्ता आवास प्रदान करते हैं। कश्मीर की यात्रा तो तब तक पूरी नहीं होती जब तक कि एक हाउस बोट (तैरता घर) में न रह लिया जाए।

वन्य जीवन :

भारत में 80 राष्ट्रीय उद्यानों और 441 वन्य जीव अभ्यारण्यों में उसका विशाल जंगल और वन्यजीव सुरक्षित है।

उत्तरी भारत में, उत्तराँचल के कार्बेट नेशनल पार्क और उत्तर प्रदेश के दुधवा नेशनल पार्क, मध्य प्रदेश के कान्हा नेशनल पार्क और बांधवगढ़ नेशनल पार्क और राजस्थान के रणथंभौर नेशनल पार्क और सरिस्का टाइगर रिसार्ट, सभी शानदार परभक्षी- बाघ के आवास स्थल है। इन स्थानों पर बारासिंघों समेत विभिन्न प्रकार के हिरन और छोटी बिल्लियों की कई प्रजातियां स्तनपाई पशु और चिड़ियां

भी निवास करती है।। पश्चिमी भारत में, गुजरात का गिर वन ही जीवित एशियाई शेरों का निवास स्थान है। कच्छ के रण के कुछ क्षेत्रों में भारतीय जंगली गधों का निवास है। एक अन्य रुचिपूर्ण पक्षीविहार केवलादेव राष्ट्रीय पक्षी उद्यान, भरतपुर में है जहाँ अनेकों प्रकार की चिड़ियों का आवास है।

उत्तर-पूर्व असम में·काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान और मनास बाघ अभयारण्य के घने दलदलों में भारत के एक सींग वाले गैंडे रहते हैं। दक्षिण में, महत्वपूर्ण वन्य पक्षीविहारों में, कर्नाटक के बांदीपुर और नागरहोल राष्ट्रीय उद्यान, तमिलनाडु की मुडुमलाई पक्षी विहार और केरल का पेरियार राष्ट्रीय उद्यान सम्मिलित हैं। इन पक्षी विहारों के हरे-भरे जंगल बाघ और तंदुओं जैसे परभक्षियों, जंगली सुअर, पेंगोलिन, स्लेंडर-टोरिस और मैकाकिस जैसे जानवरों के लिए जाना जाता है, साथ ही यहां अनोखे प्रकार की रंगबिरंगी चिड़ियां भी निवास करती है।

साहसिक खेल (Adventure Sports):

भारत की विशाल भौगोलिक विविधता घर से बाहर रोमांच की प्रचुर विविधताएं प्रस्तुत करती हैं।

ट्रेकिंग (Trekking) :

इसके लिए हिमाचल प्रदेश की हिमालय पर्वत-श्रंखला और उत्तरांचल के कुमाऊँ और गढ़वाल क्षेत्र पर्याप्त अवसर प्रदान करते है। शीतकालीन खेल के अवसर कश्मीर, उत्तरांचल और हिमाचल प्रदेश में केन्द्रित हैं।

स्कीइंग (Skiing):

औली (उत्तरांचल), मनाली और नाकण्डा (हिमाचल प्रदेश) में।

व्हाइट वाटर रैफ्टिंग (White water Rafting) :

ऋषिकेश (उत्तरांचल) और कुल्लू जिला (हिमांचल प्रदेश) में।

स्नोर्केलिंग (Snorkelling): यह मुख्यतः लक्षद्वीप और अण्डमान और निकोबार द्वीप समूहों के समुद्रतलों में उपलब्ध है। गोवा भी भिन्न-भिन्न जल क्रीड़ाओं के लिए प्रसिद्ध है। श्रीनगर की डल और नागिन झीलों पर जल स्कीइंग (Skiing) भी गर्मियों में समय-व्यतीत करने के लिए प्रसिद्ध है।

गुब्बारे की सैर (Ballooning) : बैलूनिंग क्लब आफ इंडिया दिल्ली में प्रतिवर्ष एक बैलूनिंग प्रतियोगिता आयोजित करता है।

हैंग ग्लाइडिंग (Hang Gloding) : हिमाचल प्रदेश में।
ऊंट की यात्रा (Camel Safari) : राजस्थान में।
चट्टानारोहण (Rock Climbing) : गढ़वाल (उत्तरांचल) मनाली (हिमाचल प्रदेश), और धंज (हरियाणा)।
गोल्फ (Golf) : सभी मुख्य शहरों में अच्छे गोल्फ कोर्स उपलब्ध हैं।
माऊंटेन बाइकिंग (Mountain Biking): उत्तरांचल, और हिमाचल प्रदेश में।

पर्वत : विश्व की सबसे ऊंची पर्वत श्रंखला हिमालय भारत के उत्तरी सीमा क्षेत्र में फैली हुई है। यह एक सच्चा पर्वतारोही देश है, जहां बर्फ से ढकी चोटियां, घने लहराते जंगल, कल-कल करती पर्वतीय धाराएं, और पुष्प एवं वन्यजीवों की असंख्य प्रजातियां पाई जाती हैं। कुल्लू, मनाली, पटनीटाप, सानासर, सिक्किम, दार्जलिंग, श्रीनगर, नैनीताल, मंसूरी, उत्तर भारत के महत्वपूर्ण पर्वतीय गंतव्य स्थान हैं। ऊटी और कोडईकनाल, दक्षिण भारत के नयनाभिराम पर्वतीय शहर हैं।

समुद्रतट एवं द्वीपसमूह :

भारत का 6000 किलोमीटर समुद्र-तटीय क्षेत्र अपनी सीमा में चमकती रेत तथा चट्टाने समेटे हैं जहां कई प्राचीन समुद्र तट और विश्व-स्तर के समुद्र तट के रिसार्ट (Beach Resorts) स्थित हैं।

सुनहरी रेत और ताड़ से भरपूर लघुनिवेशिकाओं का सबसे सुंदर विशाल विस्तार गोवा और केरल में देखने को मिलता है। उड़ीसा में पुरी नयनाभिराम समुद्र तटों के साथ वास्तुशिल्प की सुंदरता का एक अनोखा अनुभव प्रदान करता है। लक्षद्वीप, अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह सर्वोत्तम जल क्रीड़ा (Water sports) सुविधाएं प्रदान करते हैं और समुद्री-जीवन की बहुत सी विविधताएं भी प्रस्तुत करते हैं।

मरुस्थल (Desert) :

जोधपुर, बीकानेर, बाड़मेर,और जैसलमेर मिल कर भारत का मरुस्थलीय क्षेत्र बनाते हैं।

□□□

अध्याय-3

भारतीय वास्तुशिल्प
(Indian Architecture)

अपनी प्रकृति में ही कला, विचारों की एक दर्श्य व्याख्या अथवा स्पष्ट प्रकटीकरण होती है। कला का क्षेत्र विस्तृत होता है जिसके मुख्यतः तीन रूप होते हैं-वास्तुकला, मूर्तिकला और चित्रकला।

वास्तुकला भवन निर्माण से संबधित है। वास्तुकला अपने स्थानिक (Spatial) गुणों में मूर्तिकला और चित्रकला से भिन्न होती है, यद्यपि यह पूर्णतः स्थानिक (Spatial) नहीं होती। एक अच्छे वास्तुशिल्पकार को एक मूर्तिकार और साथ ही एक चित्रकार की मदद की आवश्यकता होती है। मूर्तिकार, भावनाओं को पत्थर अथवा धातु, मंदिर की दीवारों पर, आंतरिक सज्जा, इत्यादि में प्रतिरुपित करता है और साथ ही कला के स्वतंत्र टुकड़ों को उभारता है। चित्रकला, एक जो कि अधिक कोमल है,में रंगों और कूंचियों का उपयोग होता है। यदि यह दीवारो पर की जाए तो फ्रेस्को (fresco) अथवा टेम्परा (tempera) कहलाती है, अथवा यह कला का स्वतंत्र नमूना भी हो सकती है।

सिंधु घाटी का वास्तुशिल्पः-

भारतीय वास्तुशिल्प की यात्रा सिंधु घाटी की सभ्यता (ईसा से तीन हजार वर्ष पूर्व) से आरंभ होती है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के अवशेष नगर नियोजन की एक अनोखी अनुभूति प्रकट करते हैं। पकाई गई और कच्ची ईंटों को, प्रायः दो अथवा इससे अधिक मंजिलों की इमारतें, झंझरी (grid) प्रारूप पर बनी थीं, बगैर किसी सजावटी अभिप्राय अथवा लेप (plaster) के पूरी तरह उपयोगिताकारी थीं और निर्माण के सिद्धातों के ठोस ज्ञान पर और कुशलता के साथ बनाई गई दिखती थीं।

इनमें खंभे, टोडा मेहराबों, सीढ़ियां इत्यादि का उपयोग होता था। इस काल की वास्तुकला के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण, मोहन-जो-दड़ो के महान हमाम और किले और दो नगरों के अन्नभण्डार थे।

वैदिक काल की वास्तुकला:-

ईसा पूर्व दूसरी सहस्त्राब्दि में सिंधु घाटी नगरों के पतन के बाद इस काल के उच्चतः विकसित और मानकीकृत ईंटों की वास्तुकला ने आगामी वैदिक काल को मार्ग दिया, सरस्वती से गंगा तक की नदियों की घाटी में मिट्‌टी, छप्पर, बांस और लकड़ी से निर्मित चारागाही बस्तियां बनीं। संभवतः वहां गुंबदनुमा छप्पर की छतों, त्रियंकी छतों, मेहराबदार लकड़ी के महलों और छत्तों समेत गोलाकार झोपड़ियों के समूह थे। यह स्थिति मौर्य काल के आगमन तक जारी रही।

मौर्य काल की वास्तुकला (ईसा पूर्व 321 वर्ष से ईसा पूर्व 2000 वर्ष तक):-

मौर्य काल, भारतीय कला के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर रहा है। मौर्य सम्राट महान भवन निर्माता थे और इस काल के कुछ स्मारक और खंभे आज भी हैं और कला के सर्वश्रेष्ठ नमूनों के रूप में मान्य हैं। चंद्रगुप्त मौर्य ने भवनों, महलों और स्मारकों का निर्माण मुख्यतः लकड़ी से किया जो समय के साथ ढह गए हैं।

पटना के निकट राजगृह की दीवारों के अपवाद समेत, जिनका कोई कलात्मक मूल्य नहीं है, हड़प्पा काल और मौर्य काल के मध्य हमारे पास अब कोई वास्तुशिल्पीय अवशेष नहीं है। संभवतः यह इसलिए था क्योंकि इस काल में कुछ भवन पत्थर के बने थे। मेगस्थनीज यह उल्लेख करते हैं कि चंद्रगुप्त मौर्य का महल, यद्यपि बहुत बड़ा था, नक्काशीदार और सोने से मढ़ी लकड़ी का बना था, और जो सबसे पुराना पत्थर से निर्मित भवन जो जीवित बचा प्रत्यक्षतः लकड़ी के मूल पर गढ़ा गया था। भवन निर्माण में पत्थर का उपयोग संभवतः अशोक के शासन काल से आंरभ हुआ। भवन निर्माण के एक माध्यम के रूप में पत्थर का बढ़ता उपयोग, अंशतः विदेशी संपर्क के कारण था; किंतु भारत के अधिक घने बसे और सभ्य क्षेत्रों में से जंगलों का धीरे-धीरे विलुप्त होते जाना भी एक कारण बना।

अशोक काल के कई स्मारक बच कर हम तक पहुंचे हैं जिससे हमें उस काल के भारत के पत्थर के कार्य में तकनीकी कुशलता का एक विचार बनाने में मदद मिलती है। यह कला के एक ऐसे परिपक्व रूप की ओर इंगित करता है जिससे हम कई शताब्दियों पूर्व एक राजमिस्त्री परंम्परा का पूर्वानुमान कर पाते हैं। अशोक द्वारा निर्मित स्मारकों को चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है- स्तूप, स्तंभ, गुफाएं और महल।

(i) स्तूपः-

स्तूप एक विशाल गोलार्द्ध जैसी संरचना होती थी, जो बुद्ध के स्मृतिचिह्नों के लिए एक समाधि स्थल के रूप में था और उनके परि-निर्माण के प्रतीक के रूप में माना जाता था। बाद में, ईश्वर को समर्पण के रूप में बुद्ध के स्मृतिचिह्नों के बगैर भी स्तूप बनाए गए। यद्यपि स्तूप मुख्यतः बुद्ध के अनुयायियों के धार्मिक स्मारक होते थे; तथापि जैनी लोग भी इन्हें बनवाते थे। स्तूप, सामान्यतः छड़ों के बाड़े से घिरा होता था, साथ ही हर मुख्य दिशा में द्वार होता था और सामान्यतः यह सुन्दर प्रतिमाओं से सजे होते थे। यह कहा जाता है कि अशोक ने संपूर्ण भारतवर्ष और अफगानिस्तान में 84,000 स्तूप बनवाए, किंतु उनमें से अधिकांश ढह गए।

वास्तुशिल्पीय दृष्टिकोण से उल्लेखनीय सबसे महत्वपूर्ण स्तूप उत्तर भारत में भरहुत, बोधगया और सांची में, और दक्षिण भारत के अमरावती और नागार्जुनकोण्डा में स्थित हैं। भोपाल के निकट सांची का स्तूप सभी स्तूपों में बड़ा है। इसका व्यास 126 फिट, ऊँचाई लगभग 54 फिट और छड़ों की बाड़ लगभग 11 फिट ऊँची है। विद्वानों के मतानुसार जैसे-जैसे वास्तुकला के कलात्मक कौशल और सौंदर्यबोधी आदर्शों में सुधार हुए, अशोक द्वारा बाद में बनवाये गये स्तूप भी और बड़े हुए और उनमें सुधार आया।

(ii) स्तंभ :-

अशोक द्वारा निर्मित अखण्डित स्तंभ, अभियांत्रिकी, वास्तुकला और शिल्पकला की विजय का प्रतीक हैं। महीन दानेदार बलुआ पत्थरों के बड़े और सम्पूर्ण टुकड़े छेनी से काट कर स्तंभों के आकार में ढाले जाते थे। प्रत्येक स्तंभ

लगभग 50 ऊँचा और भार में लगभग 50 टन होता था। स्तंभ, चुनार की खानों में बनाए जाते और फिर स्थापित किए जाने के लिए भारत के विभिन्न भागों में यातायात द्वारा भेजे जाते थे। कभी-कभी वे पहाड़ियों की चोटियों पर भी स्थापित किए जाते थे।

स्तंभ सामान्यतः तीन भागों में होते थेः अवलम्ब,यष्टि तथा मस्तक। अवलम्ब को जमीन में गाड़ दिया जाता था और यष्टि, मस्तक को सहारा देता था। मस्तक में एक बहुत सुंदर चमकता पत्थर होता था और उसमें गोलाई में एक या अधिक जानवरों की आकृतियां होती थीं। ये अपनी प्रबल अभिकल्पना और वास्तविकतापूर्ण सौंदर्य के लिए उल्लेखनीय हैं। सारनाथ के स्तंभ का शीर्षभाग, जो उस स्थल को संकेतिक करने के लिए बनवाया गया जहां ईश्वर-कृपा-प्राप्त (भगवान बुद्ध) ने पहली बार 'विधानचक्र' को घुमाया, श्रंखला में सर्वोत्तम है और शिल्पकला की सर्वश्रेष्ठ रचना है। पीठ से पीठ जोड़ कर खड़े चार शेरों की सजीव और विस्मयकारी आकृतियां और शीर्षफलक पर उभार में छोटे जानवरों की मनोहारी और शानदार आकृतियां, यह सभी उल्लेखनीय सौंदर्य, प्रताप और ओज समेत कला के एक उच्चतः उन्नत रूप की ओर इंगित करते हैं। इस मस्तक ने कला आलोचकों की सर्वत्र प्रशंसा अर्जित की।

(iii) गुफाएंः-

अशोक को पत्थर काट कर गुफाएं बनवाने का भी श्रेय प्राप्त है, जिनमें से कुछ, दीवालों की सुंदर चमकती सतहों के लिए उल्लेखनीय हैं। गुफाएं, भिक्षुओं के आवास हेतु कठोर और प्रत्यावर्तनीय चट्टानों को काट कर बनाई जाती थीं। यह मुख्यतः गया के निकट नागार्जुन पर्वतों और बाराबा पर्वतों में पाई जाती हैं। कहा जाता है कि सुदामा गुफा नामक बाराबा पर्वतों की एक गुफा अशोक द्वारा अजीविक सम्प्रदाय के भिक्षुओं को समर्पित कर दी गई थी।

ऐसा सत्य ही कहा जाता है कि अशोक ने वास्तुकला की एक ऐसी शैली की शुभारंभ किया जो देश के विभिन्न भागों में फैल गई और कार्ले, अजंता, एलोरा और एलिफैंटा की शानदार श्रेष्ठ रचनाओं में अपने सर्वोत्तम रूप में अभिव्यक्त हुई।

(iv) महल :-

अशोक द्वारा कई महल भी बनवाए गए जिनकी विभिन्न प्राचीनकालीन यात्रियों ने प्रशंसा की। जैसे फा-हियान, जो भारत की यात्रा पर आया था, ने इनके बारे में विस्तार से वर्णन किया है। कहते हैं कि फा-हियान पाटलीपुत्र के अशोक के महल से इतना आश्चर्यचकित हुआ कि उसने कहा कि यह निर्माण कार्य कोई मानव कर ही नहीं सकता, और यह अपूर्व आत्माओं (spirits) की कृति थी। किंतु, तब से इनमें से अधिकांश भवन ढह चुके हैं। अशोक को दो नगरों, कश्मीर में श्रीनगर और नेपाल में ललितपाटन, को बसाने का भी श्रेय प्राप्त है, किंतु वे अब खण्डहर बन चुके हैं। पाटलीपुत्र के स्थलों में उत्खनन से अशोक द्वारा निर्मित स्मारकीय भवनों के कुछ खण्डहरों की खोज हुई। इन भवनों में सबसे उत्कृष्ट है, सौ स्तंभों का एक सभा-भवन।

इस समय के कलाकारों ने, जातकों की कृतियों से बुद्ध के बारे में कथाओं के प्रतिनिधित्व द्वारा लोगों को धार्मिक शिक्षा प्रदान करने का प्रयास किया। उन्होंने प्रत्येक दन्तकथा को एक ही पट्टी अथवा गोलाकार फलक में तराशी गई एक चित्रात्मक इकाई के रूप में प्रतिनिधित्व करने की तकनीक अपनाई। इस प्रकार की वर्णनात्मक शिल्पकला का सर्वोत्तम उदाहरण अमरावती में पाया जाता है, जहां नीलगिरि हाथी राजगृह की सड़कों पर आपे से बाहर हो दौड़ता दिखाया गया है और 'ईश्वर-कृपा-प्राप्त' इसे वश में करते हैं। चूंकि बुद्ध को एक नया जीवन देना धर्मविरूद्ध माना जाता था, उनका प्रतिनिधित्व कुछ चिह्नों द्वारा किया गया जैसे वृक्ष और आसन (जो उनके ज्ञान का प्रतिनिधित्व करते हैं) और धर्म-चक्र जो उनके उपदेशों का प्रतिनिधित्व करता है।

मौर्य काल के बाद (ईसा पूर्व 200 वर्ष से 300 वर्ष) की वास्तुकलाः-

इस काल में बड़े पैमाने पर स्तूपों का निर्माण जारी रहा। चट्टानों से सैकड़ों गुफाएं, मठ-विषयक उद्देश्य से काटी गईं। अशोक काल की गुफाओं से भिन्न, जो सीधे-सादे कक्ष होते थे, अब गुफाएं स्तभों और शिल्पकला से सजाई जाने लगीं।

यह गुफाएं दो प्रकार की थीं। एक तरह की गुफा भिक्षुओं के निवास के लिए होती थीं, जिन्हें विहार कहा जाता था। विहार सीधे-सादे होते थे जिनमें बीच में एक सभा-स्थल और किनारे-किनारे छोटे-छोटे कक्ष होते थे। दूसरे प्रकार की गुफाओं में चैत्य अथवा प्रार्थना भवन होते थे। एक चैत्य में एक लम्बा आयताकार सभा-कक्ष होता था जिसके अंत में अर्धवृत्तकक्ष होता था। अर्थात् प्रवेश-द्वार के ठीक सामने का सिरा अर्धगोलाकार होता था, न कि सीधा। स्तंभों की दो लम्बी कतारें सभा-कक्ष को एक बड़े मध्यभाग और दो किनारे के गलियारों में विभाजित करती थीं। एक छोटा स्तूप, जिसे दगोबा कहते थे, अर्धवृत्तकक्ष के सिरे के निकट स्थित होता था। आगे की दीवाल विस्तृत शिल्पकलाओं से सजी होती थी, और मध्यभाग गलियारों की ओर ले जाते तीन छोटे द्वार होते थे। किन्तु मध्य द्वार के ऊपर घोड़े की नाल के आकार की एक बड़ी खिड़की से बहुत रोशनी अंदर जाती थी। अंतिम छोर, दगोबा तक को रोशनी के उजाले से भर दती थी।

इसके अतिरिक्त मौर्य परंपरा का थोड़ा बहुत अनुसरण करते हुए सामान्य भवन निर्माण गतिविधियाँ भी जारी रहीं।

धार्मिक वास्तुकलाः-

बुद्ध और जैन धर्मों के विकास और हिन्दुत्व के साम्प्रदायिक पंथों के उत्थान ने वास्तुकला के विकास को एक बड़ा बल प्रदान किया। परिणामस्वरूप वास्तुकला के प्रमुख प्रारूप इस प्रकार उभरेः स्तूप (बुद्ध की स्मारकीय इमारत), विहार (आवासीय भवन अथवा मठ), चैत्य (धार्मिक प्रार्थना के लिए सभा-भवन), गुफाएं और मंदिर।

स्तूपः-

स्तूप, बुद्ध धर्म का मुख्य अभिलाक्षणिक स्मारक होता है। यद्यपि यह वैदिक काल में भी पाया जाता था, परन्तु बुद्ध कला में यह परिपक्वता और श्रेष्ठता तक पहुँचा। मूलतः एक धार्मिक गुरू अथवा संत के अवशेषों पर साधारण आयामों का उठाया गया एक मिट्टी का टीला, यह उत्तरोत्तर वृद्धि का एक पिण्ड बन गया और पत्थर के एक बाहरी आवरण से आच्छादित होता था।

यह कभी-कभी एक अथवा अधिक द्वारों समेत साधारण अथवा पत्थर की वेदिका से घिरा होता था, जो प्रायः विस्तृत प्रारूप का और शिल्पकला से सजा होता था।

सबसे महत्वपूर्ण स्तूप उत्तर भारत के भरहुत, बोधगया और सांची में और दक्षिण के अमरावती 'और नागार्जुन कोण्ड में स्थित हैं।

विहारः-

आरंभिक विहार (मठ) बहुत कुछ उसी प्रकार नियोजित किए जाते थे जैसे भिक्षुओं के लिए व्यक्तिगत आवास जिसमें एक आंगन उन छोटे-छोटे कक्षों से घिरा होता था जो इसी में खुलते थे। समय के साथ विहार बड़े प्रतिष्ठान बन गए और महत्वपूर्ण शैक्षिक केन्द्रों के रूप में, अपने सामान्य उद्देश्यों के अतिरिक्त भी, उपयोग होते रहे। नालंदा और पहाड़पुर के अवशेष, विहारों के उल्लेखनीय उदाहरण हैं। विहारों के अन्य उदाहरण अजंता, कार्ले, एलोरा की गुफाएं हैं जो सभी महाराष्ट्र में हैं, और मध्य प्रदेश में बाघ में स्थित हैं।

चैत्यः-

चैत्य, एक चौखटे, दो गलियारों और एक स्तूप समेत महामंदिर के रूप का एक गहरा उत्खनन होता था, जिसमें घोड़े के नाल जैसा एक बड़ा द्वार उसके मुहरे में खुलता था। महत्वपूर्ण ऐतिहासिक चैत्य, कार्ले, अजंता, भाजा, इत्यादि में हैं। कार्ले के चैत्य में चमकदार और सजावट से पूर्ण स्तंभों और मेहरबदार छतों समेत एक सुंदर सभागृह है।

गुफाएंः-

बौद्ध ढांचों के रूप में आरंभिक मन्दिर चट्टानों को काट कर बनाई गई गुफाएं होती थीं, जिनका उत्खनन आरंभिक ईसाई युग में पश्चिमी दक्कन में किया गया- उदाहरणतः अजंता और कार्ले में। द्वितीय चरण में कुछ सुविस्तृत रचनाएं बनीं। महायान बौद्ध, हिन्दू धर्म, और जैन धर्म में मूर्ति पूजा की बढ़ती प्रसिद्धि ने भवन निर्माण गतिविधियों को प्रेरित किया। अजंता, एलोरा, एलिफेंटा के गुफा

मन्दिर, महान शासन कृष्णा (राष्ट्रकूट) द्वारा एलोरा में कैलाशनाथ मंदिर, महाबलीपुरम के मंडप और रथ इस काल की कुछ महान उपलब्धियां थीं।

बौद्ध गुफाएं:-

महत्वपूर्ण बौद्ध गुफा स्थल, कार्ले, कन्हेरी, नासिक, माजा, पीतल खोरा तथा कोण्डने हैं। यद्यपि बौद्ध गुफाएं एलोरा जैसे स्थानों पर भी पाई जाती हैं, तथापि यहाँ पर हिंदू और जैन गुफाएं भी पाई जाती हैं।

सामान्यतः सभी बौद्ध गुफाएं, विहार, एवं चैत्य सभा-स्थलों और स्तूप का एक मिश्रण होती हैं। इसलिए वे पुरोहित समुदाय की संपूर्ण आवश्यकताएं पूरी करते थे जहां वे न सिर्फ रहते थे बल्कि ईश्वर की आराधना भी करते थे।

अजंता की गुफाएं:-

अजंता की गुफाएं, महाराष्ट्र में औरंगाबाद से 60 मील की दूरी पर स्थित हैं। वहां कुल 30 गुफाएं हैं, जिनमें से 25 विहार गुफाएं हैं और 5 चैत्य गुफाएं हैं। वहां, बौद्ध और हिंदू, दोनो ही लक्षणों को सम्मिलित करले वाली समेत गुफाएं हैं। कालक्रमानुसार, अजंता के मंदिरों की तिथि निर्धारण ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से ईसा बाद 5 वीं शताब्दी हुआ है।

गुफाएं X, XIX और अन्य बौद्ध संप्रदाय की हैं। अजंता की गुफाएं अपनी चित्रकला के लिए अधिक प्रसिद्ध हैं। सछःदांत जातक (जहां वोधिसत्व ने हाथी का रूप धरा) और सोती हुई राजकुमारी की जातक कथा जैसे उदाहरण, उल्लेखनीय चित्र हैं। इन चित्रों के अतिरिक्त यह गुफाएं शिल्पकला के लिए भी उल्लेखनीय हैं। उदाहरणतः, गुफा संख्या XIX पर नागराज की शिल्पकला इस काल की एक उत्कृष्ठ उदाहरण मानी जाती है। चित्रकला और शिल्पकला दोनों ही में अजंता के चिह्न बाघ गुफाओं और सीत्तात्रावसल में पाए जाते हैं।

महाराष्ट्र की गुफायें:-

महाराष्ट्र में औरंगाबाद से 33 किलोमीटर दूर स्थित ऐलोरा की गुफाएं अपनी वास्तुकला, शिल्पकला और चित्रकारी के लिए प्रसिद्ध हैं। गुफाओं की कुल

संख्या 71 हैं यह विश्वास किया जाता है कि यह गुफाएं लगभग 8 वीं शताब्दी में निर्मित हुई। इसके अतिरिक्त, हिंदू वास्तुकला के आरंभ हेतु एक केंन्द्र के रूप में यह बौद्ध गुंफा एलोरा खड़ी है। कृष्ण प्रथम के समय में गुफा-16 कैलाशनाथ के लिए एक मंदिर बना दी गई थी। यह एक अखण्ड मंदिर है और बौद्ध परंपरा की निरंतरता के दायरे में आता है। उदाहरणतः मुंबई के निकट जोगेश्वरी और एलिफैंटा, जो राष्ट्रकूट के शासन में काट कर बनाए गए। एलोरा में कैलाशनाथ मंदिर दोमंजिला है। स्तंभों और अन्य अंशों को कलात्मक दक्षता और वर्णनात्मक प्रकृति प्राप्त है, यद्यपि यहां तक कि ऐसा जोगेश्वरी में भी नहीं पाया जाता जो आरोही निक्षेपों और निलम्बी निक्षेपों समेत गुफा में एक शिव मंदिर है, जहां स्तंभों पर गोलाकार फलक में कमल के फूल तराशे गए हैं।

एलिफैंटा की गुफाएंः-

ये गुफाएं अरब सागर में एक टापू पर मुबई के बंदरगाह के निकट स्थित हैं। यह गुफाएं पुर्तगालियों द्वारा विध्वंस की प्रक्रियां से हो कर गुजरे हैं इनमें एक शिव मंदिर और कई मूर्तिकलाएं हैं। मूर्तिकलाओं में तीन सिरों वाले शिव (तीन भावों को दर्शाते-सृष्टिकर्ता, पालनर्ता और विध्वंसकर्ता) प्रसिद्ध है। मध्य का सिर शिव का है, बायां उमा (शक्ति का) और दायां अघोरा भैरव का। यह विश्व के सत्व (शिव), रजः (उमा) और तमः (भैरवी) गुणों का संगम है।

बाघ की गुफाएंः-

छठीं शताब्दी की यह गुफाएं मध्य प्रदेश में स्थिति हैं। सुन्दर भित्तिचित्रों और मूर्तिकलाओं और पत्थर की कृतियों समेत कुल 9 गुफाएं (सभी विहार गुफाएं) हैं। किन्तु यह गुफाएं बुरी तरह क्षत-विक्षत हैं। बाघ की गुफाएं न केवल अजंता जैसी चित्रकारी पंरपरा दर्शाती हैं बल्कि बरामदों का निर्माण भी जो अन्य गुफाओं से जुड़ी हैं और गुप्त काल की वास्तुशिल्प परंपरा की पहचान में मदद करती हैं।

जूनागढ़ की गुफाएंः-

ऊपरकोट, अर्थात 'गढ़' एक प्राचीन किला है जो 14 वीं शताब्दी के मध्य से 16 वीं शताब्दी के अंत तक के मध्य ऐतिहासिक घेराबंदी का दृष्य रहा है।

इसका प्रवेष तोरणद्वार से है और यह हिंदू तोरण का एक बड़ा सुंदर उदाहरण है। प्राचीन समय में इसमें कई बौद्ध मठ थे। कुछ गुफाएं दो या तीन मंजिली थीं। यह ईसा बाद 300 वर्ष का है। इन गुफाओं का उत्कृष्ट लक्षण वे सभा-कक्ष हैं जो घुमावदार सीढ़ियों से जुड़े हैं। इसके ऊपरी कक्ष में एक (उच्च) ताप सह (repractory) और गलियारे से घिरा एक तालाब था, यह सभी छः समृद्ध रूप से तराशे गए स्तंभों द्वारा समर्थित था जो बारीक शिल्पकारी दर्शाते थे।

शंकरम की गुफाएंः-

ये गुफायें आज के आंध्र प्रदेश के विशाखापटनम् जिले में अणकपल्ली के निकट स्थित हैं। 'शंकरम', नाम संस्कृत के 'संघारम्' शब्द का बिगड़ा हुआ रूप है। जो स्तूप, चैत्य और विहार के निकट के संपूर्ण आवासीय समूह को सूचित करता है। शंकरम की गुफाएं एक पहाड़ी पर निर्मित हैं जो पत्थरकाट वास्तुशिल्प और ईंट की कार्य कुशलता दर्शाती हैं। ये गुफाएं, उत्तर गोदावरी में बौद्ध धर्म का प्रबल प्रभाव प्रदर्शिती हैं। ये 6वीं शताब्दी के आरंभ में बनी थीं। वे उत्तर आंध्र में महायाण और वज्रयाण के प्रभाव की गाथा कहती हैं।

जोगेश्वरी की गुफाएंः-

इनकी तिथि 8वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में आंकी गई है। सालसेटल द्वीप (बम्बई द्वीप) पर स्थित यह गुफाएं महायाण बौद्ध वास्तुकला की हैं। वर्तमान में यह गुफाएं बहुत क्षत-विक्षत रूप में हैं। फिर भी इन पर ब्राह्मणवादी प्रभाव स्पष्टतः दिखता है। स्वास्तिकाकार सभा-कक्ष में कई प्रवेश द्वार केन्द्र में स्थित एकासी समाधियों की ओर ले जाते हैं।

मोंटपेसीर (मण्डपेश्वर)ः-

इसकी तिथि 8वीं शताब्दी आंकी गई है। यहां तीन गुफाएं हैं। विश्वास किया जाता है कि मात्र यही ब्राह्मणवादी गुफाएं हैं जिन्हें ईसाई समाधियों में परिवर्तित कर दिया गया। एक अनाथालय, एक पुर्तगाली गिरजाघर और एक फ्रांसीसी मठ इन गुफाओं के परिसर में अब भी विद्यमान हैं।

नासिक की गुफाएं:-

नासिक गुफायें अथवा 'पाण्डु लेना' (Pandu Lena), पहली शताब्दी की 23 गुफाओं का समूह है। ये गुफाएं नासिक के दक्षिण-पश्चिम में, मुबई राजमार्ग पर, त्रिंबक पर्वतीय श्रंखला के पूर्वी ओर स्थित हैं। इन गुफाओं में जो बौद्ध वास्तुकला के हिना-यान विचारधारा की हैं, तीन बड़े सभा-कक्ष और एक प्रार्थना-कक्ष हैं और एक सिंहासन, पदचिह्नों अथवा पादपीठ के माध्यम से भगवान बुद्ध के आत्मिक आयाम को सांकेतिक रूप से प्रस्तुत करते हैं।

ब्राह्मणवादी और जैन गुफाएं:-

सबसे पुराने ब्राह्मणवादी मंदिरों को उदयगिरि (मध्य प्रदेश) की गुफाओं के समूह में देखा जा सकता है, जो लगभग पांचवी शताब्दी के आस-पास की हैं। अधिकांश गुफाएँ, सामने एक खंभें के ढांचे से निर्मित ड्योढ़ी समेत छोटे आयताकार मंदिरों (कभी-कभी ढांचागत गुफाएं बड़ी करके आवश्यक आकार दिया जाता था) का प्रतिनिधित्व करती हैं। गुफा संख्या IX, संभवतः श्रंखला में सबसे नई, चार-खंभों का बरामदा और अन्तिम बिन्दु तक गहराई में एक चौकोर पवित्र कक्ष समेत एक सांभयुक्त सभाकक्ष से परिचय कराती है (6 वी शताब्दी)। द्रविण राष्ट्र में गुफा शैली 7 वीं शताब्दी में महेन्द्रवर्मन पल्लव द्वारा परिचित कराई गई थी। दक्षिण में इस विधि का एक मन्दिर सामान्यतः एक आयताकार सभागार का आकार लेता है, जिसे स्थानीय भाषा में मंडप (मंडपम) कहते हैं, जिसमें एक या अधिक कक्ष सभागार के एक अथवा दूसरी ओर और गहराई में काटे जाते थे। अग्रभाग, खंभों की एक पंक्ति का बना है जिसमें बन्धनियां प्रस्तरपाद को समर्थित करती हैं और उनकी रूपरेखा और सजावट इन गुफाओं के कालक्रमिक और शैलीगत अनुक्रम निर्धारित करने के लिए उपयोगी आंकड़े देती है।

ऐलोरा में ब्राह्मणवादी गुफाएं रूपरेखा की निर्भीकता, उनके आयामों के विस्तार और उनके अग्रभाग और आंतरिक सज्जा के उपचार के लिए प्रसिद्ध हैं। इस आस्था के सोलह उत्खननों में, दशावतार (XV), रावण-की-खाई (XIV), रामेश्वर (XXI) और धूनार लेना (XXIX), इसके अतिरिक्त बहु प्रसिद्ध कैलाश-चट्टानों को काट कर बनाया गया एक संपूर्ण मंदिर परिसर एक भिन्नताकारी

ढांचागत रूप का अनुकरण है, सबसे महत्वपूर्ण हैं। इन्हें तीन किस्मों में बांटा जा सकता है। पहले, दशावतार गुफा, में कई स्तंभों पर खड़ा एक सभा-भवन है जिसके दूर कोने पर एक पवित्र कक्ष है और सभा-भवन मूर्तियों से सुसज्जित हैं। दूसरी किस्म में, एक स्वतंत्र रूप से खड़ा चौकोर कक्ष है जिसके चारों ओर परिक्रमा के लिए मार्ग है, केंद्र में एक चट्टान को काट कर बनाया गया है। इस श्रेणी की दो गुफाओं, रावण-की-खई और रामेश्वर में दूसरी (रामेश्वर) इसके संपूर्ण भाग पर शिल्प के सुन्दर भण्डार और अग्रभाग की सुंदर परिकल्पना और जोड़ों पर मनोहारी शिल्प के लिए अधिक विख्यात है। तीसरे समूह की, धूमर लेना (आठवीं शताब्दी के मध्य की) ब्राह्मणवादी गुफा-मंदिरों में सर्वाधिक विस्तृत रूप से निर्मित है। इसमें एक स्वास्तिकाकर स्तंभों-युक्त सभा-भवन है, जिसमें कई प्रवेश द्वार और आंगन हैं, जिसके पिछवाड़े के निकट चट्टान से निर्मित स्वतंत्र रूप से खड़ा चौकोर कक्ष है। संभवतः यह गुफा, ब्रह्मणवादी उत्खननों में सबसे सुंदर है, सामान्यतः इसी प्रारूप का अनुसरण करते हुए, एलिफैंटा इससे अधिक विख्यात गुफा है।

दो गुफाएं, एक बादामी में और दूसरी ऐहोल में (सातवीं शताब्दी के मध्य की) इस चरण की जैना गुफा का सबसे पुरानी गुफा का प्रतिनिधितव करती है। प्रत्येक गुफा के दूर कोने पर खुदे पवित्र कक्ष समेत एक स्तंभ-युक्त चतुर्भुजीय बड़ा सभा-कक्ष दर्शाता है। एलोरा की जैना गुफा 9 वीं शताब्दी की है। इनमें से छोटा कैलाश (XXX), इंद्र सभा (XXXII) और जगन्नाथ सभा (XXXIII) महत्वपूर्ण हैं। पहली, इसके नाम से प्रसिद्ध स्थान का छोटा प्रतिरूप है। दूसरी और तीसरी अंशतः ढांचागत प्रारूप और आंशिकतः गुफा उत्खनन का एक प्रतिरूप हैं। प्रत्येक के सामने के आंगन में प्रवेश द्वार के बाद एक एकाश्म (अखण्ड) मंदिर है, दोनों ही चट्टानों को काट कर बनाई गई हैं, जबकि पार्श्व में गुफा का अग्रभाग दो मंजिलों में उठा हुआ है, प्रत्येक में सामान्य योजना के अनुसार एक स्तंभो-युक्त एक सभा-भवन, दूर अंतिम कोने में एक प्रार्थना कक्ष और किनारे-किनारे कक्ष निर्मित हैं। यद्यपि योजना एवं व्यवस्था में एक जैसी हैं, जगन्नाथ-सभा में इंद्र-सभा जैसे संतुलन एवं सहज चरित्र का अभाव है।

मंदिरः-

भारतीय वास्तुकला की सर्वोच्च सफलता सम्भवतः मंदिरों में दिखती है। देवी-देवताओं की प्रतिमाओं के आश्रयस्थलों का निर्माण सम्भवतः ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से चला आया है। ईसा पूर्व शताब्दियों के कई देव-गृह पूर्णतः खण्डित स्थिति में उत्खनित किए गए। किंतु, गुप्तकाल, वास्तव में भारतीय मंदिर वास्तुशिल्प का आरंभ है।

गुप्त-काल (320-600 ईस्वी):-

गुप्त वास्तुकला में जो कुछ बचा है वह कुछ ऐसे छोटे मंदिर हैं जो शैली में तुलनात्मक परिष्करण को प्रदर्शित करते हैं। यह मंदिर भली भांति अभिकल्पित हैं, जिनके आवश्यक अवयवों में एक चौकोर कक्ष, एक मंदिर और एक आंगन अथवा बराम्दा है। वे बारीक शिल्पकला पट्टियों से सजे हैं, किंतु सज्जा, भवन की वास्तुशिल्पीय योजना के अनुरूप है। बड़े आयामों वाले भव्य मंदिर इसी काल में निर्मित हुए होंगे, किन्तु वे पूर्णतः ध्वस्त हो चुके हैं। ऊँचे और विस्तृत कलाकृतियों से सुसज्जित शिखर जो बाद के युगों में मंदिरों की छतों पर आच्छादित रहते थे, अब तक नहीं दिखे थे, किंतु इस विकास का आरंभ भीतरगांव मंदिर में और गुप्त-काल के मंदिरों पर उभरी-शिल्पकला के छोटे आकारों के प्रतिनिधित्व में देखा जा सका। गुप्त काल के मंदिर, सज्जित चट्टानों के खण्डों को साथ-साथ रख कर बनाए गए स्वतंत्र ढाँचे थें। उनकी चिनाई गारे के बगैर की गई थी। सर्वोत्तम तथा सर्वाधिक प्राचीन गुप्त मंदिर झांसी के निकट देवगढ़ का दशावतार मंदिर है। यह मंदिर एक साधारण ढांचा है जिसका प्रवेश-द्वार विस्तृत रूप से तराशा गया है। यह शैली लगभग 400 वर्षों तक जारी रही, और यह भारतीय-आर्य (इंडो-आर्यन) शैली के नाम से प्रसिद्ध है। अन्य उदाहरण हैं, मध्य प्रदेश के तेगावा में विष्णु मंदिर, नगडा में शिव मंदिर, अजयगढ़ में पार्वती मंदिर, कानपुर के निकट भितरगांव मंदिर, इत्यादि।

उत्तर-गुप्त काल (600-1200 ईस्वी):-

यह वह समय-काल था जिसमें भारतीय मंदिर शिल्पकला की विभिन्न शैलियां विकसित की गईं। भारतीय शिल्पशास्त्र, मंदिर शिल्पकला की तीन मुख्य

शैलियों को मान्यता प्रदान करता है: उत्तर भारत में नागर, विंध्य और कृष्णा के मध्य क्षेत्र में वेसार और दक्षिण के द्रविड, अर्थात् कृष्णा नदी और कन्याकुमारी के मध्य। वेसार मंदिर, नागर और द्रविड़ की एक मिश्रित शैली के रूप में विकसित हुए।

नागर शैली में एक मीनार होती है जिसे शिखर कहते हैं। इसका शिरा गोल और बहिर्रेख वक्ररेखी होती है, जबकि विमान के नाम से प्रसिद्ध उत्तरी अथवा दक्षिणी शैली की मीनार सामान्यतः एक आयताकार लूनाग्रित सूचिस्तंभी आकार की होती है। दक्षिण भारतीय मंदिरों में स्तंभों की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है जबकि वे उत्तरी शैली में निर्मित भवनों में पूर्णतः लुप्त होते हैं। अंततः दक्षिण के मंदिरों में प्रवेशद्वार अथवा गोपुरम् उच्चतः विकसित होते हैं, जो उत्तर भारतीय मंदिरों में नहीं होता।

द्रविड़ शैली :-

दक्षिण भारत में वास्तुकला का इतिहास पल्लव मंदिरों से आरंभ होता है। चट्टानों को काट कर कुछ पल्लव मंदिर, जिन्हें सात पगोड़ा अथवा मामल्लपुरम के रथ (7 वीं शताब्दी ईस्वी) छोटे मंदिर होते हैं, जिनमें से प्रत्येक मन्दिर ग्रेनाइट की एक बड़ी चट्टान को काट कर और दीवालों पर उत्कृष्ट शिल्पकला द्वारा बनाया गया। इन पगोडों का नामकरण पांच पाण्डव बन्धुओं और द्रोपदी के नाम पर किया गया। यह ऐकश्म (अखण्ड) मन्दिर एक साधारण मंदिर के सभी विवरणों से परिपूर्ण हैं। वे अब भी लकड़ी से निर्माण का प्रभाव दर्शाते हैं। पल्लव शैली की पराकाष्ठा, मल्लपुरम में शोर (Shore Temple) मंदिर और कांची के कैलाश नाथ मंदिर में पहुँची। कांची के मंदिर में छोटी नली के मेहराबों की दो दिशाओं से बना एक सूचिस्तंभीय मीनार है जिसमें एक गुम्बज आरोहित है, जो इसके बौद्ध स्तूप होने का आभास देता है। इसके तीन भिन्न भाग हैं: एक सूचिस्तंभीय मीनार सहित एक गर्भ गृह, एक मण्डप और एक नियमित आयताकार आंगन जो छोटे मंदिरों अथवा कक्षों की श्रृंखला दर्शाता है।

चोल जिन्होंने दक्षिण भारत के पल्लवों को चालाकी से निकाल दिया था, अत्यंत पराक्रमी भवन निर्माता थे। चोल वास्तुशिल्प की विशिष्टता उसकी विशालता

में निहित है। बड़े ढांचे, बारीक शिल्पकला से सजे होते थे। वास्तव में चोलों ने पल्लव शैली को और विकसित किया। पल्लव शैली की अपेक्षाकृत साधारण मीनार, बहुत बड़े सूचिस्तंभ में परिवर्तित कर दी गई, जो एक ऊँचे सीधे खड़े आधार से उठता है और गुम्बजनुमा मुकुटधरे शिरे से शोभित होता है। चोल मंदिरों में विस्तृत स्तंभीय बड़े सभा-कक्ष और सुंदर सजावट होती थी। धीरे-धीरे एक विशाल प्रवेशद्वार, जिसे गोपुरम कहा जाता था, मंदिर के अहाते में जोड़ा जाने लगा।

राजराज द्वारा निर्मित तंजौर का बृहदेश्वर मंदिर सर्वाधिक भव्य है। इसका सर्वाधिक असाधारण लक्षण वह विमान है जो 65 मीटर ऊँचा है। इसकी विशेषता यह है कि इसकी परछाईं धरती पर नहीं पहुँचती। एक अन्य महत्वपूर्ण चोल मंदिर गंगईकोण्डा चोलपुरम में था।

बारहवीं शताब्दी के बाद से मंदिर की किलेबंदी एक सामान्य प्रथा हो गई। ये प्रायः तीन चौकोर संकेंद्रित दीवारों से, जिसमें चार तरफ फाटक होते थे, से घिरे रहते थे। फाटक, निगरानी हेतु, मीनारों से घिरे होते थे। बाद में यह गोपुरमों में विकसित हो गए, जो केन्द्रीय मंदिर के साधारण शिखर की अपेक्षा कहीं अधिक ऊँचे होते थे। नई शैली प्रायः पाण्डयन कहलाती थी, यह नाम उस शासकीय वंश से आया है जिन्होंने चोलों को खदेड़ दिया। इस शैली ने अधिक विस्तृत सज्जा का आरंभ किया और स्तंभों पर जानवरों की आकृतियों जिनमें पिछले पैरों पर खड़े घोड़े भी सम्मिलित थे होती थीं।

गोपुरमों के अतिरिक्त, कई स्तंभों युक्त बड़े सभा-कक्ष और लंबी स्तंभावली, बाद के मंदिरों के नए लक्षणों के रूप में जोड़े गए। इनमें सर्वोत्तम उदाहरण, कांची के गोपुरम और मदुरई के मंदिर हैं।

मध्यवर्ती दक्कन के होयसलों (1050-1300 ईस्वी) में वास्तुकला की एक नई शैली आरंभ की। होयसल भवन निर्माताओं नें अधिक महीन कणों का एक पत्थर चुना, एक प्रकार का हरा या नीला-काला (Choloritic) पत्थर जो मजबूती से गठा होने के कारण नक्काशी को उतनी ही कोमलता और सूक्ष्मता से ग्रहण कर सकता है जो स्वर्णकार सोने और चांदी पर करता है। कर्नाटक क्षेत्र में इस काल के सौ से भी अधिक मंदिर हैं। मंदिर के क्षैतिज पहलू में एक गर्भग्रह, एक ड्योढ़ी

(सुकनासि), एक स्तंभयुक्त बड़ा सभा-कक्ष (नवरंग), और मुखमण्डप होता था। सामान्यतः, मंदिर एक ऊँचे स्तर पर स्थित होता था। इनमें से किसी में भी आंतरिक प्रदक्षिणापथ नहीं होता, किंतु खुला चबूतरा परिक्रमा के लिए पर्याप्त स्थान प्रदान करता है।

उनके मंदिर चौकोर नहीं, बल्कि बहुभुजीय अथवा सितारे के आकार के होते थे। अन्य लक्षण हैं ऊँचा आधार जो मंदिर के सभी घुमावों का अनुसरण करता है और इस प्रकार शिल्पकला से विस्तृत रूप से तराशने के लिए खाली स्थान की विशाल लम्बाई-चौड़ाई प्रदान करता है। शिखर पिरामिडीय किंतु नीचे होते हैं। यह मंदिर चपटेपन की एक प्रबल भावना उत्पन्न करते हैं, क्योंकि दीवालें और चबूतरे दानों ही हाथियों, घुड़सवारों, हंसों, दैत्यों और धार्मिक कथाओं की बहुत संकुचित रूप से तराशी गई चित्रवल्लरी से भरा पड़ा है। इस शैली के सबसे महत्वपूर्ण मंदिरों में सोमनाथपुर में केशव मंदिर, हालेबिद में होंयसलेश्वर और बेलूर में चेत्र केशव।

विजयनगर कालः-

विजयनगर, भारत के सबसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक और वास्तुशिल्पीय स्थलों में से एक है। हम्पी, विजयनगर राज्य की राजधानी थी और इसके सबसे महत्वपूर्ण शासक कृष्णदेवराय को महत्वपूर्ण मंदिरों, स्तंभ-युक्त मण्डपों और गोपुरमों (विशेषतः रायगोपुरम के नाम से विख्यात) के निर्माण का श्रेय दिया जाता है।

विट्ठलस्वामी मंदिर विजयनगर वास्तुकला का सबसे उत्कृष्ट नमूना है जिसमें छोटे मंदिर, विस्तृत रूप से सजे स्तंभ, तराशी गई आकृतियां हैं। मंदिर की योजना में एक विशाल दीवालों से घिरा स्थान होता है जिसके आंगन में कम-से-कम पांच अलग-अलग ढांचे होते हैं। तीन गोपुरम आंगन में जाने के लिए रास्ता प्रदान करते हैं, यद्यपि मुख्य प्रवेश पूर्व दिशा के प्रवेश द्वार से होकर होता है। यह निचले स्तर पर ग्रेनाइट से बना हुआ है और इसमे ईंटों का एक वृहद् ढांचा है जो निचली मंजिलों में उठता है।

विजयनगर के धार्मिक भवनों में एक बड़े मंदिर के बजाय छोटे ढांचों का समूह होता था। केन्द्र में मुख्य भवन के उत्तर-पश्चिम में सामान्यतः एक छोटा

मंदिर स्थित होता था। यह एक मंदिर अथवा स्तंभयुक्त बड़े सभा-कक्ष हैं, इनमें से एक अम्मन मंदिर है जिसमें उस देवता की प्रतिमा स्थापित है जिन्हें यह मंदिर समर्पित है। इस काल का सबसे विलक्षण ढांचा कल्याण मंडप था, यह प्रायः समूह का अलंकरण है और पूर्वी प्रवेश के बांई ओर सामने की ओर स्थित होता है। इसमें स्तंभों से युक्त एक खुला बड़ा सभा-भवन होता था, जिसके केन्द्र में देवता और उनकी पत्नी के वार्षिक विवाहोत्सव के समारोह पर उनके स्वागत के लिए एक ऊँचा चबूतरा होता था।

एक अन्य उल्लेखनीय ढांचा है लेपाक्षी में नृत्य भवन, जिसके स्तंभों में शिव विशाल वाद्य-यंत्रों की आकृतियों से घिरे दर्शाए गए हैं। साथ ही वेल्लोर का उत्सव भवन जिसके स्तम्भों पर आश्वारोहियों और अन्य सुंदर आकृतियां तराशी गई हैं।

इस काल का शिल्प बड़े अखण्ड मक्काशी द्वारा उद्धृत है। लापक्षी मंदिर के निकट लेटे हुए नन्दी, मान्यता है कि देश का सबसे बड़े अखण्ड नन्दी हैं। इससे भी अधिक प्रभावशाली है विजयनगर में बैठे हुए 'उग्र नरसिम्ह' का एक अतिविशाल प्रतिनिधित्व।

'श्रीरंगम' में 'अश्व मंडप' पर नक्काशी विजयनगर शैली में है। यहां स्तंभों की पूरी कतार के सामने हैं मुक्त रूप से स्थित, स्मारकीय अश्व, ऊँचे उठे हुए, जबकि उन पर सवार, उभार की तुलना में बहुत छोटे, घोड़ों के पैरो तले आने वाले मानव और जानवरों को बल्लम मारते दर्शाए गए हैं। अन्य स्थानों पर स्तंभावली की उसी शैली में अन्य जानवरों अथवा मायावी दानवों को दिखाया गया है।

नायक कालः-

विजयनगर साम्राज्य के पतन के बाद नायकों का काल आया। उन्होंने विजयनगर शासकों की कला परंपरा को जारी रखा।

इस काल का सबसे प्रसिद्ध वास्तुशिल्पीय लक्षण मदुरई का मीनाक्षी सुंदरेश्वर मंदिर, जो संभवतः 17 वीं शताब्दी के मध्य में थिरूमलई नायक के समय में बनवाया गया। इस विशाल परिसर में दो मंदिर हैं-पहला सुंदरेश्वर के रूप में शिव को समर्पित है और दूसरा देवी मीनाक्षी के रूप में उनकी पत्नी को। पूरा

परिसर ही प्रायः मीनाक्षी मंदिर कहा जाता है। ढांचे में प्रत्येक स्थान सतही नक्काशी से भरा हुआ है।

नायक कलाकारों का महत्वपूर्ण योगदान कई मंदिरों 'प्रकर्मों' का निर्माण रहा। यह आच्छादित मार्ग मंदिर के विभिन्न भागों को जोड़ने और साथ ही कुछ छिद्रों को बन्द करने के काम आते थे। एक नायक 'प्राकर्म' में विस्तृत टोडों समेत विशाल स्तंभ होते हैं।

नागर शैलीः-

उत्तर भारत का प्रत्येक मंदिर, बिना स्थिति और तिथि के लिहाज के, योजना और उत्थान में भिन्न लक्षण दर्शाता है। एक उत्तर भारतीय मंदिर चौकोर होता है जिसके प्रत्येक पार्श्व के मध्य में क्रमिक प्रक्षेपण (रथक) होते हैं जो इसके बहिर्भाग को एक स्वास्तिकाकार देते हैं। उत्थान में यह एक मीनार (शिखर) दर्शाता है जो धीरे-धीरे अंदर की ओर आता है और गोलाभ शिला से ढका है। इस प्रकार स्वास्तिकाकार भूमि योजना और वक्ररेखीय मीनार को नागर मंदिर का आधारभूत लक्षण माना जा सकता है। उत्तर भारतीय मंदिर की आवश्यक योजना में एक गर्भगृह, एक मंडप, अंतराल जो गर्भगृह को मंदिर से जोडता है, और प्रदक्षिणापथ सम्मिलित हैं।

मध्यकालीन उत्तर भारतीय वास्तुकला का सर्वोत्तम उदाहरण उड़ीसा, मध्य प्रदेश, गुजरात और दक्षिणी राजस्थान के मंदिरों में दिखता है।

उड़ीसा के मंदिरः-

मुख्य समूह भुवनेश्वर नगर में केन्द्रित है जहां इनके ३२ उदाहरण पाए जाते हैं।

उड़ीसा के मंदिरों के विशिष्ट लक्षणः-

न केवल इन मंदिरों की योजना और सामान्य उपचार विशेष महत्व के हैं बल्कि इनकी निर्माण कला की भी एक विशिष्ट नामावली होती है। मंदिर का सामान्य नाम देवल होता है, किन्तु चूंकि भवन प्रायः एक आश्रयस्थल ही होता है,

अतः आश्रय स्थल को भी देवल कहते हैं। देवल के सामने एक चौकोर भवन अथवा सभागार होता है जिसे जगमोहन कहते हैं। ये दो भवन शैली के विकास के कारण ही नहीं बनाए गए बल्कि इसलिए भी कि मंदिर के कर्मकाण्ड का भी विकास हुआ-नट मंदिर अथवा नत्य-गृह, भोग मंदिर। यह सभी कक्ष एक चबूतरे अथवा पिस्ता में स्थित और एक मंजिल के होते हैं। प्रत्येक का उत्थान दो भागों में होता है, एक चौकोर खण्ड नीचे और एक सूचिस्तंभीय छत ऊपर। इसी प्रकार देवल अथवा मीनार के निचले और सीधे खड़े भाग को बादा कहते हैं किंतु इसके ऊपर यह तीन भागों में होता है, मध्य का ऊँचा भाग अथवा छप्पर, शिखर पर सपाट गोल झिरींदार तश्तरी जिसे अमला कहते हैं और इसका कलश।

सामान्यतः उड़ीसा के मंदिरों में स्तंभ नहीं होते। उड़ीसा के मंदिरों का सबसे उल्लेखनीय लक्षण है आंतरिक सज्जा का सीधा और लक्षणविहीन उपचार, जिसके विपरीत इनकी बाहरी दीवारें खूब सुसज्जित रहती हैं।

चंदेल कालः-

खजुराहो के मंदिर अनुपात की सुदंरता, रूपरेखा की कलात्मक गुणवत्ता, ठोस वास्तुशिल्पीय समन्वय और सजावटी आधिक्य के लिए जाने जाते हैं। ये मंदिर चंदेल राजपूत राजाओं द्वारा 950 से 1050 ईस्वी के मध्य बनवाए गए, और शैवपंथी, विष्णुपंथी और जैन देवताओं को समर्पित किए गए। यह कहा जाता है कि मूलतः खजुराहो में 85 मंदिर थे, किंतु अब उनमें सिर्फ 30 बचे हैं। यह मंदिर भी आज विनाश के विभिन्न चरणों में हैं। किंतु हम उनके वास्तुशिल्पीय चरित्र के बारे में एक ठीक ठीक अनुमान लगा पाते हैं। प्रत्येक मंदिर एक ऊँचे और ठोस इमारती वेदिका पर खड़ा है। यद्यपि यह मंदिर बहुत प्रभावशाली भवन नहीं हैं, यह अपने सुदर अनुपातों, मनोहारी परिरेखाओं और समृद्ध धरातलीय उपचार के लिए जाने जाते हैं। उनके शिखर भी बहुत उन्नत और सुंदर हैं। बहिर्भाग और साथ ही आंतरिक भाग सूक्ष्म शिल्प से सजे हैं।

ऊँचा चबूतरा, जगति पीठ का गठन करती गढ़नों की एक श्रृंखला द्वारा युक्त है। मध्य भाग अथवा मांडोवरा पवित्र स्थान और मंडपों को कलात्मक ढंग से अंतर्भाग में, घेरे रहता है जिसमे खुलती खिड़कियों की एक समस्तरीय कतार है। इस भाग में स्त्री शिल्पकला की एक विशाल श्रृंखला एक दोहर में खड़ी है।

गुजरात और राजस्थान के मंदिरः-

अनहिलापाटक के चालुक्य और सोलंकी राजाओं के समय में ही नागर मंदिरों की विलक्षणताओं ने एक विशष रूप ग्रहण किया। इस विकास को राजाओं के नाम पर सोलंकी कहा गया। इसी शब्द के अर्थ को राजस्थान में ऐसे ही विकास को सूचित करने के लिए विस्तृत किया जा सकता है, विशेषकर इस तथ्य की दृष्टि से कि उनकी महानता के दिनों में सोलंकी राजाओं के शासन के अंतर्गत राजस्थान के कुछ बड़े भाग थे।

एक सोलंकी मंदिर की योजना में एक पवित्र गर्भ गृह और उससे अक्षीय लम्बाई से जुड़ा एक स्तंभयुक्त मंडप होता था। अधिक महत्वाकांक्षी परिकल्पनाओं में, एक सभा-मंडप, एक कीर्तितोरण और एक पवित्र तालाब के पूरक अवयव होते हैं। प्रत्येक एक असंबद्ध स्रजन किंतु मुख्य योजना के संबंध में अक्षीय रूप से स्थित है। कुछ सीमा तक सोलंकी मंदिर अपनी संरचना में मध्य-भारतीय मंदिर के समान कई लक्षण प्रदर्शित करता है। उदाहरणतः, अनुषंगी सभागारों, खिड़कियों और कक्सनों की स्तंभयुक्त योजना, संधार परिकल्पना और, कुछ एक स्थितियों में ऐसे मध्य भारतीय लक्षण जैसे पर्गों और दोहरे अभलकों का विस्तार। किंतु उनके उपचार में अंतर है। पश्चिमी भारत में सभागारों की स्तंभयुक्त योजना अधिक विस्तृत और सज्जा में अधिक समृद्ध है। पश्चिम भारतीय निर्माताओं ने अंतर्भाग में स्तंभों की अष्टभुजीय समूहीकरण की, और स्तंभों से उठते मुक्त अलंकृत टेकों से जोड़ने और नोक पर प्रस्तरपादों से मिलाने की अधिक कारगर योजना विकसित की। छतों की संकेन्द्रित दिशाएं बारीक जरदोरी के काम की तरह बारीकी से परिकल्पित और समृद्ध रूप से गढ़ी गई हैं (दिलवाड़ा मंदिर, माऊंट आबू)। सजावट, जटिलता से परिकल्पित और सूक्ष्मता से की गई, आंतरिक सज्जा के मनोहारी प्रभाव में वृद्धि करती है।

गुजरात और राजस्थान के कई मंदिरों में, उन दो भवन परिसरों का भी संक्षिप्त उल्लेख किया जा सकता है जो पाश्चात्य भारतीय प्रकार के मंदिर का प्रतिनिधित्व अपनी पूर्ण परिपक्वता में करते हैं। उनमें से एक है मोधेरा में सूर्य मंदिर के प्रभावशाली खण्डहर। संपूर्ण योजना एक खंडत्रजायुक्त चबूतरे पर खड़ी

है और तीन मुख्य अवयवों में खण्डित है- एक बड़ा आयताकार जलाशय जिसके साथ ही सीढ़ियां हैं जो छोटे मंदिरों, दीर्घायुक्त कीर्ति तोरण और स्वास्तिकार के खुले सभा मंडप के मध्य अंतराल उत्पन्न करती है। यह विकर्णतः आगामी अवयव के अक्षीय रेखा के साथ स्थित है जिसमें पवित्र गर्भ गृह और संयुक्त मंडप हैं। यह सभी अवयव एक दूसरे के साथ इतनी दक्षतापूर्वक इस प्रकार व्यवस्थित है कि इन तीन भिन्न दिखने वाली संरचनाओं की एक सुव्यवस्थित और प्रभावी इकाई बनाती है। अब यह योजना अपनी मूल स्थिति का मात्र एक ढांचा रह गया है। किंतु यह भवन समूह भारतीय बौद्धिकता की सर्वोत्तम रचना मानी जाती है। दिलवाड़ा के जैन मंदिरों ने राजस्थान के सफेद मकराना पत्थरों का उत्कृष्ठ उपयोग किया गया। सर्वोत्तम कृतियां विमला (1031 ईस्वी) और तेजपाल (1230 ईस्वी) के नामों से जुड़े मंदिरों में देखी जा सकती हैं। प्रत्येक भवन प्रांगण में, मुख्य तत्वों के अतिरिक्त, स्तंभावली युक्त मठ और सभा-मंडप है जो कलाकारों की असीमित कुशलता ने फैलाई, और पत्थरों को भुरभुरा, पतला सीप जैसा उपचार, जैसा कि स्तंभो, प्रस्तरपादों, छतों और स्तंभावलियों में देखने को मिलती है किसी अन्य की अपेक्षा बहुत समृद्ध है।

वेसारा शैलीः-

भारतीय मंदिर वास्तुशिल्प की वेसारा शैली की तुलना, पुरातत्वविदों की जानकारी में चालुक्य शैली से की गई है, जो कन्नड़ भाषी क्षेत्रों में बाद के चालुक्यों के शासन में उपजा और होयसलों के अंतर्गत अपने सब से परिपक्व अभिव्यक्ति को प्राप्त हुई। इस शैली को कर्नाटक के रूप में भी उल्लिखित किया जा सकता है, जो उस क्षेत्र के नाम पर पड़ा जिसमें यह विकसित हुई। किंतु यह नहीं कहा जा सकता है कि इस शैली का एक स्वतंत्र मूल रहा होगा, किंतु पूर्व की द्रविड़ शैली के अधिक विकास का प्रतिनिधित्व करती है, जो अपने विकास के लिए इतना परिवर्तित की गई कि उनके हाथों यह एक भिन्न शैली ही हो गई। विकास का आरंभ 7 वीं और 8 वीं शताब्दी ईस्वी में आरंभिक चालुक्य राजाओं से खोजा जा सकता है। ऐहोले और पट्टड़काल और अन्य स्थानों पर, द्रविड़ और नागर मंदिर अगल-बगल खड़े किए गए। इस सहअस्तित्व ने दोनों के विचारों को घुलने मिलने का एक अवसर प्रदान किया, जिससे चालुक्य राजाओं के अंतर्गत एक भिन्न प्रकार

का विकास हुआ जिसे एक मिश्रित शैली के प्रतिनिधित्व के रूप में वर्णित किया जा सकता है। इस विकास में नागर विचार ने अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह द्रविड़ विचार ही था जो भविष्य के विकास का केंद्र बना।

द्रविड़ों के ही समान, चालुक्य मंदिर में भी दो मुख्य घटक होते हैं- विमान और मंडप जो एक अंतराल से जुड़े होते हैं। साथ ही कभी कभी सामने की ओर एक अतिरिक्त खुला मंडप होता है। उत्थित मंजिल की सूचिस्तंभीय मीनार विमान पर आरोहित होती है, जबकि मंडप स्तंभों पर टिकी एक छत से ढका होता है। समय के अनुसार, विमान की मंजिलयुक्त चरणों की ऊंचाई को घटाने की एक स्पष्ट प्रवृत्ति दिखती है। साथ ही, मीनार की पूरी ऊँचाई तक एक दूसरे पर दोहराए गए सज्जाकारी आले, उत्तरी शिखर के ऊर्ध्वाकार बन्धनों की नकल दिखती है। यह स्पष्ट नागर शिखर से प्रेरित है। चालुक्य मंदिर द्रविड़ शैली से एक भिन्नता प्रदर्शित करता है,कि इसमें पवित्र गर्भगृह एक आच्छादित मार्ग से घिरा है। मंडप भी, विमानों की अपेक्षा आकार में सामान्यतयः चौड़े हैं। आंतरिक दीवालों की सज्जा-उपचार में, एक बार फिर नागर और द्रविड़ विचारों का सम्मिश्रण दिखता है। दीवारें, विलक्षण नागर अंदाज में रथ अनुचित्रों द्वारा विभाजित हैं, जों सामान्य द्रविड़ अंदाज में नियमित अंतरालों पर भित्ति चित्रों द्वारा और अधिक दूर की गई हैं। इस तरह जो कोटरिकाएं बनीं, उन्हें सामान्यतः आलों द्वारा नागर अथवा द्रविड़ शैली के ऊपरी आवरणों से भरा गया, जों इसकी महान कलात्मक सुंदरता प्रस्तुत करता है। आगे एक और विस्तार अपनी धुरी पर घूमने वाली प्रणाली पर आधारित तारकीय योजना में भी देखा जा सकता है। चालुक्य क्षेत्र में इस योजना का मात्र एक ही उदाहरण दंबल में दोडा बसप्पा कें मंदिर में है।

भारतीय-इस्लामी वास्तुकलाः-

सल्तनत काल (1206-1526 ई०)

भारत में इस्लाम के शासन की स्थापना के साथ ही, इस्लाम के अनुयाई, जैसे अरब, फारसी अथवा तुर्क, अपने साथ पश्चिम और मध्य एशिया, उत्तरी अफ्रीका और दक्षिण-पश्चिम यूरोप के विभिन्न भागों से कला और संस्कृति भी लाए। इस काल में इनका विभिन्न पौराणिक भारतीय कला शैली के साथ सम्मिश्रण

ने, धर्म और व्यक्तिगत रूचि के अनुसार, एक नई भारतीय-इस्लामी शैली की वास्तुकला को जन्म दिया। इस्लामी वास्तुकला परंपरा के चार प्रमुख अंग हैं, मस्जिद, मकबरे, किले और महल। मस्जिद, में एक बड़ा आयताकार खुला आंगन होता है जो चारों ओर से तोरणपथों से घिरा होता है। मेहराब, जो मक्का की दिशा की ओर होता है उस दिशा को निर्देशित करता है जहां की ओर प्रार्थना की जाएगी, जो भारत में पश्चिमी दिशा की ओर पड़ता है।

मृत व्यक्तियों को दफनाने के प्रचलन ने मकबरों के निर्माण को उत्प्रेरित किया जिसमें एक गुम्बदनुमा कक्ष, छज्जा, केंद्र में दरगाह, पश्चिमी दीवाल पर एक मेहराब और भूमिगत कक्ष में कब्र होती है।

इस्लामी और भारतीय शैलियों में उल्लेखनीय अंतर निम्नवत् होते हैं:

* भारतीय मंदिरों में अंतराल या तो धरनी (beams) के द्वारा किया जाता था, या फिर ईटों, पत्थरों की दीवाल से खुले स्थान को ढंका जाता था।
* यद्यपि भारत में मेहराब का उपयोग पहले से ही होता आया था, इसे भारत में मुसलमानों ने और अधिक प्रसिद्ध बनाया।
* सपाट अथवा टोड़ीदार छतों मेहराबों अथवा मेहराबदार छतों द्वारा और स्तंभसूची छत को गुम्बद द्वारा प्रतिस्थापित किया गया।
* धूप के लिए अच्छादत अथवा छज्जों के विचार को अपनाया गया।
* छज्जे, छतरी, ऊँची मीनारें और अर्ध-गुंबदीय दोहरे फाटक भारतीय-इस्लामी वास्तुकला के अन्य भिन्नताकारी लक्षण हैं।

भारतीय सज्जा अधिकांशतः प्राकृतिकतापूर्ण है, जो स्पष्ट रूचि, मानवीय एवं पशु आकृतियों और अनुवर्ती राष्ट्र के वन्य-जीवन के लक्षणों से चित्रित होती है। चूंकि जीवित व्यक्तियों का चित्रण ग्रंथों में वर्जित है, मुसलमानों ने भौगोलिक और अरबी प्रारूपों, सजावटी लेखन, और फूलों और पौधों की आकृतियों को चित्रण हेतु अपनाया।

तुर्कः-

तुर्कों ने उत्तम गुणवत्ता युक्त गारा अपनाया और लाल और सफेद बालू का उपयोग कर भवनों में रंग जोड़ दिए। संगमरमर का सज्जा हेतु उपयोग हुआ। तुर्कों ने हिंदू शिल्पकारों का उपयोग किया और धीरे-धीरे बौद्ध और हिंदू प्रभाव के अंतर्गत घंटों, स्वास्तिक, कलश और कमल के फूल को अपनाया। आरंभ में उनके भवन हिंदू और जैन मंदिरों के ली गई सामग्री के भारी उपयोग ने कई स्तंभों की आवश्यकता उत्पन्न की जिससे बड़े बड़े सभागार (halls) बने।

इसमें सबसे पुराने निर्माण दो हैं: दिल्ली में कुव्वत-उल-इस्लाम और कुतुबुद्दीन ऐबक द्वारा बनवाया गया अजमेर का अढ़ाई दिन का झोपड़ा जो मुख्यतः पुराने हिंदू और जैन मंदिरों को काट कर बनवाया गया था। दिल्ली की कुतुबमीनार जिसे ऐबक ने बनवाना आरंभ किया था उसे इलतुतमिश ने पूरा करवाया।

खिलजीः-

खिलजियों ने कुछ नए लक्षण जोड़े, जैसे मेहराब के दूसरी ओर खिलता कमल, कुंभक में सजावटी उभार, नुकीली नाल जैसी मेहराब (वैज्ञानिक विधि), खिड़कियां, सज्जाकारी गढ़न, अरबस्क, नीची कुमक, लखनयुक्त बंधनियां और लाल बालू का उपयोग। महत्वपूर्ण खिलजी भवन हैं, अलाई दरवाजा, जमायते खाना मस्जिद, हौज-ए-अलाही, और सिरी नगर।

तुगलकः-

तुगलक शासकों ने ऐसे भवन बनवाए जो विशाल ओर साधारण (बगैर सज्जा के) रहे। इसका अपवाद मात्र फिरोज शाह तुगलक का भवन रहा। धूसर रंग के पत्थर की साधारण और आडम्बर-हीन सब, बड़े कक्षों पर आड़े तिरछे मेहराब, निप्रवित दीवालें और बुर्ज, चार केन्द्रित मेहराबें और द्वारों पर लिंटलों, का उपयोग किया गया। उन्होंने मेहराब, लिंटल और धरनी के सिद्धांत का उपयोग करने का प्रयास किया। उन्होंने कुमक के लिए दगध टाइलों का उपयोग किया। भवन ऊँचे चबूतरे पर निर्मित किए जाते थे।

महत्वपूर्ण तुगलकी निर्माण हैं: गयासुद्दीन तुगलक द्वारा निर्मित तुगलकाबाद, मुहम्मद-बिन-तुगलक द्वारा निर्मित आदिलाबाद का किला और जहांपनाह, हिस्सर-फिरूजा, फतेहाबाद और जौनपुर शहर ओर फिरोजशाह तुगलक द्वारा बनवाया गया कोटला फिरोजशाह।

लोधीः-

लोधी, अपने निर्माण में राजस्थानी और गुजराती शैली के छज्जे, छतरियों और गुफाएं लाए। उन्होंने अपने मकबरे एक बगीचे में ऊंचे चबूतरे पर बनावाए। कुछ मकबरे आकार में अष्टभुजीय थे।

महत्वपूर्ण निर्माण निम्नलिखित हैं: लोधी बाग, सहीश गुंबद, बड़ा गुंबद मस्जिद, बाहुल लोधी का मकबरा, बाग-ए-आलम का गुंबद और मोती मस्जिद, जो सभी दिल्ली में है।

प्रांतीय शैलियांः-

जौनपुर, बंगाल, मालवा, कश्मीर, गुजरात इत्यादि प्रांतों की वास्तुकला शैली मूलरूप से दिल्ली शैली की ही थी।

जौनपुरः-

शर्की अथवा जौनपुर विचारधारा के भवनों में बड़ी ढलावदार दीवालें, चौकोर मीनारें, छोटी दीर्घाएं और छत्ते होते हैं, जो हिंदू विशेषताएं हैं, और जिन्हें हिंदू राजगीरों द्वारा बनाया गया। जौनपुर की मस्जिदों में सामान्य प्रकार की मीनारें नहीं होती हैं। एक महत्वपूर्ण उदाहरण है अटला मस्जिद।

बंगालः-

बंगाल में भी एक मिश्रित प्रकार की वास्तुकला उपजी, जिसके विशिष्ट लक्षण हैं, मुख्य भवन में ईंटों का उपयोग, पत्थरों का सहायक उपयोग, छोटे स्तंभों पर नुकीले मेहराबों का उपयोग और मुसलमानों द्वारा बांस के ढांचों से वक्ररेखीय कंगनी प्रतियों, और कमल के फूल जैसे सुंदरता से तराशे गए हिंदू मंदिर शैली की स्वीकृति। महत्वपूर्ण उदाहरण हैं: पंडुआ में अदीना मस्जिद, गौंड में दखिला दरवाजा और तंटीपुरा मस्जिद, बड़ी सोन मस्जिद और छोटी सोन मस्जिद।

गुजरातः-

मुसलमानों के आगमन से पहले ही गुजरात में एक भव्य भारतीय शैली फल-फूल चुकी थी, और विजेताओं के भवन उस शैली से बहुत प्रभावित हुए, यद्यपि कभी-कभी मेहराब मात्र सांकेतिक उद्देश्य से बनाए जाते थे। महत्वपूर्ण भवन हैं: तीन दरवाजा, जामी मस्जिद, जाली वाली मस्जिद (अथवा सादी सैयद मस्जिद), अहमदाबाद में, और महमूद बेगढ़ा द्वारा चंपानेर में जामा मस्जिद।

मालवाः-

मालवा की पुरानी राजधानी धार में मस्जिदों और भवनों में हिंदू शैली की गुंबदें और स्तंभ होते थे। किंतु मांडू, जहां राजधानी शीघ्र ही ले जाई गई, के भवन प्रमुखतः मुसलमान कला पंरपराओं द्वारा चिह्नित थे, और वे नुकीली मेहराब शैली का लगातार उपयोग करते रहे। इनमें से कई भवनों में संगमरमर और बलुआ पत्थर का उपयोग होता था। होशंगशाह का मकबरा पूरी तरह संगमरमर से बना है, जो भारत में अद्वितीय है। महत्वपूर्ण भवन हैं: मांडू में जामा मस्जिद, जहाज महल, तथा हिंडोला महल।

मुल्तानः-

सबसे पुरानी प्रांतीय शैली होने के कारण, मुल्तान और लाहौर, मुल्तानी वास्तुशिल्पीय शैली के दो केंद्र होते थे। मकबरे आकर्षण का केंद्र हैं, जो चमकीले टाइलों की सतह-युक्त ईंट के ढांचे हैं। दुख-इन-आलम के मकबरे में उपयोग किए गए चटकीले रंगों युक्त टाइलों की रंग-बिरंगी सतही सज्जा, ठेठ मुल्तान शैली की हैं।

दक्कनः-

दक्कन की ब्राह्मणी वास्तुशिल्प कई तत्वों का एक सम्मिश्रण-भारतीय, तुर्की, मिस्री और फारसी थी। उन्होंने दक्षिण भारतीय मंदिरों से भी कुछ तत्वों का उपयोग किया। उन्होंने गुंबद को एक पूर्णतः विकसित बड़े गोले के रूप में विकसित किया जैसा कि बीजापुर के गोल गुंबद में है। अन्य महत्वपूर्ण भवन हैं: गुलबर्गा की जामा मस्जिद, मेहतर महल, इब्राहिम रौजा और गोलकुंडा का किला। बहुत से गुंबद और ढके आंगन यहाँ दो विशेष लक्षण हैं।

खानदेश:-

फारूकी अथवा खानदेश शैली के भवन अधिकांशतः थालनेर ओर बुरहानपुर में पाए जाते हैं। भवनों में मध्यतः प्रक्षिप्त द्वार और दरवाजों और खिड़कियों के बीच चौड़ा अंतर होता है, मुंडेर की दीवाल को प्रधानता दी गई है और अष्टभुजाकार ट्रम (trum) पर बने गुंबद को भी, जैसा बुरहानपुर की जामा मस्जिद में है।

दक्षिण:-

सुदूर दक्षिण की ओर, विजयनगर शासकों ने उस परंपरा को जारी रखा जो पल्लवों से आरंभ हुई और चोल और पाण्ड्य शासन में बहुत आगे बढ़ी।

मुगल काल (1526-18457):-

मुगल भवनों के विशिष्ट लक्षण थे: बहते पानी का प्रयोग, गुंबद, मेहराब, जाली का काम, जड़ाऊ सज्जा, कलात्मक लेखन और भवनों के आस-पास बगीचे उगाना।

प्रथम मुगल शासक बाबर के मात्र चार वर्षों के शासन काल में भव्य किले, महल, फाटक, जनोपयोगी भवन, मस्जिदें, बावली इत्यादि बनवाई गईं। किंतु यह शेरशाह का काल था जिसमें सल्तनत वास्तुशिल्प से मुगल वास्तुशिल्प की ओर परिवर्तन का संकेत मिला। जबकि दिल्ली के पुराना किला में किला कुहना मस्जिद की दक्षता एक ऐसा आदिप्रारूप बन गया जिस पर मुगलों नें अपने भवन विकसित किए बिहार के सासाराम में उनका मकबरा वास्तव में, तुगलकों और लोधियों द्वारा निर्मित अष्टभुजीय मकबरों की श्रेणी का एक चरमोत्कर्ष था।

किंतु वास्तविक मुगल वास्तुशिल्प अकबर के शासनकाल से आरंभ हुई। इस काल में बल सांप्रदायिकता से हटकर धर्मनिरपेक्ष वास्तुशिल्प की ओर चला गया। अपनी माँ से प्राप्त फारसी आदर्शो से प्रभावित होते हुए भी अकबर ने कई भवनों में वास्तुशिल्प की हिंदू शैली का उपयोग किया, जिनके साज-सज्जाकारी वैसी ही हैं जो हिंदू और जैन मंदिरों में पाई जाती थीं। अकबर के भवनों का मुख्य माध्यम लाल बलुआ पत्थर होता था। अकबर के शासन के अंतर्गत प्रमुख

वास्तुशिल्पीय उदाहरण इस प्रकार हैं: फतेहपुर सीकरी में बुलंद दरवाजा, पंच महल, दीवान-ए-खास, जोधा बाई का महल, तुर्की के सुल्तान का महल, सलीम चिश्ती की दरगाह, और लाहौर, इलाहाबाद और आगरा के किले। उन्होंने सिकंदरा में स्वयं अपना मकबरा बनवाना आरंभ किया जिसे बाद में जहांगीर ने पूरा करवाया।

जहांगीर के शासन काल में निर्मित भवनों की संख्या अपेक्षाकृत कम थी। किंतु उनके शासन में भवनों में पियेत्रा दुरा का उपयोग बहुत बढ़ गया। अकबर के शासन काल की तुलना में शाहजहां के शासनकला के ढांचे भव्यता और मौलिकता में कमजोर हैं, किंतु उदारतापूर्ण दिखावे और दक्षतापूर्ण सज्जा में वे बेहतर हैं।

मुगल वंश में भवन निर्माताओं में सर्वप्रसिद्ध शाहजहां के अंतर्गत सफेद संगमरमर का उपयोग बहुत बढ़ गया। अपने पूर्वजों की अपेक्षा उन्होंने आगरा और दिल्ली में बहुत संख्या में मस्जिदें बनवाई। उनके वास्तुशिल्पीय निर्माणों में कुछ इस प्रकार हैः दिल्ली के लाल किले के निकट मीना मस्जिद और नागिनिया मस्जिद, आगरे में लाल पत्थरों की जामा मस्जिद, दिल्ली की जामा मस्जिद, आगरे के लाल किले में दीवान-ए-खास, और मुशामन बुर्ज। उन्होंने दिल्ली में लाल किला बनवाया और उसमें कई महल बनवाए, जैसे दीवान-ए-आम, दीवान-ए-खास, रंग महल, इत्यादि। ताज महल, जिसे उन्होंने 1631 में बनवाना आरम्भ किया, और 1648 ई. में अपनी चहेती बेगम मुमताज महल के यादगार के रूप में बनवाकर पूर्ण किया, मुगल वास्तुशिल्प की पराकाष्ठा बन गया। सफेद पत्थरों से निर्मित, यह विश्व के आश्चर्यों में से एक माना जाता है।

औरंगजेब के शासन काल में वास्तुशिल्प की शैली में गिरावट प्रांरभ हो गई। उनके शासन काल के कुछ ढांचे, जैसे लाल किले में मोती मस्जिद (सफेद पत्थरों की), अजंता के निकट औरंगाबाद शहर में निर्माण, और औरंगजेब की पत्नी बेगम राबिया दुरानी की याद में उनके पुत्र द्वारा निर्मित बीबी-का-मकबरा, पुराने भवनों की मात्र नकल सी थीं। उसके तत्काल बाद भारतीय शिल्पकारों की सृजनशील बौद्धिकता अधिकांशतः लुप्त हो गई, जो थोड़ी बहुत अवध और हैदराबाद में 18वीं और 19वीं शताब्दी में जीवित रही।

सिख वास्तुशिल्पः-

सिख वास्तुशिल्प के टेठ लक्षण (स्वर्ण मंदिर जिसका प्रतिनिधि है) हैं, बहुत सी छतरियां जो मुंडेरों की शोभ बढ़ाताी है, प्रत्येक महत्वपूर्ण उभार पर कोण, सामान्यतः पीतल अथवा ताम्र पत्र से ढका बांसुरी नुमा गुंबद, झरोखेनुमा अथवा निकली हुई खिड़कियों का अधिकांशतः उपयोग और उसके साथ ही उथली अण्डाकार छजली, जो बन्धनियों पर टिकी हैं, और महराबों की असंख्य पर्णों द्वारा साज-सज्जा।

राजपूत वास्तुशिल्पः-

नयनाभिराम और रूमानी, भारत में मुसलमान शासन के दौरान अधिकांश राजपूत भवनों में विभिन्न आकारों के झूलते छज्जे और विस्तृत रूप से तराशी गई बन्धनियों की कतारों पर टिके लंबे छत्ते होते हैं। एक विशिष्ट लक्षण है तराशी हुई कंगनी अथवा गुफा जो कि मेहराबदार, छायादार और धनुषाकार होती थी।

अध्याय-4

भारतीय शास्त्रीय नृत्य
(Indian Classical Dances)

नृत्य लगभग उतनी ही पुरानी कला है जितनी की मानव सभ्यता। यह सदैव से भारतीय लोगों के जीवन का अंग रहा है। हमारे धार्मिक साहित्य ने नृत्य को ईश्वर की खोज में एक महत्वपूर्ण गतिविधि के रूप में मान्यता प्रदान की। भारत में आरंभिक सभ्यता के स्मृतिचिन्ह नृत्य के महत्व को स्पष्टतः प्रदर्शित करते हैं। बाद के समय में भी नृत्य, सभी सूक्ष्म कलाओं में अग्रणी बना रहा। हम इसके विषय में मूर्तियों, चित्रों और नृत्य कला के अन्य ग्रंथों से सीखते है।

अपने सबसे साधारण और सबसे स्पष्ट रूप में में नृत्य संगीत के भावनात्मक पक्ष की शारीरिक अभिव्यक्ति है। संगीत का आनन्द सुनने में है; नृत्य का आनंद उस संगीत की शारीरिक आकृति को देखने में और उसके अर्थ को एक दृश्य अनुभव की अभिव्यक्ति में होता है। यह गति और स्थिर का, संगीत और शांति का चमत्कार होता है, जिसमें नर्तक आपको पूर्णतः अपने विश्वास में ले लेता है।

नृत्य गुण :-

भारतीय साहित्यिक परंपरा में नृत्यकला पर विवेचनात्मक लेखन की प्रचुरता रही है। सिद्धांत और तकनीक, दोनों ही स्तरों पर, ग्रंथ बहुमूल्य जानकारी प्रदान करते हैं। किन्तु इनमें से सबसे महत्वपूर्ण और सबसे आधारभूत कृति है **'नाट्यशास्त्र'**। इसका संकलन ऋषि भरत ने किया और इसकी तिथि का सामान्यतः आकलन दूसरी शताब्दी (ईसा पूर्व) और दूसरी शताब्दी ईस्वी के मध्य (सभी संभावनाओं में लगभग पहली शताब्दी ईस्वी) मानी जाती है। इसलिए सिद्धान्तों और तकनीकों पर अधिकांश जानकारी जो यहां दी गई है इसी एक ग्रंथ पर आधारित है।

सिद्धान्त :-

भारतीय नृत्य के सिद्धांत व्याख्या में सम्पूर्ण का एक अंग हैं, और नृत्य की तकनीकों के वृत्तांत को देखे बगैर अलग से नहीं देखे जा सकते। तकनीक के स्तर पर नृत्य की कला को मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत और साहित्य के एक रुचिपूर्ण संश्लेषण के रूप में समझना चाहिए। नृत्य के ग्रंथ उपरोक्त एक अथवा सभी तकनीकों को पृथक-पृथक कर नहीं विचारते। वास्तव में, सभी पुस्तकें, नृत्य को अनेकों संचार तकनीकों में से एक मानते हैं। 'नाट्यशास्त्र', नृत्य के बारे में सुनिश्चित रूप से निम्नलिखित शब्दों में कहता है : यह कला, सभी शास्त्रों की शिक्षा से समृद्ध होगी और सभी कलाओं और कारीगरी का पुनरीक्षण प्रदान करेगी।

विकास के प्रारम्भिक चरण में नृत्य और नाट्य दोनों एक ही में समाहित थे। इस प्रकार, नृत्य आवश्यक रूप से नाट्य का भाग होता था। परोक्ष रूप से आगामी में दोनों एक ही दिखे। उनमें संपर्क के अनेकों बिंदु हैं। वास्तव में भारतीय नृत्य के सिद्धांत को भरत द्वारा निर्धारित नाट्य की संपूर्ण तकनीक से ही चुन-चुन कर निकाला तथा भेद किया जा सकता है।

ऐसे तीन मुख्य सिद्धांत हैं जो भारतीय नाट्य और मंच प्रस्तुतीकरण का संचालन करते हैं :

- **प्रस्तुतीकरण की विधियां (धर्मी)**
  - मंच का तरीका (नाट्य)
  - विश्व का तरीका (लोक)
- **शैलियों (वृत्तियां) के प्रकारः मनोहारी (कैसेकी)**
  - भव्य (सत्तवती)
  - ओजस्वी (आरभटी)
  - मौखिक (भारती)
- **अभिनय के प्रकार**
  - भाव (अंगिक)
  - वाणी (वाचियक)
  - मंच आधार (आचार्य)
  - स्वभाव (सत्तविका)

वास्तव में, यह सभी अथवा अ।धकांश सिद्धांतों का युग्म है जो शास्त्रीय नृत्य को परिलक्षित करता हैं। 'नाट्यशास्त्र' इन पर सिर्फ नाट्य अथवा नृत्य के संदर्भ में ही चर्चा नहीं करता, वरन् यह विभाजन, 'अभिनय दर्पण' जैसे बाद के ग्रंथों में देखा जाना चाहिए, जो नृत्य की एक स्वतंत्र कला के रूप में चर्चा करता है। 'अभिनय-दपर्ण' में नृत्य की व्याख्या लगभग सभी बाद के लेखकों, टीकाकारों के लिए एक मानक हो गया। इस प्रकार, शारंगदेव, और विष्णुधर्मोत्तर पुराण और नाट्यशास्त्र संग्रह जैसे ग्रंथ न्यूनाधिक रूप से उसी उपचार और विश्लेषण को स्वीकार करते हैं।

तकनीक :-

संगीत रत्नाकर, अभिनय दर्पण और अन्य मध्यकालीन ग्रन्थों के अनुसार, नृत्य को तीन भिन्न श्रेणियों में बांटा गया है, नाट्य, नृत्य, और नृत्त। नाट्य, नाटक का सह-प्रत्यर्थी है और नृत्य, अंगसंचालन का, जब यह एक संगीतमय धुन में गाए गए शब्दों पर किया जाता है। नृत्त, विशुद्ध नृत्य का सह-प्रत्यर्थी है, जहां शरीर का संचालन किसी भाव को अभिव्यक्त नहीं करता और कोई अर्थ भी नहीं व्यक्त करता। यह सभी अंगों के संचालन और मानवीय शरीर की भाव-भंगिमाओं का उपयोग माध्यम के रूप में करते हैं।

एक अन्य प्रकार की भिन्नता जो इन ग्रंथों में बताई गई है, वह तांडव और लास्य की है। इसलिए भारतीय शास्त्रीय नृत्य की तकनीक को या तो नृत्य, नृत्र और नाट्य की अंतर्गत श्रेणीकृत किया जा सकता है या फिर तांडव और लास्य के अंतर्गत। यह शब्द व्यवसायरत नर्तकों में प्रचलित हैं, और हम पाते हैं कि हमारे देश के सभी भागों के नर्तक आधारभूत तकनीक की समान भाषा बोलते हैं, चाहे उनके विश्लेषण और प्रतिपादन में कितने ही गंभीर अंतर क्यों न हों।

इस आधार पर नृत्य की तकनीक को दो स्पष्ट शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः शुद्ध नृत्य (नृत्त) तथा स्वांग और अंगसंचालन सहित नर्तन (नृत्य) जिसे अंगिका - अभिनय अथवा मात्र अभिनय कहना अधिक उचित होगा।

नृत्य :-

भारतीय नृत्य तकनीक मानवीय संचालन पर बल देती है। वास्तव में भारतीय नृत्य में कई उच्चतः शैलीकृत और सांकेतिक भाव-भंगिमाओं को एक सूत्र

में बांधना होता है। नृत्त तकनीक न सिर्फ संचालन द्वारा ऐसे ताल प्रदान करने की तकनीक है जिसका कोई अर्थ नहीं होता, बल्कि देय तालगत चक्र के अंतर्गत विशिष्ट भाव-भंगिमाओं के प्रदर्शन का महत्वपूर्ण लक्षण भी होती है।

भारतीय नृत्य विशेष उद्देश्य से सिर्फ कुछ प्रकार के संचालनों पर ही बल देते हैं। यह, जानबूझ कर लागू की गई सीमाओं के अंदर इन संचालनों (movements) की पूर्ण संभावनाओं को खोजता है। कोई भी भारतीय शैली का नृत्य, कत्थकली और छाऊ के कुछ पहलुओं के अतिरिक्त, लंबी छलांगों का उपयोग नहीं करता, और भारतीय नृत्य पर ग्रंथों में उनकी बहुत कम अथवा नहीं के बराबर चर्चा की गई है।

नाट्यशास्त्र में अंगों तथा उपांगों के संचालन का विस्तृत विश्लेषण है। सिर, वक्ष अथवा वक्षस्थल, कमर, कूल्हे और पैर बड़े अंग हैं, और आंखें, भौंहें, नाक, होठ, ठोढ़ी, मुख्य इत्यादि छोटे अंग (उपअंग) हैं। इसके बाद आधारभूत मुद्राओं पर एक चर्चा है, अर्थात स्थानों पर- इन प्राथमिक संचालनों का योग।

अभिनय :-

नाट्य का स्वांग भाग, जिसे नाट्यशास्त्र में अंगिकाभिनय कहा गया है, नृत्य का एक समग्र भाग है। नृत्य में इसे अभिनय भी कहा जाता है। कुछ सिद्धांत नाटक और नृत्य अथवा अभिनय पर भी लागू होते हैं।

नृत्य के भाग में, संगीतमय सहयोग में एक धुन के स्वरों का उपभोग एक देय तालचक्र में करता है और ताल में विभिन्नता का प्रतिपादन शरीर के अंगों और उपांगों द्वारा किया जाता है। अभिनय भाग में, सहयोगी संगीत में अपरिवर्तनीय रूप से काव्य, शब्द अथवा वर्णन होता है जिसे संगीत और ताल में ढाला जाता है। यही काव्य है जिसका प्रतिपादन नर्तकों द्वारा किया जाता है। वास्तविक प्रतिपादन में, विशेषकर सभी शास्त्रीय शैली के एकल नृत्य में, विशिष्ट स्थायी भाव के विभिन्न संचारीभावों का प्रदर्शन करना होता है। यह अंगिकाभिनय की एक श्रंखला के माध्यम से किया जाता है जिसमें प्रत्येक शब्द अथवा कविता की पंक्ति इतने विभिन्न तरीकों से प्रतिपादित की जाती है जितना कि संभव हो। ऐसा करने में, नाट्यधर्मी के सिद्धांत का अनुसरण किया जाता है - नर्तक बगैर वस्त्र अथवा वेशभूषा बदले विभिन्न भूमिकाएं निभाता है।

अंगों और उपांगों के संचालन में , नृत्य अथवा अभिनय अधिकतर हाथों और चेहरे के हाव भावों पर निर्भर करता है, विशेषकर आँखों, भौंहों, नेत्रगोलों, इत्यादि के संचालन पर।

भारतीय नृत्य की तकनीक, भारत की किसी अन्य कला की तकनीक की भांति ही जटिल है। यह अपने सबसे छोटे भाग से, व्यवस्थित तरीके से लागू किए गए नियमों की एक श्रंखला के द्वारा, एक पूर्णत्व की ओर बनती है। यह सब, मस्तिष्क अथवा रस के एक विशेष चरण को उत्पन्न करने के दृष्टिकोण से किया जाता है।

भारतीय शास्त्रीय नृत्य

भारतीय शास्त्रीय नृत्य प्रदर्शनात्मक कलाओं में सबसे आगे हैं। लहराते रंगों, बढ़िया आभूषणों और तरल संचालन के शानदार एकल या सामूहिक प्रदर्शन में, प्रत्येक नृत्य स्वरूप का अपने दृश्यगत खिंचाव के लिए पूर्णतः रसास्वादन किया जा सकता है। किंतु शानदार प्रदर्शन के पीछे कुछ कठोर नियम होते हैं जो प्रत्येक नृत्य स्वरूप के साथ बदल जाते हैं। भारत के शास्त्रीय नृत्य एक महत्वपूर्ण पर्यटक आकर्षण हैं, विशेषकर उनके लिए जिनकी रुचि भारत की सांस्कृतिक समृद्धता में होती है।

कत्थक

'कत्थक' शब्द अपने मूल 'कथा' से उपजा है जिसका अर्थ है एक कहानी, और 'कत्थक' मूलतः कथावाचकों और चारणों की जाति थी जो उत्तर भारत के कुछ क्षेत्रों के मंदिरों से जुड़े होते थे। 'कत्थक' उनके वाचन में स्वांग और हावभाव जोड़ देता था ताकि प्रतिपादन अधिक प्रभावशाली हो। इस प्रकार अभिव्यक्तिकारी नृत्य का एक साधारण रूप उपजा, और इस नृत्य ने उस भ्रूण को स्थापित किया जिसे आगे चल कर कत्थक के रूप में विकसित किया गया।

15 वीं और 16 वीं शताब्दी में रास लीला, प्रेम-भक्ति का संप्रदाय उपजा। बृज में रास लीला की परंपरा विकसित हुई और लोक मंच के एक विशिष्ट रूप में विकसित हुई, जिसमें गाने, वर्णन, अभिनय और नृत्य का एक सुंदर संगम होता था। कत्थक कथा वाचकों ने रास लीला और लोक नृत्य को जोड़ दिया।

मुस्लिम शासन के आगमन के साथ कत्थक मंदिरों से निकल कर दरबारों में पहुंचा और वहीं से दो भिन्न वातावरणों में पहुंच गया- एक जिसमें राजस्थान के हिंदू दरबारों का प्रतिनिधित्व था, विशेषकर जयपुर का दरबार, और दूसरा दिल्ली, आगरा और लखनऊ के मुस्लिम दरबारों द्वारा संरक्षित हुआ। दरबारों के संरक्षण में कत्थक एक उच्चतः तकनीक युक्त और शैलीबद्ध कला में परिवर्तित हो गया। हिंदू और मुस्लिम दोनों ही दरबारों में कत्थक, मनोरंजन का एक परिष्कृत प्रारूप माना जाने लगा जिसमें लगभग पूर्णतः एकल प्रदर्शन का महत्व होता है।

राजस्थान में नृत्य के नृत पहलू को बड़ा महत्व मिला और इस प्रकार यह अधिक यंत्रवत् प्रदर्शन हो गया। दूसरी ओर मुस्लिम संरक्षक एक ऐसी कला देखना चाहते थे जो अपनी सभी मनोदशाओं में जीवन प्रदर्शित करती हो। उनके तत्वावधान में, नृत्य और भाव पर बहुत बल के साथ कत्थक एक ऐसे रूप में परिलक्षित हुआ जो मनोहारी, सज्जाकारी, सुझावकारी और सुखकारी था।

कत्थक की दो विचारधाराएं अथवा घराने हैं- जयपुर घराना जो अपनी लयकारी के लिए प्रसिद्ध है और लखनऊ घराना जिसमें भावों, मनोदशाओं और भावनाओं के वर्णन पर बल दिया जाता है। लखनऊ घराना अवध के अन्तिम नवाब वाजिद अली शाह के समय अस्तित्व में आया। इस घराने की परंपरा ठाकुर प्रसाद नामक एक व्यक्ति ने शुरू की और यह तकनीक उनके दो पुत्रों, कालका प्रसाद और बिंदा दीन द्वारा परिष्कृत की गई। यह तीनों ही वाजिद अली शाह के दरबार में नर्तक थे।

कत्थक का एक तीसरा घराना भी है - जानकी प्रसाद अथवा बनारस घराना। जानकी प्रसाद घराने का भिन्नताकारी लक्षण यह है कि यह तालगत प्रारूपों में, जो कत्थक नृत्य का आवश्यक भाग है, बोलों का उपयोग करता है- जबकि अन्य दो घराने बोलों के अतिरिक्त तबला और पखावज का स्वच्छन्दता से उपयोग करते हैं। ये यंत्र कत्थक के साथ बजाए जाते हैं।

वाजिद अली शाह और मध्य प्रदेश में रायगढ़ के राजा चक्रधन सिंह इस कला के महान संरक्षक थे। कत्थक के अग्रणी कलाकार सभी पुरुष थे। महिलाओं का कत्थक में एक भिन्न स्थान होता था। उन्हें 'नाच-वाली' अथवा नाचने वाली

लड़कियां कहा जाता था, और उनका नृत्य 'नाच' कहलाता था। इस नृत्य की परंपरा मुगलों से आरंभ हुई, जब उन्होंने आनंद की इच्छा रखने वाले शासकों के मनोरंजन के लिए फारस (Persia) से नाचने वाली लड़कियों को बुलवाया। जो भी नृत्य यह लड़कियां अपने साथ लाई उसने निश्चित रूप से कत्थक को आकार देने में सहयोग किया, किंतु वे अपनी ही शैली का कत्थक नृत्य करती थीं।

कत्थक नर्तक के सहयोगी संगीत वाद्य यंत्र हैं, तबला, अथवा ढोलक, सारंगी, एक तारों का वाद्य मंत्र जिसके पाए में घंटियां बंधी होती हैं। सारंगी वादक, नृत्य के लिए उचित वातावरण बनाने के लिए ताल में 'लहर' अथवा 'नगमा' आरंभ करता है। नर्तक अपना नृत्य 'थाट' से आरंभ करता है, अर्थात वह अपने शरीर को दुरुस्त करता है। यही 'थाट' कत्थक नृत्य के सबसे कोमल भाग का प्रतिनिधित्व करता है। 'थाट' के बाद 'आमद' और 'सलामी' प्रस्तुत किए जाते हैं, और फिर आते हैं 'तत्कार', 'तोड़े' और 'गत'।

पैरों का कार्य जो ताल और समय को नियंत्रित करते हैं, कत्थक का एक प्रधान तत्व है। 'तत्कार' कम से कम तीन गतियों में किया जाता है - एकल, दोहरा और चौगुना। किंतु कभी-कभी ऊंची गति भी अपनाई जाती है। तत्कार में पैरों पर बल दिया जाता है। तत्कार में नर्तक के लिए भिन्नता प्रस्तुत करने की प्रथा है, और इन्हें 'पल्टा' कहा जाता है। 'तत्कार' और 'पल्टा' दोनों ही ध्वनि अलंकरण के प्रारूप प्रदान करते हैं, और यह पैरों के कार्य की गति को दक्षतापूर्वक प्रभावित कर और घुंघरुओं के स्वरसंक्रम द्वारा उत्पन्न किया जाता है।

'तोड़ा' नृत्य का वह भाग है जिसमें पैरों के कार्य के साथ बाहों, हाथों, सिर और गले का भी संचालन किया जाता है। वे अक्षर जो तोड़ा में विभिन्न थापों का प्रतिनिधित्व करते हैं उन्हें 'बोल' कहते हैं, उनका उच्चारण छन्दबद्ध रूप से किया जाता है। कत्थक की पारंपरिक तकनीक के लिए यह आवश्यक है कि तोड़े परहत में प्रस्तुत किए जाए (ताली बजाकर ताल की थापों को बताना) और फिर नृत्य में 'आमद' और 'सलामी' भी तोड़े की विविधताएं हैं।

'गत' एक भिन्न प्रकार का स्वांग है जिसका उपयोग कत्थक में एक कहानी सुनाने के लिए किया जाता है। इसमें पैरों का कोई विशेष कार्य नहीं होता, सिर्फ शरीर का संचालन होता है। जब 'गत' प्रस्तुत किए जा रहे हों तो तबला और लहर तेज गति से कार्य करते हैं, किंतु स्वयं नृत्य धीमी गति से किया जाता है।

कत्थक में बनाव-श्रंगार और वेशभूषा महत्वपूर्ण नहीं होते। जब कत्थक मंदिरों में होता था तो पुरुष नर्तकों की वेशभूषा मात्र एक रंगीन धोती होती थी, जिससे पैर ढके जाते थे और कुछ आभूषण। जब कत्थक दरबार में पहुंचा तो वे चूड़ीदार पायजामें, एक लंबा कोट या अंगरखा और टोपी या पगड़ी पहनने लगे। महिला नर्तकी के लिए वेशभूषा एक साड़ी और ब्लाउज अथवा घाघरा और ओढ़नी है।

बनाव श्रंगार के लिए पुरुष आँखों में सुरमे के अलावा और कुछ नहीं लगाते थे जबकि महिलाएं चेहरा रंगती थी, काजल लगाती थीं और अपने होंठ लाल करने के लिए पान चबाती थीं।

कत्थक, भारत में शास्त्रीय नृत्य के कई रूपों में एक है। किंतु इसमें कई भिन्नताएं हैं जो इसे एक अलग श्रेणी में रखते हैं। उदाहरणतः भारत का यही एक शास्त्रीय नृत्य है जिसके सम्बंध मुस्लिम संस्कृति से हैं; यह वास्तव में हिन्दू और मुस्लिम कला की बौद्धिकता के एकीकरण का प्रतिनिधित्व करता है। कत्थक, शास्त्रीय नृत्य का एक ऐसा रूप है जो हिंदुस्तानी अथवा उत्तर- भारतीय संगीत से गहरे जुड़ा है। निःसंदेह कत्थक, नृत्य का एक उच्च शैलीकृत और जटिल रूप है, जिसमें कलाकारी का प्रारूप स्वयं इसका अपना है। यद्यपि जो इसे नहीं जानते उन्हें यह अजीब सा दिखेगा, किन्तु कत्थक निश्चित रूप से उसके लिए तीव्र धर्मनिरपेक्ष संतोष उत्पन्न करेगा जिसने इसके प्रभावों को यथार्थता में समझा है और इसके अभिप्राय की अनुभूति की है।

ओडिसी - मंदिर नृत्य

नाट्यशास्त्र, नृत्य कला को चार क्षेत्रीय प्रकारों में विभाजित करता है: अवन्ती, दक्षिणाट्य पांचाली और ओधरा- मगधी। ओधरा-मगधी प्रकार का नृत्य, अंग, वांग, कलिंग, वत्स, ओधरा, मगध, पुण्ड्र और उत्तर भारत के कुछ अन्य क्षेत्रों में प्रचलित था। कलिंग और ओधरा का संदर्भ आज के उड़ीसा से है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नृत्य का यह शास्त्रीय रूप भारत के इस भाग में प्रफुल्लित था। ओडिसी में नाट्यशास्त्र के कुछ तत्व हैं।

उड़ीसा में नृत्यकला के अस्तित्व का आरंभिक प्रमाण ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में पाया जाता है, जब जैन राजा खरावेल देश के इस भाग पर शासन

करता था। उदयगिरि में हाथी गुंफा गुफा और रानी नहर गुफा में प्राप्त इस काल के शिलालेख और तराशी गयी पट्टिकायें प्रमुख प्रमाण हैं।

खरावल के बाद, कई शताब्दियों तक उड़ीसा में नृत्य के किसी भी रूप के अस्तित्व का कोई प्रमाण नहीं मिलता। भुवनेश्वर के ब्रह्ममेश्वर मंदिर में 8 वीं शताब्दी का शिलालेख नृत्य के इतिहास पर से एक बार फिर पर्दा उठाता है। शिलालेख के अनुसार केसरी राजा उदयोत्त की माता कोलावती ने एक शिव मंदिर बनवाया और उसके लिए कई नाचने वाली लड़कियां अर्पित कर दीं।

केसरी वंश से मंदिरों में नाचने वाली लड़कियों की परम्परा आरंभ हुई, जो ओडिसी नृत्य की आरंभिक नर्तक रहीं। ओडिसी नृत्य का इतिहास, अधिकांशतः उड़ीसा में विख्यात 'देवदासियों' अथवा 'महारियों' का इतिहास है।

गंगा वंश और सोलार वंश ने भी 'देवदासियों' अथवा 'महारियों' की यह परंपरा जारी रखी। गंगा वंश ने उड़ीसा के मंदिरों में नट मंदिर अथवा नृत्य कक्ष बनवाए जिससे 'महारियां' और संगीतकार उसमें नृत्य वादन कर सकें, जो मंदिर की सेवा में रहा करती थी। एक अन्य लक्षण जो उन्होंने जोड़ा वह था कि जयदेव के गीत गोविंद का गायन, जो जगन्नाथ मंदिर का एक अविभाज्य अंग बन गया और यह परम्परा आज भी जारी है।

सोलहवीं शताब्दी के अंत तक उड़ीसा अपनी स्वतंत्रता खो बैठा। 300 से भी अधिक वर्षों तक क्षेत्र की राजनैतिक स्थिति अशांत रही, जिसने जीवन के धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पहलुओं को प्रभावित किया। 'महारियां' जिन्हें मूलतः मंदिर और ईश्वर के अभिप्राय से ही रखा गया था, उन्हें ग्रामीण दरबारों में भी रखा जाने लगा। इस प्रकार यहां से महारियां अपना सम्मान खो बैठीं।

महारियां दो प्रकार की होती हैं :

(i) भीतर-गनी महारीः जो एक विशिष्ट समूह होता है, उन्हें मंदिर के पवित्र गर्भगृह में जाने का अधिकार होता है और उन्हें ही 'बड़ा श्रंगार' के समय अथवा शयन से पूर्व भगवान के अलंकरण के अनुष्ठान के समय नृत्य और गायन का अधिकार होता है।

(ii) बाहर-गनी : जिन्हें गर्भगृह में प्रवेश का अधिकार नहीं होता। वे 'नट मंदिर' में अथवा मंदिर के बाहर 'गरुड़ स्तंभ' में नृत्य करती है।

जब भी उसे नृत्य करना हो 'महारी' को स्नान के बाद ही शुद्ध होकर मंदिर में आना होता है।

17वीं शताब्दी के आरंभ में रामचंद देव के शासन काल में लड़कों का एक वर्ग जिन्हें 'गोतिपुआ' कहा जाता था अस्तित्व में आया। यह लड़के नाचने वाली लड़कियों की वेषभूषा में मंदिर में और लोगों के सामान्य मनोरंजन के लिए नृत्य करते थे 'गोतिपुआओं' का नृत्य अधिक जीवंत और भव्य होता, क्योंकि यह नृत्र के रूप में होता था और इसमें कलाबाजी का तत्व भी सम्मिलित होता था। ओडिसी नृत्य, जैसे जैसे विकसित हुआ, उसने गोतिपुआ शैली से काफी कुछ लिया।

चोड़गंगादेव के समय से भगवान जगन्नाथ की शोभा में कई वार्षिक उत्सवों के अवसर पर, विशेषकर चंदन यात्रा और झूलन यात्रा पर, 'महारियों' और 'गातिपुआओं' द्वारा नृत्य भी प्रचलन में आ गया।

तकनीक के मामले में ओडिसी एक उच्चतः शैलीकृत नृत्य है। यह नाट्यशास्त्र, अभिनय दर्पण और नृथ्य एवं संबंधित कलाओं पर उड़िया ग्रंथों पर आधारित है।

ओडिसी नृत्य में एक परिपूर्ण और पूर्णतः व्यवस्थीकृत तकनीकी शब्दकोष का उपयोग होता है। नृत्य के पहलू में, मुद्रा विभिन्न भाव भंगिमाओं में शारीरिक संतुलन और संचालन की क्रिया के कठोरता से शैलीक्रम तरीके को बहुत महत्व दिया जाता है। ओडिसी की आधारभूत मुद्रा है, झुके हुए कूल्हे, झुका हुआ सिर और घुटनों पर से मुड़े हुए पैर। ओडिसी की आधारभूत नृत्य इकाइयों में एक मुद्रा, एक भंगिमा, हाथों के संचालन से भावों का प्रकटीकरण होता है। 'भाव' उच्चतः नाटकीयता युक्त, शुद्ध और परंपरागत होता है।

संगीत शुद्ध और शास्त्रीय होता है जिसमें हिंदुस्तानी और कर्नाटक दोनों ही पद्धतियों के छाया होती है। परंपरागत रूप से जिन वाद्य यंत्रों का उपयोग होता है, ये 'मर्दल', गिनि और बांसुरी हैं। आजकल वीणा, वायलिन और सितार का उपयोग भी प्रायः होता है। गीतों की भाषा संस्कृत अथवा उड़िया होती है।

यद्यपि ओडिसी में अभिनय के लिए कई मध्यकालीन और आधुनिक कवियों का उपयोग होता है, जयदेव के गीत गोविंद को जो स्थान प्राप्त है वह अद्वितीय है।

ओडिसी नृत्य भूमि पूजन से आरंभ होता है, जिसमें नर्तक पृथ्वी को अनुष्ठानिक रूप से प्रणाम करता है। गणपति के पूजन के रूप में 'बिघ्नराज पूजा' अर्पित की जाती है, जिसमें नर्तक इसके लिए संस्कृत को श्लोक के अर्थ की अभिव्यक्ति करता है।

'बाटु नृत्य'- यह 'बाटुक भैरव' अथवा भगवान शिव के पूजन के रूप में एक नृत्य है। इस नृत्य में नृत और नृत्य के वैकल्पिक अनुक्रम होते हैं। इस नृत्य का साथ देने के लिए कोई गीत नहीं होता, किंतु तालगत अक्षरों का एक टेक पूरे नृत्य में उच्चारित किया जाता है।

'इष्ट-देव-वंदना'- इसमें किसी देवी/देवता की प्रशंसा में एक संस्कृत का श्लोक गाया जाता है, और उसका अर्थ अभिव्यक्ति द्वारा दर्शाया जाता है।

'स्वर-पल्लवी नृत्य'- यह नृत्य, राग और ताल को बराबर महत्व देता है।

'साभिनय नृत्य'- श्रंगार रस पर आधारित एक गीत, सामान्यतः राधा-कृष्ण के विषय से संबद्ध, गाया और भावों के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

'तरिज्जम' अथवा 'नतंगी'- ओडिसी का समापन नृत्य। इसमें तेज गति से किए गए विशुद्ध नृत्त के अनुक्रम होते हैं जिनके साथ तालगत अक्षरों के उच्चारणीय प्रारूप होते हैं जो सामान्यतः 'तरिज्झम्' शब्द संकेत से आरंभ होता है।

महेश्वर महापात्र की **'अभिनय चंद्रिका'** ओडिसी की वेशभूषा, गहने और बनाव श्रंगार का वर्णन करती है। महारथियों की वेशभूषा में, एक चटक रंग की रेशमी साड़ी जिसका एक पल्लू आगे की ओर इस प्रकार चुन्नट की गई होती है जो एप्रेन (apron) की तरह लटकती दिखती है। इसके ऊपर चांदी से बनी एक प्रकार की करधनी बांधी जाती है। ब्लाउज भी रंगबिरंगा होता है। गोतिपुआ लोग भी साड़ी और ब्लाउज का उपयोग करते हैं, किन्तु उन्हें आगे चुन्नट नहीं बांधनी पड़ती।

महारियां और गोतिपुआ दोनों ही स्वयं को चांदी से निर्मित आभूषणों से ढक लेते हैं। सफेद फूलों से बनी एक वेणी सिर में सजाई जाती है, और कभी

कभी फूल चोटी के साथ गूंथ दिए जाते हैं। चेहरा छोटे-छोटे सुंदर बिन्दुओं से भौहों से लेकर गालों तक सजाया जाता है, सिंदूरी टीका माथे के मध्य में लगाया जाता है, आंखों को और गहरा काला किया जाता है, हाथों की गदेलियां और तलवे लाल रंग से रंगे जाते हैं।

ओडिसी का एक विस्तार उड़ीसा के एक अन्य रूप के नृत्य 'शब्द स्वरपत' में पाया जाता है, जो आज भी संभलपुर जिले में जीवित है; यद्यपि यह उपेक्षित हालत में है। इस नृत्य को पुरुष-करते हैं और शैली, ताण्डव, पुरुष-सुलभ है।

ओडिसी नृत्य का एक विशिष्ट लक्षण यह भी है कि इसका प्रतिनिधित्व उड़ीसा के सज्जाकारी मंदिर शिल्पकला में भी हुआ। वास्तव में, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि यदि कोई दृढ़ बना रहे, तो यह ओडिसी नृत्य की शब्दावली का अधिकांश भाग पत्थरों में सुरक्षित पाएगा। और मात्र यही एक गुण ओडिसी को भारत की शास्त्रीय नृत्य परपंरा में एक विशिष्ट वर्ग में रखने के लिए पर्याप्त होना चाहिए।

कथकली

यद्यपि कला का यह रूप 300 वर्ष से अधिक पुराना नहीं है, तथापि इसके वास्तविक मूल को 1500 वर्ष पूर्व में खोजा जा सकता है। यह आर्य और द्रविड़ सभ्यताओं के मेल का द्योतक है, और मान्यता है कि यह मृष्णनाथम, रामनाथम, कुडियट्टम मुदायेतु और तेयूयम जैसे विभिन्न क्षेत्रों की ऐतिहासिक रंगमंच परंपराओं से उत्पन्न हुआ है। महान मलयाली कवि, वक्तथेल नारायण मेनन ने नृत्य के इस रूप को पुनर्जीवित किया और इसे एक दीर्घजीवी संस्थागत समर्थन दिया।

कथकली का क्षेत्र महामानवों, देवताओं, दैत्यों, राक्षसों, मिथकीय पक्षियों और जानवरों से भरा हुआ है। प्रदर्शन को जीवन्त बनाने के लिए चरित्र वास्तविक जीवन से कहीं अधिक बड़े रूप में प्रस्तुत किए जाते हैं। उनकी प्रकृति और गुणों के आधार पर, कत्थकली के पात्रों को विभिन्न मुख्य-प्रकारों में बांटा जाता है, जिनमें से प्रत्येक एक वेशभूषा और बनाव श्रंगार में प्रस्तुत किया जाता है। अच्छे

और उत्तम मानवों जैसे दैवीय व्यक्तित्व, 'बहादुर' राजाओं और 'सद्गुणी' नायक, तथाकथित 'पच' अथवा हरे श्रंगार में आते है। इसमें चेहरा हल्के हरे रंग और सफेद चुट्टी से रंगे गालों से लेकर कानों तक चिपकाए जाते हैं। खूँख्वार ताकतवार और खलनायक पात्र 'कटि' करते हैं। एक तीसरा प्रकार है, दाढ़ी जिसकी तीन किस्में होती हैः सफेद, काली, और लाल। सफेद दाढ़ी वाले पात्र दयालु और धर्मपरायण होते हैं, लाल दाढ़ी वाले पापी, विनाशकारी और दैत्यनुमा। काली दाढ़ी आदिवासी और कीरट जैसे पात्रों की ओर इंगित करती है। सफेद और लाल दाढ़ी के अतिरिक्त, चित्रित किए जाने वाले पात्र के चरित्र के अनुसार चेहरे के श्रंगार की परिकल्पना होती है। और फिर एक 'मिनुक्कू' होता है। इसका चेहरा चिकना और गुलाबी रंगा होता है जो सामान्यतः महिला पात्रों, ऋषियों इत्यादि के लिए उपयोग होता है। विशेष पात्रों के लिए विशेष प्रकार के श्रंगार भी होते हैं जो उपरोक्त वर्णित किसी भी श्रेणी में नहीं आते।

कथकली में श्रंगार के समान ही परिधान और अलंकरण भी महत्वपूर्ण होता है। यथार्थतः सभी पुरुष पात्र पूरी आस्तीन की एक रंगीन जैकेट पहनते हैं और साथ ही एक भारी भरकम लहंगा जैसा परिधान, जिसके अंदर कई परतों में वस्त्र पहने जाते हैं ताकि वह और भी अधिक फूला हुआ दिखे। जैकेट के साथ ही अलंकारिक मालाएं (कंठियां), स्कन्धिकाएं और चूड़ियां पहनी जाती हैं। एक रंगबिरंगी और अत्यधिक सजावट युक्त वक्ष-पट्टिका और एक दोहरा अंचल वस्त्र पहना जाता है।

कलाकार मुकुट पहनते हैं जिसे सामानतः 'मुड़िया' कहते हैं। एक विशिष्ट छड़ी के आकार का मुकुट कृष्ण के पहनने के लिए होता है, जो लव और कुश और 'सात्विका' प्रकार के राजकुमारों की भी पहनाया जाता है। दूसरे भले वीर एक अधिक सजावटी छोटी शंकुरूपी मुकुट और छोटी तश्तरी भी धारण करते हैं। लाल दाढ़ी वाले पात्रों के सिरों की सज्जा उसी प्रकार की जाती है जैसी कि भले चरित्र के पात्रों की होती है, किन्तु उनके मुकुट ऊंचे होते हैं, जबकि दुष्ट और दैत्य चरित्र के पात्रों के मुकुट भारी भरकम होते हैं।

पैरों में घुंघरू बांधे जाते हैं। बढ़े हुए, मुड़े हुए और नुकीले चांदी के बने बड़े-बड़े नाखून बांए हाथ की उंगलियों में लगा दिए जाते हैं।

महिला पात्रों का पहनावा इस प्रकार होता है: एक पूरी आस्तीन की जैकेट, घुटनों तक एक प्रकार की स्कर्ट, और एक ओढ़नी जो सिर को ढकते हुए किनारे से कमर की ओर लहराती है। कई आभूषण होते हैं, जैसे मालाएं (कंठिकाएं), चूड़ियां, कानों के झुमके और एक कमर पेटी। उभरे हुए नकली वक्ष वेषभूषा का अंग होते हैं।

मणिपुरी

उत्तर पूर्व के मणिपुर राज्य में नृत्य का एक सुंदर और मनोहारी रूप आया जिसे मणिपुरी कहा जाने लगा। यह शैली भक्ति पर बल देती है, एंद्रिक सुख पर कदापि नहीं। मणिपुरी का भूल भी धर्म में है। 17 वीं शताब्दी में वैष्णववाद के आगमन से यह विशेषकर फला फूला, जब वैष्णव शैली में भगवान कृष्ण की आराधना में मणिपुरी धार्मिक नृत्य, कीर्तन और गायन किया जाता था। वैष्णव परंपरा के कीर्तनों और चोलमों (ढोल नृत्य) के विभिन्न रूप प्रचलित हुए।

समय ने नृत्य के रूप को समकालीन रुचियों के अनुसार संवारा। इसके वर्तमान रूप और संग्रह का श्रेय राजा भाग्यचंद्र को जाता है जिन्होंने, कहते हैं, यह सब अपने स्वप्न में देखा। उन्होंने नृत्य पर एक बहुमूल्य पुस्तक लिखी जिसे 'गोविन्द संगीत लीला विलास' कहते हैं। आज तक यह ग्रंथ मणिपुरी नृत्य का आधार बना हुआ है।

मणिपुरी एक प्रवाहमय शैली है, नृत्य में शरीर की ऊर्ध्वस्थ रेखा कभी नहीं तोड़ी जाती। शरीर, आठ के अंक के आकार में स्वयं को मोड़ता है और निरंतर संचालन (गति) का प्रयास करता है। व्यक्ति एक मुद्रा से दूसरे में प्रवाहित होता रहता है। वक्ष और कमर, यद्यपि विपरीत दिशा में जाते हैं तथापि सदैव संयुक्त रहते हैं, कुछ इस प्रकार जो अंग्रेजी के 'S' के आकार के संचालन का प्रभाव उत्पन्न करें। आधारभूत मुद्रा यह है कि चरण और घुटने साथ होते हैं और घुटने कुछ मुड़े हुए। हाथ, शरीर से थोड़ी दूर एक अर्ध -गोलाकार में रखे जाते हैं। आधारभूत संचालन (गति) है उंगलियां को धीरे-धीरे बंद करना और खोलना। चेहरा सामान्यतः शांत दिखता है और गीत की पंक्तियों की प्रतिक्रिया में अभिव्यक्ति बहुत नियंत्रित। यह मणिपुरी का 'लास्य' अथवा नारीसुलभ रूप है। मणिपुरी में ऐसे

बहुत कम संचालन होते हैं जिसमें पैर पटके जाते हैं। पैरों का संचालन बहुत जटिल होता है और नर्तकी अपने पैर जमीन से दूर घुटनों से ऊपर नहीं उठा सकती। ताण्डव, अथवा पुरुषनर्तक के नृत्य में बिल्ली जैसी स्फूर्ति और ऊँची छलांगें होती हैं। चरण एक दूसरे से दूर और घुटने मुड़े हुए रखे जाते हैं। संपूर्ण तकनीक में कई कुण्डलीनुमा और बैठने वाली मुद्राएं होती है। 'पंग-चोलम्' इसका एक उदाहरण है।

संचालन की आधारभूत इकाई एक 'चाली' होती है, जो विभिन्न दिशाओं से स्थान घेरने से आरंभ होती है, और इसका अन्त गोलाइयां और कुण्डलियां बनाने से होता है। इन आधारभूत संचालनों में विभिन्न प्रकार के घुमाव जोड़े जाते हैं। कुछ 'चालियां' मिल कर एक 'पेरंग' बनाती हैं, जो कि एक अधिक जटिल और शुद्ध नृत्य का अनुक्रम है तथा एक विस्तृत और भारतीय छंदोबद्ध चक्र में नियत होता है।

नृत्य के बीच-बीच में पुरुष नर्तकों द्वारा उनके ढोलों अथवा करतालों समेत लंबी-लम्बी किंतु मनोहारी छलांगें ली जाती हैं। यह इस शैली की विशिष्टता होती है और इन्हें चोलम कहते हैं।

विभिन्न 'रस' नृत्य मणिपुरी संग्रह का एक बड़ा महत्वपूर्ण भाग होते हैं। यह रचनाएं विषयवस्तु में उच्चतः साहित्यिक होती है, और शास्त्रीय संगीत और विशिष्ट छन्दबद्ध चक्र में ढाली जाती हैं। वसन्त 'रस', होली के अवसर पर किया जाता है। कुंज 'रस', रक्षाबन्धन के पर्व पर तथा महारस कार्तिक माह की पूर्णमासी के दिन किया जाता है।

'कीर्तन' करने वाले सफेद धोती और अंगवस्त्र पहनते हैं। महिलाएं, पारंपरिक सुंदर किनारीदार वस्त्र लपेटतीं, ब्लाउज पहनतीं, और धड़ से लिपटा और साथ ही सिर को ढकते हुए एक चादर पहनती हैं।

'रस' के लिए परिधान विशिष्ट होते हैं। वे एक विशेष प्रकार की स्कर्ट पहनती हैं जिसे 'कुमिन' कहते हैं, जो कमर पर खुलता है और नर्तकों की टांगों को घेरे गोल आकृति में कड़क खड़ा रहता है। वे उच्चतः अलंकृत होते हैं।

संगीत पूर्णतः देसी होता है किंतु विभिन्न स्थानीय ग्रंथों में निर्धारित नियमों का अनुसरण करता है। इसमें तीन प्रकार के यंत्र उपयोग किए जाते हैं:

- अणद्ध (तालवाद्य) जैसे पंग, यैलुरय, नग्न, खोल पखावज, इत्यादि।
- घन (धातु के) यंत्र जैसे बानिक, पेरे, खोंग।
- तात (तारों के) यंत्र जैसे पेना, एसराज, तानपूरा, इत्यादि।

इस कला के प्रसिद्ध नर्तक अनोलि सिंह, विपिन सिंह, बाल सिंह, महाबीर सिंह, झवेरी बहनें, सिंहजीत सिंह, और चारू माथुर हैं।

कुचिपुड़ी

यह आंध्र प्रदेश का नृत्य-नाट्य है। यह तमिलनाडृ की 'भगवत्मेला नाटक' जैसी ही शैली है। इसका नाम, इसके जन्म के गांव के नाम पर पड़ा (कुचेपपुरम अथवा कुसीलवपुरी)। कुचिपुड़ी, संस्कृत के शब्द कुसीलवपुरी का प्रचलित का रूप है। ग्रंथों, पुराणों और इसी प्रकार के अन्य साहित्य से लिए गए विषयों पर तेलगू में नाटक लिखे जाते और गांव के ब्राह्मण लड़कों द्वारा शास्त्रीय शैली में मंचित किए जाते थे। गांव में भगवान रालिंगेश्वर को समर्पित एक मंदिर है। मंदिर में राजगोपाल की एक सुंदर प्रतिमा है जिनके बारे में नाटक 'भाम-कलपम' लिखा गया था। यह कुचिपुड़ी संग्रह का सबसे प्रसिद्ध नाटक है।

कुचिपुड़ी में 'लास्य' और 'ताण्डव' तत्वों, लोक और शास्त्रीय छाया का समन्वय है। कृष्ण और रुकमिणी की कथाओं के प्रसिद्ध विषयों पर नृत्य-नाट्य के अतिरिक्त, निम्नलिखित विषय हैंः मण्डूक शब्दम, बालगोपाल तरंग (पीतल की थाली के किनारों पर पैर रख कर नृत्य करना) और ताल चित्र नृत्य।

इस नृत्य के प्रसिद्ध प्रतिपादक हैं लक्ष्मी नारायण शास्त्री, यामिनी कृष्णमूर्ति, स्वप्न सुंदरी, शोभा नायडू, राजा और राधा रेड्डी, वेमपति सत्यम् और वेदान्तम् सत्यम्।

यक्षगान

यक्षगान कर्नाटक का लोक मंच है। मुख्य क्षेत्र जहां यक्षगान किया जाता है कर्नाटक की तटीय पट्टी क्षेत्र का दक्षिणी किनारा है। क्रियाशील ऋतु है दिसम्बर से मई, अर्थात धान की फसल की कटाई के बाद।

यक्षगान का प्रमुख पक्ष नाट्य है। जैसा कि विख्यात कवि रत्नाकर वैनी द्वारा 1557 ईस्वी में लिखित कृति 'भारतेश वैभव' से ज्ञात होता है, यह कला लगभग 400 वर्ष पुरानी है। यक्षगान, नाट्यमंत्र के एक रूप में 'नाग मंडल' नामक धार्मिक अनुष्ठान से उपजा, सर्प-देवता सुब्बरैया को संतुष्ट करने के लिए अर्पित किया जाने वाला सम्मान, जिन्हें कर्नाटक में सुब्रह्मण्य, अथवा भगवान शिव के पुत्र स्कंद के रूप में पहचाना जाता है।

यक्षगान नाटकों को प्रसंगों के रूप में जाना जाता है। एक नाटक में विभिन्न छन्दों में बद्ध कोई 200 से 300 बन्द होते हैं। कुछ छन्द स्वयं पात्रों द्वारा गाए जाने के लिए होते हैं, जबकि अन्य वर्णनकारी अथवा दृश्यों को जोड़ने के काम आते हैं। किंतु यक्षगान में पूर्वनिर्धारित शब्द से कहीं अधिक महत्वपूर्ण तात्कालिक शब्द होता है। यह गद्य, एकालाप, अथवा वार्तालाप के रूप में होता है। जिसे अभिनेता-नर्तक उसी समय सुधार कर तात्कालिक बनाते हैं।

व्यावहारिक रूप से यक्षगान के प्रत्येक नाटक में एक शिक्षा होती है। नाटक, कन्नड़ में एक भिन्न श्रेणी का साहित्य रचता है। कथाएं, रामायण, महाभारत, भागवत और पुराणों से ली गई होती हैं।

संगीत, विशेषकर गायन, प्रस्तुतिकरण में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यक्षगान परंपरा के कोई 150 राग ज्ञात हैं, किन्तु मात्र कुछ ही प्रचलन में हैं। सहायक संगीत वाद्य हैं झांझ या घड़ियाल, चंदे और मड्डाले नामक ढोल, और मुखवीणा अथवा पुंगी।

यक्षगान में नृत्य उच्चतः विकसित नहीं है। संभवतः यही कारण है कि यह कला लोक-नाट्य मंच की श्रेणी में रखी गयी। इसमें रस अधिकांशतः ताण्डव का है। युद्ध के जैसे दृष्यों के अतिरिक्त पूरे शरीर का अधिक उपयोग नहीं होता। चेहरे पर भाव होते हैं किंतु यह न तो बहुत तीव्र और न ही बहुत भिन्न होते हैं। 'हस्त' व्यवहारिक रूप से लुप्त होते है। किन्तु, पैरों का काम महत्वपूर्ण होता है, और विभिन्न भावों और परिस्थितियों के लिए इसकी कई विविधताएं होती है।

एक प्रसंग की प्रस्तुतिकरण न्यूनाधिक एक नियत प्रारूप का अनुसरण करता है। मंच अथवा रंगशाला के उन्नत हो जाने के बाद नृत्य-नाट्य की उद्घोषणा 'चंडे' बजा कर की जाती है। जब दर्शक एकत्रित हो जाते हैं तो अभिनेता

भगवान गणेश की आराधना एवं नृत्य-नाट्य की सफलता की कामना करने के लिए श्रृंगार-कक्ष में एकत्रित हो जाते हैं। भागवत और सहयोगी संगीतकार प्रवेश करते हैं और मंच के पीछे की ओर एक पंक्ति में खड़े हो जाते हैं अथवा बेंच पर बैठ जाते हैं। नृत्य-नाट्य से पहले प्रमुख पात्र एक एक कर प्रस्तुत किए जाते हैं और फिर एक पंक्ति में एक लाल कपड़े की पट्टिका के पीछे खड़े किए जाते है। प्रत्येक पात्र बनाए गए पर्दे के पीछे नृत्य करता है, पहले दर्शकों की ओर पीठ कर के, फिर तिरछे और फिर दर्शकों की ओर मुंह करके; नृत्य का तरीका पात्र के चरित्र को दर्शाता है। भागवत एकालाप का गायन करता है और अपने गायन में पात्रों का नाम लेता जाता है। जैसे ही एक नाम लिया जाता है, वह पात्र मंच पर प्रवेश करता है और अपनी भूमिका की प्रकृति के अनुसार एक छोटा नृत्य प्रस्तुत करता है। जैसे यह नाट्य भागवत के शब्दों और हनुमानायक की मसखरी के साथ आगे बढ़ता है, नृत्य-नाट्य के अंत में भागवत 'मंगलम्' गाता है।

यक्षगान में, आहार्य, अथवा साज-श्रृंगार और वेषभूषा, महत्वपूर्ण और रंगविरंगा होता है। पात्र कुछ मुख्य प्रकारों में विभक्त होते हैं। उदार राजाओं की बड़ी-बड़ी काली मूछें और माथे पर पवित्र लाल तिलक होता है। बड़े और महान पात्र भी ऐसे ही होते हैं किंतु आंखों के नीचे लाल रंग की एक परत होती है। यह सभी लोग ऐसी जैकटें पहनते हैं जो गहरे हरे, लाल या नीले रंग की होती हैं, साथ में एक नारंगी और लाल रंग की विसातदार धोती पहनते हैं। राजा और वीर नाथक बड़े और मोरपंखों से सजे मुकुट पहनते हैं। अभिमानी और आडम्बरी, एक बड़ी पगड़ी बांधते हैं। विष्णु, अथवा राम या कृष्ण जैसे उनके किसी अवतार के लिए, जो वीर किंतु भद्र लोगों की श्रेणी में आतो हैं, चेहरा और अंग नीले रंग से रंगे जाते हैं। राक्षसी पात्रों के चेहरे लाल, हरे या काले रंगें, जूट या रुई की बड़ी काली मूछें और एक अर्ध-गोलाकार दाढ़ी होती है। एक तड़कीला-भड़कीला मुकुट, रंगबिरंगी जैकेट और स्कर्ट जैसा वस्त्र दुष्ट चरित्र के पात्रों की वेशभूषा का आवश्यक भाग होता है। कलाकार, कंठियां (मालाएं),-चूड़िया, कमरपेटी, कवच भी पहनते है। अधिकांश कलाकार तलवार, तीर और धनुष जैसे हथियार लिए होते हैं।

यक्षगान के कलाकार अधिकांशतः ग्रामीण, जैसे किसान, होते हैं, किन्तु वे इस कला में प्रशिक्षण प्राप्त होते हैं। मण्डलियां, जिन्हें मेले कहते हैं, मंदिरों के होते हैं।

भरतनाट्यम

भरतनाट्यम की उत्पत्ति और विकास के चिह्न संगम युग में पाए जा सकते है। जो ईसा पूर्व 500 वर्षों से 500 ईस्वी तक रहा। इस युग के दो ग्रंथ, 'सिलप्पडिकरम्य' और 'मणिमेखलई', एक नर्तकी के जीवन और इस कला की नृत्य तकनीक और प्रस्तुतीकरण के विषय में है। सभी आरंभिक तमिल कृतियों में इस नृत्य को 'कूथु' के नाम से जाना जाता था, और इसके दो मुख्य विभाग हैं, 'शांति कूथु', एक पुरस्कृत और संगठित शैली, और 'विनोद कूथु' मनोविनोद के लिए। समय के साथ 'शांति कूथु' को भारतम के रूप में जाना गया, और इसी से इसका वर्तमान नाम 'भरत नाट्यम' निकला। भारतम, तीन अक्षरों, 'भ' 'र', 'त' से मिलकर बना है, जो 'भाव,' 'राग', और 'ताल' का सूचक है।

भरत नाट्यम देवदासी प्रथा से जुड़ा है। देवदासियों से इसके संबंधों की निकटता के चलते भारतम् नृत्य को दासी अट्टम कहा जाता था, जो मंदिरों में किया जाता था बाद में यह शाही दरबारों और विवाह जैसे सामाजिक महत्व के अवसरों पर भी किया जाने लगा, और इससे दो अतिरिक्त प्रकार की दासियां बनीं, राजदासियां और अलंकारदासियां। भरतनाट्यम की तकनीक की उत्पत्ति और विकास में सदियां लग गईं। इसका श्रेय तंजौर के चार प्रसिद्ध भाइयों को जाता है- चिन्नइयाह, पुन्नइयाह, वाडिवेलु और शिवनंद, जो नृत्य संगीत के महान आचार्य हुए।

भारतम् नृत्य करने को 'चिन्न-मेलम' भी कहा जाता था-जिसका शाब्दिक अर्थ है छोटा आयोजन, सादिर नाच अथवा कचेरी अथवा साधारण सादिर। भरत नाट्यम जिसने पूर्व की कला की संक्षायों को प्रतिस्थापित कर दिया, नृत्य के एक ऐसे विशेष माध्यम को सूचित करता है जो देवदासियों द्वारा नियमित रूप से किया जाता था। एक विस्तृत अर्थ में भरतनाट्यम में नृत्य के दो अन्य रूप भी सम्मिलित हैं, भागवत मेला मटका, और कुंखंजी, चूंकि देवदासियों की प्रथा विधान द्वारा समाप्त कर दी गई है, भरत नाट्यम नृत्य एक कला के रूप में किया जाता है, न कि एक धार्मिक अनुष्ठान के रूप में।

सार रूप में, भरतनाट्यम एक समर्पणात्मक नृत्य है। भरतनाट्यम नृत्य एकल ही होना चाहिए, किंतु कभी कभी दो नर्तक एक साथ नृत्य करते हैं। कार्यक्रम अलारिप्पु से आरंभ होता है, जो आह्वान का नृत्य है। यह एक नृत्य की रचना

है। फिर आता है जाति स्वरम्, जो तालगत थापों और संगीतमय स्वरचिन्हों का समानांतर और समक्रमित प्रारूपों को प्रसतुत करता है। अगला है शब्दम्, जिसके साथ नृत्य या अभिव्यक्तिकारी कृति से परिचय कराया जाता है। फिर आता है वरम् अथवा स्वजाति। रचना, एक देवता देवी, नायक अथवा राजा के गुणगान स्वरूप एक गान होती है, और जब यह होता है तो गान के शब्दों पर अभिनय होता है, जो नयनाभिराम गतिविधियों (संचालनों) और नृत्य और संगीत के छंदों के साथ इसके एकत्व समेत कार्यक्रम में तत्काल एक जीवन्तता प्रदान कर देता है। इसके बाद, कार्य की गति तत्काल उठ जाती है और पद्मों, जवालियें, कीर्तन में और ऐसी कृतियों की श्रंखला एक ऐसे शांत तरीके से और धीरे-धीरे की जाती है कि आंखों और मस्तिष्क दोनों के ही लिए शांति दायक होता है। फिर आता है तिलाना, जो कि नृत्य का अंतिम भाग है।

नृत्य के इस रूप की मुख्य मुद्रा में, शरीर का ऊपरी भाग सीधा, पैर आधे नीचे की ओर मुड़े हुए और घुटने फैले हुए, और चरण ऐसे स्थित होते हैं जैसे आधा खुला पंखा। व्यवहारिकतः शरीर के प्रत्येक भाग का एक भिन्न संचालन होता है।

यह नृत्य एकल किया जाना चाहिए, किंतु आजकर समूह में कार्य करना बराबर से महत्वपूर्ण है। उपयोग किए जाने वाले गीत तमिल, तेलगू, संस्कृत और कुछ सीमा तक कन्नड़ काव्य साहित्य से रचित होता है। संगतकारी संगीत शुद्ध कर्नाटक शैली में होता है।

आज भारतनाट्यम नृत्य की एक शैली नहीं बल्कि नृत्य की एक तकनीक-एक प्रणाली, है जिससे मोहिनी अट्टम और कुचिपुड़ी के अन्य शास्त्रीय नृत्य रूप निकले हैं।

छाऊ

छाऊ नृत्य सराइकेला (बिहार), मयूरभंज (उड़ीसा) और पुरुलिया (पश्चिम बंगाल) में किया जाता है। सराइकेला और मयूरभंज छाऊ का एक ही मूल है, यद्यपि दोनों नृत्यों में भेद का महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि पहले वाले छाऊ में सभी नृत्य मुखौटों के साथ किए जाते हैं। नृत्य के सभी तीन छाऊ रूप पारंपरिक रूप से पुरुषों द्वारा ही किए जाते हैं। छाऊ नृत्य अप्रैल के मध्य चैत्रपर्व के दौरान किए जाते हैं।

सरइकेला छाऊ सर्वप्रसिद्ध है। चैत्रपर्व में काली के कुछ रूपों की पूजा और गुणगान भी सम्मिलित है, किन्तु यह मुख्यतः और आवश्यक रूप से अर्धनारीश्वर को समर्पित है, जो शिव और शक्ति का एक सम्मिलित रूप हैं। पांच दिनों का यह उत्सव महिलाओं द्वारा खरहई नदी के जल से भरे मटकों को महल के निकट एक पवित्र स्थान पर ले जाने से आरंभ होता है। इसमें वे ऐसे उन्माद में नृत्य करती है कि पागलपन की स्थिति में पहुंच जाती हैं। पवित्र जल से भरा मटका शिव मंदिर में लिंग के निकट रखा जाता है, जबकि जर्जरा, अथवा सजी हुई पताका रघुनाथ के मंदिर में ले जाई जाती है, जिन देवता की आराधना शासक परिवार करता है। सभी अनुष्ठान १३ चयनित भक्तों द्वारा किए जाते हैं जो स्थानीय सामाजिक संरचना में विभिन्न जातियों से आते हैं और जिन्हें यह करने का वंशागत अधिकार होता हैं।

इन सबके अतिरिक्त चैत्र पर्व में छाऊ नृत्य होता है जो पर्व की प्रथम चार रातों में किया जाता है। छाऊ नृत्य मात्र मनोरंजन के लिए किया जाता है और इसका कोई धार्मिक महत्व नहीं होता।

छाऊ नृत्य की तकनीक स्वयं में व्यायाम की 'परिखंड' प्रणाली के कुछ आधारभूत कदम और चाल सम्मिलित करता है, ('परि' का अर्थ है ढाल और 'खंड' का अर्थ है तलवार), जो सेरेइकेल्ला के सिपाहियों अथवा योद्धाओं के प्रशिक्षण का एक महत्वपूर्ण अंग होता है। नर्तक, नृत्य के समय ढाल और तलवार लिए रहते हैं। सहभागी धोती पहनते हैं और शरीर का ऊपरी भाग नग्न रहता है।

छाऊ नृत्य, छाऊ इसलिए कहलाता है क्योंकि छाऊ, अथवा मुखैटा, इस कला का एक आवश्यक लक्षण है। 'छाऊ', शब्द संस्कृत के 'छाया' शब्द छौनी अथवा छावनी से उपजा है क्योंकि वहीं 'परिखंड' सिपाही अधिकांशतः रहते थे। इसकसे सहयोगी संगीत वाद्य यंत्र हैं, नागड़ा, ढोल और शहनाइ। छाऊ नृत्य के विषय धार्मिक. कथाओं, दैनिक जीवन, प्रकृति के पहलुओं से लिए जाते हैं, और कभी कभी नृत्य किसी मनोदशा अथवा स्थिति का सीधा चित्रण होता है।

मयूरभंज का छाऊ नृत्य शिव के एक आयाम भैरव की शान में किया जाता है। सेरेइकेल्ल के सैनिकों के दिखावटी युद्ध परिखंड के समान ही, मयूरभंज

में 'रूक मार नाच' होता है। यह मूलतः पैकों, अथवा उन पुरुषों द्वारा किया जाता था जो ढाल और तलवार से युद्ध के लिए प्रशिक्षित होते थे। मयूरभंज में छाऊ नृत्य करने का मुख्य अवसर चैत्र-पर्व होता है।

उनकी नृत्यकला में, मयूरभंज के छाऊ नृत्य, विकास और आलोचना के एक नियत प्रारूप का अनुसरण करते हैं। पहले 'रंगबाजा' होता है, एक संगीतमय प्रदर्शन जो आगामी नृत्य के लिए एक उचित सुरुचिपूर्ण मनोदशा उत्पन्न करता है। अगला है 'चालि', अथवा नर्तकों का प्रवेश। यह 'नाच' की ओर अग्रसर करता है जो अनवरत और सर्वाधिक प्रभावी ढंग से विषय को खोलकर गति बनाता है। और फिर चरमोत्कर्ष की स्थिति 'नटकी' द्वारा बनाई जाती है, एक शैली में निहित ओज और स्फूर्ति का उभारते है। विषय धर्मग्रंथों और प्रकृति से लिए जाते हैं। मयूरभंज छाऊ में संगीत चार प्रकार के तालवाद्य यंत्रों को सम्मिलित करता है; ढमसा, ढोल, चड़चढ़ी और टिक्रा। शहनाई के जैसी 'माहुरी' राग प्रदान करती है।

अधिकांश पात्र ऐसे प्रकार की वेशभूषा धारण करते हैं जो सामान्यतः उनके जीवन से अन्य खुले भागों पर अधिकांशतः एक लेप की परत लगाई जाती है, जो प्रायः सुप्रकट होती है।

तीसरे प्रकार का छाऊ, पुरुलिया, नृत्य का एक अत्यधिक तेजस्वी माध्यम होता है। छाऊ, अप्रैल के मध्य के आरंभ में, बोआई के मौसम से तुरंत पहले किया जाता है। यह मौसम सूर्य-देव की आराधना से संबद्ध है, जिनकी पहचान अस्पष्ट रूप से शिव कसे साथ की जाती है। पुरुलिया छाऊ के विषय सिर्फ धार्मिक घटनाओं और उपकथाओं को ही प्रस्तुत करते हैं। यह इसलिए क्योंकि पुरुलिया में नृत्य मुख्यतः एक धार्मिक अनुष्ठान के रूप में किया जाता है, और द्वितीयक रूप से प्रदर्शन के लिए।

पुरुलिया छाऊ का मात्र एक संदेश होता हैः अच्छाई की बुराई पर विजय। यह संदेश, परस्पर युद्ध कर रहे दो विरोधी ताकतों के माध्यम से दिया जाता है, जैसे रावण के विरुद्ध राम, शिवि राजा के विरुद्ध इंद्र, दुर्योधन के विरुद्ध अभिमन्यु, इत्यादि।

नृत्य निर्भीक और सुव्यक्त होता है। प्रस्तुतीकरण सीधा-सपाट और साहित्यिक संरचना बलशाली और पुरुषोचित होती है। प्रत्येक प्रस्तुति में वातावरण

रहस्य और तनाव से भरपूर होता है जिसमें नर्तकों और दर्शकों के लिए विश्राम का शांति का कोई क्षण नहीं होता। तकनीक में शैलीकरण, यद्यपि बंधी हुई होती है, किन्तु मुहावरों के उपयोग में अधिक विविधता नहीं होती। एक ही तरह के कुछ कदम, गतिविधियां, संचालन और दुर्बल सम्याचार दिखता है, चाहे कोई भी पात्र उन्हें कर रहा हो।

सभी नर्तक मुखौटे पहनते हैं। यह कागज की लुग्दी से बने हुए और नीले, हरे, पीले और गुलाबी रंग से रंगे होते हैं। वेषभूषा गहरे रंग की और भारी अलंकरण युक्त होती है। अधिकांशतः पुरुष चांदी के तारों से कढ़े, हरे रंग के मखमली जैकेट और 'एप्रेन' जैसे पट्टे, और धारीदार गहरे रंग की पतलूने पहनते हैं।

पुरुलिया छाऊ का प्रस्तुतीकरण पूरी रात चलता है। प्रदर्शन में पहला कार्य गणपति की आराधना में होता है। तालवाद्य यंत्र तो उपयोग होते हैं, इस प्रकार हैं: ढमसे, ढोलक, और शहनाई।

छाऊ नृत्य की सभी तीन परंपराएं एक तात्विक भाव लिए रहती हैं। भारत के किसी अन्य शास्त्रीय नृत्य में ऐसी धमकदार ताल नहीं होती। सेरेइकेल्ला में छाऊ के अग्रणी प्रतिपादक मयूरभंज के शाही परिवार, छोटे वर्ग, निम्नवर्ग, पुरुलिया के किसान, जैसे लोग रहे है। यद्यपि गत कुछ वर्षों में महिलाएं भी सेरेइकेल्ला और मयूरभंज के रूपान्तरों में आने लग गई हैं, अधिकांशतः व्यवसाइक उपलब्धि के रूप में, अपनी प्रकृति के कारण, छाऊ स्पष्टतः एक पुरुष बाहुल्य कला है।

मोहिनीअट्टम

केरल की कला का यह रूप सर्वाधिक नयाभिराम नृत्यों में से एक है, और भरतनाट्यम और ओडिसी जैसे देवदासी नृत्य परंपरा से उपजा है। 'मोहिनी' शब्द का अर्थ है सुकुमारी जो दर्शकों को मोहित करती है, और अट्टम का अर्थ है नृत्य। यह विश्वास है कि भगवान विष्णु ने, समुद्रमंथन और भस्मासुर के वध के संबंध में लोगों को मोहित करने के लिए 'मोहिनी' का रूप धारण किया था। इस प्रकार यह विचार है कि, वैष्याव भक्तों ने नृत्य के इस रूप का नाम मोहिनीअट्टम रखा।

साहित्य में मोहिनी अट्टम का पहला संदर्भ 1709 ईस्वी में एम०एन० नम्बूदरी द्वारा रचित 'व्याणत्ररमाला' में पाया जाता है। उन्नीसवी शताब्दी में ही केरल के राजा महाराज स्वाति थिरुपल ने मोहिनीअट्टम को प्रोत्साहित कर संरक्षण प्रदान किया और इस प्रकार कला के इस रूप को स्थायित्व दिया। वे एक सच्चे 'रसिक' थे जिन्हें संगीत और नृत्य की समझ थी वे एक विद्वान, एक कवि और एक महान संगीतज्ञ थे। मोहिनीअट्ट्म की कला का एक भिन्नाकारी और आकर्षक रूप देने के लिए उन्होंने 'वर्णम' और 'पदमों' नामक कई संगीत रचनाएं की और कला के इस रूप के संगीत को शीतकाव्य रूप से समृद्ध और आकर्षक बनाया। निःसंदेहतः, महाराज स्वाति थिरुणल को मोहिनी अट्टम शैली का पथप्रदर्शक कहा जा सकता है।

मोहिनी अट्टम आवश्यक रूप से एकल नृत्य का रूप है। मोहिनी अट्टम की तकनीक 'लस्य' और 'श्रंगार' स्वरांकित करती है, अथवा रोमांस प्रमुख रस है।

रस का अर्थ है प्रबल भाव। तकनीकी प्रारूप के मामले में मोहिनी अट्टम और भरतनाट्यम एक जैसे हैं। आधारभूत रंगपटल 'कलकेटटु' से आरंभ होता है- जिसका अर्थ है शैलीकृत लय। इसके बाद 'जातिस्वरम्' जो एक शुद्ध नृत्य अनुक्रम होते हैं। इसके बाद एक और शुद्ध भावात्मक तालगत रचना प्रस्तुत होती है। हाथों की भाव भंगिमाएं एक संचार माध्यम के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाती है। केरल में ताल की प्रणाली अनोखी होती है।

मोहिनीअट्टम में उपयोग किया जाने वाला मुख्य तालवाद्य यंत्र होता है 'एड्डक'। मोहिनी अट्टम की पारंपरिक वेशभूषा है सफेद और साथ सुनहरे रंग के वस्त्र और आभूषण। नर्तकी सामान्यतः ऐसे स्वर्णाभूषण धारण है जो शुद्धता, सत्य और अमरत्व का सूचक हो-यह सभी दैवीय सुंकुमारी के नृत्य के कुछ लक्षण होते है। वेषभूषा में सुनहरे या लाल किनारीदार सफेद साड़ी। नर्तकी सिर के बालों का एक अनोखा जूड़ा बनाती है, और उसके सिर के बांई ओर सफेद फूलों से सज्जा की जाती है।

मोहिनीअट्टम की भिन्नताकारी शैली है पैरों के भारी थाप और तालगत तनाव की पूर्ण अनुपस्थिति। गति संचालन आकस्मिक नहीं, बल्कि ओजस्वी, आसान और प्राकृतिक होता है, किन्तु शरीर की अर्द्धाकार रेखा कभी नहीं तोड़ी जाती। इसलिए नृत्य के ऐतिहासिक भारतीय ग्रंथ, नाट्य शास्त्र में, मोहिनी अट्टम, 'कैसिकी' प्रकार से मिलता जुलता है। इसलिए श्रंगार-रस को दर्शाने के लिए शैली सर्वाधिक उपयुक्त बन जाती है।

□□□

अध्याय-5

भारतीय लोक एवं आदिवासी नृत्य
(Indian Folk & Tribal Dances)

भारत के लोक एवं आदिवासी नृत्य, संगीत, धार्मिक अनुष्ठान और उत्सव का एक अनोखा सम्मिश्रण होते हैं। वे गीतों द्वारा निर्देशित लोगों की तात्कालिक अभिव्यक्तियां होती हैं, जो प्रकृति का गुणगान करते हैं, पारंपरिक व्यवसाय को अभिव्यक्त करते हैं और स्थानीय देवी/देवताओं की भक्ति में किए जाते हैं। ऋतुगत और धार्मिक, उनमें ग्राम्य व्यवहार के जीवन्त गुण होते हैं।

ये नृत्य, वास्तविक अभिनय प्रदर्शन और गीतों के माध्यम से सदियों से होकर हम तक पहुँचे और गाँवों और उनकी संस्कृति में उनके समाजशास्त्रीय प्रभाव के कारण अपने स्थापित रूप में आज भी जीवित हैं।

जातिगत विविधता ने भारत में अनन्य प्रकार के लोक एवं आदिवासी नृत्य उत्पन्न किए, किंतु इसके बावजूद इन सभी में मनोदशा का एक परिवेश होता है जो भूमि की भौगोलिक भिन्नता को आगे बढ़ाते और उनके मध्य दूरियों को भरते हैं। बिना किसी अपवाद के प्रत्येक प्रदर्शन प्रकृति से प्रेरित होता है और उद्देश्य में एकीकृत होता है- मृत्यु और महामारी से छुटकारा पाना, प्रचुर फसल के लिए आराधना, अथवा भरपूर फसल के लिए आभार प्रकट करना।

अतः शास्त्रीय नृत्य और लोक नृत्य आधारभूत रूप से भिन्न होते हैं, यद्यपि वे शताब्दियों से सहअस्तित्व में रहे है। एक ने दूसरे को अलग करने का संकल्प कभी नहीं किया; प्रत्येक का उस समाज में अपना एक कार्य होता है जिसमें वह रोपित हुआ तथा फला फूला।

आदिवासी और लोक नृत्य सदैव तीज त्योहारों, सामाजिक सम्मेलनों और जीवन संगी की खोज से संबद्ध होते हैं। जैसे-जैसे ग्राम्य वासभूमि के परिदृश्य में नृत्य आरंभ होता है, वैसे-वैसे खेतों में फसलों की हलकी सरसराहट सुनाई देती है।

इन नृत्यों के साथ गाए जाने वाले गीत ग्रामीण बोली में गाए जाते हैं, जो देहाती कल्पना, कलकल करती नदियों, भीषण वेगप्रवाही बरसात अथवा खेतों की हरियाली के प्रतिबिम्बन से परिपूर्ण होते हैं। कभी-कभी कोमल प्रेम गीत गाए जाते हैं जो कभी लिखे नहीं जाते किंतु प्रणययाचना की क्रिया में निरंतर रचित किए जाते हैं, और कभी कभी इनमें सिर्फ़ भाटों और चारणों के गान और तालगत ध्वनियां ही होती हैं।

यह ग्रामीण नृत्य स्थानीय रूप से निर्मित वाद्‌ययंत्रों पर बजाए गए संगीत पर किया जाता है। बांसुरिया, घड़ियाल, नगाड़े, तारों के वाद्‌ययंत्र, मंजीरे और तुरही/भोंपू, धरती माता और हरी-भरी सुंदरता का गुणगान करते हैं। संगीत, युवा पुरुष व महिलाओं को गाने और नाचने के लिए प्रेरित करता है, उनके संचालन से रंगों की छटा बिखरती है, बैंगनी, नीले, सिंदूरी वस्त्र ढोल की थाप पर लहराते हैं। महिलाएं फूलों और चमचमाते आभूषणों से लदी होती है, रोशनी में उनके लहंगे, चोली और अन्य वस्त्र झिलमिलाते हैं।

पुरुष महिलाओं के साथ ही जोर-शोर से उत्सव का आनंद उठाते हैं। नृ.य बड़ा जीवन्त और रंगीन हो उठता है और थोड़ा ऊधमी भी। गांवों में उत्सव का उत्साह व्याप्त हो जाता है।

स्वाधीनता के आंदोलन के समय, राष्ट्रीय जागृति के एक प्रयास के रूप में, लोक नृत्य पूरे उमंग और संरक्षण के साथ प्रेरित किया जाता था। इसके बाद, प्रत्येक वर्ष, नई दिल्ली में गणतंत्र दिवस की परेड में इसे प्रस्तुत किया जाता है जहां इसे राष्ट्रीय अभिनंदन प्राप्त हुआ।

किंतु आज, ग्रामीण भारत परिवर्तन की दशा में है। संचार में निरंतर आंदोलन और तकनीक के अत्याधिक प्रभाव ने कई प्रकार के दबाव उत्पन्न कर दिए। यह अवश्यंभावी दिखता है कि सिनेमा और टेलिविजन के प्रबल प्रभाव के

समक्ष यह पारंपरिक नृत्य घुटने टेक देंगे। आशा की जा सकती है कि लोक संचार के माध्यम इन लोक नृत्यों की उपेक्षा नहीं करेंगे, बल्कि उन्हें संरक्षण प्रदान करेंगे, और यह भी कि शीघ्र ही पारंपरिक कला रूपों पर आधारित एक नई और अनोखी अभिव्यक्ति विकसित होगी।

लोक और शास्त्रीय नृत्य में अंतर-

नवरस के आधार पर मूलतः दो प्रकार के भारतीय नृत्य उभरते हैं - भारतीय शास्त्रीय नृत्य और भारतीय लोक नृत्य। नवरस, अथवा नौ मनोदशाएं निम्नलिखित हैं :

(1) रौद्र रस - क्रोध

(2) श्रृंगार रस - प्रेम, काम

(3) वीर रस - बहादुरी, वीरता

(4) हास्य रस - परिहास, विनोद

(5) भय रस - डर

(6) क्रूर रस - निर्दयता, निष्ठुरता

(7) अद्‌भुत रस - आश्चर्य, अचंभा

8) वीभत्स रस - डरावना, भयंकर

(9) भक्ति रस - प्रार्थना, शान्ति।

भारतीय शास्त्रीय रूप के नृत्य अधिक जटिल होते हैं और मूलतः मंदिरों से निकले हैं जबकि भारतीय लोक नृत्य, विवाह, कृषि उपज, इत्यादि से संबंधित विभिन्न अवसरों के लिए प्रसन्नता की एक अभिव्यक्ति के रूप में सदियों से होकर विकसित हुए हैं।

लोक नृत्य सामान्यतः सामूहिक नृत्य होते हैं जबकि शास्त्रीय नृत्य मुख्यतः एकल होते हैं।

लोक नृत्यों में उपयोग होने वाली भाषा, क्षेत्र के लोगों की बोली होती है, जबकि शास्त्रीय नृत्य में उपयोग होने वाली भाषा परिष्कृत, विकसित और साहित्यिक होती है।

शास्त्रीय नृत्यों में नर्तक भारी आभूषणों समेत विस्तृत रूप से वेशभूषा में सजे होते है। जबकि लोक नृत्यों में साधारण और रंगबिरंगी, रोजमर्रा की वेशभूषा उपयोग की जाती है।

शास्त्रीय नृत्य के लिए परिष्कृत, विस्तृत और कृत्रिम रंगमंचीय वातावरण उपस्थित होता है जब कि लोक नृत्य प्राकृतिक और मौलिक परिवेश में ही होते हैं।

शास्त्रीय नृत्य के विषय सामान्यतः धार्मिक कथाएं होते हैं, जबकि लोक नृत्य के विषय प्रकृति, कृषि गतिविधियों और दैनिक आनंद और दुखों के आस-पास ही घूमते हैं।

एक ही अवसर के लिए विभिन्न राज्यों और संस्कृतियों में विभिन्न लोक नृत्य होते है। किंतु शास्त्रीय नृत्य के रूप संपूर्ण देश में एक ही रहते हैं।

भारत के प्रत्येक क्षेत्र में कई जातीय-भाषाई समूह हैं। जिनके नृत्यों के अपने संग्रह होते हैं। इस प्रकार भारत में सहस्त्रों लोक और आदिवासी नृत्य है। भारत के महत्वपूर्ण लोक एवं आदिवासी नृत्य इस प्रकार हैं।

भारत के प्रसिद्ध लोक नृत्य

पूर्वी और उत्तर-पूर्वी भारत :-

(1) बिहार एवं झारखण्ड:-

(i) **जटा-जटिन :** यह वर्षा ऋतु की चांदनी रातों में बिहार में मैथिली महिलाओं द्वारा किया जाता है, जो जटा और जटिन का प्रेम प्रसंग है।

(ii) **करमा :** यह बिहार के लड़के लड़कियों द्वारा किया जाता है जो नृत्य के समय पीठ पर लाठी लिए रहते हैं। यह सामान्यतः वर्षा ऋतु में किया जाता है।

(iii) **सरबल :** यह ओरावों का ग्रीष्म ऋतु का नृत्य है और कमोवेश एक युद्ध-संबंधी नृत्य है।

(iv) **फाग या फागुन** : यह बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश का प्रसिद्ध फसल संबंधी नृत्य है।

(v) चैत : यह पटना और शाहाबाद का प्रसिद्ध फसल संबंधी नृत्य है।

(vi) पूर्बी : एक राग, जिसका मूल सारन जिले में है, पति से विद्रोह को सहती पत्नी द्वारा गाया जाता है।

बिहार के अन्य प्रसिद्ध नृत्य :-

बिहार तथा झारखण्ड के प्रत्येक ग्रामीण समुदाय के धार्मिक और सामाजिक दोनों ही अवसरों पर विशेष नृत्य होते हैं। यह नाम उनके वस्तुविषय की ओर इंगित करते हैं। यह इस प्रकार है : रामलीला नाच, कीर्तन नाच, कुंजवासी नाच, भगत नाच, विद्यापति नाच, पूजा और आरती नाच, समा चकवा, झिझिया, चमारा कमला, दंफ बसुली नाच और महाराई नृत्य।

(2) पश्चिम बंगाल :-

झूमर : झूमर एक ऐसी रचना है जो चैत्र में गाई और नाची जाती है। झूमर, अवसर विशेष के आधार पर मात्र पुरुषों अथवा मात्र महिलाओं अथवा दोनों द्वारा गाई या नाची जाती है। चै़त्र का झूमर विशेषतः एक पुरुषों का नृत्य है जिसके साथ ढोल (मडाल) और मंजीरे बजते हैं। धान रोपते समय मात्र महिलाएं ही झूमर गाती और नाचती हैं। तब यह अषाढ़ी झूमर कहलाता है।

गजान : इसे गेरुआ चोला पहने और हाथों में धानुचि (सुगंधित हवन पात्र) लिए हुए पुरुषों द्वारा किया जाता है। यह सिर्फ पुरुषों द्वारा किया जाता है; सजे-धजे ढोल और पीतल की तुरही (कंशी) संगीत प्रदान करते हैं।

बाउल और कीर्तन : बाउल और कीर्तन, वैष्णव संप्रदाय की देन है, जबकि संगीत के दृष्टिकोण से यह रूप समृद्ध और विविध है। इन रूपों का संचालन वस्तुविषय कुछ कम तथापि रुचिपूर्ण है।

इनकी विशेषता है एक विशेष वाद्य यंत्र का उपयोग जिसे इकतारा कहा जाता है, नृत्य संचालन, अधिकांशतः छोटे अनुक्रमों तक ही सीमित होते हैं जो गायन को अलंकृत करते हैं। पैरों का कार्य आरंभिक होता है, किन्तु कमर मटकाना एक कठिन परन्तु विशिष्ट कार्य होता है।

जात्रा : यह पूर्णतः भिन्न श्रेणी का बंगाल का पारंपरिक रंगमंचीय रूप है। जात्रा, एक व्यक्ति के प्रबंधन के अंतर्गत यात्रा करती एक मंडली द्वारा किया जाता है, जिसे अधिकारी कहते हैं। मूलतः जात्रा का विषय राधा-कृष्ण थे, किंतु आज जात्रा ग्रामीण और शहरी केन्द्रों के लेखकों और नाटककारों द्वारा लिखी जाती है। इसका प्रारूप अन्य लोक मंचों के रूपों के ढांचों से मिलता जुलता है, जैसे उत्तर प्रदेश की नौटंकी अथवा गुजरात और महाराष्ट्र का तमाशा एवं भवाई।

(3) उड़ीसा :-

(i) **जादुर :** यह उड़ीसा के बूमियाओं का एक लोक नृत्य है। जादुर, कबीले के देवता बर्न बोंगा के आह्वाहन के लिए किया जाता है। यह नृत्य बिहार की ओरॉंव जनजाति द्वारा भी किया जाता है।

(ii) **माया शवरी :** यह एक ऐसा लोक नृत्य है जिसमें महानतम् देवी देवताओं को साधारण मानव मात्र माना जाता है।

(iii) **रूक मार नाच :** यह एक आकर्षक नृत्य है, जिसका अर्थ है "बचाओ और आक्रमण करो"। यह एक उच्चतः शैलीकृत छद्म लड़ाई का रूप है। यह आमतौर पर उड़ीसा के मयूरभंज जिले में किया जाता है और इस क्षेत्र के विकसित छाऊ नृत्य का आरंभिक रूप माना जाता है।

4. असम :-

(i) **केलि गोपाल :** यह कृष्ण के जीवन की उप कथाएं चित्रित करता है।

(ii) **खंबा लिम :** आसाम में रहने वाली जेमी जनजाति गीतों, तुरही और ढोलों की लय-ताल पर यह नृत्य करती है। जब बुआई का मौसम आरंभ होता है तो वे अच्छी फसल की आशा में नृत्य करते हैं। पुरुष एक पंक्ति में और महिलाएं दूसरी पंक्ति में खड़े होकर, आसान से कदमों के साथ आगे-पीछे, इधर-उधर और गोल-गोल संचालन कर नृत्य करते हैं। फिर दोनों पंक्तियां एक दूसरे का स्थान ले लेती हैं, पुरुष महिलाओं के स्थान पर और महिलाएं पुरुषों के स्थान पर चली जाती हैं।

(iii) **नट-पाटा :** यह नृत्य रूप, जिसे दोनों हाथों में एक-एक तलवार पकड़ कर किया जाता है, भगवान शिव के आह्वाहन हेतु किया जाता है जो युद्ध के समय अपने भक्तों को विजय दिलाते हैं।

(iv) **नरौइरा लिम :** यह लोक नृत्य 'मुर्गे की लड़ाई के नृत्य' के रूप में भी जाना जाता है। यह लड़कों और लड़कियों के समूहों द्वारा किया जाता है जो एक दूसरे के आमने-सामने खड़े होते हैं और एक छद्म लड़ाई लड़ते हैं।

(V) **कबुई नागा कृषि नृत्य :** ताकतवर और कठोर, नागर लोग घने जंगलों से ढकी आसाम की बीहड़ पहाड़ियों पर रहते है। लोगों के जीवन-यापन का मुख्य साधन कृषि है और बुआई/कटाई का समय आशा और आनंद का एक अवसर होता है।

नृत्य और गायन के साथ ये लोग ऋतु का स्वागत करते हैं और वातावरण में आशा और आनंद व्याप्त होता है। महिलाएं रंगबिरंगे वस्त्र और मनकों से बने आभूषणों से सिरों की सज्जा कर, समूहों में नृत्य करती हैं, कदम आगे-पीछे लाकर, हाथ उठाकर और सिरों को झटका देकर। आगे-पीछे छोटी-छोटी छलांगें लगाकर वे गीतों, तुरही की धुन और ढोलों की थाप पर नृत्य करते हैं। पुरुष और महिलाएं दोनों ही नृत्य यह करते हैं।

(5) मणिपुर :

(i) **बसंत रास :** यह मणिपुरी लोक नृत्य (एक प्रकार की रासलीला) मार्च-अप्रैल में पूर्णिमा की रात को किया जाता है। यह राधा और कृष्ण के मध्य उपजे एक भ्रम की कथा का चित्रण है, किन्तु कृष्ण द्वारा काफी मान-मनौवल के बाद इसका एक सुखद अंत होता है।

(ii) **महारास :** एक प्रकार की रासलीला जिसे दिसंबर माह की पूर्णमासी की रात में किया जाता है। यह राधा और कृष्ण के विद्रोह को दर्शाता है। अंततः कृष्ण राधा के पास लौट आते हैं।

(iii) **नाथ रास :** एक प्रकार की रासलीला जिसमें आठ गोपियां कृष्ण के साथ नृत्य करती हैं।

(iv) **रामलीला :** एक मणिपुरी लोक नृत्य जिसे महाराज जय सिंह ने संभवतः 1700 ई० में परिकल्पित किया था।

(v) **थंबा चोंघी :** यह होली के उत्सव पर किया जाने वाला सामाजिक नृत्य है।

(vi) **खंबी थोबी :** इस लोक नृत्य का विषय राधा और कृष्ण की प्रेम कथा है।

(vii) **पंग चोलोम :** यह ढोलों के साथ किया जाने वाला लोक नृत्य है।

पश्चिमी भारत –

(1) गुजरात :

(i) **भील नृत्य :** भील, गुजरात की सीमाक्षेत्र में भारी संख्या में बसी एक महत्वपूर्ण आदिवासी जनजाति है, जिनकी राजस्थान के भीलों से बड़ी समानता है। भील नृत्य के महत्वपूर्ण रूपों में, युद्ध नृत्य और शिकारी नृत्य न्यनाधिक रूप से अनुष्ठान की तरह किये जाते हैं। होली नृत्य में, पुरुष और महिलाएं नृत्य की प्रफुल्लताकारी रंगरेलियों

में मस्त हो जाते हैं। युद्ध नृत्य में तीर और कमान, तलवार और भाले प्रदर्शित किए जाते हैं, और ढोल और बासुंरी के सुर-ताल पर नर्तक तीव्र और प्रचण्ड नृत्य में लीन हो जाते हैं।

(ii) डांडा रासक : इसे दाँडिया रास के नाम से जाना जाता है और यह स्वयं में बहुत आसान होता है। यह सामान्यतः युवाओं के एक समूह द्वारा किया जाता है जो नपे तुले कदमों से एक गोले में घूमते हैं, और समय समय पर 'दंडियाँ' जिन्हें दाँडिया कहते हैं, बजाते हैं जो वे हाथ में पकड़े रहते हैं और साथ ही ढोल, मंजीरे, बांसुरी या शहनाई की लय ताल पर गाते भी हैं।

(iii) **डाँगी नृत्य** : डांगियों का सबसे अग्रणी क्षेत्र, दक्षिणी गुजरात का एक जिला महाराष्ट्र की सीमाओं को छूता है और मध्य भारत के लोक नृत्यों के जनजातीय रूपों के कई प्रभावों को स्वयं में समाहित करता है। डांगी नृत्य न्यूनाधिक रूप से बिहार के ओराँव जनजातीय नृत्यों के बहुत कुछ सदृश है। इसमें कई संचालन ऐसे हैं जो जादुर नृत्य के जैसे भी हैं। वन संसाधन और लोक नृत्य दोनों ही में समृद्ध गुजरात का यह क्षेत्र, गुजरात की लोक संस्कृति के विकास से सहयोग के लिए अपना श्रेय पा रहा है।

(iv) **गरबा नृत्य** : जैसे कृष्ण ने नृत्य के रस को प्रसिद्धि प्रदान की, इसी प्रकार कृष्ण की पौत्र-वधू, अनिरुद्ध की पत्नी और शोनितपुर के राजा वाणासुर की पुत्री ऊषा को 'लस्य नृत्य' के रूप को प्रसिद्ध बनाने का श्रेय जाता है, जो गरबा नृत्य के नाम से जाना गया।

यह नृत्य शैली एक गोलाकार नृत्य रूप है जिसे ग्रामीण और शहरी महिलाओं दोनों ही करती हैं। यह नृत्य विशेषतः नवरात्रि, शरद

पूर्णिमा, वसंत पंचमी, होली और अन्य त्योहारों के अवसरों पर किया जाता है। 'गरबा' शब्द 'गर्भ दीप' से निकला है, जिसका अर्थ है मिट्टी के बर्तन के अंदर स्थित एक दीपक। मिट्टी के बर्तन के अंदर यह दीपक गर्भमय जीवन का द्योतक है। महिलाएं इसे सिर पर रख कर गोलाकार घूमती हैं और जगत-जननी देवी माता के गुण गान करती है।

(v) **घेर और घेरिया रास :** यह रास नृत्य का एक परिवर्तित रूप है जो राजस्थान और मालवा के कुछ क्षेत्रों में अधिक प्रसिद्ध है। वहां यह मिनासों का मनचाहा नृत्य है जो मीलों के सदृश्य होते हैं।

दक्षिण गुजरात में घेरिया रास एक ऐसा नृत्य हैं जिसमें सूरत जिले के खेतिहर मजदूर एक हाथ में दाँडिया और दूसरे में मोरपंख पकड़ते हैं और उसी से वे विभिन्न संचालन करते हैं। वे गाते हुए एक मंदिर में जाते हैं और इस गायन में उनके मुखिया को कवियो कहते है। यह नृत्य एक पुरुष नृत्य होता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति एक बहुत रंगबिरंगी वेषभूषा और साधारण आभूषण धारण करता है।

(vi) **गोल्फ गुंथन :** यह दाँडिया रास का एक रूप तथा गुजरात का एक प्रसिद्ध नृत्य है जिसमें गोल्फ गुंथन, अर्थात एक रस्सी गूंथने की प्रक्रिया नृत्य के साथ-साथ चलती है। गोल्फ गुंथन, जो गुजरात में अथंग नृत्य के नाम से प्रसिद्ध है, दाँडिया रास का एक बहुत जटिल और मनोरंजनकारी परिवर्तित रूप है। इस नृत्य में, प्रत्येक नर्तक एक दाँडी एक हाथ में और एक रंगीन धागा दूसरे हाथ में लिए रहता है, जो एक ऊँची खूंटी से जुड़ा होता है।

(vii) **हालि नृत्य :** सूरत जिले में, डुबला नामक एक समुदाय के हल्ली लोग रहते हैं, जो 'भील' नामक एक प्राचीन समुदाय का एक संप्रदाय है। नृत्य के अवसरों के लिए उनके उत्सव हैं होली, दीवाली और विवाह। साथ में एक तुरी और एक थाली बजाई जाती है। नृत्य के

कदम प्रत्येक नई संरचना और तदनुसार नृत्य-कार्य में परिवर्तन के अनुसार बदलते रहते है। पुरुषों की एक पंक्ति के सामने बाँहों में डाले महिलाएं एक सीधी रेखा में नृत्य करती हैं। तुरी और थाली की लय-ताल पर पुरुष और महिलाएं दोनों ही आगे और पीछे लहराते हुए नृत्य करते है। उनका नृत्य कुछ तेज गति से आरंभ होता है और पंक्तियों के रूप को परिवर्तित करता रहता है, जबकि तुरी और थाली वादक नर्तकों के मध्य में रहते हैं और प्रत्येक समूह के सामने अपने वाद्य-यंत्र बजाते हैं।

(viii) **कच्छी रास :** कच्छ, गुजरात की संस्कृति के कुछ सर्वाधिक पौराणिक लक्षणों का एक भंडार है। किंतु जहां तक लोक-नृत्यों का प्रश्न है, विविधता जो विद्यमान है वह रास के एक रूप में है जो कच्छी रास के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसके युद्ध जैसे चरित्र के अलावा, यह संचालन, गति और संगीत में मेर नृत्य के सदृष्य हैं। सिर्फ पुरुष नृत्य करते हैं। इसमें सामान्य वाद्य यंत्र हैं ढोल और शहनाई।

(ix) **मंजीरा-नृत्य :** गुजरात के अधिकांश लोक नृत्यों में समूह रचनाएं होती हैं। किंतु मंजीरा नृत्य ही एकल नृत्य का एक ऐसा रूप है जिसे सौराष्ट्र के एक समुदाय, कमलिया की महिलाओं द्वारा संरक्षण प्राप्त है। यह नृत्य सामान्यतः एक महिला द्वारा किया जाता है जो शरीर के सभी भागों, जैसे सिर, हाथ, वक्ष, कमर, जांघों, कूल्हों, ऐड़ियों और पैरों में, मंजीरे बांध कर बैठ जाती है। एक नंगी तलवार मुंह में पकड़े रहती है और एक मिट्टी के बर्तन के अंदर जलता हुआ दिया रख कर अपने सिर पर रख उसे संतुलित रखती है। मंजीरों की एक जोड़ी वह अपने हाथों में पकड़ती है, संगीत और तबले की लय-ताल पर वह लहराती है और अपने शरीर के सभी भागों को परस्पर टकराती है। इसका एक थोड़ा भिन्नताकारी रूप राजस्थान में भी पाया जाता है, जहां इसे तेराताली के नाम से जाना जाता है।

(x) **मटकी नृत्य :** यह रास का काव्यमय परिवर्तन है जो कृष्ण की युवावस्था के प्रेम प्रसंग दर्शाता है। उंगलियों में अंगूठी पहन खाली बर्तनों पर बजाकर लय और ताल बनाई जाती है।

(xi) **मेर रास :** मेर, शक्तिशाली लोगों का एक समुदाय है जो ८ वीं शताब्दी ईस्वी में वलभियों के पतन के बाद जेठवा राजपूतों के साथ सौराष्ट्र के प्रवास पर चले गए थे। यह वर्तमान में जूनागढ़ जिले के पोरबन्दर क्षेत्र और सौराष्ट्र में जामनगर जिले के बजाड़ी क्षेत्र में पाए जाते है। मेरों का रास धीमी गति से आरंभ होता है। परन्तु बाद में इतनी तेजी से डाँडियां टकराते हैं और शरीर के संचालन में इतना जोश और उत्साह ले आते हैं कि यह युद्ध नृत्य में तलवार चलाने जैसा अधिक दिखता है।

(xii) **पढार नृत्य :** यह नाम गुजरात के एक आदिवासीय समुदाय, पढार, से आया है। सुरेन्द्रनगर जिले के एक गांव रंगढ़ में इस विलक्षण नृत्य के समूह उत्पन्न किए। इस प्राचीन समुदाय ने लोक नृत्य के एक ऐसे रूप को संरक्षण दिया है जो मेहनत, उद्यम, समुद्री नाविकों की उमंग, एवं समुद्री लहरों से भरपूर हैं और ग्रामीण आनन्द के उल्लास को प्रदर्शित करता है। हाथों में छोटे-छोटे मंजीरे लेकर वे घुटने मोड़ कर ही उठते हैं, लेटते हैं और दांए बांए लुढ़कते हैं। यह नृत्य समाप्त होने के बाद वे जकोलिया नामक नृत्य के एक रूप में बदल जाते हैं जिसमें वे जांग, अर्थात झांझ बजाते हैं। गोलाकार रचना से उठ कर अपने झांझ ले चार नर्तक गोले की बीचोबीच आ जाते है। उपयोग होने वाले वाद्‌य यंत्र हैं : झांझ, मंजीरे, और बगलिया नामक एक यंत्र।

(xiii) **रास नृत्य :** यह रासलीला से आया है, जो कृष्ण तब किया करते थे जब वे गोगुल और वृंदावन में एक ग्वालबाल का जीवन व्यतीत कर रहे थे। संस्कृत के कई ग्रंथों और पुस्तकों में इसका उल्लेख हल्लि साका नृत्य के रूप में किया गया है जिसके विविध प्रकार हैं: डंडा रासक, ताल रासक और ललित रासक।

(xiv) सिद्दी नृत्य : सिद्दी, गुजरात में अफ्रीकियों का नाम है। ये सिद्दी नर्तक, एशिया में शेरों के एक मातृ निवास स्थान, जूनागढ़ के निकट गिर के जंगलों में जाम्बुर नामक एक स्थान से आते है। यद्यपि भारत में तीन सौ वर्षों के वास ने उन्हें संपूर्ण नागरिक बना दिया है, तदापि उन्होंने अपने लोक नृत्यों में कुछ ऐसी विलक्षणताएं अभी भी बना रखी हैं जो उनके अफ्रीकी भाइयों की जैसी ही हैं। यद्यपि नृत्य के साथ वे गुजराती गीत गाते हैं, उनके पुरातन ढोल उग्र ताल बजाते हैं जो हमें अफ्रीकी आदिवासीय संगीत की याद दिलाता है। धमाल और हमची, इसकी विविधताओं के नाम हैं जिसमें वे वह सभी ओज, उत्साह और उग्रता उत्पन्न कर देते हैं जिसके लिए अफ्रीकी आदिवासीय नर्तक इतने प्रसिद्ध हैं।

(xv) ताल और ललित रसक : इसे सौराष्ट्र में गोरबी के नाम से भी जाना जाता है जिसे सामान्यतः पुरुष करते हैं। गुजरात के किसी अन्य भाग की अपेक्षा सौराष्ट्र का डाँडिया रास अधिक प्रसिद्ध है और जन्माष्टमी और कृष्ण के जीवन के कई अन्य उत्सवों के अवसर पर किया जाता है। चौकड़ी, स्वास्तिक और कापाई, इत्यादि, विभिन्न प्रकार के रास हैं।

(2) महाराष्ट्र

(i) ढ़ोलचा नाच : जैसा कि नाम इंगित करता है, ढोल वह मुख्य वाद्य यंत्र है जिसका उपयोग इस लोक नृत्य में किया जाता है। संगीत वाद्ययंत्रों के नाम पर रखे गए ऐसे ही दो अन्य लोक नृत्यों के नाम हैं तांम्ब्रीचा नाच (तंबोर पर रखा गया), और तरापी वाद्ययंत्र के नाम पर रखा गया तरापीचा नाच। इनमें से अधिकांश नृत्यों की रचना गोलाकार है।

(ii) डिंडी और ठेकला : दोनो ही लोकनृत्यों के मध्य में श्री कृष्ण की जीवन कथा है। उनके बचपन की क्रीड़ा-कौतुक का वर्णन। डिंडी रास के प्रकार का एक नृत्य है।

ढेकला गोकुल अष्टमी के समय के आस-पास किया जाता है और इसका संबंध दही की मटकी फोड़ने से है। नर्तक एक के ऊपर एक खड़े हो सूचिरत्तंभीय ढांचा बना दही की मटकी फोड़ने का अभिनय करते हैं।

(iii) **गौरिचा :** यह कोलाबा के कुनाबियों का प्रसिद्ध लोकनृत्य है। इस नृत्य को चेउली नाच और जखाड़िया के नाम से भी जाना जाता है। यह नृत्य सामान्यतः गौरी पूजा या गणपति पूजा में किया जाता है।

(iv) तरापी : वरली और ठाकुर, होली में यह नृत्य करते हैं। तरापी नृत्य कई प्रकार के होते हैं, प्रत्येक का नाम प्रमुख संचालनों या संरचनाओं से निकाला गया है। लगभग नौ या दस विभिन्न प्रकार की रचनाएँ (नृत्य के समय समूह का आकार) तरापी नृत्यों में बनाई जाती हैं, और प्रत्येक में पैरों, हाथों और बांहों के संचालन का एक विलक्षणकारी प्रारूप होता है।

(v) **तमाशा :** महाराष्ट्र के लोक रंगमंच का 400 वर्ष से भी अधिक पुराना यह रूप अत्यधिक जीवन्त है। इस कला के सर्वाधिक प्रसिद्ध संरक्षक, अंतिम पेशवा, बाजीराव द्वितीय थे। इसमें महत्वपूर्ण विकास यह था कि इसमें सोनगद्र्य नामक एक विदूषक लाया गया। मुख्य तमाशा विशुद्ध मनोरंजनकारी होता है, जिसमें एक महिला कलाकार को दर्शकों के मनचाहे गीत गाने होते हैं और पुरुष युद्ध की स्थिति के समान प्रभावी नृत्य करते हैं।

तमाशा गणपति वंदना से आरंभ होता है। वाग (कथा) इसका अगला, सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व होता है। संवाद, गीत और नृत्य के रूप में सुनाई जाने वाली कथा, धर्मग्रंथों और लोककथाओं से निकाली जाती है। इसी भाग में समकालीन सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं पर व्यंग्यात्मक टिप्पणियां भी की जाती हैं। स्वतंत्रता के आन्दोलन के समय अंग्रेजों के विरूद्ध राजनैतिक प्रचार के लिए वाग का सफलतापूर्वक उपयोग किया गया।

(v) **पोवाड़ा और पवाड़ा :** यह महाराष्ट्र की एक लोकगाथा है जो 16वीं शताब्दी में तब अधिक प्रसिद्ध हुई जब युद्ध होना आम बात थी। यह प्रकृति में नाटकीय है जिस पर इतिहास की कथाएं और घटनाएं छाई रहती हैं।

(vi) **दशावतारः** यह दक्षिणी कोंकण महाराष्ट्र का एक धार्मिक लोक रंगमंच है। यह कर्नाटक के यक्षगान का कोंकणी रूपान्तर और भगवान और उनके भक्तों की कथा है। यह सामान्यतयः मंदिर के प्रांगण में ही किया जाता है क्योंकि यह एक प्रकार की आराधना मानी जाती है। पुरूष ही सभी पात्रों का अभिनय, यहां तक कि महिलाओं की भूमिका भी निभाते हैं।

(3) राजस्थानः

(i) **भवाईः** यह नृत्य-नाट्य राजस्थान के भवाई समुदाय द्वारा किया जाता है। यह सर्वाधिक कठिन नृत्यों में से है क्योंकि यह तेज, ओजपूर्ण और कल्पनाशक्ति संपन्न है। इन नृत्यों के विषय प्रसिद्ध प्रेम प्रसंग, ऐतिहासिक और विशेष घटनाएं होती हैं।

(ii) **दांडिया और धमाल :** यह नृत्य होली के रंगबिरंगे त्यौहर पर पुरूषों और महिलाओं द्वारा हार्थों में छोटी-छोटी दाँडियां लेकर किया जाता है। यह नृत्य धीमी गति से आरंभ होता है और फिर तेज होता जाता है। नृत्य का विषय कृष्ण होते हैं और गीत कृष्ण की बाल्यावस्था का गुणगान करते हैं।

(iii) **घूमर और झूमर :** राजस्थान का प्रसिद्ध नृत्य, घूमर, अपना नाम घूमना, अर्थात् घिरनी से पाता है, जो राजस्थानी महिलाओं के लहराते घाघरे के भड़कीले रंगों का प्रदर्शन करता है। यह सभी ऋतुओं में किया जाता है, और इसके साथ प्रेम, महिमा, और पराजय विषयक गीत होते हैं। पुरूष और महिलाएं एक गोल दायरे में नृत्य करते हैं, आधे में पुरूष और आधे में महिलाएं और साथ में संगीतकार।

(iv) **झोरिया :** यह एक वैवाहिक नृत्य है। पुरुष एक गोल दायरा बनाते हैं और महिलाएं दूसरा और फिर वे नगाड़े, शहनाई और ढोल की लय-ताल पर नृत्य करते हैं।

(v) **राइका :** यह युद्ध विषयक लोक नृत्य है जिसमें महिलाएं और पुरूष दोनों ही भाग लेते हैं। पुरूष तलवार लेकर ईश्वर से शक्ति की याचना हेतु गीत गाते हैं। महिलाएं और पुरूष फिर एक गोल दायरा बनाकर कदम से कदम मिला कर नृत्य करते हैं।

(vi) **काछी घोड़ी :** पूर्वी राजस्थान के बवारी और सियागर यह नृत्य करते हैं। जैसा कि नाम सुझाता है, यह नृत्य घुड़सवारी का प्रस्तुतिकरण है। घोड़े बांस के बने होते हैं और दूल्हे की वेशभूषा में नर्तक घोड़े को अपनी कमर पर इस प्रकार बांधता हैं कि वास्तविक प्रभाव हो। यह बच्चों की सबसे मनचाही नृत्य शैली है।

(vii) **रास नृत्यः** यह गोपियों के साथ भगवान कृष्ण का सुंदर और सांकेतिक नृत्य है। इसका एक नयनाभिराम चित्रण होता है जिसमें गूढ़ दार्शनिक अर्थ छिपे होते हैं। वे एक ईश्वरीय प्रेम-नर्तक की खोज को चित्रित करती हैं और उन्हें सर्वस्व सौंप देती हैं। इस प्रकार "क्या मनुष्य को ईश्वर से प्रेम करना चाहिए"-यह इस नृत्य में दर्शाया जाता है।

(viii) **मीरा का नृत्य :** मेवाड़ के राणा की पत्नी मीरा, दुनिया त्याग कर भगवान कृष्ण की भक्त हो गई थीं। शांति और आनंद के लिए वे भगवान की आराधना में अपने गीतों और भजनों के लिए संपूर्ण भारत में जानी जाती हैं। महत्व और चरित्र में यह नृत्य आत्मिक और भक्तिप्रद है।

(ix) **दिग्गी पुरी का राजा :** टोंक जिले के दिग्गी में भगवान कृष्ण के एक अवतार-कल्याणजी का एक मंदिर है। भक्त नाच-गा कर आशीष की याचना करते दिखते हैं। यहां देवता की विलक्षणता यह है कि यहाँ दृष्टिहीनों को आंखें मिल जाती हैं।

(x) **गणगौर :** यह नृत्य चैत्र माह (मार्च) में किया जाता है। युवा लड़कियां सुंदर वेशभूषा में आती हैं तथा एक अच्छे पति की प्राप्ति के लिए पार्वती से प्रार्थना करती हैं। विवाहित स्त्रियां सुखी और संपन्न जीवन की याचना करती हैं। सुंदर वस्त्र और उत्कृष्ठ आभूषण पहने, पीतल-चांदी के बर्तन में घास और पत्ते भर उसे सिर पर रख, संतुलन बनाए रखते हुऐ वे गीत गाते हुए देवी पार्वती के मंदिर में जाती हैं।

(xi) **चारी नृत्य :** यह त्योहारों, विवाह, हंसी और खुशी के अवसरों का नृत्य है। यह नृत्य शरीर के लचीले संचालन का प्रदर्शन करता है। नर्तक एक बर्तन लिए रहते हैं जिसमें एक छेद होता है जिसमें आग जलती रहती है, यह नृत्य में सुंदरता लाता है।

(xii) **कलबेलिया :** कलबेलिया जनजाति की महिलाओं द्वारा किए गए नृत्य को कलबेलिया या संपेरा नृत्य के नाम से भी जाना जाता है। यह जनजाति सांप पकड़ती है। नर्तकियां चांदी के रंग की धारियों से सजे लहंगा-ओढ़नी पहनती हैं। सांप की तरह ही नर्तकियां भी नृत्य में अपने शरीर का संचालन करती हैं।

(xiii) **कची घोड़ी :** यह राजस्थान के सबसे मनोहारी नृत्यों में से एक है। नर्तक एक 'कची घोड़ी' पर सवार होता है। उसे अपने पैरों के काम में कुशल होना होता हैं क्योंकि उसे घोड़ी पर चढ़े-चढ़े ही नृत्य करना होता है।

(xiv) **बसंत नृत्य :** यह नृत्य रंगो के त्योहार होली के अवसर पर किया जाता है। यह नृत्य एक प्रकार की ढपली, टंपारिन, की ताल पर किया जाता है।

(xv) **मोर नृत्य :** मोर भारत का राष्ट्रीय पक्षी तथा प्रेम और भक्ति का प्रतीक है। महिलाएं, मोर की वेशभूषा में, वर्षा ऋतु के आगमन के स्वागत में यह नृत्य करती हैं।

(xvi) **कठपुतली नृत्य :** राजस्थान में भारत के सर्वाधिक कठपुतली कलाकार रहते हैं। अपने पारंपरिक तरीके से यह कलाकार महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाएं और राजस्थान की लोक कथाएं दर्शाते हैं।

(xvii) **गैर :** होली गैर नृत्य का भी अवसर होता है। यह नृत्य मुख्यतः पुरूषों द्वारा किया जाता है। मेवाड़ के गैर नृत्य में नर्तक एक अंदरूनी और बाहरी गोले बनाते हैं और फिर नर्तक अंदर बाहर आ जा कर संचालन करते हैं। यह जटिल और मोहक होता है। जोधपुर का गैर एक ही पंक्ति में और प्रभाव के लिए योद्धाओं की सी वेशभूषा पहन कर किया जाता है। शेखावटी का गींदड़ भी ऐसा ही होता है। गैर नृत्य सुरनाई और नगाड़ा या ढोल और थाली की सुर ताल पर किया जाता है।

(xviii) **तेरहताली :** तेरहताली नृत्य महिलाओं द्वारा बैठ कर किया जाता है। महिलाएं, मंजीरे अपनी कलाइयों, कोहनी, कमर बांहों में बांधे रहती हैं और एक जोड़ी हाथ में पकड़े रहती हैं। पुरूष गीत गाते और तंदूरा बजाते हैं जबकि महिलाएं दक्ष संचालनों सहित मंजीरों के साथ एक प्रबल ताल उत्पन्न करती हैं। अधिक प्रभाव के लिए वे मुँह में तलवार पकड़े रहतीं हैं या फिर सिर पर मिट्टी के बर्तन में जलता दीपक रख उसे संतुलित रखती हैं। वह समूह जो तेरहताली करता है उसे कमद कहते हैं और यह नृत्य धार्मिक आवश्यकता की भी पूर्ति करता है। पौराणिक देवता भगवान रामदेव तेरहताली नृत्य के रूप के मध्य में होते हैं।

उत्तर भारत

(1) पंजाब :

(i) भांगड़ाः पंजाब के गांवों का सबसे प्रसिद्ध सामुदायिक नृत्य उस अनुष्ठान से जुड़ा है जो गेहूं को दिया जाता है। गेहूं की फसल बोने के बाद सब लोग रात में एक खुले स्थान पर एकत्रित होते हैं। नर्तक एक गोले में नृत्य करते हैं ताकि नया आने वाला व्यक्ति बगैर नृत्य की निरतंरता तोड़े नृत्य के समूह में जुड़ सके। यह गोला तब तक बढ़ता रहता है जब तक कि यह ढोल वाले के नतृत्व में एक बड़ा गोला न बन जाए। समूह का नेता, एक बड़ा सा ढोल लटकाए मध य में खड़ा होकर डंडे से ढोल पीटता है। प्रायः उसके साथ दो या इससे अधिक गायक होते हैं। नृत्य की ताल आसान तथा गीत भी आसान सुरीली धुन में होता है। शब्द पंजाब क़ी पांरपरिक मौखिक काव्य से लिए गए शेर होते हैं जिन्हें 'बोली' या 'ढोला' कहा जाता है। प्रत्येक नए शेर के साथ नर्तक अपने कदम बदल देते हैं और, 'ओए-ओए', 'बल्ले-बल्ले' के स्वर में गायन का उत्तर देते हैं। नृत्य एक धीमे ताल से आरंभ होता है जिसमें कंधो को झटका दिया जात है। फिर हाथों को उठा कर पूरे शरीर का जोरदार संचालन होता है। जब गोला पूरा बन जाता है और नृत्य की गति बढ़ जाती है तो दो मुख्य नर्तक गोल दायरे के बीच में आकर नृत्य करते हैं। बारी बारी से दो-दो नर्तक दायरे की बीचो-बीच में कुछ देर नृत्य कर अपने स्थान को चले जाते हैं।

भांगड़ा के लिए वेशभूषा सामान्य पंजाबी ग्रामीण वेशभूषा है, तहमत-लुंगी, एक कुर्ता और एक सदरी, और एक रंगबिरंगी पगड़ी जिसे 'पग' कहते हैं। मूलतः ढोल के अतिरिक्त कोई अन्य वाद्य यंत्र उपयोग नहीं होता था, किन्तु कुछ आधुनिक रूपांतरों में मजीरे और झांझ भी उपयोग किए जाते हैं।

(ii) **झूमर :** झूमर कटाई के मौसम का एक अन्य लोक नृत्य है। यह भांगड़ा के कई लक्षण दर्शाता है। किंतु यह अपने विषय-वस्तु और पशुओं और पक्षियों की चाल उत्पन्न करने के दृष्टिकोण से भिन्न है। झूमर में दैनिक जीवन के सभी कार्यों को दर्शाया जाता है और नर्तकों का जोड़ा जो बीच के क्षेत्र में आता है उन पशुओं की चाल चलता है जिन्हें वह पालता है। दो पुरूष खेत के बैल बन जाते हैं, एक हल बन जाता है तो चौथा किसान। पशुओं की चाल, खेतों की जुताई, बीज बोने और फसल काटने की प्रक्रियाएं एक-एक कर प्रदर्शित की जाती हैं। फसल काटी जाती है और नर्तक एक गोलाकार में फिर आकर बहुत कुछ भांगड़े के समान नृत्य करते हैं।

(iii) **करथी :** मात्र करथी ही पुरूषों और महिलाओं का एक मिश्रित नृत्य है। करथी में फसल कटाई के समय देवता को अर्पण किया जाता है। इसके बाद महिलाएं गीत गाते हुए शोभायात्रा में आगे चलती हैं और पुरूष पीछे चलते हैं और फिर महिलाएं और पुरूष दोनों मिल कर एक गोल दायरा बनाते हैं, और नृत्य करते हैं।

करथी के गीत भावानात्मक होते हैं जो लड़े गए और जीते गए युद्धों, प्रेमियों के मिलन और तकरार की कथाएं कहते हैं। करथी की गति अन्य दो नृत्यों और भांगड़ा से धीमी होती है। हाथ से तालियां बजाई जाती हैं। एक लोक शहनाई और फूंकने वाले अन्य वाद्य यंत्रों का उपयोग करथी में किया जाता है।

(iv) **गिद्दा :** गिद्दा, पूर्णतः महिलाओं का एक नृत्य है। पुरुषों के भांगड़ा का प्रतिरूप। अलंकृत वस्त्रों में, गिद्दा नृत्य के लिए महिलाएं एक खुले आंगन में एकत्रित होती हैं। नृत्य एक गोल दायरे से आरंभ होता है, जो फिर दो अर्ध-गोलाकारों और कभी-कभी चार या छः के समूहों मे तोड़ दिया जाता है। गोले में से नर्तकों का एक जोड़ा, एक विषय पर विभिन्न रूपान्तरों पर नृत्य करने के लिए बीच में आता है। गीत के दोहे उनके रोजमर्रा के काम-काज का वर्णन करते

हैं-सफाई से लेकर कुटाई और कताई, सिलाइं और कढ़ाइ, और यहां तक कि सास और बहू से तकरार, ननदोई का ननद के लिए प्रेम भी गीत में स्थान पाता है।

(2) हरियाणा

हरियाणा में लोग मुख्यतः एक कृषि समाज का जीवन व्यतीत करते हैं। उनके नृत्य फसल की कटाई के मौसम के आस-पास घूमते हैं और बैशाखी के समय किए जाते हैं।

(i) **ढप नृत्य :** यह नृत्य या तो पूर्णतः पुरूषों के लिए या फिर महिलाओं और पुरूषों दोनों के लिये नृत्य होता है। पुरूषों के नृत्य में नर्तक हाथों में एक ढपली पकड़े नृत्य के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं। संचालन धीमा और सहयोगी आघात वाद्य यंत्र धीमें बजाए जाते हैं। नर्तक लगातार ढपली बजाते है।

फागुन ढपली नृत्य पुरूषों और महिलाओं दोनों ही के द्वारा किया जाता हैं, पुरुष ढपली बजाते हैं, और महिलाएं ताली। नर्तक पहले एक अर्ध-गोलाकार बनाते हैं जो फिर दो समानान्तर पंक्तियों में टूट जाता हैः प्रत्येक पंक्ति दूसरी के पार गीत गाते हुए पहुंचती है।

(ii) **होली नृत्य :** होली नृत्य में लड़कियाँ एक गोल दायरा बना लेती हैं, और अपनी तालियों की ताल पर नृत्य करती हैं। धीरे-धीरे गोला बड़ा होता है और नृत्य की गति बढ़ जाती है। एक, दो लड़कियां बीच के क्षेत्र में आ जाती हैं, जोड़ों में नृत्य करती हैं और वापस अपने स्थान पर आ जाती हैं। गीत परिहास के व्यंग्य से परिपूर्ण होते हैं और समकालीन-घटनाओं का वर्णन करते हैं।

(3) उत्तर प्रदेश तथा उत्तरांचल

(i) **नौटंकी :** यह उत्तर प्रदेश के सर्वाधिक प्रसिद्ध नृत्यों में से एक है जिसमें गीत क्रियात्मक शैली में गाए जाते हैं, अभिनय और नृत्य संचालन धर्म और आधुनिक सामाजिक समस्याओं से

संबंधित कथाओं का प्रतिपादन करता है, किन्तु सबसे अधिक पंसद किए जाने वाले विषय राजाओं की कथाओं के आस-पास घूमते हैं। नृत्य की अवधि सामान्यतः चार से छः घंटों की होती है।

(ii) **चप्पेली :** यह उत्तराँचल के कुमाऊं के पर्वतों के रूमानी नृत्यों मे से एक है जो विवाह और वसंत ऋतु में किया जाता है। रूमानी भावना को दर्शाते हुए, नर्तक दो-दो के जोड़े में, एक हाथ में आइना और दूसरे में रंगबिरंगा रूमाल पकड़ कर उसे झटकते हुए, तालमय कदमों से आगे पीछे आते जाते नृत्य करते हैं।

(iii) **रास लीला :** भगवान कृष्ण का जन्म स्थान मथुरा और वृंदावन इस नृत्य के केन्द्र हैं, जिसे भारत के प्रत्येक भाग में पसंद किया जाता है। नृत्य के विषय कृष्ण के बालजीवन की कथाएं होते हैं। सुंदर संचालन, जिनमें से कुछ कत्थक से मिलते हैं, तथा बड़े आकर्षक होते हैं। गोपियों और राधा की भूमिका निभाती नर्तकियां की अभिव्यक्ति नवीनता और आकर्षण से भरपूर होती है। सामान्यतः श्रावण (अगस्त) माह में रास लीला पूरे चाव से की जाती है। कुंभ मेले के उत्सव पर की जाने वाली रास लीला भी प्रसिद्ध है। गंगा नदी के तट पर एकत्रित हो पूरा माह पूजन-भजन को समर्पित करते हैं। वहां वे दिन और रात में रास लीला का आनन्द लेते हैं।

(iv) **कलरी :** यह एक ऐसा अवसर है जिसमें उत्तर भारत के ग्रामीण वैदिक देव इंद्र का आवाह्न कर पृथ्वी अग्नि के पुष्टिवर्धन और एक सफल फसल कटाई के लिए प्रार्थना करते हैं। वर्षा ऋतु में किया जाने वाला यह नृत्य उन गीतों का अनुसरण करता है जो ढोलक और मंजीरे की ताल पर गाए जाते हैं।

(4) हिमाचल प्रदेश :

(i) करयाला : एक प्रसिद्ध नृत्य नाट्य आवाहन की प्रक्रिया के बाद, चंद्रावती और उनके सहचर चिरागीय द्वारा एक विशुद्ध नृत्य अनुक्रम होता है, जो दैवीय नर्तक शिव और उनकी पत्नी पार्वती का प्रतिनिधित्व करते हैं।

(ii) लुड्डी नृत्य : मंडी जिले में किया जाने वाला यह नृत्य पेड़ों की लहराती शाखाओं के समान तेज कदमों और शरीर के संचालन में विशेषज्ञता के लिए प्रसिद्ध है। यह त्योहारों और मेलों में किया जाता है।

(iii) चरबा : यह गद्दी महिलाओं अथवा गड़ेरिनों का नृत्य है।

(iv) थाली नृत्य : हिमाचल प्रदेश की जौनसार महिलाओं द्वारा किया जाने वाला थाली नृत्य भारत के सर्वाधिक रमणीय लोक नृत्यों में से एक है।

इसमें महिलाएं अपनी उंगलियों पर पीतल की थालियां संतुलित करते हुए ढोल की थापों पर घुमाती हैं। साथ के गीत मधुर और रूमानी और नृत्य के पूरक होते हैं। यह नृत्य वसंत ऋतु का उत्सव मनाता है।

(v) कुल्लू नृत्य : फसल कटाई के समय उत्सव के दिनों में महिलाओं द्वारा यह नृत्य आवश्यक रूप से देवों के गुणगान हेतु किया जाता है। तड़कीले भड़कीले लहंगों और चांदी के आभूषणों से सुसज्जित, हाथों से सुंदर भाव भंगिमाएं बनाते हुए वे नपे-तुले कदमों से गोल दायरे में नृत्य करती हैं। इसमें गीत का एक सहगान होता है जिसमें महिलाओं का एक समूह एक पंक्ति गाता है और दूसरा समूह उनके बाद उसे दोहराता है।

(5) जम्मू और कश्मीर :

(i) **दमली :** यह पुरुषों द्वारा किया जाने वाला एक ओजस्वी मंदिर नृत्य है।

(ii) **रौफ नृत्य :** फसल कटाई के मौसम में यह नृत्य आवश्यक रूप से महिलाओं द्वारा जम्मू में किया जाता है। दो पंक्तियों में नृत्य करते हुए, प्रत्येक में लगभग पंद्रह लड़कियां एक दूसरे की पीठ पर हाथ रख कर एक प्रकार की श्रृंखला बना लेती हैं। तड़कीले-भड़कीले लहंगों और चांदी से बने भारी आभूषणों की वेषभूषा और साज श्रृंगार समेत, मुस्कुराते चेहरे लिए, नर्तकियां प्रसन्नता का एक दैवीय आकर्षण उत्पन्न कर देती हैं।

(iii) **हिकात :** यह जम्मू में किया जाने वाला नृत्य है जिसमें जवान लड़के और लड़कियों के समूह प्रसन्नता और उल्लास व्यक्त करते हैं। उनकी बाहें आड़ी-तिरछे अंदाज में गुंथी होती हैं तथा नर्तकों के जोड़े गोलों में घूमते हैं। यह एक ऐसा उत्सव है जिसमें अच्छे संतुलन, सही समय का आभास और पैरों का सही संचालन आवश्यक होता है।

(iv) **कुद :** यह जम्मू में पुरूषों का मुख्य नृत्य है, जिसे डोगरा समुदाय के लोग करते हैं। नृत्य एक गोल दायरे में होता है जिसमें कदम बड़े नपे तुले होते हैं। एक सी गति पूरे नृत्य में बनाई रखी जाती है।

(6) लद्दाख :

(i) **राक्षस नृत्य :** यह गोंपा के परिसर में लाहपा (भले) और मणिया (पुजारी) लोगों द्वारा किया जाने वाला नृत्य है।

(ii) **दांडी नाच :** यह बांस से निर्मित एक कलात्मक मोर जैसे ढांचे (जिसे चज्जा कहते हैं) के आस-पास छोटी उम्र के (प्रायः बच्चों द्वारा) लोगों द्वारा किया जाने वाला नृत्य है।

दक्षिण भारत

कर्नाटक :

(i) **डोल्लु कुनिथा :** कर्नाटक यह प्रसिद्ध नृत्य बहुत आकर्षक और गतिशील होता है। यह पुरुषोचित नृत्य है क्योंकि यह अच्छे गठे शरीर वाले पुरूषों के लिए ही सीमित है जो नृत्य के साथ ही उनकी कमर से बंधे एक खोखले ढोल को कुशलता से बजाते हैं।

डोल्लू कुनिथा, कर्नाटक के एक गरड़िया वर्ग द्वारा पूजे जाने वाले बीरेश्वर की एक परंपरा के रूप में आया। यह एक धार्मिक और सांस्कृतिक अनुष्ठान है और अधिकांशतः बीरे देरू के भक्तों, कुरूबा लोगों द्वारा किया जाता है। सामान्यतः, नर्तकों के समूह में 15 से 20 लोग होते हैं। वे एक गोले में खड़े होते हैं और ढोल बजाना आरंभ करते ही वे नृत्य करने लगते है। वे भिन्न-भिन्न तरीके के समूह बना कर अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं।

(ii) **गोरवा नृत्य :** इस धार्मिक नृत्य का मूल कर्नाटक में है और यह भगवान मैलरलिंग के भक्तों द्वारा किया जाता है। मैलर, उत्तरी कर्नाटक में स्थित एक शिव पंथी केन्द्र है। गौरव लोग अपने ईश्वर पर गीत गाते हैं, और डमरुगा और बांसुरी की धुन पर नृत्य करते हैं।

(iii) **करड़ी मजुला :** देवताओं के आवाह्न के लिए पांरपरिक रूप से उत्तरी भागों में सामाजिक और धार्मिक कार्यों और उत्सवों पर किया जाने वाला यह लोक नृत्य कर्नाटक का एक थाप से बजाए जाने वाल वाद्य यंत्रों की समष्टि है। उपयोग किए जाने वाले वाद्य यंत्रों में सम्मिलित है : करड़ी वाद्य (ढोल) और साथ में सानादी, श्रृति, डिम्मू और चौगड़ा।

पोशाक में सामान्यतः कसे पांयचे, कसे कमीज, रंगबिरंगी पगड़ी और ऐसा ही रंगबिरंगा कमरबंद होता है। कलाकार, वाद्य यंत्र लेकर अर्धगोलाकार में खड़े वादकों के सुर ताल के सहयोग से तालगत संचालनों के साथ नृत्य करते हैं।

(iv) करगा : यह धार्मिक लोक नृत्य अधिकतर कोलार, बैंगलोर, टुमकुर और मैसूर जिलों में किया जाता है। करगा नृत्य करने वाला व्यक्ति सुंदर सज्जायुक्त पीतल का कलश लेकर पूरी युक्ति के साथ नृत्य करता है।

नर्तक के सिर पर रखा (मिट्टी का बर्तन) कुंभ करगा के लिए महत्वपूर्ण है। छत्रिय समुदाय का एक पंथ, वण्णिकुल, करगा नृत्य करता है।

(v) पूजा कुनिथा : देवी शक्ति के आवाह्न हेतु यह पूजा-आराधना का एक नृत्य रूप है। बांस से बने एक चौखट को सुंदर साड़ियों से सजाया जाता है। नर्तक, जो इसे हाथ में लेकर नृत्य करता है, का कुशल होना आवश्यक है। इस चौखट के मध्य में तांबे या अन्य किसी धातु से बना देवी का चेहरा देखा जा सकता है। उत्सव के दिनों में अथवा विशेष अवसरों पर, कलाकार अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए नृत्य करता है। यह नृत्य सामान्यतयः देवी शक्ति के मंदिर के सामने किया जाता है। यह कर्नाटक के मांड्या, बैंगलोर, और कोलार जिलों में प्रसिद्ध है।

(vi) मुदलापय यक्षगान : यह नृत्य उत्तरी और दक्षिणी कर्नाटक में प्रचलित है। इस परंपरा में शीर्ष गायक को भागवत कहते हैं। वह गुरू ह़ोता है जो नौसिखिए ग्रामीण कलाकारों को नृत्य और संवाद सिखाता है।

गीत, जो इस नाट्य का भाग होते हैं, वही गाता है, और अभिनेता उच्चारण, ढोलों और मंजीरों के सुर ताल पर नृत्य करते

हैं। मुदलापय, अपने सुरीले संगीत, ओजपूर्ण नृत्य और शानदार पोशाक के लिए जाना जाता है जो हजारों स्वदेशी पर्यटकों को आकर्षित करता है।

(8) केरल :

(i) **तुल्लल :** यह कथकली के समान एक प्रकार का मूकाभिनय होता है। यह सामान्यतयः एक ही कलाकार द्वारा किया जाता है, जिसके सहयोगी होते हैं, एक गायक, एक ढोल वादक और एक मंजीरा वादक। यह मूकाभिनय, मलयालम साहित्य के कुछ चयनित विशेषज्ञों को एक आश्चर्यजनक मोहक अन्दाज में प्रस्तुत करता है।

(ii) **तप्पट्टिकली :** यह नृत्य केरल में भगवान शिव के उत्सव के समय युवा महिलाओं और युवतियों द्वारा किया जाता है। समूह की अधिक वय की महिलाओं में से एक गीत गायन आरंभ करती है और अन्य नर्तकियां उसके गायन और नृत्य संचालनों का अनुसरण करती हैं। नर्तकियां गोल गोल घूमती अपने कदमों और संगीत की ताल पर ताली बजाती हैं। यह नृत्य ग्रामीण सरलता और जीवन्तता को दर्शाता है।

(iii) **कूडियट्टम :** यह एक नृत्य नाटिका है। यह सामान्यतः कुछ दिनों से लेकर कुछ सप्ताहों तक चलता रहता है।

(iv) **कईकोटिकली :** यह केरल की महिलाओं के प्रमुख नृत्यों मे से एक है। एक स्टूल पर रख कर एक दीप प्रज्वलित किया जाता है और नर्तक इसके चारों ओर गीत गाते और ताली बजाते हुये नृत्य करते हैं। ओणम इस नृत्य का मुख्य अवसर है।

सारि : यह फसल की कटाई के समय किया जाता है।

(v) **कृष्णनट्टम :** यह कत्थकली जैसा ही नृत्य है जो भगवान कृष्ण की संम्पूर्ण गाथा बताने के लिए लगातार आठ रातों तक प्रस्तुत किया जाता है।

(vi) वेलकली : यह केरल के पुरूषों का मुख्य युद्ध-नृत्य है। नर्तक नायर समुदाय के होते हैं और मुख्य नृत्य तिरूवनंतपुरम में पद्मनाभवनी मंदिर के वार्षिक उत्सव के समय किया जाता है। पुरुष एक प्रकार की युद्ध पर जाने जैसी पोशाक पहनते हैं और तलवार और ढाल पकड़ते हैं, जिन्हें लिए लिए ही वे नृत्य करते हैं।

(9) तमिलनाडु :

(i) **कोलट्टम :** यह नृत्य बालिकाओं द्वारा, भगवान राम का जन्मदिन मनाने के लिए हाथों में छोटी-छोटी डंडियों को पकड़ कर किया जाता है। तमिल नाडु में उपजा नृत्य का यह रूप संपूर्ण भारत में प्रसिद्ध है। इस नृत्य का एक अन्य विविध प्रकार, जिसे पिन्नल कोलट्टम के नाम से जाना जाता है, ऐसे समूहगान के साथ किया जाता है जो ताल में बजती डंडियों के समूह की,पताकाओं के खुलने-लपेटने की, प्रसन्न युवाओं की और प्रसन्नतामय नृत्य की बात करते हैं।

(ii) **कुम्मी :** यह नृत्य सामान्यतः तमिलनाडु में, दक्षिण के हिन्दू नव वर्ष, जो जनवरी में पोंगल उत्सव के तत्काल बाद आता है, के अवसर पर किया जाता है। बालिकाओं के समूह विविध कदमों में गोलाकार दायरे में घूमते हुए, ताली बजाकर नृत्य करते हैं। तमिल नाडु में कुम्मी के कई रूप हैं। एक गीत पर एक पुष्प-नृत्य भी किया जाता है जो कई पुष्पों की सुंदरता का गुणगान करता है।

(iii) **कृत्रिम अश्व नृत्य :** यह नृत्य नाट्य सबसे सुरम्य और रूचिपूर्ण नृत्य नाट्यों में से एक है, जो दक्षिण भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में एक मंदिर के निकट शरद ऋतु के समय किया जाता है। रंगबिरंगी

पोशाकों में सजे-धजे नर्तक कागज, कपड़े और हल्की लकड़ी से बने और रंगों से सजे घोड़े के एक ढांचे में खड़े होते हैं। लकड़ी के पैरों पर संगीत ओर ढोल की लय ताल पर यह नृत्य घंटों चलता रहता है। ये नृत्य नाट्य धार्मिक कथाएं चित्रित करते हैं।

भारत के आदिवासीय नृत्य

उत्तर-पूर्व के पर्वत और घाटियां

इन आदिवासी नृत्य को तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है:

(क) नगाओं के नृत्य,

(ख) अन्य आदिवासीय जनजातियों, विशेषकर भारतीय-मंगोलियाई समूहों के नृत्य,

(ग) ग्रामीण लोगों के नृत्य, जैसे वैष्णव पंथियों और अन्य, विशेषकर मणिपुर, आसाम और त्रिपुरा की घाटियों के नृत्य।

नगाओं के नृत्य नगा जीवन के सभी पहलुओं को समाहित करते है और गति संचालनों, परिधानों और पोशाक का एक विविध चित्र प्रस्तुत करते हैं।

नगालैण्ड के नगाओं में विख्यात नर्तक हैं सेमा, कोन्यक, आओ, अंगामी और जेलियंग आदिवासीय जनजाति के लोग। इन आदिवासीय जनजातियों में से प्रत्येक के अपने विशेष नृत्य होते हैं, जो शिकार, फसल कटाई और कृषि जैसे विषयों से गढ़े-बुने जाते हैं।

(1) शिकार का नृत्य (Head Hunting Dance) : सेमा जनजाति के लोगों के सिरों के शिकार संबंधी नृत्य में भालों का उपयोग आम बात होती है। नर्तक पहले एक पंक्ति में, समूहगान की धुन पर नृत्य करते हुए प्रवेश करते हैं। नृत्य में पहले एक उछाल होती, फिर एक विराम, शरीर अनिवार्य रूप से सीधा एक इकाई की तरह रखा जाता है।

जैसे-जैसे गति बढ़ती है, यह पंक्ति एक गोल दायरे में परिवर्तित हो जाती है। अगला चरण, भालों को सिर के ऊपर लहराते हुए और उनके अंगो की ओर झोंकते हुए, आक्रमण से बचाव और अदृश्य शत्रु पर आक्रमण का दिखावा करते हुए संकेंद्रित गोल दायरे बनाए जाते हैं। नृत्य, चीख-पुकार और गोल दायरे में घूम कर एक आरोह में समाप्त हो जाता है।

मणिपुर के रंगमा, माओ या तंगखुल नगा जनजाति के लोग भी ऐसे ही नृत्य करते हैं जिन्हें खसम, कुल्लम और उरिडेह कहा जाता है।

नगालैण्ड की चंग आदिवासीय जनजाति एक अनुष्ठानिक युद्ध-जैसा नृत्य करती है जिसे किम्बकू कहा जाता है। इसमें, नर्तक एक गोल दायरा बना कर एक दूसरे का हाथ पकड़ लेते हैं। इसमें प्रथम चरण धीमा होता है किन्तु नृत्य की गति तुरंत ही बढ़ जाती है और एक सम्मोहक प्रभाव उत्पन्न हो आता है।

जेलियांग के लोगों के नृत्य मिश्रित होते हैं। पुरूषों की पंक्ति पहले प्रवेश करती है; उसके बाद महिलाओं की एक पंक्ति आती है: महिलाएं, पुरूषों की पंक्ति के पीछे एक पंक्ति बना लेती हैं। फिर वे एक अर्धगोलाकार प्रारूप बना लेते हैं, जिसमे महिलाएं दो मण्डलाकार और पुरूष एक अर्धगोलाकार आकृति बनाते हैं। फिर विकर्ण बनाए जाते हैं जो अंततः अन्य प्रारूप बनाते हैं, जैसे कि उनमें से एक लगभग स्वास्तिक जैसा बनता है। अंततोगत्वा, यह दो सर्पों की आकृति का प्रारूप ले लेता है।

अधिकांश नृत्यों में, कोई वाद्‌य यंत्र नहीं होते और नर्तकों के गोल घुमाव स्वयं एक संगीतमय सहयोग प्रदान करते हैं। कभी-कभी नागा जेलिअंग नृत्य में एक भारी ढोल और मंजीरों की एक जोड़ी का भी उपयोग होता है।

आओ जनजाति के लोग एक नृत्य करते हैं जो आमोद-प्रमोद और उल्लास से परिपूर्ण होता है। इसके तीन भाग होते हैं : पहले में युवा पुरुष पंखों से सुसज्जित, चमकते भाले लेकर प्रवेश करते हैं, और एक गोल दायरे

में नृत्य करते हैं। दूसरा उन कौवों की हरकतें दर्शाता है जो युद्ध के बाद बचे खुचे मांस इत्यादि के आस-पास एकत्रित हो जाते है। फिर नर्तक चिड़ियों की तरह उछलते कूदते हैं। तीसरे में नर्तक खूंखार सांड़ की भांति आक्रमण कर प्रहार करते हैं।

जेमी जनजाति के लोगों को नृत्य बहुत प्रिय होता है और वे इसके लिए कई अवसर ढूंढ़ लेते हैं। जेमी नृत्य प्रायः रात में मशाल लेकर किया जाता है। सौ या इससे भी अधिक लड़कियां और लड़के नृत्य के लिए मोरूंग के निकट अथवा अन्य चयनित स्थान पर जमा होते हैं। नृत्य धीमे संचालन के साथ ढोल और मंजीरे के लय-ताल पर आंरभ होता हैः यह धीरे-धीरे तेज होता जाता है जिसमें पुरुष सटीक तालगत आक्रमण के साथ हवा में उछाल लेते और जमीन पर गिरते हैं। संपूर्ण दृश्य ध्वनि, रंगों और ताल की एक आश्चर्यजनक छाप उत्पन्न करता है।

जेमी और जेलियंग जनजाति के लोगों के नृत्यों की एक श्रंखला होती है जो, एक खेल के रूप में, न कि अनुष्ठान के रूप में, शिकार के आस-पास घूमता है। कई कविताओं में एक चिड़िया अथवा पशु का गुणगान किया जाता है। धनेश पक्षी के गुणगान में ऐसा ही एक गीत, नृत्यों का सम्राट माना जाता है।

ऐसी ही एक नृत्य सांड़ के आस-पास घूमता है जबकि, सांड़ को मारने के बाद बलि नृत्य एक प्रकार का अनुष्ठाानिक नृत्य होता है। सांड़ का पीछा करने विषयक नृत्य भाव में हल्का होता है और धनेश पक्षी नृत्य से मिलता जुलता है।

अन्य हल्के नृत्यों में जेमी जनजाति के लोगों का मुर्गा-लड़ाई नृत्य जिसे न्रुइमा लिम कहते हैं।

जेमी, अंगामी, काबिउ और तंघुल जनजाति के लोग फसल कटाई का उत्सव मनाते हैं, जब वे पृथ्वी की उदारता, जिससे वे लाभान्वित हुए, का गुणगान करते हैं। नृत्य, पृथ्वी के लिए एक प्रसादनकारी अनुष्ठान होता है जिसे वे देवी का प्रतीक मानते हैं। अंगामी जैसे कुछ जनजातियों में (अन्य में नहीं) नृत्य से पहले एक अनुष्ठान किया जाता है।

जेमी जनजाति के लोगों की फसल कटाई के समय किया जाने वाला नृत्य खंबा लिम कहलाता है जो पुरूष और महिलाएं करती हैं और वे दो पंक्तियों में खड़े होते हैं।

रंगमा जनजाति के लोगों का नृत्य अखु कहलाता है जो नाम उनके एक पारंपरिक उत्सव पर रखा गया।

मणिपुरी नगाओं की, ऐसे ही विषयों पर, नृत्यों की एक श्रृंखला होती है। सर्वाधिक प्रसिद्ध दो नृत्य हैं मावो (आवाह्न) और उटा नंप्पू (धरती माता का आवाह्न)।

मणिपुरी के कबुई, फसल कटाई के समय फेइचक नृत्य करते हैं: यह 'फसलों की साम्राज्ञी' के लिए प्रार्थना से आरंभ होता है, फिर प्रसन्नता परित्याग का एक नृत्य होता है।

टंडन फेइबेक, कबुई जनजाति के लोगों का एक अन्य प्रसादक नृत्य है। यह एक मिश्रित नृत्य है जिसमें युगल गोलाकार नृत्य करते हुए हाथ झुलाते हैं।

पंसोलम (चक्रवात) कबुई जनजाति के लोगों का एक विशिष्ट नृत्य है जिसे जनवरी में एक वार्षिकोत्सव में किया जाता है। इसके भिन्नताकारी लक्षण हैं फुर्तीले मुखर संचालन, गति, उत्तेजक, तीव्र चक्रवात या एक रथ के तीव्र गति से घूमते पहिए के समान होते हैं। सिर्फ कबुई महिलाओं का नृत्य ही थोड़ा भिन्न प्रकृति का है।

फसल बुआई और कटाई से संबंधित सर्वाधिक विकसित और संरचित नृत्यों में नगालैण्ड के अंगामी नागाओं का नृत्य है। जब धान की कुटाई शुरू होती है तो एक धार्मिक अनुष्ठान होता है जिसे नानु कहते हैं। अन्य नगा नृत्यों की तरह, यह एक धीमी गति से आंरभ होता है और संख्या 8 (आठ), समानांतर रेखाओं और सर्प जैसी आकृतियों के कई नृत्यपरक प्रारूप बनाए जाते हैं, फिर अंततः यह एक चतुर्भुजाकार प्रारूप के साथ समाप्त हो जाता है।

एक अन्य नृत्य 'थेकुआंगी गेन्रा' के अवसर पर किया जाता है। वह एक ऐसा समारोह है जो खेतों में धान रोपाई के अवसर को प्रदर्शित करता है। नर्तक

दो संकेन्द्रित गोल दायरे बनाते हैं, जिसमें लड़कियां अंदर के गोल दायरे में और लड़के बाहरी गोल दायरे में होते हैं। नृत्य के अंत के समय लड़कियां और लड़के एक-एक जोड़े में, अन्य के द्वारा बनाई गई संरचना के मध्य से चल कर, चले जाते हैं।

लुशाई पर्वतों के मिजो नगा एक नृत्य करते हैं जो इनमें से किसी भी श्रेणी में नहीं आता। यह मिजोरम और मणिपुर की अन्य गैर-नगा आदिवासी जनजातियों द्वारा भी किया जाता है। एक समय में यह मृत्यु पर समारोह में किया जाता था, किंतु आज यह पूर्णतः धर्म-निरपेक्ष है। इसमें चार लंबे बांस एक दूसरे पर आड़े-तिरछे रखे जाते हैं। इस प्रकार जो चतुर्भुज बनता है उसे बासों के सिरों पर बैठे पुरूषों द्वारा ढोल की थाप पर खोला और बन्द किया जाता है। जब यह बंद हो तो नर्तक उछल कर एक पैर बाहर रखता है और जब खुलता है तो दूसरा पैर अंदर। ढोल की तेज होती गति और बांस के डंडों की थपथपाहट (या ठकठकाहट) पर जब दो या अधिक व्यक्ति नृत्य करते हैं तो यह नृत्य बड़ा जटिल हो जाता है।

फिलिपीन और थाईलैण्ड में दूर दराज के मोगप में इसी प्रकार का एक नृत्य किया जाता है जिसमें इसी प्रकार बांस रखे जाते हैं।

विभिन्न अन्य जनजातियों के अन्य नृत्य अनुष्ठानिक, फसल कटाई और सामाजिक नृत्य की श्रेणी में आते हैं।

मेघालय की खासी जनजाति का वसंत के आगमन को चिन्हित करने का एक विशेष नृत्य है जिसे नेंवक्रेम कहते हैं। इसका विषय भक्तिप्रद होता है और इसमें एक अच्छी फसल के लिए कृषकों द्वारा थेलन नामक सर्प देवता को धन्यवाद अर्पित करने के लिए प्रार्थना किए जाते प्रदर्शित किया जाता है। इस नृत्य में सिर्फ अविवाहित पुरूष और महिलाएं भाग लेती हैं।

वांगला, गारो आदिवासीय जनजाति के लोगों का विशिष्ट नृत्य है। यह फसल कटाई के समय का नृत्य है जो पुरूषों और महिलाओं दोनों ही के द्वारा किया जाता है। पुरुष बड़े-बड़े ढोल पीटते हैं और बांसुरी और सींगों के बने भोंपू बजाते हैं।

लाहा, जैंतिया पर्वत पर बसे लोगों का एक धार्मिक नृत्य है। यह रंगकिट देवी की कृपा प्राप्ति हेतु किया जाता है। यह एक मिश्रित नृत्य है।

कई अनुष्ठानिक नृत्य खेराई के समारोहों पर किए जाते हैं जो नबम्बर माह में पड़ता है। खपरी-सिप-नई महिलाओं का एकल नृत्य है जिसे दुआदिमी या देवधनी (ईश्वर को समर्पित) कहते हैं। वह एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ में एक कपड़ा लेकर नृत्य करती है। खराई अनुष्ठान पूरी रात चलता है। नृत्य के अंत में, धान के खेतों के रखवाले, मैनव की एक प्रतिमा के साथ एक शोभायात्रा निकाली जाती है। खेराई अनुष्ठानों में जो अन्य नृत्य किए जाते हैं वे हैं: दाओथाई-लांग-नई और बाराई-मासा-नई।

एक अन्य अनुष्ठानिक नृत्य बुद्ध नामक एक अन्य देवता का आवाह्न करता है। वे शिव का एक रूप हैं किंतु नागफनी के एक पौधे के रुप में उनकी पूजा होती है। नृत्य, 'हैडांग गिट' नामक एक लम्बी कथा के गायन से आरंभ होता है जो बुद्ध और उनकी सहचरी बुधि का आवाह्न करता है। उन्हें क्रमशः बाथों या बाथन, बाथुस ब्राई और बाथु सिबराई, और भल्ली और भल्ली बुधि कहा जाता है।

सर्प देवी मनसा और वर्षा के एक देवता की आराधना से संबंधित कुछ अन्य अनुष्ठानिक नृत्य भी होते हैं। भाव-समाधि और जादू टोना इन सभी अनुष्ठानिक नृत्यों में निहित हैं।

बोडो आदिवासीय जनजाति के लोगों के अधिकांश विख्यात नृत्य फसल कटाई के आस पास घूमते हैं। लड़कियों का प्रसिद्ध बागुरूम्बा होता है।

माई-गाई-नाई एक मिश्रित नृत्य है जिसमें पुरूष भाले लिए रहते हैं और महिलाए गगरियां।

अन्य मनोरंजनकारी नृत्य पशुओं और पक्षियों की गतिविधियों और खेतों की मेड़ बनाने और पेड़ काटने के रोजमर्रा के कार्यों को दर्शाते हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

पशु और पक्षी नृत्य :

(क) गराई-डबराई-नई : घोड़ों पर युद्ध नृत्य

(ख) न्यूलाई-गोले-नई : लंबे कदमों और चक्कर खाने के द्वारा परिलक्षित नेवला नृत्य

(ग) गन-दौला-बा-नई : कीड़े पकड़ने का नृत्य

दैनिक जीवन के नृत्य :

(क) सन-गालोई-बा-नई : यह नृत्य एक सीमा रेखा पर दो पक्षों के मध्य विवाद दर्शाता है।

(ख) सखू-ली और खइजाम-फनई : क्रमशः महिलाओं और पुरुषों के तलवार नृत्य।

डिमासा कचारी, कचारी आदिवासीय जनजाति का नृत्य है जो लड़कों और लड़कियों द्वारा पारंपरिक वेशभूषा में उत्सव के अवसरों पर किया जाता है। यह फसल कटाई के बाद के एक उत्सव बासु का एक आवश्यक भाग है। यह मेरि और खरम नामक दो वाद्य यंत्रों की संगत में किया जाता है। इस नृत्य के विभिन्न रूप हैं: वैदिमा, जरबा, आजोफिनबा, दैनसले लाइबा, इत्यादि।

मिजोरम के लेखर, पखुपिला (घुटनों पर नृत्य) करते हैं जो तब किया जाता है जब झूम की कटाई हो जाती है।

पाजुटावला नामक एक अन्य नृत्य मक्के की कटाई का उत्सव मनाने के लिए किया जाता है।

अरूणाचल प्रदेश का याक नृत्य, पिता द्वारा घर से निकाले गए एक व्यक्ति के अजीब अनुभवों को दर्शाता है जिसकी अंततोगत्वा एक याक से भेंट हो जाती है।

मृग नृत्य में लोगों के मन में पशुओं के प्रति प्रेम को मार्मिक ढंग से चित्रित किया जाता है।

मोमपा आदिवासीय जनजाति के सिंह और मोर नृत्य में एक मनोरंजन है। यह दो समूहों द्वारा किया जाता है, प्रत्येक में चकत्तेदार जांघिया और और स्कर्ट की वेशभूषा में दो ढोल वादक होते हैं, वे मुर्गों के सिर से मिलते जुलते मुखौटे पहनते हैं।

एक अन्य नृत्य में, गांव से एक मील दूर एक विशेष मंच बनाया जाता है जिसे 'चम' कहते हैं। 'चम' के निकट नर्तक रांग देवता का आवाह्न करते हैं। नृत्य नपे तुले कदमों से बड़ी ही पवित्रता और गंभीरता के साथ किया जाता है।

बुइया सोदन नृत्य विवाह और अन्य समारोहों से संबद्ध एक सामाजिक नृत्य होता है।

नाँग्रांग, अरूणाचल प्रदेश के तंगसा आदिवासीय जनजाति के लोगों का फसल कटाई नृत्य है जो पूबी या मोरी उत्सव के दौरान किया जाता है। यह सामान्य धूमधाम और भव्यता के साथ आरंभ होता है और कई घंटों तक चलता है।

चालो और रांगलू, तिराप के नूट लोगों का विशिष्ट नृत्य है जो अक्टूबर माह में विवाह के अवसर पर और यूले समारोह के दौरान भी किया जाता है। यह सिर्फ पुरूषों द्वारा और सामान्यतः रात में किया जाता है। रांगलू नृत्य, बाजरे की कटाई पूरे हो जाने के बाद किया जाता है।

अरुणाचल प्रदेश के सियांग जिले के मिंडयांग लोगों का एक नृत्य सर्वाधिक रंगबिरंगा नृत्य है, जो सामान्यतः फसल कटाई के बाद या सफल शिकार के बाद या मिंडयांग गांव में एक सम्मानित अतिथि के स्वागत में किया ज़ाता है।

इगु, अरुणाचल प्रदेश के लोहित जिले के इदु मिशमी लोगों का प्रसिद्ध पांरपरिक नृत्य है। यह एक पुजारी या पुजारिन द्वारा चार अवसरों पर किया जाता है: (क) बीमार व्यक्ति को ठीक करने के लिए, (ख) अंत्येष्टि में, (ग) मेसालाह समारोह के संबंध में, तथा (घ) राइ उत्सव पर।

त्रिपुरा के कालोई का एक प्रसिद्ध नृत्य है मइमत। यह नए चावल के पकाए जाने संबंधित समारोह पर किया जाता है। मारसुम आदिवासीय जनजाति का ऐसा ही एक नृत्य होता जिसे होइ हुग नृत्य कहते हैं।

त्रिपुरा के रियंग लोगों में हजगिरि नामक एक नृत्य किया जाता है जिसका नाम देवी लक्ष्मी के एक विशेष रूप पर पड़ा जिनकी उपासना झूम खेती के समय

किया जाता है। यह सामान्यतः भाद्रप्रद (अगस्त-सितंबर) माह में किया जाता है जब फसल कटने को लगभग तैयार होती है। मंत्रों का उच्चारण और पशुओं और पक्षियों की बलि, अनुष्ठान का एक महत्वपूर्ण भाग होता है।

लेबांग बोमानी, त्रिपुरा का एक ऐसा ही नृत्य या खेला होता है-बांस के टुकड़े आपस में बजाकर एक विशेष ध्वनि उत्पन्न कर कीड़े पकड़ने का नृत्य है। यह मिश्रित नृत्य है।

कीट लाम नामक एक झींगुर नृत्य, झींगुर की गतिविधयों को दर्शाता है। यह सामान्यतः फसल कटाई के समय किया जाता है। यह मिश्रित नृत्य है।

खांगपिलाओम नृत्य भी काल धनेश पंक्षी नामक जंगली पक्षियों की गतिविधयों को चित्रित करता है। पुरूष नर्तक नृत्य क्षेत्र में पहले प्रवेश करते हैं, उसके बाद महिला नर्तकियां जो एक गोलाकार दायरे में प्रवेश करती हैं।

कोइरांग का लांपक नृत्य एक बाघ के वध की नकल करता है।

पांयथे आदिवासीय जनजाति का जांगता लाम शत्रु पर विजय को सांकेतिक करता एक विशेष नृत्य है। फेइफिट लाम नामक नृत्य एक योद्धा की शिकार में सफलता के बाद किया जाता है।

चाव लाम, चैंग उत्सव पर, अच्छी फसल होने पर (सामान्यतः कटाई के बाद) किया जाता है।

वाइखाँग लाम एक संस्मारक नृत्य है। 'वाइखाँग' शब्द 'ढोल' के लिए उपयोग किया जाता है। अन्य नृत्य हैं: लाम-लाम या प्रवेशद्वार नृत्य, और शव-यात्रा पर किया जाने वाला दार-लाम।

चाँग चैन लाम, मणिपुर की आदिवासीय जनजातियों का सर्वाधिक प्रसिद्ध नृत्य है। यह सामान्यतः चैंग या खुअंगचौरी जैसे समारोहों पर किया जाता है, जिसके बाद लगातार सात दिनों तक एक बहुत बड़ा भोज होता है।

थबल चोंगबा, चांदनी रात में किया जाने वाला एक मणिपुरी नृत्य है। संभवतः यह एक पूर्व-हिंदू परंपरा का उत्तरजीवन है। ढोल और संगीत की संगत में पुरुष और महिलाएं हाथों में हाथ डाले नृत्य करते हैं।

रथ यात्रा जैसे उत्सवों पर कई एक ताली बजाकर करने वाले नृत्य किए जाते हैं, जिन्हें 'खुमहक इशेइस' कहते हैं। जब यह महिलाओं द्वारा किया जाता है तो इन शब्दों से पूर्व 'नुपि' जोड़ दिया जाता है, और जब पुरूष करते हैं तो 'नुपा' शब्द जोड़ दिया जाता है।

मेइती लोग कई पुरूषोचित नृत्य करते हैं। भाले, तलवार और ढाल लेकर किए जाने वाले ये नृत्य प्रकृति में युद्ध-विषयक होते हैं। उन्हें 'थंग हइबा' और 'थकाओ सइबा' नृत्य कहते हैं। अन्य महत्वपूर्ण नृत्य हैं, मइबा (पुजारी) और मइबी (पुजारिन) नृत्य। लइत्तरोबा उत्सव के दौरान शिव और पार्वती की धार्मिक कथा का मंचन एक विशिष्ट मणिपुरी शैली में किया जाता है। शिव होते है 'नाँगपॉक निंगथाओ' और पार्वती 'पंथोइपी' होती हैं।

मानवता का आरंभ एक क्रम में प्रस्तुत किया जाता है जिसे 'चुंगखोंग जगोई' कहते है, जिसमें नर्तक 'सिदाबा' और 'लेइमॉरान सिदाबी' की किंवदन्ती का पुनः सृजन करते हैं, जो मानवता के धार्मिक पूर्वज हुए हैं। 'पाम यनूबा' और 'फी शाबा' बुआई, कपास की कटाई और वस्त्र पहनने संबंधी विभिन्न चरणों को पुनः सृजित करते हैं।

खेंजाँग पौसा शाबा नृत्य, एक धन्यवाद देने वाला नृत्य है।

अन्य महत्वपूर्ण नृत्य हैं : रास लीला, बसंत रास, कुँज रास, महा रास, दिवा रास, नटना रास, अष्ट-गोपी-अष्ट श्याम रास।

बिहार एवं झारखण्ड के नृत्य

बिहार की आदिवासीय जनजातियों में शिकारी, खानाबदोश, अर्ध-खानाबदोश, गीली और सूखी फसलों के बसे हुए कृषक आदि समिलित हैं। कर्वल लोग, खानाबदोश भिक्षुक होते हैं। महली और तुरी लोग व्यवसाइक डलियां बनाने वाले और बड़े अच्छे शिकारी होते हैं। गोराइल लोग एक प्रोटो-ऑस्टोलाइड जनजाति होती है। सओरस लो बिहार और उड़ीसा दोनों में पाए जाते हैं।

अन्य आदिवासीय जनजातियां हैं : हो, ओराँव, एहुमिज, खरिया और संथाल।

हो आदिवासीय जनजाति के लोगों के नृत्य हैं :

* कर्मा (उर्वरता संबंधी अनुष्ठानों का एक भाग)
* मघा (नव वर्ष की घोषणा हेतु नृत्य)
* बेहा (पूर्वजों को अर्पण हेतु नृत्य)
* हेरो (फसल बोने और काटने से संबंधित)
* अनन्दी (विवाह के अवसर पर नृत्य)

ये सभी मिश्रित नृत्य हैं।

ओराँव जनजाति के नृत्य :

वसन्त में सरहुल उत्सव के अवसर पर, ओराँव आदिवासीय जनजाति के लोग जादुर नृत्य करते हैं। इनका नृत्यकला संबंधी वर्णन हो लोगों की नृत्यकला से मिलते जुलते हैं।

जैता सामाजिक अवसरों पर किया जाता है।

संथाल जनजाति के नृत्य :

वे छोटा-नागपुर में संथाल परगना के निवासी हैं। वे पैदाइशी नर्तक और संगीतकार होते हैं। नृत्य के लिए चार महत्वपूर्ण पर्व होते हैं, माघ पर्व, दस्सई पर्व, बा या बाहा पर्व और कर्मा।

माघी, माघ संक्रान्ति के दिन मनाई जाती है : यह बड़-पहाड़ को चावल अर्पित करके आरंभ किया जाता है। इसके बाद माघी नृत्य होता है। यह एक मिश्रित नृत्य है।

दस्सई पर्व, अश्विन मास में दुर्गा पूजा के समय मनाया जाता है। पुरूष, मोहल्ला-मोहल्ला घूम घूम कर दसई नृत्य करते हैं। अन्य नृत्य हैं, झिका, लाग्रेन एनेक, दोन एनेक, धंग, रिजई लागी, इत्यादि, जो सभी मिश्रित नृतय हैं। गोलवारी और पैकाहा, युद्ध विषयक नृत्य हैं।

खरिया आदिवासीय जनजाति के नृत्य :

ये पर्व झारखण्ड के रांची जिले में कोएल और शंख नदियों के तट पर रहते हैं।

उनके प्रसिद्ध नृत्य है : हरीश, किनभर हेलका और जदुर। ये सभी मिश्रित नृत्य है।

लहसुआ, सामान्यतः दोध खरिया लोग नवंबर-दिसंबर में करते हैं। यह एक मिश्रित नृतय है।

कोयल नृत्य, खरिया नृत्य की एक प्रसिद्ध विविधता है जो गांव के अखाड़ों में किया जाता है। लड़के और लड़कियां एक दूसरे का हाथ पकड़ कर पंक्तियों में नृत्य करते हैं।

कश्मीर के आदिवासी नृत्य

कश्मीर के वट्टल और साथ साथ गुज्जर और बकरवाल जनजाति के लोग खानाबदोश होते हैं जो एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र जा कर बसते रहते हैं। इनमें से प्रत्येक आदिवासीय जनजाति का अपने विशेष नृत्य और संगीत होता है।

दुमहल नृत्य, वट्टल आदिवासीय जनजाति के पुरूष करते हैं। एक शुभ स्थान को नृत्य के लिए स्थाल के रूप में चुना जाता है। यह विशेष अवसरों पर किया जाता है, जैसे निशात बाग, अनंतनाग और अच्छबल में गुलाबों का उत्सव।

कुछ नृत्य और नृत्य-नाट्य, पाथेर और भाण्ड की श्रेणी में आते हैं। जशान पाकेर, घूमते चारणों और व्यवसायिक नर्तकों द्वारा किया जाता है। यह सामान्यतः एक संत के उर्स के अवसर पर किया जाता है।

अन्य नृत्य है बचा नग्मा (महिला की भूमिका निभाता एक लड़का) जो भाण्ड और पाथेर नृत्यों से बहुत मिलता जुलता है। यह एक व्यवसायिक महिला और नर्तकी, हफीज़ा के अधिक पुरस्कृत उत्कृष्ट संगीत और नृत्य का एक प्रसिद्ध रूपान्तर है। हफीजाएं वही होती हैं, जो देवदासियां और गणिगाएं होती है। यह महिला कला को प्रस्तुत करने का एक पुरूष प्रयास मात्र होता है।

केरल के आदिवासी नृत्य

केरल में कालानदी, कुण्डुविदान, कारिमपलन, पल्लिवर, पनिपन, इरूला, कावर और चेरूमर जैसी आदिवासीय जनजातियाँ श्रेष्ठ नर्तक होती हैं।

नृत्यों के लिए उत्सव कई होते हैं, खाद्‌य सामग्री जुटाने की एक सफल ऋत, विशेषकर शहद एकत्रित करने की, एक सुअर या मृग का शिकार, शिवरात्रि उत्सव या श्राद्‌ध मनाना। नृत्य संरचनाओं में गोलाकार होते हैं और संगीतमय टेकों और तीव्र आवर्ती गतिविधियों और संचालनों पर निर्भर करते हैं।

एलेलाकरडि, इरूला जनजाति के लोगों का ऐसा ही एक नृत्य होता है। यह नाम 'एलेला' के आर्वती टेक से लिया गया है।

थपोल्लन नामक एक नृत्य काली को समर्पित है। इसमें, नृत्य करते समय वे ढाल पकड़े रहते हैं। नृत्य की अवधि में कई जटिल प्रारूप बनाए जाते हैं।

करीमपलन जनजाति के लोगों के नृत्यों की कर्नाटक के पिशाच नर्तकों के साथ प्रबल संबद्धता है। वे काला जादू पिशाच नृत्य के लिए प्रसिद्ध हैं।

कोइथू नृथम, (मुख्यतः चेरूमर) खेतिहर मजदूरों का एक मिश्रित नृत्य होता है जिसमें पुरूष और महिलाएं दोनों ही भाग लेते हैं। फसल कटाई के बाद, गंवार युवा, निश्चिंत और प्रसन्न, उल्लास में नृत्य करते हैं।

चेरूमर काली उन्हीं के द्वारा किया जाने वाला एक छड़ी नृत्य है, जो केरल के अन्य कालियों से मिलता जुलता है।

मोपलाह के लोगों, अधिकांशतः केरल के मुसलमानों, के गीत ओज और उत्साह से परिपूर्ण होते हैं, जिन्हें एक व्यापक नाम, मोपलाह पट्‌टू से जाना जाता है।

थप्पा कली में, पुरूष बाँए हाथ में थप्पू पकड़तें है, दो कतारों में खड़े होते हैं और दाहिने हाथ से वाद्‌य यंत्र बजाते हैं।

ढफ, महाराष्ट्र की लिक्षिमी जैसी ही होती है और विभिन्न स्तरों पर इसे पकड़ कर स्थान पर छड़ियों पकड़ी जाती हैं।

कोलकाली या मोपलान काली में ढफ के स्थान पर छड़ियां पकड़ी जाती हैं।

मोपला के सदृष्य ही एक नर्तक थप्पू नामक वाद्य यंत्र पकड़ता है, उसे थप्पूमेलकली कहते हैं। यह फूर्तीले कदमों, उछालों, बैठने की अकंड स्थितियों, भंवरदार गतिविधियों और कूदों के लिए उल्लेखनीय है।

कोट्टायम के पुलवार, कई बड़े पुरातन युद्ध विषयक नृत्य करते हैं। प्रत्येक नर्तक एक हाथ में ढाल और दूसरे में एक छड़ी पकड़ता है। आजकल, यह नृत्य ओणम और अन्य ऐसे अवसरों पर किए जाते हैं।

वेलवकली, प्राचीन नृत्य पुलरकली का अधिक विकसित रूप है। यह मुख्यतः नायर लोगों द्वारा किया जाता है। यह मार्च/अप्रैल में वार्षिक पंगुनी (फागुनी) उत्सव के समय और तिरूवनंतपुरम में प्रसिद्ध श्री पद्मनाभस्वामी मंदिर के सामने उत्सवम के समय भी किया जाता है। यह महाभारत के युद्ध की पुनर्रचना करता है जिसमें कौरवों का प्रतिनिधित्व करते नर्तक होते हैं और लकड़ी से बनी प्रतिमाएं पाण्डवों का।

अन्य महत्वपूर्ण नृत्य हैं : पाणिवर्कली, परायंकली, पेथिवर्कली, पुल्लियट्टम तियट्टम और पयन्थिरा पनंकली।

तियट्टम, व्यवसाइक ओझा लोगों द्वारा एक अनुष्ठानिक नृत्य का प्राचीन रूप है। नर्तक भूत की तरह की वेषभूशा में तब तक नृत्य करता रहता है जब तक कि पीड़ित व्यक्ति का बदला नहीं चुक जाता और बुरी आत्मा उस व्यक्ति का शरीर नहीं छोड़ देती, जिसकी भूमिका वह व्यक्ति निभा रहा होता है।

थेरवट्टम, तियट्टम का एक अधिक जटिल रूप है। पेरयंकली, परायणों का एक भगवती संप्रदाय नृत्य है। प्रत्येक परायण गांव में एक भगवती मंदिर होता है जहां ये नृत्य किए जाते हैं। इनमें से कइयों की परिणति एक मूर्छा-नृत्य में होती है।

कणियाकली, कोचिन में किया जाता है और शिव, पार्वती और सुब्रह्मण्यम् को समर्पित है।

पणकली, पणन् लोगों द्वारा किया जाता है।

कोलम-थुल्लल भी एक भगवती संप्रदाय नृत्य है।

पुल्यरकली और उएलकली ऐसे नृत्य है जिसमें से कथकली ने कुछ लक्षण स्वयं में समाहित किए हैं।

परिच कली और ज़िकर, ढाल और तलवार नृत्य हैं। कुछ अन्य नृत्य हैं कुडिवट्टम, मोहिनीअट्टम, ओटणटुल्लल (जो एक निर्धन व्यक्ति की कथकली है)। तोलपाय कूथु, केरल का छाया नृत्य है जो वर्ष में एक बार केरल में मंदिर उत्सव के आसपास किया जाता है। राम और रावण की कथा सुनाने वाले गाथा गायक या तो तमिल गेटि तुलायर होते हैं या फिर नायर कवि। नृत्य और नृत्य-नाट्य के अन्य पारंपरिक रूपों के साथ उनकी बड़ी समानता होती है।

अध्याय-6

बौद्ध धर्म के पवित्र स्थल
(Sacred Places of Buddhism)

गौतम बुद्ध ने अपने पदचिह्न भारत की भूमि पर और अपनी छाप सम्पूर्ण मानव जाति की आत्मा पर छोड़ी। उनकी उपस्थिति द्वारा प्रतिष्ठित स्थान श्रद्धापूर्वक पूजे जाते हैं। निर्वाण में प्रवेश करने से पूर्व बुद्ध ने स्वयं उन चार स्थानों के विषय में बात की है जहां की यात्रा एक भक्त को विश्वास और आदर के साथ करनी चाहिए : लुम्बिनीवन जहां तथागत का जन्म हुआ; गया (बोध-गया) जहां उन्हें संपूर्ण ज्ञान प्राप्त हुआ; इसिपतना (सारनाथ) का मृग आश्रम स्थल जहां उन्होंने पहली बार विधान की घोषण की और कुशीनगर जहां वे महापरिनिर्वाण की स्थिति को प्राप्त हुए। उन्होंने इन स्थानों की तीर्थयात्रा के पुण्य को विस्तारपूर्वक वर्णित किया और घोषणा कर दी कि, "जो ऐसे तीर्थस्थानों पर मृत्यु को प्राप्त होंगे, वे मृत्यु के बाद स्वर्ग के सुखकारी राज्य में पुनर्जन्म लेंगे"।

उपरोक्त चार के अतिरिक्त अन्य चार तीर्थस्थल, जो मिल कर 'अट्ठहमहाथानानि' (अष्टमहास्थानानि) या आठ पवित्र स्थल बनते हैं, उन चार चमत्कारों के दृश्य थे जो प्रभु-कृपा-प्राप्त ने किए। यद्यपि आरंभिक बौद्ध ग्रंथों में विशेषतः सम्मानित स्थलों के रूप में यह विशिष्टतः उद्धृत नहीं है, यह स्थान स्वामी के साथ अपनी निकटता और उनके आसपास उपजी किवंदन्तियों के कारण पवित्रता में फले-फूले। इनमें से एक स्थान है श्रावस्ती, कोशल की राजधानी, जहां किवंदन्ती के अनुसार बुद्ध में तीर्थिका मत के मुखिया पुराण कश्यप को चकित कर देने के लिए अपनी चमत्कार शक्ति का एक प्रदर्शन किया था।

इस चमत्कार के बाद बुद्ध, पूर्व बुद्धों की पंरपरा के अनुसार तैंतिस देवताओं के स्वर्ग को आरोहित हुए; अपनी मृत माता को अभिधम्म का प्रवचन दिया और इंद्र के वास्तुकार द्वारा निर्मित तीन सीढ़ियों के द्वारा पृथ्वी पर एक स्थान संकास्य पर उतरे। मगध की राजधानी राजगृह, वह दृश्य था जहां बुद्ध ने उस नीलगिरि नामक क्रुद्ध पागल हाथी को वश में करने का तीसरा चमत्कार किया था जिसे उनके ईर्ष्यालु चचेरे भाई देवदत्त नें उन्हें मारने के लिए छोड़ा था। चौथा चमत्कार वैशाली में हुआ जब बुद्ध को कुछ बन्दरों नें शहद से भरा एक कटोरा दिया था। ये, और जीवन की अन्य घटनाएं आरंभिक बौद्ध कला में प्रतिनिधित्व के मनचाहे विषय में, और उपरोकत वर्णित आठ पारंपरिक घटनाएं गुप्तकाल से ही मूर्तिकला में रूढ़िबद्ध रचनाएं बनीं। पूर्वी भारत और नेपाल की आरंभिक मध्यकालीन हस्तलेख चित्रकलाओं में ऐसे दृश्य बार-बार चित्रित किए गए हैं।

लुम्बिनी :

लुम्बिनी, जहां प्रभु-कृपा-प्राप्त पैदा हुए थे, बौद्ध ग्रंथों के अनुसार कपिलवस्तु से बारह मील की दूरी पर स्थित था। यह कहा जाता है कि जब प्रसवकाल निकट आ रहा था तो मायादेवी ने देवदहा में अपने पिता के घर जाने की इच्छा की। लुम्बिनी उपवन पहुंचने पर साल वृक्ष की एक शाखा को पकड़ने के लिए अन्होंने अपना हाथ बढ़ाया जो झुक गई और जब वे उसे पकड़े हुए थीं तो खड़े-खड़े ही उन्होंने शिशु को जन्म दिया। देवताओं ने नवजात शिशु का स्वागत किया और उनके हाथों वह मनुष्यों तक पहुचा। भूमि पर उतर कर वह सीधा खड़ा हुआ, सात कदम लेकर उसने विजेता की भांति घोषणा की, "मैं विश्व का अग्रणी हूँ"। लुंबिनी से बालक कपिलवस्तु लाया गया। बुद्ध के जन्म का दृश्य, सभी चरणों में भारतीय कला का एक प्रिय विषय रहा है और इस दृश्य का बारंबार प्रतिनिधत्व चित्रकला और शिल्पकला में किया गया हैं। लुंबिनी की पहचान रूम्मिनदेई से की गई है जो पडेरिया से एक मील उत्तर और भगवानपुर के दो मील उत्तर में उसी नाम की नेपाली तहसील में, जो उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के उत्तर में है, स्थित है।

रूम्मिनडेई एक रमणीय स्थल है और अब भी यहां पर एक स्तंभ है जो अशोक के अभिषेक के बीस वर्ष बाद इस स्थान पर तीर्थयात्रा के स्मारक हेतु एक अभिलेख प्रस्तुत करता है। अशोक ने कहा "यहां बुद्ध का जन्म हुआ था", और यह लेख इस स्थल की संदेहरहित पहचान करता है। स्तंभ के अतिरिक्त, पवित्र ग्रंथों में वर्णित भगवान के जन्म को दर्शाती एक प्रतिमा समेत यहां एक पौराणिक मंदिर है। इस बात में कोई संदेह नहीं कि इसकी अक्षय पवित्रता के कारण इस स्थान का महत्व बढ़ा और चीनी तीर्थ यात्रियों ने यहां ऐसे कई प्रतिष्ठानों का एक वृत्तांत छोड़ा जो फले-बढ़े। यह संभव है कि कई स्थानों पर व्यवस्थित उत्खनन ऐसे कई स्मारकों का पता लगा सकता है जैसा कि चीनी तीर्थयात्रियों ने वर्णित किया। इस स्थल पर कुछ उत्खनन नेपाल सरकार द्वारा कराए गए।

बोध-गया :

बौद्ध धर्म के इतिहास में अगली महान घटना वह है जहां शाक्य वंश के युवराज को परम ज्ञान (बोधि या संबोद्धिहि) प्राप्त हुआ। यह स्मरणीय घटना गया के निकट, अरूविला (उरूवेला) में घटी जहां वे एक पीपल के वृक्ष के नीचे ध्यान में बैठे। इसके पवित्र संबंधों के कारण यह स्थान बुद्ध गया (बोध-गया) और वृक्ष के नाम से जाना जाने लगा। जैसा कि उस अभिलेख में उल्लिखित है जो इस पवित्र स्थल पर तीर्थयात्रा पर अपने अभिषेक के दस वर्षों बाद आए अशोक ने खुदवाया। पौराणिक दिनों में इस स्थान को संबोधि के नाम से जाना जाता था। बौद्ध धर्म के लोगों को यह स्थान महाबोधि के नाम से भी ज्ञात है।

ज्ञानोदय के इस पवित्र स्थान ने निकट तथा सुदूर के भक्तों को अपनी ओर आकृष्ट किया और पवित्र वृक्ष और वज्रेसन, वह हीरक गद्दी, जहां गौतम ने विश्व की सारी इच्छाओं पर विजय प्राप्त किया और परम ज्ञान को प्राप्त किया, की बड़ी भक्तिनिष्ठा और ध्यान से देखभाल की गई। पवित्र मंदिर और राजकीय स्मारक सब ओर बनाए गए और चीनी तीर्थयात्री, ह्वेनसांग का वृतांत हमें इस स्थान के पूर्व वैभव की एक छटा दर्शाता है। पवित्र वृक्ष कई प्रत्यावर्तनों से हो कर गुजरा है और वर्तमान वृक्ष मूल बोधि वृक्ष के कई उत्तराधिकारियों में से एक है।

ये स्मारक शताब्दियों के अवधि काल में बनाए गए। वर्तमान पवित्र गौरवमय महाबोधि मंदिर का एक विशाल खर्चे पर पुनरूद्धार किया गया। अशोक ने, कथित रूप से, ज्ञानोदय के पवित्र स्थल पर एक मंदिर बनवाया और संभवतः यह वही मंदिर है जिसका आंरभिक बौद्ध कला में बारंबार प्रतितिधित्व किया गया। अशोक के मंदिरों का कोई अवशेष अब नहीं बचा है। पवित्र बोधि वृक्ष को घेरे हुए, इस मंदिर में एक कटघरे जैसी दीर्घा है, जो संभवतः एक समय लकड़ी का बना था और बाद में पत्थर का। मंदिर का इतनी बार जीर्णोद्धार हो चुका है कि इसके निर्माण की तिथि और इसके मूल वास्तुशिल्पीय रूप को निर्धारित करना कठिन है। ह्वेनसांग के वर्णन से यह प्रतीत होता है कि यह मंदिर 7 वीं शताब्दी ईस्वी में ही अपने वर्तमान आकार और परिदृश्य में उपस्थित था। यही भव्य मंदिर बर्मा में महाबोधि मंदिर का आदिप्ररूप प्रदान करता है।

बोध-गया का वर्तमान महाबोधि मंदिर लगभग 160 फीट ऊँचा है और इसमें एक सीधा सूचिस्तंभ है जिस पर एक स्तूप आरोपित है, हर्मिका और हती से परिपूर्ण, बांसुरी जैसी अमलिका समान निचला भाग और कोनों पर कोणीय-अमलकाएं जो सूचिस्तम्भ पर आरोह के विभिन्न चरणों को चिन्हित करता है। प्रवेश द्वारमण्डप, जो मूल मंदिर के बाद बना दिखता है, पूर्व में स्थित है। सूचिस्तंभ के चारों किनारों में से प्रत्येक कई स्तर और आले प्रस्तुत करता है, जबकि सामने के भाग में गर्भगृह में रोशनी के लिए एक ऊँची दुरिका है। सूचिस्तंभ के आधार पर एक बुर्ज उठता है जिसके चारो कोनों पर मुख्य मीनार की प्रतिकृति का एक छोटा रूप है। मंदिर में प्रभु-कृपा-प्राप्त की धरती को छूने की दशा में एक विशाल स्वर्ण से मढ़ी एक प्रतिमा है जो ज्ञान प्राप्ति की परम घटना का प्रतीक है। अनुयाइयों की भक्ति ने उन्हें एक भव्य चोला चढ़ा दिया है और उनके सिर पर एक छत्र भी है जो उनके धर्म के अधिराज्य को सूचित करता है। मंदिर के उत्तरी भाग के साथ-साथ धरातल के लगभग चार फीट ऊँचाई पर एक संकरा विहार चबूतरा है। यह "विचरण का मणि मंदिर" अथवा बुद्ध का विचरणस्थल (चंकमां) कहलाता है। कहते हैं यहाँ पर

ज्ञान प्राप्ति के बाद महान गुरू ने गहरे ध्यान में चहल-कदमी करते हुए एक सप्ताह बिताया था। उन स्थानों पर जहां उन्होंने चरण रखे, वहां वे शिल्पीय सज्जाएँ हैं जो उन चमत्कारिक मंजरी का प्रतिनिधित्व करती है जो, कहते हैं, उनके कदमों के तले उग आईं। इस विचरण स्थली के साथ-साथ और मंदिर के पश्चिम की ओर चलने पर हम पाते हैं बोधि वृक्ष और ज्ञानोदय का पवित्र स्थल, जो अब एक लाल बलुआ पत्थर से चिन्हित है, यह उस वज्रासन का प्रतिनिधित्व करता है जहां गुरू ने परम ज्ञान को प्राप्त किया।

मंदिर के आस पास कई अवशेष हैं। उनमें से बहुत महत्वपूर्ण है पत्थर के बाड़े के टुकड़े जो संभवतः मूल मंदिर को घेरे रहते थे। यह पत्थर का बाड़ा निर्माण के दो विभिन्न अवधिकालों का प्रतिनिधित्व करता है। आरंभ का ईसा से दो शताब्दी पूर्व और बाद का आंरभिक गुप्त काल। बाड़े के इन टुकड़ों पर रूचिपूर्ण नक्काशी अब भी है, जिनमें से शांति के रूप में इंद्र की और चार घोड़ों से खींचे जा रहे रथ पर सूर्य देवता की आकृतियां उल्लेखनीय हैं। चारों ओर फैली सुंदर शिल्पकला और सज्जामय मन्नत के स्तूप, इस श्रद्धेय मंदिर स्थल में आने वाले तीर्थयात्रियों और अतिथियों की प्रशंसामय दृष्टि अपनी ओर अब भी आकर्षित करते हैं।

सारनाथ :

महागुरू के जीवन की एक स्मरणीय घटना पवित्र इसिपटना या सारनाथ द्वारा प्रतिनिधित्व करती है जहां उन्होंने मृगवन के सखाओं को अपना प्रथम उपदेश दिया, जिसमें उन्होंने दुःखों और उन पर विजय प्राप्ति के साधनों का रहस्योद्घाटन पहली बार किया गया। इसे लाक्षणिक रूप से 'धर्मचक्र-प्रवर्तन' द्वारा वर्णित किया गया।

बौद्ध धर्म के उत्थान की आरंभिक शताब्दियों में, बौद्ध धर्म के अन्य पवित्र स्थलों की भांति, इस धर्म के संरक्षक सम्राट अशोक के समय से इस स्थान को प्रसिद्धि प्राप्त हुई। इस संतमय सम्राट ने स्मारकों की एक श्रंखला का निर्माण कराया,

जिसमें वह स्तंभ भी सम्मिलित है जिसमें निवासी भिक्षुओं और भिक्षुणियों को गिरजाधर में योजनाएँ बनाने के विरूद्ध एक चेतावनी का अभिलेख खुदवाया गया। चीनी तीर्थयात्रियों, फा-हियान और ह्वेनसांग ने इस स्थान की यात्रा क्रमशः 5 वीं और 7 वीं शताब्दी (ईसा पूर्व) में की, और वे इस महत्वपूर्ण स्थल के बारे में बहुमूल्य जानकारी छोड़ गए। जब वाराणसी से इस स्थल की ओर चलते हैं तो पहला आकर्षक चिह्न स्थानीय भाषा में चौखण्डी कहा जाने वाला ईटों का बना टीला है जिसके ऊपर एक अष्टभुजीय स्तंभ आरोहित है। यह टीला एक छतदार तहखाने के अवशेषों का प्रतिनिधित्व करता है जो उस स्थल को चिह्नित करने के लिए बनवाया गया जहां गया से इसिपटना जाते समय बुद्ध पहली बार अपने पांच पूर्ववर्ती सखाओं से मिले जो जल्द ही उनके धर्म को स्वीकारने वाले थे। यह स्तूप गुत काल का है। शिखर पर एक अष्टभुजीय मीनार एक बहुत बाद का ढांचा है, जिसे अकबर ने अपने पिता हुमायूं के इस पवित्र स्थल पर आगमन की याद में 1588 ईस्वी में बनवाया।

इसके आधा मील उत्तर की ओर, भूतपूर्व महानता के दिनों की आकर्षक इमारतों से सज्जित मृगवन का स्थल है। अब ये सब खण्डहर है, सिवाय अशोक के बनवाए एक भग्नप्राय ढाँचे धमेख स्तूप के जो आसपास के स्तर से लगभग 150 फीट ऊंचा है।

ह्वेनसांग द्वारा देखे गये अशोक स्तूप की पहचान एक बड़े ईंट के बने स्तूप के खण्डहरों से की गई है। इसे आम तौर पर जगत सिंह का स्तूप कहा जाता है, जो नाम वाराणसी के राजा चेत सिंह के दीवान जगत सिंह के नाम पर पड़ा, जिन्होंने 1794 में वाराणसी में एक बाजार के लिए ईंटों की आवश्यकता के कारण तुड़वा दिया। इस अवसर पर खोदकर निकाले गए स्मृतिचिन्ह, शताब्दियों की विस्मृति के बाद इस पवित्र स्थल को पुर्नजीवित करने के लिए जिम्मेदार थे। ढांचा, जैसा अब दिखता है, एक उत्तरोत्तर वृद्धि एवं योग का परिणाम है। इसका सबसे अंदर का भाग संभवतः अशोक के काल का है। इस स्तूप का स्थल संभवतः वह स्थान चिन्हित करता है जहां बुद्ध ने पहला प्रवचन दिया और विधान का चक्र-

(धर्मचक्र) चलाया। थोड़ा सा उत्तर की ओर अशोक स्तंभ का टूटा खण्ड पड़ा है, जिसका भव्य सिंह खम्भ-मस्तक (Lion Capital) अब पास के पुरातत्व संग्रहालय में देखा जा सकता है। पूर्व की ओर एक मंदिर, मुख्य मंदिर के खण्डहर देखे जा सकते हैं, जो यदि पहले का नहीं तो गुप्त काल का होगा। मंदिर पूर्व, पश्चिम, उत्तर दक्षिण में उप प्रार्थनागृहों समेत सामान्य चौकोर योजना का था, जिसके पूर्व में मंदिर का प्रवेशद्वार है। यह असंभव नहीं है कि एक मध्य स्थिति लिए हुए यह स्मारक, ह्वेनसांग द्वारा देखे गए ऊंचे मंदिर के अवशेषों का प्रतिनिधित्व करता हो। दक्षिणी प्रार्थनागृह में खुदाई करने से अशोक काल का एक महत्वपूर्ण स्मृतिचिन्ह मिला जो छेनी से काटी और चमकायी गयी एक अखण्डित चौकोर पट्टिका थी। यह पट्टिका मूल रूप से संभवतः छत्रावली के चारों ओर अशोक स्तूप के ऊपर रखी हुई थी और बाद में पूर्व की एक महत्वपूर्ण स्मृतिचिन्ह के रूप में अपने वर्तमान स्थल पर स्थानांतरित कर दिया गयी।

मुख्य मन्दिर के उत्तर और दक्षिण में साम्राज्यीय स्थापनों के अवशेष हैं। मठ विहार, चाहे छोटे रहे हों या बड़े, सभी समान योजना के थे। आवासीय कक्ष एक खुले चौक के चारों ओर बने थे। गोविन्द चंद्र की रानी कुमार देवी द्वारा 12वीं शताब्दी ईस्वी के पूर्वाध में स्थापित सद्धर्मचक्र जिना विहार, मुख्य मंदिर के उत्तर में स्थित ऐसे कई आरंभिक मठ विहारों को घेरे है, जो यदि पहले के नहीं तो कुषाण के दिनों के हैं। सारनाथ का यह नवीनतम स्मारक एक विस्तृत संरचना था जो कई खुले अहातों और ऊँचे द्वारों समेत विस्तृत ढंग से नियोजित था और संभवतः एक-दम पश्चिम में तहखाने में बने एक मंदिर से जुड़ा था जहाँ के लिए एक लम्बा भूमिगत मार्ग था। दुर्भाग्यवश इस नवीनतम स्मारक को भी लुटेरों के हाथों भारी क्षति पहुँची है।

पूर्व के खण्डहरों और स्मृतिचिन्हों के अतिरिक्त मुलगंधकुटी विहार एक रुचिकर आधुनिक स्थल है जो तक्षशिला में खोजे गए कुछ बौद्ध स्मृतिचिन्हों को पुर्नप्रतिष्ठत करने के लिए महाबोधि समाज द्वारा बनवाया गया। संगमरमर के फर्श

समेत यह एक सुंदर ढांचा है। इसके कई उत्थापन और सज्जाकारी व्यवस्था शताब्दियों से पूज्य पुराने रूपों से प्रेरित है। अंदर की दीवालों पर, जापान के अग्रणी चित्रकार, श्री को सेतु नोसू द्वारा निर्मित, भगवान के जीवन के दृश्य दर्शाती भव्य चित्रकला है। विहार का वार्षिकोत्सव नवम्बर की पूर्णमासी के दिन होता है और यह उत्सव प्रत्येक वर्ष, विश्व के सभी देशों का प्रतिनिधित्व करते भिक्षुओं और भक्तों के एक भव्य सम्मेलन द्वारा मनाया जाता है। उत्सव का एक महत्वपूर्ण लक्षण है पवित्र विस्मृतियों, विहार की वेदी में प्रतिष्ठित भगवान बुद्ध के सर्वाधिक प्रमाणिक अवशेषों की एक शोभायात्रा। मूलगंधकुटी विहार के निकट, 1936 में श्रीलंका से लाए गए एक पौधे से बढ़े बोधि वृक्ष का प्रतिनिधि देखा जा सकता है।

सारनाथ जैनियों का भी एक पवित्र स्थल था जो इसे ग्यारहवें जैन तीर्थकर श्री अम्सनाथ के सैद्धांतिक प्रचलनों और मृत्यु का स्थल मानते हैं। धमेख स्तूप के निकट स्थित एक आधुनिक मंदिर इस संत को समर्पित है।

सारनाथ की समृद्ध शिलाकला के टुकड़े सारनाथ संग्रहालय में रखे हैं। अशोक चिह्न के अतिरिक्त इसके संग्रह में भव्य बोधिसत्व और बुद्ध की प्रतिमाएं हैं।

कुशीनगर :

कुशीनगर अथवा कुशीनार बौद्ध धर्म के अनुयाइयों के लिए पवित्र है क्योंकि यह वही स्थान था जहां साल वृक्ष के एक उपवन में अस्सी वर्ष की अवस्था में भगवान ने निर्वाण प्राप्त किया। इस स्थल की पहचान उत्तर प्रदेश के कुशीनगर जिले में कसिया के रूप में की गई है।

परमगुरू के घटनामय जीवन से सम्बद्ध अन्य स्थानों की भांति, कुशीनगर भी एक महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल बना और समय के साथ पवित्र मंदिरों से युक्त हुआ। परिनिर्वाण क़ा स्तूप, जिसके बारे में कहा जाता है कि इसे अशोक ने बनवाया, अब तक रोशनी में नहीं लाया गया है। परिनिर्वाण चैत्य, अभिलेख जिनका संदर्भ करते हैं, गुप्तकाल का है और यह असंभव नहीं कि अशोक स्तूप बाद के निर्माण

के नीचे दबा पड़ा हो। अब भी बचे अन्य उल्लेखनीय पवित्र भवनों में 'माथा कुंवर का कोट' है, जो निर्वाण की अस्वस्था में बुद्ध की एक बड़ी लेटी हुई प्रतिमा को प्रतिष्ठित किए हुए हैं। प्रतिमा कई खण्डों में टूटी पाई गई थी और इसे श्री चार्लेयल (Mr. Charlleyle) ने बड़ी कुशलता से जोड़ा। महान स्तूप, जो उस स्थान पर खड़ा था जहां बुद्ध के पार्थिव शरीर की अंतिम क्रिया की गई और जहां महागुरू के स्मृतिचिन्ह आठ समान भागों में विभक्त थे, संभवतः स्थानीय रूप से रामाभार के नाम से ज्ञात एक बड़े टीले के द्वारा प्रतिनिधत्व करता है। चीनी यात्रियों, फाह्यिान, ह्वेनसांग और टी० आईसिंग ने विभिन्न शताब्दियों में कुशीनगर की यात्रा की और इस निर्जन स्थान का एक चित्रमय वृतांत दिया। एक बौद्ध, चीनी और एक तिब्बती मंदिर कुशीनगर के अन्य आकर्षण हैं।

श्रावस्ती

कोसल के प्राचीन राज्य की राजधानी, श्रावस्ती, बौद्ध धर्म के अनुयाइयों का पवित्र स्थल है, क्योंकि पूर्ववर्ती बुद्धों की परिपाटी के अनुसार, महागुरू ने विधर्मी तीर्थिका शिक्षकों को हतभ्रत करने के लिए अपने महानतम चमत्कार यहीं पर किए थे। पवित्र साहित्य के अनुसार इस महान घटना में चमत्कारिक घटनाओं की एक श्रृंखला है, जैसे कि चंद्रमा और सूर्य का आकाश में एक साथ चमकना, आग और पानी का बारी-बारी से महागुरू के शरीर के ऊपरी और निचले भागों से निकलना, और बुद्ध द्वारा अपने अनेको रूपों का प्रकटीकरण। आरंभिक काल से ही श्रावस्ती की घटना बौद्ध कला के लिए एक प्रिय विषय रहा है।

बुद्ध के दिनों में भी श्रावस्ती बौद्ध धर्म का एक क्रियाशील केन्द्र रहा और यहीं पर अनाथपिण्दड ने युवराज जेता का वह द्वार बनवाया जो उन्होंने महागुरू के स्वागत में स्वर्ण की भारी कीमत देकर खरीदा था। उपवन का क्रय और भगवान को भेंट देने की यह कथा आरंभिक बौद्ध कला का एक प्रिय विषय रहा है। बाद के समय में भी इस पवित्र स्थल पर मंदिर और मठ-विहार बने और यह इस धर्म का एक फलता-फूलता केन्द्र बना। श्रावस्ती की पहचान उत्तर-प्रदेश के

बलरामपुर और श्रावस्ती जिलों की सीमा पर सहेट-महेट के अवशेषों से की गई है और इस पहचान की पुष्टि सहेट में श्रावस्ती के जेटव के मठ का संदर्भ देते कई अभिलेखों की खोज से हुई।

सहेट-महेट में दो भिन्न स्थल हैं। महेट बड़ा है तथा लगभग 400 एकड़ क्षेत्र में फैले इसकी पहचान नगर-विशेष के अवशेषों से की गई है; और लगभग 32 एकड़ क्षेत्रफल वाला सहेट लगभग एक चौथाई मील दक्षिण-पश्चिम की ओर स्थित है तथा यह जेटवाना मठ-विहार का स्थल है। पहले के स्थल पर उत्खनन ने शहर के बड़े द्वार के अवशेष और अन्य ढांचों के खण्डहर ढूँढ निकाले, जो यह इंगित करता है कि बीते दिनों में यह शहर समृद्ध था। बाद वाला, महागुरू के स्मरणीय संबद्धता से पवित्र स्थल, महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल बना और कई मंदिरों, स्तूपों और मठ-विहारों से सुसज्जित हुआ। अवशेषों की तिथि का आकलन मौर्य काल से लेकर 12वीं शताब्दी ईस्वी तक किया गया है। आरंभिक स्तूपों में से एक, जिसकी मूल नींव ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में रखी गई होगी, में अस्थि के कुछ स्मृतिचिन्ह रखे थे, जो स्वयं महागुरू से सम्बद्ध रहे होंगे। फ्रायर बाला (प्रथम शताब्दी ईस्वी) वही बाला जिसने ऐसी ही एक प्रतिष्ठा का निर्माण कनिष्क के शासन के तीसरे वर्ष में सारनाथ में किया-द्वारा समर्पित विशाल प्रतिमा स्थल पर पाई गई और अब कोलकता के भारतीय संग्रहालय में देखी जा सकती है। उत्खनित अवशेष गुप्त और मध्यकालों में इस पवित्र स्थल की पल्लवित स्थिति को प्रमाणित करते हैं। इस प्रतिष्ठान के नवीनतम संरक्षकों में से एक थीं कन्नौज के गहदवाला राजा गोविन्दाचार्य की रानी कुमारदेवी, जिन्होंने 1128-29 ईस्वी में जेटवाना मठ-विहार के लिए कुछ जमीन दान की थी। बौद्ध धर्म पहले ही से अवनति पर था और इस स्मरणीय स्थल की समृद्धि तथा अंततः भूमि पर, इस्लामी अधिकार के परिणाम स्वरूप ग्रहण लग गया। शोमनाथ मंदिर, जैन तीर्थाकर ''संभवनाथ'' की जन्म स्थली, श्रावस्ती के कई आकर्षणों में से एक है।

संकास्य (संकिसा) :

महागुरू के जीवन से संबद्ध एक और पवित्र स्थान था संकास्य जहाँ, कहते

हैं, बुद्ध त्रयंस्तिम्स स्वर्ग (तैंतीस देवताओं का स्वर्ग) से धरती पर उतरे, जहाँ वे अपनी माता और अन्य देवताओं को अभिधम्म का प्रवचन देने गए थे। यह घटना श्रावस्ती में बड़े चमत्कार के बाद घटी बताई गई, क्योंकि यह विधान था कि सभी बुद्ध अपने महानतम चमत्कार करने के बाद तैंतीस देवताओं के स्वर्ग को जाएंगे। बौद्ध दंतकथाओं के अनुसार, भगवान एक त्रिगुण सीढ़ी से नीचे, ब्रह्मा और सत्र नामक देवताओं के साथ उतरे, इन पवित्र सम्बन्धों के कारण संकास्य एक महत्वपूर्ण तीर्थस्थल बना और बौद्ध धर्म के यौवन काल में इस स्थल पर मंदिर, स्तूप और मठ-विहार बने।

संकास्य की पहचान संकिसा के साथ की गई जिसे उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद जिले में सनिसा बसंतपुर के नाम से भी जाना जाता है। न सिर्फ दोनों नाम एक हैं बल्कि एक अतिरिक्त पुष्टिकरण इस स्थल पर एक हाथी शर्षाम की मौजूदगी से प्राप्त होती है, जिसके बारे में विद्धानों का मानना है कि यह मूलतः अशोक स्तम्भ के रूप में आरोहित था।

फाह्यिान और ह्वेनसांग, दोनों ने ही इस स्थान की यात्रा की और कहा जाता है कि उन्होंने महत्वपूर्ण स्मारकों के रूचिपूर्ण वृत्तांत दिए। "किले" के नाम से ज्ञात यह गांव 41 फीट ऊँचे और 1,500 फिट × 1,000 फिट तक फैले एक टीले पर टिका है। एक चौथाई मील दक्षिण में एक और टीले पर टिका है जो ठोस ईंटों के काम से बना और बिसारी देवी को समर्पित एक मंदिर इस पर आरोहित है। ईंटों के काम के बने अन्य टीले भी आस-पास बिखरे देखे जा सकते हैं और 3½ मील व्यास में ऊँचे मिट्टी के परकोटे के अवशेष भी हैं।

राजगृहः

शक्तिशाली मगध साम्राज्य की राजधानी, राजगृह, बौद्ध धर्म के अनुयाइयों के लिए कई कारणों से पवित्र था। महागुरू न सिर्फ कई बार इस प्रसिद्ध नगर में आए, बल्कि यह वह स्थान भी था जहाँ उनके चचेरे भाई देवदत्त ने उन्हे मरवा डालने के कई प्रयास किए। इसके अतिरिक्त, इस शहर में, वैभर पर्वत की सत्तपण्णि (सप्तपर्णि) गुफा में परिनिर्वाण के तत्काल बाद प्रथम बौद्ध परिषद (संगिति) की गई थी।

विनय और धर्म का अभ्यास इसी परिषद में किया गया और उपाली और आनन्द की मदद से वे निश्चित किए गए। पन्थ और अनुशासन के मुख्य बिन्दुओं पर सहमति हुई और नवीन धर्म का स्थायित्व सुनिश्चित किया गया। इस प्रकार, राजगृह, बौद्ध धर्म के अनुयाइयों के लिए एक पवित्र स्थान बना न सिर्फ धर्म के स्थापना के इससे सम्बन्धों के चलते इसे पवित्र माना गया बल्कि इस कारण भी कि इस शहर ने एक अच्छे धर्म, सद्धर्म, के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

राजगृह नगर का प्रतिनिधित्व राजगिरि के खण्डहर करते हैं, जो अब बिहार के पटना जिले का एक पहाड़ी नगर है। गिरि वृज या पुराना राजगृह, पहाड़ियों से घिरे क्षेत्र में स्थित था जिसे आरंभिक साहित्य में विभिन्न नामों से जाना जाता था, किन्तु अब वैभर, विपुला, रत्ना, चेतना, उदयगिरि और सोनगिरि कहलाता है। चारों ओर से दीवार की दो पंक्तियों से किलाबन्द और सुरक्षाकारी पहाड़ियों द्वारा प्रदत्त प्राकृतिक सुरक्षा से युक्त, यह शहर उतना ही अजेय हो सकता था जितना कि यह उन दिनों था, और महाभारत में इसे सटीक रूप से 'दुधीर्सना' के रूप में वर्णित किया गया है। पहाड़ियों के पार उत्तर की ओर एक नया शहर खड़ा था जिसकी आधारशिला का श्रेय, बिम्बिसार के उत्तराधिकारी पुत्र और बुद्ध के एक युवा समकालीन, अजातशत्रु को जाता है। अजातशत्रु के उत्तराधिकारी और पुत्र उदयन ने कुसुमपुरा (पाटलिपुत्र) शहर बनाया और अपनी राजधानी भी वहाँ स्थानांतरित कर दी। यद्यपि एक पुराने राजा, सिसुनागो, ने पुरानी राजधानी को वरीयता दी होगी, किन्तु यह कालसोक थे जिन्होंने अंततः राजधानी को पाटलिपुत्र स्थानांतरित किया और राजगृह ने शाही शहर का पद खो दिया। अपने राजनैतिक सम्मान में पतन के बावजूद यह शहर काफी समय तक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध रहा, न सिर्फ बौद्ध धर्म के साथ अपने पवित्र सम्बन्धों के कारण बल्कि अन्य धार्मिक मतों के साथ इसके सम्बन्धों के कारण भी।

ऐतिहासिक नगर के थोड़े से अवशेष, अब भूमि की सतह पर, और जरा दूर-दूर हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस शहर को समय के विनाश से बड़ी भारी

क्षति पहुँची है। सत्तपनि गुफा वैभर पहाड़ियों के उत्तरी कगार पर चट्टान के एक अर्धगोलाकार मोड़ में पीछे बने कक्षों के समूह के साथ एक बड़ी छत के द्वारा संज्ञानित है। वैभर की पहाड़ियों के पूर्वी ढलान पर किनारों पर अनियमित रूप से बने कक्षों के साथ, 'जरासंध की बैठक' नामक एक लिक्ष ढांचे की पहचान पिप्पला के आवास के रूप में की जा रही है, जो कुछ बौद्ध ग्रंथों और चीनी तीर्थ यात्रियों के मार्ग-विवरण/यात्रा-वृत्तांत में उल्लिखित है। कुछ पाली ग्रंथ पिप्पला गुफा को, प्रथम परिषद के आयोजक, महाकश्यप के आवास के रूप में वर्णित करते हैं। दुर्ग के पश्चिम में एक टीला सामान्य रूप से एक स्तूप से संबद्ध है जिसे, फा-ह्यिान के अनुसार अजातशत्रु ने बनवाया और ह्वेनसांग के अनुसार अशोक ने वैभर पहाड़ी के दक्षिणी किनारे पर, सोनभंदर नाम से प्रसिद्ध गुफा एक बौद्ध स्थल रहा होगा ; यद्यपि इस बात से पूर्णतः इनकार नहीं किया जा सकता कि यह संभवतः एक जैन प्रतिष्ठान था। स्थानीय लोगों का विश्वास है कि गुफा में भारी मात्रा में स्वर्ण दबा पड़ा है। गिरधर कूट पर्वत, जो बुद्ध का एक मनचाहा स्थल था, शहर के निकट ही स्थित है। स्मारक के रूप पर्वत के शिखर पर जापान के बुद्ध संघ ने एक बहुत बड़ा आधुनिक स्तूप, शांति स्तूप बनवाया। ऐतिहासिक समय में भी राजगृह, जैन धर्म का एक सक्रिय केन्द्र था, और जैन मंदिरों के अतिरिक्त यहाँ पर शिल्पकला के रूचिपूर्ण अवशेष विस्तृत हैं। मनियार माथा के नाम से ज्ञात, शहर के लगभग मध्य में ईंटों से बने बेलनाकार मंदिर में एक ही स्मारक पहचाना जा सकता है, जो स्थानीय परम्परा के अनुसार राजगृह शहर के रक्षक देवता मणिनाग की आराधना के लिए समर्पित है। स्थानीय परम्परा महाभारत के प्रसिद्ध जरासंध के शहर, राजगिर के कुछ पुराने स्थलों को जरासंध के ग्रंथीय वृत्तांत से भी जोड़ती है। बौद्ध स्मृतिचिन्हों की कमी के बावजूद, बौद्ध कथाओं और इतिहास के साथ शहर का सम्बन्ध ही इस रमणीय स्थल पर तीर्थयात्रा प्रेरित करने के लिए पर्याप्त है। गर्म पानी के स्त्रोतों वाला राजगिर, स्वास्थ्य लाभ हेतु भी एक स्थान है।

वैशाली :

शक्तिशाली लिच्छवी वंश की राजधानी, वैशाली नगर, आरम्भ के दिनों में बौद्ध धर्म का एक गढ़ था। कहते हैं, बुद्ध अपने जीवन काल में यहाँ तीन बार आए। कहते हैं इनमें से एक यात्रा के दौरान, कई बन्दरों ने उन्हें शहद से भरा एक पात्र दिया। यह घटना महागुरू के जीवन की आठ महान घटनाओं में से एक के रूप में उल्लिखित है। यहीं पर बुद्ध ने अपने निर्वाण का समय निकट आने की घोषणा की थी, और उनके निर्वाण के बाद, कहते हैं, लिच्छवियों ने महागुरू के अपने हिस्से के अवशेषों पर एक स्तूप बनवाया। निर्वाण के कुछ 100 वर्षों बाद यहीं पर द्वितीय बौद्ध परिषद का आयोजन किया गया जो बौद्ध धर्म के बाद के दिनों के इतिहास में परम महत्वकारी हुई। जैनियों के लिए भी, चौबीसवें जैन तीर्थांकर महावीर का जन्मस्थान होने के कारण, वैशाली उतनी ही पवित्र थी।

वैशाली नगर का प्रतिनिधित्व 'बासढ़' में 'राजा बिसाल का गढ़' के खण्डहरों और बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के निकटवती क्षेत्रों द्वारा होता है। यह विश्वास है कि 'राजा बिसाल का गढ़' का स्थल प्राचीन वैशाली नगर के दुर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें एक बड़ा ईंटों से ढका टीला है जो आसपास के स्तर से लगभग 8 फीट ऊँचा और व्यास में एक मील से कुछ कम है। मूलतः एक खाई से घिरा, इसमें दक्षिण से एक चौड़ा तटबन्धित पक्का नदीपथ आता था। यह सभी भवन विशुद्ध रूप से लौकिक/धर्मनिरपेक्ष होते थे। सरकारी मुहरें यह दर्शाती हैं कि गुप्तकाल में वैशाली एक महत्वपूर्ण प्रशासनिक मुख्यालय था और मौर्यकाल के लक्षणों से खुदी, एक रूचिपूर्ण मुहर वैशाली में एक ईंधन-तेल चौकी का संदर्भ करती है। चीनी तीर्थयात्री फा-ह्यिान और ह्वेनसांग अपनी यात्रा के दौरान वैशाली आए थे। ह्वेनसांग इसे 10 से 12 वर्ग मील क्षेत्र में फैले एक शहर के रूप में वर्णितृ करते हैं। वे कहते हैं कि अंदर और बाहर, और वैशाली नगर के आस-पास इतने पवित्र स्मारक हैं कि उनका वर्णन करना कठिन होगा। दुर्भाग्यवश इस क्षेत्र में अब व्यवहारिकतः धार्मिक इमारतों के दर्शनीय अवशेष समाप्त प्राय हैं। 'राजा बिसाल का गढ़' के दो मील उत्तर-पश्चिम में,

(स्थानीय रूप से 'भीमसेन की लठ' के नाम से ज्ञात) उच्चतः चमकदार बलुआ पत्थर का बना एक अखण्डित स्तम्भ है जिस पर घंटे के आकार का एक शीर्ष आरोहित है जो एक चौकोर शीर्ष-फलक पर एक शेर की बैठी हुई आकृति को समर्थन देता है। यह वर्तमान भूमि स्तर से लगभग 22 फीट ऊँचा है, जिसका एक बड़ा भाग सदियों के भार से जमीन में धंस चुका है। शैली में यह अशोक के राजाज्ञा स्तम्भों से काफी मिलता-जुलता है, किन्तु आस-पास की खुदाई से अशोक द्वारा इस पर किसी शिलालेख की खोज नहीं की की जा सकी। किंतु फिर भी इसकी पहचान ह्वेनसांग द्वारा उल्लिखित प्राचीन वैशाली के स्थल पर अशोक-स्तम्भों में से एक के द्वारा की जा सकती है। निकट ही, दक्षिण में, राम कुण्ड के नाम से विख्यात एक छोटा तालाब है, कनंघम ने जिसकी पहचान ऐतिहासिक 'मर्कट-ह्रक' या 'बंदरो का तालाब' के साथ की, विश्वास है कि यह बन्दरों के झुण्ड द्वारा बुद्ध के उपयोग के लिए खोदा गया था। उत्तर-पश्चिम में एक खण्डहर टीला है (वर्तमान में सिर्फ 15 फीट) जिसकी पहचान ह्वेनसांग द्वारा उल्लिखित अशोक स्तूप के अवशेषों के साथ की गई है। इस टीले के शिखर पर बुद्ध की मध्यकालीन प्रतिमा को स्थापित किए ईंटों से निर्मित एक आधुनिक मंदिर है।

सांचीः

सांची बौद्ध अवशेषों का सर्वाधिक विस्तृत स्थल है। इस स्थल का गौतम बुद्ध के पारंपरिक इतिहास के साथ कोई प्रकट सम्बन्ध नहीं था। इस विचार में काफी बल है कि सांची, पड़ोस के विदिशा में सिलोनियाई इतिहास में चाटियारगिरि का आधुनिक प्रतिनिधि है, जो एक व्यापारी की पुत्री के साथ अशोक के विवाह की कथा और पहाड़ी पर एक मठ-विहार बनवाने की कथा से सम्बन्धित है। यहाँ अशोक के उस विवाह से उत्पन्न महेन्द्र, श्रीलंका की ओर धर्मप्रचार हेतु जाते हुए रूके थे। कथा चाहे सच्ची हो या नहीं, तथ्य यही बताता है कि सांची का सबसे पुराना स्मारक अशोक के समय का है और यह असम्भव नहीं कि बौद्ध धर्म का यही वह संरक्षक था जिसने इस स्थान को गौतम बुद्ध के धर्म का एक सक्रिय केन्द्र बनाया और जो बीते दिनों में स्थान के वैभव के लिए जिम्मेदार था।

अधिकांश स्मारक एक पहाड़ी की शिखर के एक पठार पर स्थित हैं, जो पत्थरों की एक दीवाल से घिरा है। लगभग 1100 स्तूपों में कई ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी से 12वीं शताब्दी ईस्वी के, और आकार में बड़ा एक स्तूप, आधार पर व्यास में 100 फीट है। इसका आकर्षक गुंबद, 50 फिट ऊँचा है। अशोक के समय ईंटों से बना, यह बड़ा स्तूप अपने पूर्व के आकार से दोगुना विस्तृत किया गया और संभवतः एक शताब्दी बाद पत्थर से ढका गया जब पत्थर का बाड़ा और प्रवेशद्वार इसमें जोड़े गए। जैसा कि अब यह है, इसमें एक लगभग अर्धगोलाकार गुंबद है। इसकी छत की पटरी पर और इसके आधार के चारों ओर दो प्रदक्षिणा पथ हैं, जिनमें से प्रत्येक पत्थर के एक जंगले से घिरा है। गुंबद के शिखर पर एक तीसरा जंगला पवित्र छत्ते को घेरे हुए था, जो ताज की तरह महागुरू के धर्म के अधिराज्य के प्रतीक चिन्ह के रूप में सभी स्मारकों पर रखा रहता था।

जमीन पर बड़े जंगले में चार दिशाओं पर चार भव्य प्रवेशद्वार हैं, जो अपनी समृद्ध नक्काशी की सज्जा के साथ-साथ अपने पीछे के ढाँचे की सादेपन से एकदम अलग थे। सभी चार प्रवेशद्वार समान परिकल्पना के हैं और जंगलों और प्रवेशद्वारों के निर्माण में उपयोग की गई तकनीक यह इंगित करती है कि वे बढ़ई का काम हैं, न कि पत्थर का काम करने वाले का। प्रत्येक प्रवेशद्वार में शीर्षों द्वारा आरोहित दो चौकोर स्तंभ हैं, जो बदले में तीन प्रस्तरपादों के एक बड़े ढांचे को समर्थन देते हैं। शीर्षफलक, खड़े हुए बौनों और पीठ से पीठ जोड़कर खड़े शेरों या हाथियों से सज्जित हैं। प्रस्तरपदों के बीच में और ऊपर पुरुषों, महिलाओं, घुड़सवारों और हाथियों की आकृतियाँ बनी हैं, जबकि बुद्ध के विधान का प्रतीक, पवित्र चक्र इन सब पर भारी पड़ता है। प्रवेशद्वार, जंगलों के ढांचे के ठीक विपरीत, जातक कथाओं या महागुरू के जीवन के दृष्यों या महत्वपूर्ण घटनाओं को दर्शाती सज्जा से समृद्ध हैं। बौद्ध कथाओं के छात्रों के लिए यह सब एक रूचिपूर्ण अध्ययन प्रस्तुत करता है। किन्तु एक प्रवेशद्वार के एक प्रस्तरपद में एक पट्टिका का संदर्भ लिया जाना चाहिए, जो अशोक की बोध-गया में बोधिवृक्ष तक की यात्रा को प्रदर्शित करती है। बौद्ध धर्म के महानतम संरक्षक को भारत के किसी अन्य स्मारक में नहीं दर्शाया

गया है। यद्यपि सम्राट का यह चित्रण संभवतः प्रमाणिक न हो, भारत के इतिहास के महानतम व्यक्तियों में से एक का यह अनोखा चित्रण उसके समस्त देशवासियों द्वारा संजोया जाना चाहिए।

इस स्थल पर कई अन्य स्तूपों में से तीन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनमें से एक, स्तूप संख्या 3, महान स्तूप के उत्तर-पूर्व में स्थित है और लगभग समान अभिकल्पना यद्यपि छोटे आयामों का है। स्तूप के स्मृतिशेष कक्ष में जनरल कनिंघम् ने भगवान के दो प्रसिद्ध शिष्यों, सारिपुट्ट और महामोग्गल्लन के स्मृतिशेष खोज निकाले, वही स्मृतिशेष जिन्हें लंदन से वापस लाकर सांची के नए मंदिर में प्रतिष्ठित कर दिया गया। ऐतिहासिक दिनों में इस स्तूप में एक विशेष पवित्रता का निवेश किया गया होगा। दूसरा, स्तूप संख्या-2 एक चट्टान की कगार पर पहाड़ी के पश्चिमी ओर पर आधा नीचे पर खड़ा है। यहां यद्यपि कोई प्रवेशद्वार नहीं है, तथापि इसके चारों ओर का बाड़ा लगभग समूचा है और आदिकालीन कारीगरी के रुचिपूर्ण उभार की विविधता को दर्शाता है। यह महान स्तूप के प्रवेशद्वार शिल्प की अधिक विकसित कला के ठीक विपरीत है। यह उभार, जीवित आकृतियों का एकदम अपरिष्कृत उपचार और साथ ही सज्जाकारी अभिकल्पना की एक असाधारण शक्ति को दर्शाते हैं। पहाड़ी के नीचे पश्चिमी ओर एक अन्य छोटा स्तूप, ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी के विख्यात बौद्ध प्रचारकों, कश्यप और मोगलीपुट्ट के समृतिशेषों को प्रतिष्ठित करता था। इस कारण इसकी पवित्रता के अतिरिक्त यह स्तूप रेलिंग पर नक्काशी कर बने गोलाकार चित्रों और प्रवेशद्वारों पर शिल्पचित्रों के लिए भी विख्यात है।

क्षेत्र में स्तूपों के बिखरे हुए समूह पाए जाते हैं जिनमें से कुछ एक प्रतिष्ठित् स्मृतिशेषों के कारण बड़े पवित्र माने जाते हैं। सांची से कुछ मील दूर, सोनारी में आठ स्तूपों का एक समूह है जिनमें से दो चौकोर अहातों में महत्वपूर्ण ढांचे हैं और इनमें से एक से कई स्मृतिशेष खोदकर निकाल लिए गए थे। तीन मील और आगे सतधारा में दो स्तूप हैं जिनमें से छोटे वाले में सारिपुट्ट और

अन्य लोगों के, ठीक वैसे ही जैसे सांची में मिले थे, स्मृतिशेष पाए गए थे। सांची से सात मील पर भोजपुर में, और पांच मील और आगे अँधेरे में, स्मारकों का एक रुचिपूर्ण समूह है जिनमें से कुछ में महत्वपूर्ण स्मृतिशेष हैं। इन स्तूपों में, जो बौद्ध धर्म के अनुयाइयों के लिए पूरे क्षेत्र में एक विशेष पवित्रता का निवेश करते हैं, कोई ऐसा नहीं है जो अशोक के समय से पहले का माना जा सके; न ही कोई ऐसा है जो प्रथम शताब्दी ईस्वी के बाद बना हो।

सांची में महान स्तूप के दक्षिणी द्वार के निकट स्थित अशोक स्तंभ के भग्नप्राय अवशेष, पीठ से पीठ जोड़ खड़े चार शेरों के शीर्ष समेत, अधिक ऐतिहासिक महत्व के हैं। इसके टूटे हुए दण्ड पर अब भी वह राजाज्ञा पाई जा सकती है जिसमें सम्राट ने कठोर शब्दों में प्रार्थनागृह में किसी प्रकार की फूट वर्जित की थी। इसकी चमक, अभिकल्पना और शैली समेत, यह अशोक के सुविख्यात राजाज्ञा स्तंभों में से एक है।

सांची का मुख्य आकर्षण निःसंदेह इन पौराणिक स्तूपों पर टिका है न सिर्फ उनकी पवित्रता के कारण बल्कि उनकी समृद्ध और विस्तृत नक्काशी के कारण भी। यह आकर्षण उनके आस-पास बिखरे मंदिरों और मठ-विहारों से बहुत बढ़ जाता है और इस शांत पर्वत शिखर पर मठ जीवन का एक सजीव चित्र बनाता है।

इनमें से सर्वाधिक उल्लेखनीय है 'चैत्य कक्ष' (मंदिर संख्या 18)। वर्तमान अवशेषों में, यद्यपि यह मात्र एक ढांचा है, तथापि उनके स्तंभों की शास्त्रीय सरलता में एक विलक्षण आकर्षण है। स्तंभ और दीवालें, जो अब भी दर्शनीय हैं, 7 वीं शताब्दी ईस्वी से पहले के नहीं हैं, किंतु उनके नीचे तीन पुराने प्रार्थनागृहों के अवशेष दबे पड़े हैं जो उसी स्थल पर बाद में बनते रहे। मिस्र के शास्त्रीय मंदिरों की याद दिलाता एक अन्य ढांचा एक बहुत छोटे सादे मंदिर (मंदिर संख्या 17) में देखा जा सकता है, जिसमें साधारण सपाट-छत के एक चौकोर कक्ष के साथ सामने एक खंभे युक्त द्वार मण्डप के अतिरिक्त और कुछ शेष नहीं है। यद्यपि आयामों में यह सीधा-सादा है, तथापि इसकी ढांचागत योग्यता,

सम्मिति और परिमाण, सपाट सतहों और सज्जा में संयम, इन सब की तुलना शास्त्रीय मिस्री वास्तुकला की सबसे अच्छी संरचनाओं से की जा सकती है। संभवतः चौथी शताब्दी ईस्वी का बना यह मंदिर ऐतिहासिक कारणों से भी महत्वपूर्ण है। गुप्त काल ने भारतीय मंदिर वास्तुकला के इतिहास में एक नए युग का प्रतिपादन किया घोषणा की और मंदिर का गर्भगृह और साथ ही एक ही प्रवेशद्वार के साथ मण्डप, पहली बार इस साधारण सपाट-छत वाले मंदिर में दिखता है और भविष्य में विस्तार के लिए आधार बनाता है, जो बाद के युगों में ऐसी महान कृतियों में विकसित हुआ जैसा कि भुवनेश्वर का महान लिंगराज, कोणार्क का सूर्य मंदिर, और खजुराहो के वैभवशाली कांदार्य महादेव।

मठ विहारों के सांची में पांच उदाहरण हैं और वे चौथी शताब्दी ईस्वी से लेकर 12 वीं शताब्दी ईस्वी में बने। पहले वाले विहार, जो इस स्थल पर स्थित थे, लकड़ी के बने थे और बाद के ढांचों के आधार के नीचे दब कर बर्बाद हो गए। जो बचे रहे या अब दर्शनीय हैं न्यूनाधिक रूप से चौकोर खुले प्रांगणों के साथ इसके चारों ओर दो मंजिले भवनों की श्रृंखलाओं की सामान्य योजना के अनुसार बने। सर्वाधिक रुचिपूर्ण मठीय प्रतिष्ठान पूर्व के पठार के सबसे ऊँचे भाग में खड़े हैं। इसमें मठीय कक्षों से घिरे कई प्रांगण होते थे और साथ ही बुद्ध का एक ऊँचा मंदिर, स्पष्टतयः मुख्य प्रांगण के पूर्वी ओर पर होता था।

अजंता और एलोरा :-

बौद्ध धर्म के दो सर्वाधिक उल्लेखनीय स्थल महाराष्ट्र में स्थित हैं। एक संकरे घाटी मार्ग में, उत्कृष्ट दृश्यों के मध्य, अजंता की अद्भुत् गुफाएं हैं, जिनमें से पांच चैत्य और बाकी मठ-विहार हैं। जीवन्त चट्टान को काट कर बनाए गए समृद्ध शिल्पकला कृत, और कुछ गुफाओं की दीवालों, स्तंभों और छतों पर चित्रकला से सज्जित, वे 800 वर्ष की अवधि के दौरान बौद्ध कला का एक निरंतर वर्णन प्रस्तुत करती हैं। भारत में कोई और प्राचीन अवशेष वास्तुकला, शिल्पकला

और चित्रकला के ऐसे एक प्रशंसनीय सम्मिश्रण को नहीं दर्शाते। एलोरा की विस्मयकारी गुफाएं एक बड़ी चट्टानमय पठार के कगार में उत्खनित की गईं। अजन्ता से भिन्न, एलोरा भारत के तीन महान धर्मों-बौद्ध, ब्राह्ममणवाद, और जैन धर्म-के विलक्षण के स्मारक प्रस्तुत करता है।

पिठई खोरा गुफाएं : ये भारत में बौद्ध धर्म की सबसे पुरानी गुफाएं हैं, वे अम्रावती और सांची की कला के मध्य एक कड़ी हैं। (वे इन स्थानों पर हैं।)

कन्हेरी गुफाएं : मुम्बई से 40 किलोमीटर दूर, कन्हेरी में यह दूसरी शताब्दी ईस्वी की बौद्ध पहाड़ी गुफाएं हैं। यद्यपि वहां स्वयं बुद्ध का स्पष्ट प्रतिनिधित्व नहीं है फिर भी यहाँ इस धर्म का सांकेतिक प्रतिनिधित्व पाया जाता है।

भज गुफाएं: यह लोनावाला से 12 किलोमीटर पर है। मान्यता है कि 18 गुफाएं दूसरी शताब्दी ईस्वी में बौद्ध भिक्षुओं द्वारा बनवाई गईं। गुफा संख्या 12 सबसे बड़ी है। दक्षिण की ओर आखिरी गुफा में श्रेष्ठ शिल्पकला है, जिसमें प्रसिद्ध 'नर्तक युगल' सम्मिलित हैं।

बेड़सा गुफाएं : लोनावाला से 15 किलोमीटर दूर यह स्थान बेड़सा चट्टानों को काट कर बनाई गई प्राचीन बौद्ध गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है। यहां के चैत्य में, घोड़ों, सांड़ों और हाथियों की नक्काशी की गई प्रतिमाओं समेत चार स्तंभ हैं। इसकी कमानीदार छत, 26 स्तंभों द्वारा समर्थित है।

कार्ले गुफाएं : लोनावाला से 10 किलोमीटर दूर, कार्ले में देश का सबसे बड़ा चैत्य है। एक चट्टान को काट कर विशाल द्वार बनाया गया है। विशाल सभाकक्ष में प्रवेश के लिए तीन प्रवेशद्वार हैं, एक पुजारियों के लिए तथा अन्य दो तीर्थयात्रियों के लिए। स्तंभावली को समर्थन देते 37 स्तंभों में सवार समेत घोड़ों और हाथियों की उत्कृष्ठ नक्काशीदार आकृतियां हैं। लगभग 2000 वर्ष पुरानी काष्ठकलाकृति द्वारा समर्थित एक मेहराबदार छत और एक बड़ी खिड़की पूरी गुफा को रोशनी देते हैं।

उड़ीसा के बौद्ध स्मृतिशेष

उड़ीसा में बौद्ध विरासत अपनी समृद्ध वास्तुकलात्मक अवशेषों और शिल्पकलात्मक निधि के लिए उल्लेखनीय है। महान कलिंग युद्ध, जिसने अशोक को एक श्रद्धालु बौद्ध और बौद्ध धर्म के एक महान हिमायती में परिवर्तित कर दिया, उड़ीसा की भूमि पर दाया नदी के तट पर लड़ा गया जो मंदिरों के शहर भुवनेश्वर से दूर नहीं है। यहां से बौद्ध धर्म का प्रकाश चीन और जापान जैसे सुदूर पूर्वी देशों में फैला। यहीं पर एक महान धर्म और संस्कृति की नींव रखी गई। उड़ीसा ने ही संपूर्ण विश्व के लिए शांति और अहिंसा (धम्म) की मशाल जलाई। यह बड़ा परिवर्तन जिसने वस्तुतः संपूर्ण विश्व को परिवर्तित कर दिया तब अनुभव किया जा सकता है जब कोई उड़ीसा में बौद्ध धर्म के अनुदर्शन से होकर गुजरता है।

इस बड़े परिवर्तन के साक्ष्य के रूप में भुवनेश्वर के निकट धौली में और गंजम जिले के जौगड़ में प्रसिद्ध चट्टानों से बनी राजाज्ञाएं पाई जाती हैं। ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी से लेकर आज तक उड़ीसा ने कई स्थानों पर कई बौद्ध कला शिक्षा केन्द्र और प्रतिष्ठानों को संरक्षण दिया जो 12वीं से 13वीं शताब्दी ईस्वी तक फले फूले। वास्तव में बौद्ध रुचि के ये स्थान 7वीं शताब्दी से ही बाहरी यात्रियों के लिए आकर्षक का एक बड़ा स्त्रोत रहे हैं। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग ने 7वीं शताब्दी ईस्वी में उड़ीसा में बौद्ध केन्द्रों की यात्रा की।

उड़ीसा में कला और शिक्षा के कई बौद्ध केन्द्र निखरे थे। बिरूपा नदी के तट पर कटक जिले के ललितागिरि, उदयगिरि और रत्नागिरि सर्वाधिक समृद्ध बौद्ध स्थल हैं (उड़ीसा पर्यटन का छोटा 'स्वर्णिम त्रिकोण')। मयूरभंज जिले में शिवचिंग, बालासोर जिले में अयोधा, सोलमपुर, कुपारी और खड़ी पाड़ा, रामेश्वर बानेस - वाराणसी जिले, सलीपुर के निकट ब्रह्मवन, चौड़वार और प्राची घाटी कटक जिले में, फुबनी जिले में बौध टाउन, बलगुडा क्षेत्र, प्रगलपुर और श्यामसुन्दरपुर, पुरी जिले में भुवनेश्वर और करुमा, बानपुर, अरागड़ा, और संभलपुर जिले के गणिपल्ली में बौद्ध-पर्यटन केन्द्र के दृष्टिकोण से बड़ी संभावनाएं हैं।

इन सभी स्थानों पर महायानिक और वज्रयानिक दोनों ही देवकुलों की समृद्ध शिल्पकला के अवशेष हैं। इनके अतिरिक्त इन स्थानों पर सुंदर ढंग से बने बौद्ध विहार, स्तूप और चैत्य हैं। ललितागिरि उत्खनन स्थल पर संदूकों में पवित्र स्मृतिशेषों की ताजी खोज ने उड़ीसा में बौद्ध स्थलों के महत्व को और बढ़ा दिया है। रत्नागिरि, उदयगिरि, ललितागिरि, ब्रह्मवन, करुमा, इत्यादि स्थानों पर ताजे पुरातात्विक उत्खननों ने उड़ीसा में बौद्ध प्रतिष्ठानों में नए आयाम जोड़े हैं। उड़ीसा की तांत्रिक वज्रयान श्रंखला की मूर्तिकला अपने नूतन विचार, उत्कृष्ट निष्पादन और संवेदनशील प्रतिरूपण के लिए अनोखी है और उनके समतुल्य उदाहरण मात्र तिब्बत, नेपाल और चीन की बौद्ध कला में ही पाए जा सकते हैं।

उत्खननों की ताजी उपलब्धियों और बौद्ध अवशेषों समेत कई स्थलों की पहचान से उड़ीसा में बौद्ध पर्यटन के क्षेत्र में नए परिदृश्य खुल गए हैं। यह चीन, जापान, कंबोडिया, इंडोनेशिया, थाइलैण्ड और वर्मा जैसे बौद्ध बाहुल्य देशों से विशेष समूहों के लिए अनोखे अवसर प्रदान करेगा। कुछ ऐसे समृद्ध बौद्ध स्थल हैं जैसे धौली, ललितागिरि, रत्नागिरि और उदयगिरि जिन्हें इस स्थान की यात्रा करने वाला छोड़ नहीं सकता।

धौली :-

जब आप भुवनेश्वर से पुरी कोणार्क की ओर चलते हैं तो मुख्य सड़क से थोड़ी दूर पर दावा नदी के तट पर धौली पहाड़ी है। यह ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में लड़े महान कलिंग युद्ध का मूक दर्शक रहा है। विश्व में अद्वितीय रहा महान परिवर्तन यहीं हुआ। अशोक महान ने युद्ध की विभीषिका को देखकर युद्ध के बजाय आत्मिक विजय के पक्ष में अपना हृदय परिवर्तित कर लिया था। उन्होंने गेरुए वस्त्र धारण कर लिए और विश्व ने अशोक में बौद्ध धर्म के एक महान संरक्षक को बनते हुए देखा। धौली अशोक काल की शिला राजाज्ञाओं के लिए प्रसिद्ध है जो पत्थरों पर खुदी है, साथ ही शिखर पर आते हुए हाथी की उभरी आकृति भी विख्यात है। अशोक साम्राज्य की सीमाओं के अंतर्गत पाई जाने वाली प्रसिद्ध 14 शिला राजाज्ञाओं के एक समूह में से ग्यारह यहीं पर है। यहां अशोक ने विशेषतः कलिंग के लोगों के लिए दो अलग अलग शिला राजाज्ञाएं खुदवाई थीं।

स्थान की शांति और बौद्ध विरासत ने कलिंग-निप्पोन-बुद्ध-संघ को, जापान के निप्पोनजान म्योहोजी के संस्थापक अध्यक्ष, गुरुजी फुजी के मार्गदर्शन में, धौली में एक शांति स्तूप स्थापित करने और साथ ही 70 के दशक के आरंभ में सद्धर्म विहार नामक एक आधुनिक बौद्ध मठ बनवाने हेतु प्रेरित किया। अशोक काल की राजाज्ञाओं के शांति स्तूप और आधुनिक बौद्ध मठ समेत, धौली, यात्रियों के लिए छोटी चट्टानों को काट कर बनाई गई गुफाएं भी दर्शनार्थ प्रस्तुत करता है। आरंभिक मध्यकालीन हिन्दू मंदिर और पहाड़ी के शिखर पर धवलेश्वर नामक एक पुनरुज्जीवित शिव मंदिर यहाँ का अतिरिक्त आकर्षण है।

सुंदर ग्रामीण भू-परिदृष्य, पुराने स्मारक, नया शांति पगोडा और पहाड़ी की चोटी पर मंदिर और साथ ही निकट ही बहती दाया नदी परम शांति और ध्यान में बैठने योग्य शांति प्रदान करते हैं।

ललितागिरि :-

ललितागिरि, प्रथम शताब्दी ईस्वी का सबसे पुराना बौद्ध भवन समूह, जो 'लघु स्वर्णिम त्रिकोण' का एक हिस्सा है, भुवनेश्वर से एक अच्छी सड़क द्वारा जुड़ा है। ताजे उत्खनन से महत्वपूर्ण पुरातत्वीय सामग्री आलोक में आई है जो ललितागिरि को बौद्ध आकर्षण के एक महान केन्द्र के रूप में बनाए रखते है। पूर्व विरासत का गुणगान करता ललितागिरि आज खण्डहरों में भव्यता से खड़ा है। एक बहुत बड़ा इंटों का बना मठ, चैत्य हाल के अवशेष, कई मन्नत के स्तूप और एक छोटी बलुआ पत्थर की पहाड़ी के शिखर पर पत्थरों से बना एक पुनरुज्जीवित स्तूप, आसपास की ग्रामीण हरियाली पर भारी पड़ते हैं।

इनके अतिरिक्त संग्रहालय बड़ी संख्या में महायान मूर्तिकला प्रदर्शित करता है जिसमें बुद्ध की विशाल प्रतिमाएं, विशाल बोधिसत्व प्रतिमाएं, तारा, जांभाला, इत्यादि सम्मिलित हैं। रुचिकर यह है कि इन सभी मूर्तियों के संक्षिप्त शिलालेख खुदे है। कंधों से लेकर घुटनों तक के आवरण समेत खड़े हुए बुद्ध की प्रतिमाएं हमें कला की गांधार और मथुरा शैलियों की याद दिलाती हैं। यह हमारे सम्मुख यह तथ्य भी लाते हैं कि प्रज्ञा, जो योग का दर्शन सीखने के लिए तक्षशिला से प्राचीन उड़ीसा गए थे, बाद में बौद्ध ग्रंथ 'गंडव्यूह' की हस्ताक्षरित

हस्तलिपि लेकर चीन चले गए, जो 8 वीं शताब्दी ईस्वी में उड़ीसा के राजा शिवाकर देव प्रथम ने चीनी सम्राट ते-त्सोंग के लिए भेजी थी। पहाड़ी के शिखर पर पत्थरों के स्तूप से, संभवतः स्वयं तथागत के ही, पवित्र स्मृतिशेषों से भरे संदूकों की खोज ने विश्व के बौद्ध अनुयाइयों के लिए स्तूप और स्थान की पवित्रता में अधिक संवर्धन किया। यह पुष्पगिरि महाविहार पर एक पहाड़ी के शिखर पर बने भव्य स्तूप के विषय में, 7 वीं शताब्दी ईस्वी के एक चीनी यात्री ह्वेनसांग का वर्णन भी याद दिलाता है, जो अपनी पवित्रता के कारण एक चमकीली रोशनी छोड़ता था। पुष्पगिरि की ललितागिरि के साथ पहचान के लिए खोज जारी है।

उपरोक्त सभी यात्रियों के लिए ललितागिरि को प्रथम प्राथमिकतापूर्ण स्थान बनाते हैं, विशेषकर सुदूर पूर्वी और दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के विशेष समूहों के लिए।

रत्नागिरि :-

कटक जिले में बिरुपा नदी घाटी का रत्नागिरि नामक स्थान एक प्रसिद्ध बौद्ध केन्द्र है। इसी नाम से एक गांव के निकट छोटी पहाड़ी पर समृद्ध पुरातत्वीय अवशेष हैं। एक बड़े पैमाने के उत्खनन ने दो बड़े मठों, एक बड़ा स्तूप, बौद्ध मंदिर, मूर्तिकलाएं और कई संख्या में मनौती के स्तूप खोज निकाले। उत्खनन से कम से कम गुप्त राजा नरिसिंह गुप्त बालादित्य (6ठी शताब्दी ईस्वी का पूर्वार्ध) के समय में इस बौद्ध केन्द्र की स्थापना का पता चला है। बौद्ध धर्म इस स्थान पर 12 वीं शताब्दी ईस्वी तक अनवरुद्ध ढंग से विकसित हुआ। आरंभ में यह बौद्ध धर्म के महायान रूप का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था। 8 वीं शताब्दी ईस्वी के दौरान यह तांत्रिक-बौद्ध धर्म या वज्रयान कला और दर्शन का एक महान केन्द्र बन गया। 'पग समजोन जांग' (एक तिब्बती स्त्रोत) यह इंगित करता है कि 10 वीं शताब्दी ईस्वी में 'काल चक्रतंत्र' के उद्‌भव में रत्नागिरि के संस्थान ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। रत्नागिरि में उत्खनन से खोजे गए, वज्रायान पंथ के देवताओं की उभरी आकृतियों समेत अनगिनत मन्नत के स्तूपों, इन देवताओं की पृथक प्रतिमाओं और पत्थर की शिलाओं पर खुदे लेखों और धरनियों समेत ढाले गए टेराकोटा पट्टियों से यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है।

उपरोक्त सभी बहुत समय पहले से ही रत्नागिरि का उड़ीसा के मुख्य बौद्ध केन्द्र के रूप महत्व बतलाते हैं। जैसा कि उड़िया शिलालेखों से ज्ञात होता है, रत्नागिरि में महाविहार बौद्ध दर्शन में शिक्षा का एक बड़ा केन्द्र था। वर्तमान में बौद्ध शिक्षा का यह विश्वविद्यालय खण्डहरों में पाया जाता है जो प्रत्येक वर्ष यात्रियों की भीड़ आकर्षित करते हैं। कला और वास्तुकला के प्रेमियों, यात्रियों और विशिष्ट समूहों के लिए, रत्नागिरि अपने खण्डहरों में सुंदर द्वारों, कक्षों, गर्भगृह, विशाल-बौद्ध प्रतिमा समेत एक मंदिर और कई बौद्ध शिल्पकला युक्त एक बड़ा ईंटों से बना मठ दर्शाता है। उसी स्थान पर एक पत्थर के मंदिर, ईंटों के बने मंदिरों और छोटे छोटे स्तूपों से घिरे एक बड़े स्तूप समेत एक छोटा मठ भी है।

उदयगिरि :-

उड़ीसा के सबसे बड़े बौद्ध भवन समूह, उदयगिरि, ने अभी हाल के उत्खनन कार्य के चलते और अधिक महत्व अर्जित कर लिया है, जिसमें मठ के प्राचीन नाम 'माधवपुरा' 'महाविहार' पता चला और कई बौद्ध मूर्तिकलाओं समेत ईंटों से बने मठ का एक विशाल भवन समूह आलोक में आया। वास्तव में संपूर्ण क्षेत्र एक पहाड़ी की पृष्ठभूमि में एक पादपर्वत पर स्थित है।

अंग्रेजी के अक्षर 'यू' (U) के आकार की पहाड़ी की घाटी पर स्थित यह बौद्ध केन्द्र अब भी पूर्णतः उत्खनित नहीं हुआ है। निकटवर्ती रत्नागिरि और ललितागिरि के साथ ही यह उड़ीसा पर्यटन का लघु 'स्वर्णिम त्रिकोण' बनाता है।

उदयगिरि पुरातत्वीय अवशेषों में ईंट से बना एक स्तूप, ईंटों से बने दो मठ (एक उत्खनिज और दूसरा अनुत्खनिज), एक सुंदर पत्थर की सीढ़ियों से युक्त कुआं और पीछे की पहाड़ी के शिखर पर चट्टानों को काट कर बनी मूर्ति कला सम्मिलित है। कालक्रमानुसार, उदयगिरि बौद्ध भवन-समूह रत्नागिरि और ललितागिरि के बाद का है और संभवतः मठ 7 वीं शताब्दी ईस्वी के मध्य फल-फूल रहे थे।

उत्खनित, आधी दबी पड़ी और 'सितु' से प्राप्त अधिकांश मूर्तियां स्पष्टतः बौद्ध पंथ की हैं और उनमें बोधिसत्व आकृतियां और ध्यानिस्थ बुद्ध की आकृतियां

हैं। विशेषबात यह है कि यद्यपि यह रत्नागिरि के निकट (लगभग 5 किलोमीटर पर) स्थित है तथापि उदयगिरि में अधिक वज्रायन प्रतिमाएं नहीं है। इस स्थल के बारे में अभी बहुत कुछ जानना बाकी है। किन्तु अपनी वर्तमान स्थिति में यह यात्रियों का अपने नवीनतम् उत्खनित विशाल फैले मठ भवन समूह के दर्शन प्रदान करता है, जहां एक लंबी सीढ़ियों के मार्ग से होकर पहूंचना होता है। अनुत्खनिज क्षेत्र अपने दबे पड़े छिपे खजाने के लिए पुरातत्वविदों और कला प्रेमियों को एक चुनौती-पूर्ण निमंत्रण देता है। चट्टानों को काट कर बनाई गई मूर्तियों का देखने के लिए पहाड़ी के शिखर तक की चढ़ाई बहुत जोखिम भरी और कठिन है।

नई बनी पहाड़ी सड़क, पादगिरि में जो सर्पाकार मार्ग बनाती है, उदयगिरि के दूसरी ओर एक अतिरिक्त आकर्षण है और सभी ऋतुओं में इस स्थल तक पहुंच सुनिश्चित करती है।

हिमाचल प्रदेश में बौद्ध मठ

जैसे ओस की बूंद उज्ज्वल समुद्र में समा जाती है, उसी प्रकार प्रबुद्ध बुद्ध की शिक्षा व्यक्ति के सार्वभौमिक जीवन से मिलन का प्रयास करती है। इस प्रकार वह निर्वाण प्राप्त कर सकता है और जन्म, पुनर्जन्म और कष्ट के चक्र का अन्त कर सकता है।

हिमाचल प्रदेश में, विश्व का एक ऐसा भाग है जहां प्रचुर प्राकृतिक सौंदर्य है और जहां दन्तकथाएं सत्यापनीय इतिहास के साथ मिलती दिखती हैं। वहां इसके परिदृश्य में बौद्ध मठ और गोम्पाएं बिखरे पड़े हैं। धन का कोई परिमाण इस अद्भुत कोष का मूल्यांकन नहीं कर सकता क्योंकि इसका महत्व कुछ ऐसा है जो अतुलनीय है।

कुछ गोम्पा उस समय के हैं जब बौद्ध धर्म इस क्षेत्र में एक छाया रहित पौधा था। इस क्षेत्र में इसका बीज 7 वीं शताब्दी ईस्वी में बोया गया जब तिब्बत के राजा सोंगसेन गंपो (Sron-b Tsan - Sgam -po) को उनकी दो पत्नियों - चीन की वेन वेग और नेपाल की ब्रिकुटि देवी-ने प्रभावित किया। एक शताब्दी बाद राजा त्रिसोन देतसेन (Khri-Sron-Ide-Bstan 755-779 ईस्वी) ने बुद्ध का मार्ग अपनाया।

और भारत से संतर्क्षिता जैसे गुरू और प्रसिद्ध शिक्षक और तांत्रिक पद्मसंभव आए। नौवीं शताब्दी में बौद्ध धर्म के प्रसार में कुछ रुकावट दिखी और ग्यारहवीं शताब्दी ने एक महान पुनर्जीवन और यह युग महान शिक्षकों का था- जैसे अंशा, मार्पा, मिलारेपा और रिचेनसांग पो। समय के साथ बौद्ध धर्म तिब्बत, लद्दाख, लाहौल और स्पीति का प्रमुख धर्म बन गया और इसका प्रभाव किन्नौर जैसे पड़ोस के क्षेत्रों पर भी पड़ा। और गंम्पो- अपने धार्मिक प्रभाव के अतिरिक्त- सत्ता के स्त्रोत और क्षेत्र की कथा और पाण्डुलिपियों के भंडारगृह भी हो गए। एक सहस्त्रा दी पुराना ताबो, क्षेत्र के सर्वाधिक सम्मानित मठों में से एक है।

कुछ ऐसे मठ हैं जो मात्र कुछ एक दशक पुराने होंगे और 1959 के बाद बने, जब दलाई लामा अपने कई अनुयाइयों के साथ तिब्बत छोड़कर भारत में रहने आ गए।

शिमला : शिमला में दो नवीनतम् निर्मित मठ हैं- हिमालय पार बौद्ध धर्म के गेलुक-पा संप्रदाय का संजौली में और न्यिंगमा-पा का कासुंपरी में।

किन्नौर : किन्नौर के मनोरम परिदृष्य में तैंतिस बौद्ध मठ और मंदिर हैं। निजिंगमा-पा, दृग-पा और गेलुक-पा पंथों का अच्छा प्रतिनिधित्व है। किन्नौर से सांगला घाटी के नाम से भी सुविख्यात बसपा घाटी जाते समय रास्ते में (शिमला से 130 किलोमीटर दूर) रामपुर में 19 वीं शताब्दी का छोटा सा बौद्ध मंदिर और (रामपुर से 95 किलोमीर दूर) किलबा में द्रुग-पा मंदिर, सतलज नदी के बाएं तट पर स्थित हैं।

रेकोग-पा (सांगला गांव से 38 किलोमीटर), किन्नौरी जिला मुख्यालय है और यहां एक हाल ही में बना 'गोम्पा' है जहां पवित्र दलाई लामा ने 1992 में 'कालचक्र' समारोह किया था। सुंदर दृश्यों समेत कालपा की प्राचीन बस्ती, रेकोग-पेओ के ऊपर स्थित है। यहीं पर हू-बू-लान-कार गोम्पा है जिसे, कहते हैं, रिचेनसांग-पो (950 - 1055 ईस्वी) ने स्थापित किया था।

रेकोंग- पेओ से 107 किलोमीटर दूर नाको है। नाको के निकट एक चट्टान है जहां एक पदचिन्ह जैसी छाप है जिसे पद्मसंभव का बताया जाता है।

रेकोंग-पेओ से 7 किलोमीटर दूर यांगथांग के निकट सडक के एक तरफ एक गांव पन्ने जैसी एक झील के आस-पास बसा है। इसके उत्तरी ओर चूने से बनी आकृतियों और भित्तियों से सजे चार बौद्ध मंदिर है। गांव के अंदर ही दो मंदिरों में बड़े प्रार्थना-चक्र हैं।

नाको जाते समय (जांगी से 14 किलोमीटर दूर) लिप्पा के लिए जहां से मार्ग दिशा परिवर्तन करते हैं वहां गोम्पा में तीन मंदिर हैं। कानुम (स्पिलो से पहुंचा जा सकता है), एक पूर्णतः मठीय गांव है और रिनचेन सांग-पो के समय का है। कानुम का अर्थ है 'पवित्र पुस्तकों का एक स्थान'। यहां सात बड़े और छोटे मंदिर और कई स्मारक मन्दिर हैं। पूह (राजमार्ग पर) में एक द्रुग-पा मठ है।

किन्नौर जिले में अन्य बौद्ध मठ और मंदिर बारिंग, रारांग, रोपा, सुमरा, पोआरी, पूरबनी, पांग, तेलिंग, रिब्बा, रिस्पा, भूरांग, ताशिगांग, थांगी, चोरंग, नामगिया, श्लाशु, सुनाम, स्पिलो, लिओ, चांगो, हांगो और शालकर में हैं।

स्पीति : स्पीति के भूभाग में तैंतिस मठ फैले हैं। अधिकांश गोजुक-पा पंथ से संबद्ध हैं। पिन घाटी में सात गोम्पा न्यिंगमा-पा पंथ के हैं, जबकि काजा और हिकिम वाले साक्य-पा पंथ के। स्पीति की अंतर्मुखी सभ्यता में, शताब्दियों से जीवन इन्हीं मठों के आस पास घूमता रहा है।

नाको से 65 किलोमीटर दूर ताबो 996 ईस्वी में महान शिक्षक रिनचेन सांग-पो द्वारा स्थापित किया गया। ताबो अपनी भित्तियों और गज आकृतियों के लिए विख्यात है- और प्रायः 'हिमालय की अजंता' कहलाता है। स्पीति में सबसे बड़े मठीय भवन समूहों में, पुराने अनुभाग में 9 मंदिर, 23 चोर्टेन, एक भिक्षुओं का कक्ष और एक भिक्षुणियों का कक्ष है। कई गुफाएं भित्तिचित्रों और समकालीन ढांचों से भी सुशोभित हैं। हिमालयपार बौद्ध धर्म में, ताबो, तिब्बत के थोकिंग गोम्पा के बाद सर्वाधिक पवित्र माना जाता है।

ताबो से 47 किलोमीटर दूर काज़ा है। यह स्पीति का उप-खण्डीय मुख्यालय है और यहां एक गोम्पा है। ताबो से चल कर शिचलिंग से 7 किलोमीटर दूर एक किनारे की सड़क पर धनकर गोम्पा है। यह घाटी में ऊँचे पर स्थित है और यहां स्थानीय वास्तुकला का एक विस्मयकारी उदाहरण है। माना जाता है कि

कभी यह एक किला और स्पीति के राजा नोनो का आवास भी होता था। धनकर, भोटि लिपि में बौद्ध पाण्डुलिपियों का भंडारगृह है।

'की' मठ काज़ा से 12 किलोमीटर दूर है। यह शताब्दियों पुराना गोम्पा, कमरों और गलियारों की एक भूलभुलैया है, और एक समय पर किले का भी काम देता था। इसमें बहुमूल्य थंगका रखे हुए हैं और यह संपूर्ण क्षेत्र का एक विशाल परिदृश्य प्रदान करता है।

'की' गोम्पा से 9 किलोमीटर दूर, किब्बर, एक छोटा गोम्पा है। किब्बर को एक मोटर चालन योग्य सड़क द्वारा जुड़े क्षेत्र के सर्वोच्च स्थायी गांव होने का गौरव प्राप्त है।

पिन घाटी गोम्पाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण गोम्पा गुंगरी में है। इसमें तीन प्रखण्ड जिनमें पुराने स्मृतिशेष और चित्रकलाएं संरक्षित हैं। स्पीति के अन्य गोम्पा लोसार, हान्सा, रांग्रिक, कुआंगा, क्यूलिंग, लांगजा, लारा, लिदांग, दोमल, सांगलुंग, रामा, लहालुन, माने योगमा, माने गोगमा, गिऊ और कौरिक में हैं।

लाहौल :-

लाहौल की सुदृढ़ भव्यता में 29 बौद्ध मठ हैं। लगभग सभी मठ द्रुग-पा मत से संबद्ध हैं।

कुंजम पास (4551 मीटर) पर से एक सड़क कीलांग जाती है, जो लाहौल-स्पीति का जिला मुख्यालय है। नगर की सीमाओं के दायरे में एक गोम्पा के अतिरिक्त, यह क्षेत्र में अन्य मठों की यात्रा के लिए एक आदर्श आधार के रूप में भी काम आता है।

कीलांग से 8 किलोमीटर दूर, गुरू घंटाल, चंद्रा और भागी नदियों के संगम पर स्थित है। यह लाहौल का सबसे पुराना मठ माना जाता है। पद्मसंभव और रिनचेनसांग- पो, दोनो ही इससे संबद्ध थे। इस मंदिर में वज्रेश्वरी देवी की काले पत्थर की एक प्रतिमा, बुद्ध की एक लकड़ी की आकृति

और अवलोकितेश्वर का संगमरमर का बना सिर है। यह भी कहते हैं कि एक अंधेरे, हवा रहित कमरे में राक्षस त्सेदक की आकृति बंद है, जो पकड़े जाने तक क्षेत्र में लूट पाट मचाता रहा था।

कीलांग से 5 किलोमीटर दूर करदांग, द्रुग-पा पंथ के सर्वाधिक पूज्य स्थानों में से एक है। इसमें पाण्डुलिपियों का एक बड़ा संग्रहालय है और यह कुछ उत्कृष्ट थंगका चित्रकला, वाद्य यंत्रों जैसे बांसुरियों, ढोलों और भोंपू और पुराने हथियारों का भण्डार भी है।

कीलांग से 3 किलोमीटर दूर शाशुर, देवा ग्यात्शो द्वारा स्थापित किया गया। यह 17 वीं शताब्दी का गोम्पा प्रत्येक जून/जुलाई में होने वाले शाशुर त्सेशे उत्सव के लिए प्रसिद्ध है जब भिक्षु रंगविरंगें वस्त्रों और विस्तृत रूप से सजे मुखौटों की वेशभूषा में 'राक्षस नृत्य' करते हैं। मठ अपनी चित्रकला और आकृतियों के लिए विख्यात है।

तायुल, कीलांग से 6 किलोमीटर पर है। तायुल का अर्थ है 'स्थान जो चुना गया'। इसमें पद्मसंभव की एक विशाल प्रतिमा और इसके ग्रंथालय में पवित्र कांगयुर ग्रंथों के 101 खण्ड हैं।

कीलांग से 18 किलोमीटर पर एक छोटा गोम्पा, प्रत्येक जुलाई में होने वाले 'दैत्य नृत्य-नाटिका' के लिए विख्यात है।

लाहौल में बौद्ध धर्म से संबद्ध अन्य स्थान हैं- त्रिलोकीनाथ, उदयपुर, लिंदुर, बोकार, गुमरांग, टिनना, कोलोंग, जिस्पा, तिंगल, दार्चा, दोंगमा, लापचांग, थोला-प्यासू, झोलिंग, पिउकर, खिनांग, जागदांग और ओथांग।

मनाली :-

मनाली, कीलांग से 115 किलोमीटर दूर है। रोहतांग दर्रे (3980 मीटर) से होकर मनाली और उसके आस पास हाल ही में बने चार मठों की यात्रा की जा सकती है।

रेवलसर :-

रेवलसर, मनाली से 132 किलोमीटर दूर है। जनश्रुति के अनुसार रेवलसर वह स्थान था जहां से पद्मसंभव 8 वीं शताब्दी ईस्वी में बुद्ध की शिक्षा के प्रचार के लिए तिब्बत रवाना हो गए थे। रेवलसर झील के आस-पास तीन मठ हैं। ये यद्यपि पुननिर्मित हैं तथापि सबसे पुराना न्यिंगमा-पा पंथ का है और सर्वथा उचित रूप से इसकी मुख्य प्रतिमा पद्मसंभव की है। प्रार्थना पताकाओं से सज्जित, झील में तैरते छोटे-छोटे टापू हैं, जहां, कहते हैं, पद्मसंभव की आत्मा वास करती है।

कांगड़ा :-

एक पूर्ववर्ती उपनिवेशी आश्रय, (रेवलसर से 160 किलोमीटर दूर) मैकलेओडगंज, 1959 में तिब्बतियों के अपनी गृहभूमि से बड़े पैमाने पर प्रस्थान के बाद प्रसिद्ध हुआ। यह पवित्र दलाई लामा का आवास स्थल है और विशाल धौलाधार पर्वतों की पृष्ठभूमि में तिब्बत की निर्वासित सरकार विगत साढ़े तीन दशकों से यहीं पर स्थित और कार्यरत है। तिब्बत की पारंपरिक वास्तुशिल्पीय अभिकल्पना सहित, प्रभावशाली नांग्याल मठ प्रार्थना चक्रों की एक पंक्ति से घिरा है और इसमें बुद्ध, पद्मसंभव और अवलोक्तेश्वर की जीवन्त प्रतिमाएं हैं।

सिक्किम :-

त्सुक-ला-खांग, गैंग्टॉक में शाही प्रार्थनागृह बौद्ध धर्म के लोगों की पूजा-अर्चना और सभा का मुख्य स्थान और पाण्डुलिपियों के एक बड़े संग्रह का भण्डार है। यह एक सुंदर और प्रभावशाली भवन है, और इसकी आंतरिक सज्जा भित्तियों से ढंकी है। मुक्त रूप से सज्जित वेदी में बुद्ध, बोधिसत्वों और तांत्रिक देवताओं की प्रतिमाएं रखी हैं और वहां बहुत ही उत्कृष्ट लकड़ी पर नक्काशी भी है। यह सिर्फ़ तिब्बती नव वर्ष में यात्रियों के लिए खुलता है, जब बुराई पर अच्छाई की विजय दर्शाता प्रसिद्ध काली टोपी नृत्य (Black Hat Dance) होता है।

दोद्रुल चोरटेन :-

यह सिक्किम के सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्तूपों में से एक है। स्तूप का सुनहरा

शिखर गैंग्टॉक के कई स्थानों से दिखता है। यह न्यिंगमा पंथ के मुखिया, स्वर्गीय त्रुलसी रिमपोचे द्वारा राज्य में शांति बनाए रखने के लिए देवताओं के आवाहन हेतु बनवाया गया। चोरटेन में पवित्र कागयुर पुस्तकों, मंत्रों, धार्मिक वस्तुओं और स्मृतिशेषों का पूरा सेट (Set) रखा है। यह 108 प्रार्थना चक्रों द्वारा घिरा हुआ है। मुख्य चोरटेन के आगे एक छोटा चोरटेन, झंग चुब चोरटेन त्रुलसी रिमपोचे की स्मृति में बनवाया गया।

एनचे मठ :-

यह गैंग्टॉक में एक 200 वर्ष पुराना मठ है। यह स्थल, तांत्रिक गुरू लामा द्रुपताब कारपा द्वारा आशीष प्राप्त है, जिन्हें, माना जाता है कि उड़ने की शक्ति प्राप्त थी।

रूमटेक मठ :-

गैंग्टॉक के सामने, 24 किलोमीटर दूर, काग्यू- पा पंथ की गद्‌दी है। यह पंथ 11 वीं शताब्दी में भारतीय गुरू नारोपा के शिष्य लामा मारपा द्वारा स्थापित किया गया, जो बाद में कई उप-पंथों में बंट गया, जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं द्रुक-पा, काग्यू-पा और कार्मा-पा। पंथ की शिक्षा, शिष्यों को मौखिक रुप में दी जाती है।

सिक्किम में सबसे बड़ा मठ, अभिकल्पना में पारंपरिक, सुंदर भित्तियों और धार्मिक वस्तुओं समेत यह तिब्बत में स्थित मूल मठ की लगभग प्रतिकृति है। यह मठ 1960 में काग्यू पंथ के मुखिया 16 वें ग्यालवा कर्मापा द्वारा स्थापित किया गया। इस मठ के संपूर्ण विश्व में 200 केन्द्र हैं।

फोडोंग मठ :-

यह मठ गैंग्टॉक के उत्तर में 38 किलोमीटर दूर स्थित है। यह रूमटेक से कहीं छोटा और कम सज्जित है। यह काफी नया ढांचा है और यहां रूमटेक की अपेक्षा कहीं कम भिक्षु हैं।

लाब्रांग मठ :- यह फोडोंग मठ से 2 किलोमीटर दूर है और एक काफी पुराना ढांचा है।

पेमायांगत्से मठ :- यह राज्य के सबसे पुराने और सर्वाधिक महत्वपूर्ण मठों में से एक है। यह 1705 में स्थापित हुआ किंतु 1913 और 1960 के भूकंपों में बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया। यह कई बार पुर्ननिर्मित हुआ और यह तांत्रिक न्यिंगमा-पा पंथ का है, जिसे पद्मसंभव द्वारा 8 वीं शताब्दी में स्थापित किया गया। इस पंथ के सभी मठ दो महिला सहचरियों समेत इस शिक्षक की एक प्रमुख आकृति द्वारा परिलक्षित होते हैं और यह मठ सिक्किम में अन्य सभी का प्रमुख है। इस पंथ के अनुयाई लाल टोपियां पहनते हैं।

मठ एक तीन मंजिली ढांचा है, जिसमें चित्रकला और मूर्तिकला और साथ ही जंदोग-पैरी गुरू रिमपोचे के निवास का सात परतों का एक लकड़ी का बना रंगा हुआ संबोध-गितिका, इंद्रधनुषों से परिपूर्ण, और बुद्ध और बोधिसत्व के पूरे कवच भी पाए जाते हैं।

ताशदिंग मठ :- 1717 में बना, यह गैंग्टॉक से 103 किलोमीटर दूर है। एक पहाड़ी के शिखर पर न्गांदांक सेम्पा चेम्पो, तीन में से एक लामा, जिन्होंने पहले चोगयाल का अभिषेक किया, द्वारा स्थापित किया गया। इसमें कई चोरटेन और मंत्रों से खुदी पट्टियां हैं, जिनकी नक्काशी उस्ताद कारीगर यानचोंग लोदिल द्वारा की गई। जनवरी/फरवरी में पवित्र जल के पात्र का बुमयू समारोह होता है जिसमें हजारों श्रद्धालु आते हैं।

आंध्र प्रदेश के बौद्ध स्थल

आंध्र प्रदेश में बौद्ध परंपरा की एक समृद्ध विरासत है। आंध्र प्रदेश में बौद्ध स्थल तटीय क्षेत्र के साथ-साथ, ऊपर तक कृष्णा नदी के किनारे राज्य के हृदय स्थल तक केन्द्रित हैं। आंध्र तट के पूर्वी बन्दरगाह, बर्मा और श्रीलंका में बौद्ध धर्म और संस्कृति के प्रसार के लिए प्रवर्तन स्थल थे।

आंध्र प्रदेश में महत्वपूर्ण बौद्ध स्थल इस प्रकार हैं :

नागार्जुनकोण्डा:-

यहां एक बौद्ध बस्ती के उत्खनित खण्डहर ईसा पूर्व द्वितीय और तृतीय शताब्दी के हैं। कई मठ और अन्य पुरातत्वीय उपलब्धियां, जैसे नहाने

के घाट और अखाड़े, एक गांव में पाए गए जो बाद में एक बांध के निर्माण के दौरान जलमग्न हो गए। सभी उपलब्ध कला-वस्तुएं बचा ली गईं और मठों और चेत्यों की भवन सामग्री का एक-एक ईंट करके जिसे प्राचीन काल में श्री पर्वत कहते थे। यहां आरंभिक औजार पुनर्निर्माण किया गया नागार्जुन कोण्ड नामक एक पहाड़ी के शिखर पर मिले हैं जिन्हें नागार्जुनकोण्डा टापू पर एक आकर्षक संग्रहालय में देखा जा सकता है।

इक्ष्वाकुओं के शासन के दौरान श्री पर्वत फला-फूला। इक्ष्वाकु एक ब्राह्मणवादी समाज था और वे प्राचीन हिन्दू अनुष्ठानों,जैसे अश्वमेघ यज्ञ, का आचरण करते थे। किन्तु उनकी पत्नियां बौद्ध धर्म का अनुसरण करती थीं। इन शाही महिलाओं के संरक्षण में कई महान बौद्ध मंदिर बने। यह टापू अपना वर्तमान नाम, नागार्जुनकोण्डा, महान बौद्ध भिक्षु नागार्जुन आचार्य से पाता है, जो बौद्ध धर्म की महायान शिक्षा के क्रमबद्ध कारक थे।

अम्रावती :-

प्राचीन समय में धान्याकटक नाम से विख्यात, अम्रावती, बौद्ध धर्म का सर्वाधिक पवित्र तीर्थ केन्द्र माना जाता था। विजयवाड़ा से 38 किलोमीटर दूर स्थित इस स्थान पर गुंटूर से होकर पहुंचा जा सकता है। अम्रावती सतूवाहनों की राजधानी थी। महान स्तूप या महाचैत्य, जिसकी खोज 1797 में की गयी जिसका व्यास 50 मीटर और ऊँचाई 27 मीटर थी, आंध्र प्रदेश में सबसे बड़ा था। इसमें ईंटों से बनी एक गोलाकार वेदिका है अथवा चार दिशाओं में निकले हुए आयताकार चबूतरों समेत बेलन है। बुद्ध के जीवन की पांच मुख्य घटनाओं - जन्म, सन्यास हेतु त्याग, ज्ञानोदय, प्रथम प्रवचन और अंतिम विलोप- का प्रतिनिधित्व करते पांच 'आयक' स्तंभ खड़े रहे होंगे। यहां बड़ी मात्रा में संगमरमर की प्रतिमाएं पाई गईं। महाचैत्य का इतिहास 1700 वर्ष का है, ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी से लेकर 14 वीं शताब्दी ईस्वी तक मान लिया गया है कि इसका शिलान्यास, बौद्ध धर्म के प्रसार हेतु भेजे गए अशोक के एक दूत, महादेव भिक्षु द्वारा किया गया। एक बड़ी संख्या में विशाल सांस्कृतिक खजाना जो स्तूपों से प्राप्त हुआ, ब्रिटिश संग्रहालय, लन्दन के संग्रहालय और राष्ट्रीय संग्रहालय, दिल्ली में प्रदर्शन की वस्तुएं बन गए।

विजयवाड़ा अम्रावती पहुंचने के लिए सबसे निकट का हवाई अड्डा है (82 किलोमीटर)। सबसे निकट के रेलवे स्टेशन हैं गुंटूर (32 किलोमीटर) और विजयवाड़ा।

शंकरम् :-

यह वाइजाग जिले में अन्नकपल्ले के 5.5 किलोमीटर उत्तर में स्थित है। बोज्जनकाण्डा और लिंगलकोण्डा की जुड़वा पहाड़ियां बौद्ध खजाने का एक भण्डार हैं। यह स्थल 1907- 1908 में उत्खनित किया गया। समुद्रगुप्त के समय के एक सोने के सिक्के समेत द्वितीय शताब्दी (ईसा पूर्व) से लेकर 6 ठी शताब्दी ईस्वी तक की पुरावस्तुएं खोजी गईं। असंख्य मन्नती स्तूप, चट्टान काट कर बनाई गई गुफाएं और भवन खोजे गए जो प्रथम शताब्दी ईस्वी के हैं।

पुराने संघराम (अब बिगड़कर शंकरम्) के अवशेष दो समीप की पहाड़ियों तक बिखरे पड़े हैं। लिंगलकोण्डा में असंख्य चट्टान काट कर बनाए गए अखण्डित स्तूप, कतारों में पूरी पहाड़ी पर बिखरे है। इन्हें स्थानीय लोग भूल से शिवलिंग मान बैठे हैं। बोज्जनकोण्डा के शिखर से आसपास के ग्रामीण क्षेत्र का आकर्षक नजारा दिखता है।

तोतलाकोण्डा और भावीकोण्डाः-

वइजाग के बाहरी घेरे में दो और बौद्ध स्थल हैं- भाविकोण्डा और तोतलाकोण्डा। दोनों ही 2 से 3 किलोमीटर दूर हैं। विभिन्न स्तूप, चैत्य और विहार इन स्थानों पर खोजे गए हैं।

हुसैन सागर झीलः-

यहां हुसैन सागर झील के मध्य में एक चट्टान पर भगवान बुद्ध की एक विराट 350 टन की एक पत्थर से बनी प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यह बौद्ध आंध्र के स्वर्णिम काल का एक श्रद्धेय स्मारक है।

अध्याय - 7

ज्योतिर्लिंगम
(Jyotirlingams)

ज्योतिर्लिंगम/ज्योतिलिंगम का शाब्दिक अर्थ है 'ज्योति का लिंग'। भारत के 12 केन्द्रस्थलों पर पाए जाने वाले ज्योतिर्लिंगम की पुराणकथा ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी की है। यह कथा, ब्रह्मा और विष्णु के मध्य वरीयता हेतु एक लंबे विवाद से उपजती है। दन्तकता के अनुसार इस विवाद के दौरान, ज्योति के एक उद्दीप्त स्तंभ के प्रकटीकरण हेतु पृथ्वी फट पड़ी। इस स्तंभ के स्रोत को पाने के लिए विष्णु एक शूकर का रूप धारण कर जमीन खोद कर भूमिगत हो गए जबकि ब्रह्मा एक गरुड़ का रूप धर आकाश में उड़ चले। लिंग से शिव प्रकट हुए और ब्रह्मा और विष्णु दोनों ने ही स्वीकारा कि वे (शिव) ही सभी देवताओं में महान हैं। 'लिंगम' रूपविहीन अथवा शिव के 'निरंकार' रूप का प्रतीक है।

इस प्रकार ज्योतिर्लिंग को "रूवयंभू" (स्वयं द्वारा उत्पन्न) और स्वयं से ही ऊर्जा की तरंगे "शक्ति" ग्रहण करता माना जाता है, जिसके विपरीत अन्य प्रतिमाएं और लिंग जिन्हें अनुष्ठान द्वारा स्थापित किया जाता है और पण्डितों द्वारा मंत्र शक्ति से अभिषिक्त किया जाता है, इसके विपरीत ज्योतिर्लिंग के संबंध में विश्वास है कि वह स्वयंभू (स्वयं से उत्पन्न) तथा ऊर्जा तरंगों (शक्ति) को अपने ही अर्न्तजगत से प्राप्त करता है।

ज्योतिर्लिंग के स्थल

पुराणों के अनुसार 12 ज्योतिर्लिंग समुद्र तटों, नदी तटों, पहाड़ों के शिखर और मैदानों में पाए जाते हैं। वे निम्नलिखित हैं-

2 समुद्र तटों पर - रामेश्वरम् और सोमनाथ।

4 नदी तटों पर - विश्वनाथ, ओमकारेश्वर महाकालेश्वर, और नागनाथ/नागेश्वर

4 पहाड़ों पर - भीमशंकर, केदारनाथ, वैद्यनाथ और श्री मल्लिकार्जुन

2 मैदानों पर - गृष्णेश्वर, त्र्यम्बकेश्वर

शिवपुराण इन स्थलों का उल्लेख निम्नलिखित श्लोकों में करता है-

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्।।
उज्जयिन्यां महाकालमोङ्कारे परमेश्वरम्।।
केदारं हिमवत्पृष्ठे डाकिन्यां भीमशङ्करम्।।
वाराणस्यां च विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे।।
वैद्यनाथं चिताभूमौ नागेशं दारुकावने।।
सेतुबन्धे च रामेशं घुश्मेशं च शिवालये।।
द्वादशैतानि नामानि प्रतिरुत्थाय यः पठेत्।।
सर्वपापैर्विनिमुक्तः सर्वसिद्धिफलं लभेत्।।

—शिवपुराण—कोटिरुद्रसंहिता १/२१—२४

हिन्दुओं के लिए ज्योतिर्लिंग का महत्वः

हिन्दू जीवन का दृष्टिकोण, 'मोक्ष' अथवा जन्म और पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति प्राप्त कर परमात्मा के साथ विलय हेतु 'धर्म', 'अर्थ' और 'काम' के सही अनुपात के माध्यम से एक संतुलित जीवन व्यतीत करने पर आधारित है। निर्णायक तत्व होते हैं हमारे 'कर्म अथवा हमारे कृत्य और क्रियाएं। हमारे जीवन के दृष्कृत्यों का परिणाम हमारे दुष्कर्म होते हैं और सत्क्रियाएं, सत्कर्म, जो हमें और एक उच्चस्तरीय 'योनि' में पुनर्जन्म की ओर; और पुनर्जन्म से शाश्वत मुक्ति के एक सोपान निकट ले जाती हैं।

इस प्रकार, शिव के 12 अवतारों के रूप में मान्य, ज्योतिर्लिंगों की यात्रा से व्यक्ति कुछ ऐसा प्राप्त करता है जो उसकी स्वयं की उन्नति हेतु होता है, जैसे इच्छा पूर्ति, पाप धोना, रोगों से छुटकारा, एक पुत्र की प्राप्ति और 'मोक्ष'।

सामान्यतः, प्रातः प्रत्येक ज्योतिर्लिंग के नाम का उच्चारण अथवा ज्योतिर्लिंग से प्रसाद ग्रहण, इच्छाओं की पूर्ति और पापों के प्रायश्चित की ओर ले जाता है।

कालक्रमानुसार :

कालक्रमानुसार इन ज्यातिर्लिंगों को निम्नवत् रखा जा सकता है :

1. सोमनाथ
2. मल्लिकार्जुन
3. महाकालेश्वर
4. ओमृकारेश्वर/अमरेश्वर
5. केदारनाथ
6. भीमशंकर
7. विश्वनाथ
8. त्र्यम्बकेश्वर
9. वैद्यनाथ
10. नागेश्वर/औध नागनाथ
11. रामेश्वरम्
12. गृष्णेश्वर/घुश्मेश्वर

सोमनाथ

स्थिति :

सोमनाथ, गुजरात के सौराष्ट्र में वेरावल से 6 किलोमीटर दूर 'प्रभास पाटन' नामक एक गांव में अरब सागर पर स्थित है।

दन्तकथा :

शिव पुराण के अनुसार, प्रजापति दक्ष ने अपनी 27 पुत्रियों का विवाह चंद्रमा अथवा 'सोम' से कर दिया। किन्तु उनका, उनमें से एक, रुकमणी की ओर अधिक झुकाव था। चंद्रमा की इस मानसिकता ने बाकी अन्य पत्नियों को क्षुब्ध कर दिया, जिन्होंने अपने पिता से शिकायत की। दक्ष ने धीरे से चंद्रमा को अपनी सभी पत्नियों के साथ समान व्यवहार करने की सलाह दी, किन्तु कोई प्रभाव न हुआ। परिणामस्वरूप क्षुब्ध दक्ष ने चंद्रमा के क्षय रोग का शाप दे दिया, जिसके परिणामस्वरूप चंद्रमा कमजोर होने लगे और उनका ह्रास होने लगा। इससे बड़ी भारी समस्या उत्पन्न होने लगी। सभी देवताओं ने ब्रह्मा से प्रार्थना की, जिन्होंने चंद्रमा को शाप मुक्ति के लिए भगवान शिव की उपासना करने को कहा।

चंद्रमा ने एक 'शिवलिंग' बनाया और लगातार छः माह तक आराधना करते रहे। शिव उनके समक्ष प्रकट हुए, 'सोम' अथवा चंद्रमा ने रोग से मुक्ति की इच्छा प्रकट की। शिव ने उन्हें बताया कि वे माह में 15 दिन के लिए दुर्बल और क्षीण हो जाएंगे और आगामी 15 दिनों में स्वस्थ। इस प्रकार चंद्रमा ने अपनी खोई हुई आभा और चमक पुनः प्राप्त की और इसलिए भी इस स्थान को 'प्रमास (द्युतिमान) पाटन' कहते हैं। चंद्रमा को सोम भी कहते हैं। इस प्रकार इस स्थान को सोमनाथ कहते हैं, क्योंकि मान्यता है कि शिव यहां एक 'ज्योतिर्लिंग' के रूप में रहते हैं, 'लिंग' उनका निर्गुण रूप है।

सोमनाथ मंदिर :

सोमनाथ मंदिर का इतिहास बहुत उतार-चढ़ाव से युक्त है। जैसे जैसे इसका इतिहास दन्तकथा में विलुप्त होता गया यह मान्यता उभरी कि यह मूलतः स्वर्ण का बना था, बाद में रावण ने चांदी से, कृष्ण ने लकड़ी से और ब्रह्मा ने पत्थर से इसका निर्माण कराया।

एक अरब यात्री, अल-बिरुनी, द्वारा मन्दिर का वर्णन इतना उज्ज्वल था कि उसने 1024 ईस्वी में गजनी के महमूद को यहां की यात्रा के लिए तैयार किया और उसने इसे लूट लिया। उस समय यह मंदिर इतना समृद्ध था कि उसमें 300 संगीतकार, 500 नर्तकियां, और सिर्फ यात्रियों के सिर मुंड़ाने के लिए 300 हज्जाम

थे। गजनी ने, माना जाता है, लगभग 18 करोड़ रुपये के मूल्य का खजाना लूटा कि- "जवाहरातों, मोतियों और स्वर्ण के बोझ तले ऊँट कराह रहे थे" इतना इस तरह मुस्लिम विध्वंस और हिंदू पुर्ननिर्माण का एक प्रारूप आरंभ हुआ। दन्तकथाओं के अनुसार यह सात बार बनाया गया। यह 1169, 1325 और अंततः 1950 ईस्वी में पुनर्निमित हुआ। 1926 में अलाउद्दीन खिलजी के सेना नायक अलताफ खान ने, और फिर 1706 में औरंगजेब ने इसे लूटा और बर्बाद किया। 1706 के विध्वंस के बाद 1950 तक यह मंदिर पुर्ननिर्मित न हो सका, जब उसे सरदार पटेल ने बनवाया। वर्तमान मंदिर पारंपरिक प्रारूपों के अनुसार समुद्र के किनारे मूल स्थान पर बना। मंदिर के अंदर, दूसरी मंजिल से उत्कृष्ट दृश्य दिखता है और इसमें सात मंदिरों के उत्खनन कार्य और जीर्णोद्धार कार्य पर एक चित्र संग्रह भी है।

यात्रा का परिणाम :

इसके विभिन्न फलदाई परिणामों में, पापों से मुक्ति, रोग से मुक्ति और मोक्ष प्राप्ति सम्मिलित है।

मल्लिकार्जुन

स्थिति : यह आंध्र प्रदेश के कुर्नूल जिले में तुंगभद्र मल्लिकार्जुन नदी के तट पर स्थित है। यह स्थान 'दक्षिण का केदार' कहलाता है।

दन्तकथाएं :

1. पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर वापस लौट रहे, शिव और पार्वती के पुत्र कुमार कार्तिकेय को भगवान गणेश के विवाह के विषय में ज्ञात हुआ। उसे न बुलाने के लिए अपने माता-पिता से नाराज वे क्रोच पर्वत चले गए। उन्हें वापस लाने के लिए शिव ने कई संदेशवाहक भेजे किंतु वे सभी असफल रहे। तब शिव पार्वती उनके पीछे गए किंतु वे 12 योजन और आगे चले गए।

उनके पीछे जाने से पूर्व शिव-पार्वती ने इस पर्वतीय श्रंखला में 'ज्योति' के रूप में स्वयं को स्थापित कर दिया। इसलिए इस स्थान को मल्लिकार्जुन कहते हैं। 'मल्लिका' पार्वती का नाम है और 'अर्जुन' शिव के कई नामों में से एक है।

यह मान्यता है कि एक नई चांदनी रात में शिव यहां आते हैं और एक पूर्ण चंद्र रात्रि में पार्वती।

2. महाभारत काल में, अर्जुन 'कदली' वन की एक तीर्थ यात्रा पर गए। उनकी धनुर्विद्या के परीक्षण हेतु, एक झील के रूप में शिव उसी जंगली सुअर का पीछा करने लगे जिसका पीछा अर्जुन भी कर रहे थे। दोनों ने एक ही साथ सुअर को मारा और अपने-अपने स्वामित्व का दावा करने लगे। एक युद्ध के बाद अर्जुन विजयी हुए। शिव प्रसन्न होकर उनके समक्ष प्रकट हुए और 'किरातर्जुनीय' कहलाए।

मान्यता है कि यह 'ज्योतिर्लिंग' एक राजकुमारी चन्द्रावती, द्वारा पुनर्अन्वेषित किया गया जिसने इसके ऊपर एक मंदिर बनवाया था। यह दन्तकथा मंदिर में एक पत्थर पर खुदी है।

वैद्यनाथ मंदिर :

मंदिर के बहुत कम वर्णन उपलब्ध हैं। इसमें शिवाजी द्वारा निर्मित एक 'गोपुरम' है। जीर्णोद्धार बहुत बाद में इन्दौर की महारानी अहिल्या बाई होलकर ने करवाया।

यात्रा का परिणामः

पापों से छुटकारा।

महाकालेश्वर

स्थिति : महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग, मध्य प्रदेश के उज्जैन में शिप्रा नदी के तट पर स्थित है।

दन्तकथा : 'अवन्ती' (उज्जैन का प्राचीन नाम) एक पवित्र नगरी मानी जाती थी। यहां शिव का एक महान पुजारी, वेदप्रिय नामक एक ब्राह्मण रहता था। उसके चार पुत्र थे - देवप्रिय, प्रियमेध, सुक्रति और सुवट। संपूर्ण परिवार अंतर्मन से धार्मिक था और प्रतिदिन एक 'लिंग' बनाकर शिव की आराधना करता था।

इस समय, दूशण नामक एक दैत्य, ब्रह्मा से एक वरदान पाकर अवन्ती के लोगों को आतंकित कियां करता था। किंतु वेदप्रिय और उनके पुत्र उसके सामने

नहीं झुके। बल्कि वे और अधिक धार्मिक हो इस दैत्य से प्रत्येक व्यक्ति की रक्षा के लिए प्रार्थनाएं करते रहे। उसी समय, इस परिवार के बारे में जान कर दूशण ने उन्हें मार डालने का निश्चय कर लिया। वह वहां पहुंचा, किंतु वेदप्रिय के पुत्र प्रार्थना में इतने लीन थे कि उन्होंने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। ठीक उसी समय, एक जोरदार आवाज के साथ उस लिंग में एक बड़ा छिद्र हो गया जिसकी वे पूजा कर रहे थे और शिव अपने 'महाकाल' अथवा 'रुद्र' रूप में प्रकट हुए। उन्होंने दूशण को जला कर खाक कर दिया और अपने आराधकों की रक्षा की।

शिव ने फिर उनसे वर मांगने को कहा। उन चार ब्राह्मणों ने उनके द्वारा मानव जाति की रक्षा के लिए शिव से वहीं रह जाने की प्रार्थना की।

इस प्रकार महाकालेश्वर ज्योलिर्लिंग शिव का एक निर्गुण रूप है। यह मान्यता है कि जो इस मंदिर में जाते हैं, शिव सदैव ही उनका कल्याण करते हैं।

महाकाल मंदिर :

मूल मंदिर 1235 ईस्वी में दिल्ली के सुल्तान इल्तुतमिश द्वारा ध्वस्त कर दिया गया। वर्तमान मंदिर, सिंधियाओं द्वारा 19 वीं शताब्दी में पुराने मंदिर का जीर्णोद्धार है।

आकाश रेखा पर चढ़े अपनी 'नागर' शैली के शिखर समेत महाकालेश्वर मंदिर अपने प्रताप समेत ऐतिहासिक विस्मय और श्रद्धा का आवाहन करता है।

महाकालेश्वर की प्रतिमा 'दक्षिणमुखी' जानी जाती है। यह एक अनोखा लक्षण है जो 12 ज्योतिर्लिंगों में सिर्फ महाकालेश्वर में पाई जाने वाली तांत्रिक परंपरा द्वारा समर्थित है। ओमकारेश्वर शिव की प्रतिमा महाकाल मंदिर के ऊपर मंदिर गर्भ में प्रतिष्ठित है। गणेश, पार्वती, कार्तिकेय और नन्दी की प्रतिमाएं मंदिर में क्रमशः पश्चिम, उत्तर, पूर्व और दक्षिण में बनी हैं।

तीसरी मंजिल पर 'नागचन्द्रेश्वर' की प्रतिमा सिर्फ 'नागपंचमी' के दिन दर्शनों के लिए उपलब्ध होती है।

प्रत्येक सुबह चार बजे मंदिर में पूजा होती है। 'अभिषेक' के बाद 'लिंग' को श्मशान से लाई गई राख से सजाया जाता है। यह उस तांत्रिक परंपरा के कारण है जिसमें मान्यता है कि शिव सभी वैश्विक चीजों से ऊपर है।

यात्रा का परिणाम :

पूजा आराधना करने वालों की रक्षा, सभी इच्छाओं की पूर्ति और मोक्ष की प्राप्ति।

ओमकारेश्वर/अमलेश्वर

स्थिति :

यह नर्मदा और कावेदी नदियों के संगम पर, सभी हिंदू संकेतों में सर्वाधिक पवित्र ऊँ के आकार के एक टापू पर स्थित है। यह मध्य-प्रदेश में इन्दौर से 78 किलोमीटर दक्षिण में स्थित है।

किंवदन्ती :

नारद मुन्नि एक बार विंध्य पर्वत पर आए थे। विंध्य ने उनका सम्मानपूर्वक स्वागत किया और उनकी भलीभांति देख भाल की।

किंतु विंध्य को इस बात का बहुत अभिमान था कि उनके पास सब कुछ है। नारद उनका यह अभिमान ताड़ गए और उन्हें बताया कि यद्यपि उनके पास सब कुछ है किंतु मेरू पर्वत उनसे बड़ा है क्योंकि उसकी ऊँचाई स्वर्ग तक की है। झूठे अभिमान की अनुभूति से वह स्वयं पर लज्जित हुए। पश्चाताप स्वरूप उन्होंने शिव की आराधना का निश्चय किया। उन्होंने उस स्थान पर शिव की एक प्रतिमा बनाई जहां एक लिंग पहले से ही था और छः माह तक निरंतर पूजा की।

प्रसन्न हो, भगवान शिव वरदान देने के लिए उनके सम्मुख प्रकट हुए। विंध्य ने उनसे ऐसी सद्बुद्धि देने को कहा जो उन्हें जन कल्याण में मदद करे। उन्होंने भगवान शिव से सदैव वहीं रहने का आग्रह किया और वे मान गए।

'लिंगम' जिसकी स्थापना स्वयं शिव ने की, उसे 'परमेश्वर' अथवा 'अमलेश्वर' कहते है।

विश्वास किया जाता है कि यहीं पर त्रियेक ओमूकार- अमलेश्वर, ब्रह्मा और विष्णु रहते हैं।

ओमूकार- मांधाता मंदिर :

प्राकृतिक पत्थर के बने ज्योतिर्लिंग, वन्य वातावरण में बसें श्री ओंमूकारेश्वर मांधाता मंदिर में स्थापित है।

मंदिर, नर्मदा नदी के कटाव पर स्थित एक 1.5 मील चौड़े टापू पर स्थित है। यह स्थानीय नर्म पत्थर से निर्मित है जिसने इसकी सतह को एक असाधारण स्तर का विस्तृत कार्य प्रदान किया, विशेषतः मंदिर के ऊपरी भाग पर चित्रवल्लरी में। पत्थर से बनी मंदिर की छत भी उत्कृष्ट नक्काशी से सज्जित है।

मंदिर स्तंभों समेत बरामदों से घिरा है जिस पर गोलों में, बहुभुजीय और चौकोर नक्काशी की गई है।

पुराने मंदिर का जीर्णोद्धार पेशवा बाजीराव द्वितीय ने और इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई होलकर ने करवाया जिन्होंने यहां 'कोटिर्लिंगरचना' का अनुष्ठान भी आरंभ करवाया, जिसमें 22 ब्राह्मण मिट्टी के 1300 लिंग बनाते हैं और उनकी पूजा के उपरान्त उन्हें जल में प्रवाहित कर देते हैं।

यात्रा का परिणाम :

इच्छा पूर्ति और मोक्ष प्राप्ति।

केदारनाथ

स्थितिः

केदारनाथ उत्तरांचल के चमोली जिले में पड़ता है। समुद्रतल से 3581 मीटर की ऊँचाई पर, केदारनाथ, भारखण्ड और खर्चखण्ड श्रृंखलाओं के पार्श्वभाग में, केदारनाथ गढ़वाल के हिमालयों में स्थित है।

किंवदन्तियां :

1. बद्रीनाथ विष्णु के दो रूपों - "नर" और "नारायण" का आवास है। एक बार उन्होंने एक "शिवलिंग" स्थापित कर, प्रकट हो वहां पहाड़ों में निवास

करने हेतु शिव से प्रार्थना की। कई दिनों बाद शिव प्रकट हुए और केदारनाथ में 'स्वयंभू ज्योतिर्लिंग' के रूप में उनके स्थापित होने की उपरोक्त इच्छा पूर्ण करने हेतु सहमत हुए। केदार, शिव का एक अन्य नाम है।

2. महाभारत का युद्ध जीतने के बाद पाण्डव अपने ही भाइयों को मारने के अपराध बोध से ग्रसित हुए। उन्हें अपने पापों से छुटकारा पाने के लिए भगवान शिव की कृपा की आवश्यकता थी। किंतु शिव बारंबार टालते रहे। पाण्डवों से वच कर भागते हुए उन्होंने केदारनाथ में एक सांड़ के रूप में शरण ली। पाण्डवों ने वहां भी उनका पीछा किया और उन्हें पहचान गए। वह एक बार फिर भागने लगे तो भीम ने उनका कूबड़ पकड़ लिया। मान्यता है कि उनका सिर नेपाल के 'पशुपतिनाथ' में गिरा। यह भी मान्यता है कि केदारनाथ वह स्थान है जहां से पाण्डवों में सबसे बड़े, युधिष्ठिर, स्वर्ग को गए।

मान्यता है क़ि मूल मंदिर पांडवों द्वारा वर्तमान मंदिर के पीछे खण्डहरों में बनवाया गया।

वर्तमान मंदिर महापंथ शिखर के नीचे बर्फीली श्रंखला से दाहिने कोण से निकलती एक पर्वत श्रेणी पर बना है। यह मंदाकिनी नदी के शिरे के निकट है। मंदाकिनी का स्त्रोत, चोराबारी हिमनदी, थोड़ी ही दूर पर है।

यह मंदिर, पत्थर के अतिविशाल और समान ढंग से कटी धूसर रंग की शिलाओं से बना है। मंदिर, एक 'कत्युरी शिखर' समेत नागर शैली में बना है। इसमें एक लकड़ी का 'मण्डप' है। प्रवेशद्वार पर एक दैवीय बैल 'नंदी' की एक प्रतिमा है। गर्भ गृह में पत्थर से बना एक शांकवीय लिंग है। शिव की आराधना यहां सदाशिव के रूप में की जाती है। आंतरिक सज्जा उत्कृष्ट ढंग से तराशी गई प्रतिमाओं से सज्जित है।

यात्रा का परिणाम : इच्छा पूर्ति, पापों से छुटकारा हो शुद्धि, और मोक्ष की प्राप्ति।

श्री भीमशंकर/भीमेश्वर

स्थिति :

भीमशंकर, महाराष्ट्र के पुणे जिले के खेड़ा तहसील में स्थित है। यह नासिक-पुणे रोड पर भीमा नदी के तट पर स्थित है।

दन्तकथा :

एक बार सह्याद्री की पहाड़ियों पर भीमा नामक एक खूंखार दैत्य रहता था। वह (रावण के भाई) कुंभकर्ण कर्कटी का पुत्र था। यह जान कर कि विष्णु (के अवतार भगवान राम) और सतिक्षना जैसे उनके आराधक उसके पिता और पितामहों की मृत्यु के लिए उत्तरदायी थे, उसने प्रतिशोध लेने का निश्चय किया।

उसने 1000 से भी अधिक वर्षों तक तपस्या कर ब्रह्मा को प्रसन्न किया, जिन्होंने उसे परम बल का वरदान दिया। इस वरदान से युक्त, उसने इंद्र समेत देवताओं को परास्त किया और उन्हें अपने आवास स्थल से भगा दिया। फिर उसने श्री हरि (विष्णु), कामरूप सुदक्षिणा के राजा को परास्त कर बन्दी बना लिया। सतिक्षिना एक चतुर शिव उपासक थे और कारागार में भी 'लिंग' के रूप में शिव की उपासना करते थे। वे निरंतर पंचाक्षर मंत्र 'ॐ नमः शिवाय' का जप करते थे।

जब भीम को यह पता चला तो उन्होंने सुदक्षिणा को मारने का निश्चय कर लिया। एक तलवार लेकर जिस क्षण उन्होंने सुदक्षिणा पर आक्रमण किया, जो 'लिंग' की आराधना में लीन था, वह फट पड़ा और शिव प्रकट हुए। उन दोनों में युद्ध हुआ और अंततः शिव ने उसे भस्म कर दिया।

शिव की विजय का उत्सव मनाने के लिए देवता प्रकट हुए और उनसे मानव कल्याण हेतु वहीं रहने का आग्रह किया। इस प्रकार, शिव इस क्षेत्र में रह गए और 'भीमशंकर' के नाम से प्रसिद्ध हुए। यह भी मान्यता है कि जो नदी भीम ने शिव के पसीने से भीमशंकर के लिए निकाली वही नदी के जल का स्त्रोत है।

मान्यता है कि भात्रियों नामक एक लकड़हारे ने इस ज्योतिर्लिंग का पुर्नअन्वेषण किया। जब उसने एक पेड़ पर अपने कुल्हाड़े से प्रहार किया जो खून का एक फौव्वारा पेड़ के तने से फूट पड़ा। जब उस स्थान को खोदा गया तो एक ज्योतिर्लिंग उभरा। भीमशंकर का महत्व 'शिवालाम्रित', 'गुरूचरित्र' और 'स्त्रोत्रत्रक' जैसे ग्रंथों में भी वर्णित है।

भीमशंकर मंदिर :

मंदिर वास्तुशिल्पीय योजना के 'हेमदपंथी' रूप के अनुसार परिकल्पित है। यह दशावतारों समेत सुंदर नक्काशी और मूर्तिकला से सज्जित है। मंदिर मण्डप 1437 ईस्वी का पांच टन का एक घंटा लटकता है। मंदिर का जीर्णोद्धार नाना फड़नवीस द्वारा करवाया गया।

यात्रा का परिणाम :

प्रसन्नता और इच्छा पूर्ति।

काशी विश्वनाथ

स्थिति :

यह ज्योतिर्लिंग उत्तर प्रदेश के वाराणसी में गंगा नदी के तट पर स्थित है।

दन्तकथाः

एक बार परमेश्वर ने एक से दो हो जाने की इच्छा की। इसलिए उन्होंने स्वयं को 'शिव' के रूप में साकार किया। शिव ने स्वयं में से एक पुरुष 'शिव' और एक नारी 'शक्ति' को उत्पन्न किया। शिव और शक्ति ने फिर 'पार्वती' और 'पुरुष' अथवा 'श्री हरि' को उत्पन्न किया। उनसे ईश्वर ने ही पश्चाताप करने को कहा, तभी उत्पत्ति हो सकेगी। उनके पश्चाताप के लिए उन्होंने एक सुंदर नगर 'पंचकोशि' उत्पन्न किया। पुरुष के प्रायश्चित के परिणामस्वरूप, उसके शरीर से जल की धाराएं फूट पड़ीं और 'पंचकोशि' नगर डूबने लगा। तब शिव ने नगर को अपने त्रिशूल की नोक पर उठा लिया। यह मान्यता है कि जब विष्णु इस नगर में सो रहे थे, तो उनकी नाभि से कमल का फूल खिला जिससे ब्रह्मा उपजे जिन्होंने पृथ्वी सहित संपूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना की।

पृथ्वी के लोगों के कल्याण हेतु शिव ने काशी (ज्योति का नगर) अथवा आधुनिक वाराणसी नामक पंचकोशि नगर को पृथ्वी पर रख दिया। उन्होंने काशी में 'अविमुक्त' लिंग का रूप धारण किया- इसलिए काशी एक शाश्वत नगर है,

क्योंकि जब पृथ्वी का एक अंतरिक्षीय चक्र का अंत होता है तो शिव इसे अपने त्रिशूल पर धारण करते हैं और पुनर्स्रजन के बाद इसे वापस रख देते हैं।

अविमुक्त लिंग, विश्वनाथ मंदिर का ज्योतिर्लिंग है।

विश्वनाथ मंदिर :

यह 1000 वर्षों से भी अधिक समय के लिए वाराणसी का मुख्य मंदिर रहा है। बड़े परिमाण पर इस मंदिर की पुर्नरचना 1585 में अकबर के शासन काल में आरंभ हुई, किन्तु जब औरंगजेब बादशाह बने तो इसे उजाड़ दिया गया और इसके पत्थरों का उपयोग 1666 में निकट ही ज्ञानवापी मस्जिद बनाने के लिए किया गया।

वर्तमान मंदिर 1777 में इंदौर की महारानी अहिल्याबाई होलकर द्वारा, मूल मंदिर के स्थल से सड़क पार पर बनवाया गया। छत की स्वर्ण पट्टिकाएं 1835 में लाहौर के महाराजा रंजीत सिंह द्वारा दान की गईं।

मंदिर के नुकीले लाट वास्तुकला की विशिष्ट 'नागर' शैली के हैं और बाहरी सज्जा उत्कृष्ट नक्काशी से सज्जित है। मंदिर में मात्र हिंदुओं का प्रवेश स्वीकृत है।

मंदिर के निकट ज्ञान कूप (ज्ञान का कुआं) है। कहते हैं इसमें मूल मंदिर का शिव लिंग है। यह कुआं एक पत्थर की दीवार और छत्र से भलीभांति संरक्षित है। मान्यता है कि जल 'सर्वोच्च आत्मिक प्रदीपन' इंगित करता है।

यात्रा का परिणाम : मोक्ष की प्राप्ति।

त्र्यम्बकेश्वर

स्थिति :

यह महाराष्ट्र में नासिक से 29 किलोमीटर पश्चिम में है। यह ज्योतिर्लिंग गंगासागर तालाब के मध्य में स्थित है।

दन्तकथा :

वैदिक काल के ऋषि गौतम अपनी पत्नी अहिल्या के साथ ब्रह्मागिरि पर्वतों में रहते थे। एक बार यह क्षेत्र भीषण सूखे से पीड़ित हो गया। उन्होंने जल के देवता

वरुण की पूजा-प्रार्थना की। उनसे प्रसन्न हो वरुण ने उनसे एक तालाब खोदने को कहा और उसे शाश्वत जल से इस प्रकार भर दिया कि वह तालाब कभी न सूखे। परिणामस्वरूप वह क्षेत्र एक बार फिर हरा हो गया और कई ब्राह्मण और ऋषि वहां सपरिवार रहने आ गए।

एक बार जल को लेकर महिलाओं में कुछ कहासुनी हो गई, जो गौतम और अहिल्या से नाराज हो गईं थी। उनके उकसाने पर अन्य पुरुषों ने भगवान गणेश का आवाहन किया और उनसे गौतम को दूर भगाने को कहा। भगवान गणेश ने उन्हें इस कुकृत्य के लिए चेतावनी दी और कोई अन्य वर मांगने को कहा। किन्तु ऋषि लोग अड़े रहे तो उन्होंने एक दुर्बल गाय का रूप धारण किया और खड़ी फसलें चरने लगे। जब गौतम ने यह देखा तो वे गाय को भगाने लगे। जैसे ही. उन्होंने गाय को छुआ वैसे ही वह मर गई।

जब आश्रम के लोगों को यह पता चला तो उन्होंने उन पर 'गो-हत्या' का आरोप लगाया, वैदिक नियमों के अनुसार उन्हें भगा दिया। उन्होंने उन्हें शुद्ध होने तक कोई वैदिक अनुष्ठान न करने की चेतावनी दी।

गौतम और अहिल्या ने तब एक करोड़ 'लिंग' बनाए, उन पर जल चढ़ाया और उन्हें पूजा। उन्होंने ब्रह्मगिरि पर्वत की 100 बार परिक्रमा भी की। उनके प्रायश्चित से प्रसन्न हो शिव ने कहा कि उन्होंने कोई पाप नहीं किया है और यह भी कि अन्य लोगों ने उन्हें धोखा दिया है। उन्होंने गौतम से कोई अन्य वर मांगने को कहा।

गौतम ने वर मांगा कि गंगा नदी उस क्षेत्र से होकर बहे। जब गंगा एक सुंदर स्त्री के रूप में प्रकट हुई तो उन्होंने शिव और पार्वती से वहीं निवास करने को कहा, जिसे वे मान गए। गंगा, गोदावरी नदी के रूप में प्रसिद्ध हुईं और शिव, 'त्र्यम्बकेश्वर' नामक ज्योतिर्लिंग के रूप में। मान्यता है कि शिव और पार्वती यहां ब्रह्मा और विष्णु के साथ रहते हैं। एक किंवदन्ती है कि जब कभी बृहस्पति 'सिंह' राशि में होता है तो सभी महत्वपूर्ण तीर्थ केंद्र, देवता, नदियां और झीलें अपनी श्रद्धा की अभिव्यक्ति हेतु इस ज्योतिर्लिंग में आते हैं।

त्र्यम्बकेश्वर मंदिर :

अट्ठारहवीं शताब्दी का मंदिर दक्षिण भारतीय वास्तुकला के रूप में निर्मित और बाहर से सुंदर नक्काशी से युक्त है। मंदिर के सामने 'नंदी' की भी स्थापना है। शिवलिंग गर्भगृह में है। इसके आसपास 'अर्घा' (लिंग को घेरे एक सपाट सतह) नहीं है, बल्कि इसमें एक छोटा गड्ढा है जिसमें तीन लिंग- मान्यता है कि ब्रह्मा, विष्णु और शिव के- स्थापित हैं। इसलिए लिंग को त्र्यम्बकेश्वर कहते हैं। मंदिर के अंदर सिर्फ हिन्दुओं को ही जाने दिया जाता है।

यात्रा का परिणाम :

पाप धुल जाते हैं।

श्री वैद्यनाथ

स्थिति :

यह बालाघाट श्रृंखलाओं में महाराष्ट्र में बीड़ जिले में परली गांव में स्थित है।

दन्तकथा :

श्रीलंका का राजा, राक्षस रावण, एक लोभी शिव उपासक था। उसने भगवान शिव को प्रसन्न करने के लिए कैलाश पर्वत पर कठोर तपस्या की किन्तु उससे कोई लाभ न हुआ। उसने अपनी तपस्या की कठोरता बढ़ा दी- जब वह लिंग की पूजा करता तो वह गर्मियों में पांच अग्नि से घिरा, वर्षा ऋतु में खुले में और शरद ऋतु में जल में बैठता। शिव अब भी प्रकट नहीं हुए, तब रावण ने अपने नौ शीष एक एक कर काट डाले और शिव को अर्पित कर दिये। जैसे ही वह दसवां शीष काटने जा रहा था कि शिव प्रकट हुए और उसे परम बल का वरदान दिया।

रावण ने कहा कि वह उन्हें लंका ले जाएगा। शिव इस शर्त पर मान गए कि संपूर्ण यात्रा के दौरान वह लिंग भूमि पर नहीं रखेगा। यदि उसने ऐसा किया तो लिंग वहीं सदैव के लिए स्थापित हो जाएगा।

रावण सहमत हो गया और अपनी यात्रा आरंभ कर दी। जैसा कि यह पूर्व निर्धारित था, उसे शंका निवारण हेतु जंगल फिरने जाना पड़ गया। उसने निकट के ही एक चरवाहे बालक (जो छद्मवेश में भगवान गणेश थे) से शिवलिंग पकड़ने को कहा। थोड़ी देर बाद वह चरवाहा बालक उसका भार न संभाल एका और उसे भूमि पर रख दिया।

'ज़्योतिर्लिंग' स्वयं वहीं स्थापित हो गया और उपासना हेतु आए देवताओं द्वारा वैद्यनाथ कहलाया।

इस रावण अपने वरदान समेत घर आया। देवता इस तथ्य के विषय में बड़े उत्सुक थे कि क्या रावण अपने बल का दुरुपयोग कर सकता है। इसलिए नारद ने रावण से शिव के आवास स्थल कैलाश पर्वत को उखाड़ कर अपने वरदान की जांच करने को कहा। रावण ने यह किया और शिव के क्रोध को आमंत्रित भी किया, जिन्होंने उसे शाप दिया कि किसी दिन कोई एक व्यक्ति आकर उसके बल और झूठे अभिमान का नाश करेगा। यह तब सत्य हुआ जब विष्णु के एक अवतार, राम ने उसे परास्त कर उसका वध किया।

यह मान्यता है कि शिव और पार्वती यहां निवास करते हैं। यह ज्योतिर्लिंग 'अनोखी काशी' के नाम से भी ज्ञात है। जो यहां आते हैं उन्हें काशी (वाराणसी) जाने की आवश्यकता नहीं होती।

वैद्यनाथ मंदिर : यह पत्थर का मंदिर एक बड़े परिसर से घिरा है। इसमें एक मण्डप और 'शालिग्राम' नामक नर्म पत्थर ने बन लिंगम् पवित्र गर्भ गृह में प्रतिष्ठित है। प्रवेश के निकट 'प्राची' अथवा 'गुवक्षा' नामक एक मीनार है।

मन्दिर की योजना ऐसी है कि मार्च-अप्रैल (चैत्र) माहों और सितम्बर (अश्विन) मास के कुछ दिनों में सूर्य की किरणें सीधे 'लिंग' पर पड़ती हैं।

मंदिर के निकट एक जलाशय है। मंदिर का जीर्णोद्धार 1706 में इन्दौर की महारानी अहिल्या बाई होलकर ने करवाया। वैद्यनाथ, शिव पंथ के लिंगायत उप-पंथ का एक महत्वपूर्ण स्थल है।

यात्रा का परिणामः इच्छाओं की पूर्ति, पापों का नाश, और मोक्ष।

नागेश्वर/औंध नागनाथ

स्थिति :

नागेश्वर को औंध नागनाथ भी कहते हैं। यह महाराष्ट्र के परभानी जिले में हैं।

किन्तु नागनाथ ज्योतिर्लिंग की प्रामाणिकता के बारे में एक विवाद है, इसलिए कहते हैं कि नागनाथ ज्योतिर्लिंग इन स्थानों पर है : (1) गुजरात के बड़ोदा जिले में; अल्मोड़ा से 17 किलोमीटर उत्तर-पूर्व में जागेश्वर जहाँ जागेश शिवलिंग स्थित हैं। किंतु महाराष्ट्र वाला सर्वाधिक प्रामाणिक है।

दन्तकथा :

'शिव-पुराण' में दी गई एक दन्तकथा के अनुसार, एक समय 'दारूकवन' नामक वन में एक राक्षस दंपत्ति, दारूक और उसकी पत्नी दारूका, रहते थे। वे अत्याधिक खूंखार थे और लोगों का वध करते थे, विशेषकर भक्ति के कार्य में लगे लोगों का। दारूका को पार्वती से एक वरदान प्राप्त था जिसके विषय में उसे अत्याधिक गर्व था। पार्वती ने उसे दारूकवन की देखभाल का उत्तरदायित्व सौंपा था जिसके परिणामस्वरूप वह दारूक वन को अपने साथ कहीं भी जाते हुए ले जा सकती थी।

इस आतंक के कारण लोगों ने ऋषि अन्वर्की से उनकी मदद करने को कहा। उन्होंने राक्षसों को शाप दिया कि यदि उन्होंने किसी को मारने का प्रयास किया चाहे वे भूमि के मनुष्य हों या पशु, तो उनका विनाश हो जाएगा। यह सुनकर अर्धदेवों ने दंपत्ति पर आक्रमण कर दिया। इसलिए अपने वन के साथ के समुद्र में रहने लगे और वहां के जीवों को आतंकित करने लगे।

एक दिन लोगों को लेकर जाती एक नाव वहां से होकर गुजरी। राक्षसों ने उन्हें पकड़कर बन्दी बना लिया। समूह का नेता 'सुप्रिय' नामक वैष्य था जो शिव भक्त और उपासक था। उसने कारागार में ही शिव की उपासना की। जब दारूक को यह पता चला तो उसने उसे मार डालने का प्रयास किया। भयभीत 'सुप्रिय'

ने शिव को मदद के लिए पुकारा। उसी क्षण शिव प्रकट हुए, साथ ही एक मंदिर जिसमें चमकता ज्योतिर्लिंग था। उसने राक्षस को मार डाला, सुप्रिय को बचाया और वन सभी चार वर्णों के लिए खोल दिया।

इधर दारूका ने पार्वती से प्रार्थना कर अपने कुल की रक्षा करने को कहा। पार्वती ने शिव से उसे छोड़ देने को कहा और वे मान गए।

शिव और पार्वती दोनों ही वहीं ज्योतिर्लिंग में रह गए। यह स्वयंभू ज्योतिर्लिंग 'नागेश्वर' और 'पार्वती-नागेश्वर' के नाम से जाना गया।

मान्यता है कि इस ज्योतिर्लिंग का पुनर्अन्वेषण पाण्डवों ने तब किया जब भीम ने गायों को अपना दूध एक झील में बहाते देखा। युधिष्ठिर ने कहा कि उस झील में निश्चित रूप से एक देवता रहते थे। जब झील खाली की गई तो तली में एक चमकता 'लिंग' प्राप्त हुआ। दन्तकथा के अनुसार पाण्डवों ने नागेश्वर मंदिर का निर्माण कराया।

नागेश्वर मंदिर : यह मंदिर पत्थर का बना और ऊँची दीवालों से घिरा है। इसमें बड़े-बड़े हाल हैं और आठ स्तंभों के साथ योजना में मण्डप गोल है। 'लिंगम' गर्भ गृह में प्रतिष्ठित है। गर्भ गृह की ओर मुंह किए कोई नन्दी नहीं हैं किन्तु मुख्य मंदिर के पीछे पृथक 'नन्दी मंदिर' है।

मुख्य मंदिर के आसपास विभिन्न ज्योतिर्लिंगों के 12 छोटे मंदिर हैं। मंदिर, व्यक्तियों, सिपाहियों और धार्मिक उपकथाओं की आकृतियों की नक्काशी से उदारतापूर्वक और पूर्णतः सज्जित है। मंदिर के निकट शिवालय नामक, एक जलाशय भी है।

यात्रा का परिणाम :

पापों से मुक्ति और इच्छा पूर्ति।

नागेश्वर, गुरू अनादि महाराज की समाधि के लिए भी महत्वपूर्ण है। एक ऐसे स्थान के रूप में जहां, महाराष्ट्र में भक्ति आन्दोलन के महान संत नामदेव ने अपने गुरू विशोभा केचर को पाया और वहीं उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ।

रामेश्वरम्

स्थिति :

'रामेश्वरम्', मन्नार की खाड़ी के एक टापू पर, तमिलनाडु के रामनाथपुरम् जिले में मण्डपम की मुख्यभूमि पर इंदिरा गांधी पुल द्वारा संयुक्त है।

दन्तकथा :

विष्णु के एक अवतार, भगवान राम चंद्र अपनी पत्नी सीता को छुड़ाने लंका गए, जिन्हें लंका के राक्षस सम्राट रावण ने हर लिया था। इस कार्य पर जाने से पूर्व उन्होंने विजय हेतु भगवान शिव और पार्वती की कृपा प्राप्ति हेतु एक शिवलिंग बनाया।

इससे प्रसन्न शिव-पार्वती प्रकट हो बुराई के विरुद्ध अच्छाई के युद्ध में उनकी विजय के प्रति उन्हें आश्वस्त किया। तब उन्होंने स्वयं को लिंग में स्थापित कर दिया, जब राम ने जन कल्याण हेतु ऐसा करने का उनसे आग्रह किया।

रामेश्वरम् मंदिर :

यह रामनाथ स्वामी मंदिर भी कहलाता है। दन्तकथा के अनुसार यह राम द्वारा शिव की उपासना का स्थल था।

मंदिर, मदुरा चरण के द्रविड़ वास्तुकला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है और अपने विशाल शिल्पकला युक्त भव्य गलियारों के लिए प्रसिद्ध है, यह स्तंभ अपने विस्तृत परिकल्पना, शैली और समृद्ध नक्काशी के लिए उल्लेखनीय है।

यह मंदिर चोलों द्वारा स्थापित किया गया किंतु उसका अधिकांश 16 वीं और 17 वीं शताब्दी में नायक वंश द्वारा निर्मित किया गया। एक बड़ी दीवाल से घिरा और तीन गोपुरमों से युक्त यह एक विशाल मंदिर है। इसमें प्रवेश पूर्वी गोपुरम से है जो 1640 में बनना आरंभ हुआ और हाल ही में पूर्ण हुआ है।

पूर्वी ओर तीन द्वार हैं जो मध्य में 'पार्वती' और 'रामलिंग' मंदिरों में जाने का रास्ता देते हैं। राजगीर मंदिर संभवतः इस स्थल की सर्वाधिक पुरानी इमारत है जो 1173 ईस्वी की है।

पूर्वी द्वार में प्रवेश करने पर हनुमान और नन्दी की प्रतिमाएं हैं जिनके अगल बगल मदुरई के नायक सम्राटों - विश्वनाथ और कृष्णमा की प्रतिमाएं हैं।

प्रथम घेरे के बाद सिर्फ हिन्दुओं का ही प्रवेश स्वीकृत है। 'स्फटिकलिंग' पूजा प्रतिदिन सुबह पांच बजे की जाती है। उपासक समुद्र में पवित्र डुबकी लगाते हैं, जहां मानते हैं कि उनके पाप धुल जाते हैं।

यात्रा का परिणाम :

मोक्ष, पाप धुल जाते हैं। मान्यता है कि जो लोग यहां गंगा जल लाते हैं वे मोक्ष प्राप्त करते हैं और जो रामेश्वरम की थोड़ी बालू ले जा कर प्रयाग (इलाहाबाद) में संगम में प्रवाहित करते हैं वे अपने चारों धाम पूर्ण कर लेते हैं।

गृष्णेश्वर/घुश्मेश्वर

स्थिति :

घुश्मेश्वर, महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिले में प्रसिद्ध एलौरा की गुफाओं से 1.5 किलोमीटर दूर वेरूल गांव में स्थित है।

दन्तकथा :

बहुत पहले, एक कट्टर शिव भक्त, सुधर्म नामक एक ब्राह्मण अपनी पत्नी सुदेहा के साथ रहता था। उन्हें कोई संतान नहीं थी। इसलिए सुदेहा ने अपनी छोटी बहन घुष्मा से विवाह करने के लिए अपने पति पर दबाव डाला। समय के साथ घुष्मा को एक पुत्र पैदा हुआ, बड़ा हुआ और उसका विवाह हुआ।

इधर सुदेहा अपनी बहन और भांजे के प्रति जलन की भावना से ग्रसित हो गई, जिसके चलते उसने सोए हुए उसके पुत्र को मार डाला और उसके टुकड़े कर उसी तालाब में फेंक दिया जहां वह प्रति दिन 'शिवलिंग', पूजन के उपरान्त प्रवाहित करती थी।

सुबह जब बहू ने अपने पति को गायब पाया और उसके विस्तर पर खून के धब्बे देखे तो वह रोने लगी। किंतु घुष्मा ने स्वयं पर नियंत्रण बनाए रखा और सामान्य नित्य कर्म में लग गई। उसे भगवान शिव पर पूर्व आस्था थी। जब वह

'शिवलिंग' प्रवाहित करने तालाब में गई तो उसने अपने पुत्र को तालाब के निकट खड़ा देखा। तब भी वह भाव रहित रही। उसकी आस्था से प्रसन्न शिव प्रकट हुए और उससे कहा कि वे सुदेहा को मार डालेंगे। किंतु, घुष्मा ने सुदेहा की ओर से क्षमा याचना की। तब शिव ने उसे कोई अन्य वरदान मांगने को कहा।

घूष्मा ने वर मांगा कि लोगों के संरक्षक के रूप में शिव वहीं रह जाएं और उसी के नाम से जाने जाएं। इस प्रकार इस ज्योतिर्लिंग के रूप में शिव को 'घूष्मेश्वर' या 'घृष्णेश्वर' के नाम से जाना जाता है।

घृष्णेश्वर मंदिर :

मंदिर 18 वीं शताब्दी में बना। यह लाल बलुआ पत्थर से, बाहरी सज्जा में उत्कृष्ट मूर्तिकला समेत, बना है। गर्भ-गृह के बाहरी भाग में उदारता से मूर्तिकला की आयताकार पट्टिकाएं हैं। इसमें विष्णु के दस अवतार हैं। 'शिखर' सूचिस्तंभीय है और उदारता से नक्काशी कृत है। एक मण्डप मंदिर की ओर ले जाता है। इसके निकट एक 'नंदी' बैल है।

गर्भगृह 17×17 फीट का है और इसमें एक 'लिंग' और देवी पार्वती की एक संगमरमर की प्रतिमा स्थापित है। मंदिर 240 × 185 फीट का है। मुख्य मंदिर के पीछे एक छोटा हनुमान मंदिर है। इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई होलकर ने मंदिर का जीर्णोद्धार किया। संपूर्ण मंदिर परिसर चारों ओर से एक दीवाल से घिरा है और इसमें प्रवेश एक तीन फीट ऊँचे प्रवेशद्वार से प्राप्त होता है।

यात्रा का परिणाम :

पाप धुल जाते हैं। इच्छा पूर्ति, जैसे एक पुत्र की कामना और जीवन में संतोष।

□□□

अध्याय - 8

सम्मेलन और सभाएं
(Conference and Conventions)

व्यवसायिक और फुर्सत संबंधी यात्राएं :

जो लोग अपने कार्य के सम्बन्ध में यात्रा करते हैं व्यवसायिक पर्यटन की श्रेणी में आते हैं। किन्तु कारोबार के उद्देश्य से ऐसी यात्राएं पर्यटन गतिविधियों से भी संबंधित होती हैं जैसे गंतव्य स्थान पर पर्यटन आकर्षण के स्थानों पर जाना, दर्शनीय स्थल अवलोकन और भ्रमण यात्राएं। कारोबार यात्राएं सभा व्यवसाय (convention business) से भी संबद्ध हैं, जो आतिथ्य-सत्कार और पर्यटन में तेजी से बढ़ता उद्योग है। व्यवसायिक यात्राओं का आज परंपरागत व्यवसाय से भी संबंध है जो आतिथ्य और पर्यटन के क्षेत्र में बहुत तीव्रता से बढ़ता हुआ उद्योग है।

परिभाषाएं :

(1) समूहन (Assembly) :

जब एक बड़ी संख्या में लोग अथवा प्रतिनिधि समूह एक विशेष विषय या कार्यसूची पर चर्चा हेतु साथ मिलते हैं, तो इसे एक 'समूहन' कहते हैं।

(2) संभाषण (Colloquial) :

यह एक ऐसी बैठक है जिसमें विषय के विशेषज्ञ विशिष्ट विषयों पर भाषण देते हैं और प्रश्नों के उत्तर देते हैं।

(3) सम्मेलन (Conference) :

साझे विषयों पर औपचारिक रूप से चर्चा हेतु लोगों की एक बैठक, एक सम्मेलन कहलाती है। यह मुख्यतः योजना, प्रबन्धन समस्याओं के समाधान

और सूचना प्राप्त करने से संबद्ध होते हैं। यह सामान्यतयः एक ही व्यवसाय, संगठन या संस्था के सदस्यों या प्रतिनिधियों एक सीमित रहते हैं। इनका लक्ष्य संस्था के कथित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सामूहिक सहभागिता को प्रोत्साहन देना होता है। सम्मिलित संख्या 20 से 200 प्रतिनिधियों की हो सकती है।

(4) कांग्रेस (Congress) :

यह सामान्यतयः विशेष अध्ययन में संलग्न एक विशिष्ट संस्था अथवा संगठन के प्रतिनिधियों के सामान्य सत्र होते हैं। यह एक संगठन की एक संपूर्ण सदस्यता बैठक हेतु अभिव्यक्ति भी है और आने वाले सदस्यों की संख्या सामान्यतयः बड़ी होती है।

(5) सभा (Convention) :

यह, नीतियों पर औपचारिक चर्चा हेतु एक साझा उद्देश्य हेतु लोगों का एक जमावड़ा होता है। सामान्यतयः यह शब्द वार्षिक राजनैतिक दल के सदस्यों की बैठक, इत्यादि के लिए उपयोग होता है।

(6) निर्वाचिका सभा (Conclave) :

यह, साझा मुद्दों पर चर्चा अथवा संधिवार्ता करने हेतु सामान्यतः विभिन्न राष्ट्रों के राजनैतिक प्रमुखों के मध्य अथवा विभिन्न वाणिज्यिक संस्थाओं के प्रमुखों के मध्य एक एकान्तिक बैठक अथवा गुप्त जमावड़ा होता है।

(7) बैठक (Meeting) :

एक साझा उद्देश्य हेतु मुद्दों पर चर्चा और/या निर्णय करने हेतु लोगों का एकत्रित होना अथवा एक जमावड़ा, एक बैठक कहलाता है।

(8) परिसंवाद (Seminar) :

छोटा सघन अध्ययन का वार्ताक्रम अथवा चर्चा और शोध हेतु एक छोटे समूह की बैठक।

(9) शिखर वार्ता (Summit) :

सर्वोच्च अधिकारियों की एक बैठक शिखरवार्ता कहलाती है।

(10) विचार गोष्ठी (Symposium) :

एक औपचारिक बैठक जिसमें कई विशेषज्ञ एक पूर्व-निर्धारित अथवा देय विषय पर संक्षिप्त भाषण देते हैं, एक विचार गोष्ठी कहलाता है।

(11) कार्यशाला (Workshop) :

एक परिसंवाद विचार-समूह, इत्यादि, जहां विचारों का आदान-प्रदान और तकनीकों, दक्षता, इत्यादि का निदर्शन या अनु-प्रयोग होता है।

(12) प्रदर्शनी (Exhibition) :

विक्रय प्रेरित करने अथवा आगंतुक को सूचित करने के लक्ष्य से आमंत्रित दर्शकों अथवा जनता के समक्ष उत्पादों या सेवाओं का प्रस्तुतीकरण। य: 'व्यापार प्रदर्शनी' या 'व्यापार मेलों' (जैसी भी स्थिति हो) के नाम से भी जाने जा: हैं। पर्यटन उद्योग के सम्बन्ध में, निदर्शन, प्रदर्शन अथवा उत्पाद प्रवर्तन हेतु प्रदर्शिनियों का उपयोग होता है, और पर्यटन उद्योग के लिए वे महत्वपूर्ण हैं क्योंकि लोगों के विभिन्न समूह (विक्रेता, प्रदर्शनकर्ता, क्रेता, इत्यादि) इन्हें देखने के लिए यात्रा करते हैं।

सभी प्रकार की उपरोक्त वर्णित बैठकें स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय, महाद्वीपीय या अंतर्राष्ट्रीय हो सकती हैं।

सम्मेलन और सभा : एक पर्यटन उत्पाद

व्यवसायिक यात्री पर्यटन उद्योग के लिए महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इसमें पर्यटन के सभी तत्वों का उपयोग होता है। व्यवसायिक यात्री कई व्यवसायिक कारणों से यात्रा करता है- सभाओं, बैठकों, कार्यशालाओं इत्यादि में उपस्थिति सहभागियों के पास फुर्सत का काफी समय होता है। सम्मेलन के आयोजक, सुख और विश्राम हेतु कई गतिविधियों का आयोजन कर सहभागी के लिए यह फुर्सत का समय बहुत लाभप्रद बनाते हैं। सहभागियों के साथ आने वाले पति/पत्नियों और परिवारों की देखभाल भी आयोजक भली भांति करते हैं। भारत में 'कान्फ्रेंस एण्ड इंसेन्टिव मैनेजमेंट' (1) प्राइवेट लिमिटेड सहभागियों के साथ आने वाले पति/पत्नियों के लिए निम्नलिखित गतिविधियों का आयोजन करती है।

दर्शनीय स्थल अवलोकन (Sight Seeing) :

चूंकि भारत विशाल है, इसकी संस्कृति भी विशाल है। भारत में सभी विभिन्न प्रकार के स्थल हैं जिसमें पहाड़ियां, समुद्र और वन हैं। यह अपेक्षा से भी अधिक प्रदान करता है।

खरीद-फरोख्त के लिए सैर (Shopping Tours) :

सुंदर और आकर्षक पुरावस्तुओं के संचय हेतु भारत के विभिन्न भागों के लिए खरीद-फरोख्त सैर आयोजित की जाती है। विभिन्न पुरावस्तुओं और सुसज्जा के संचय द्वारा विशाल भारतीय संस्कृति का अध्ययन किया जा सकता है।

पाक-कला (Cooking) :

भारत में जितने राज्य हैं उतने ही प्रकार की पाक-प्रणाली है। भारत के लोगों को भलीभांति समझने के लिए भोजन की आदतें और ऐसे स्वादिष्ट भोजन को खाने के विभिन्न तरीकों को समझने का प्रयास करना पड़ता है।

शिल्प बाजार (Crafts Bazar) :

यद्यपि भारत एक विकासशील देश है और उसमें विशाल औद्योगिक क्षेत्र हैं, फिर भी यह लघु उद्योगों की अपनी परंपरा को बनाए रखने में सक्षम रहा है। यह अपने बड़े छोटे वस्त्र उद्योग के लिए सुविख्यात है, चाहे वे लखनऊ में हों, संभलपुर या कोलकाता में। साथ ही भारत में कलात्मक हाथ भी हैं जो सुंदर मिट्टी के बरतन बनाते हैं फूलों से घर को सुंदरतापूर्वक सजाते हैं। अन्य प्रमुख उदाहरण हैं वाटीक; छपाई। भारत अन्य हस्तकलाओं के लिए प्रसिद्ध है।

बनाव-श्रृंगार (Make-up) :

यह स्त्रियों को और अधिक सुंदर बनाता है और आकर्षण प्रदान कर प्रत्येक महिला के जीवन को पूर्णता प्रदान करता है। एक व्यक्ति का रंग रूप बदलने के लिए उपयोग की जाने वाली विधियों/प्रक्रियाओं में से यह एक है। भारत में यह दो प्रकार का होता है।

नववधू सरीखा (Bridal) :

भारतीय नववधू, पारंपरिक वेशभूषा और सुंदरता के लिए प्रसिद्ध है। यह श्रृंगार लड़की/वधू को एक वास्तविक स्त्री के समान अनुभूति प्रदान करता है यह और उसके आकर्षण में लावण्य जोड़ देता है।

हल्का बनाव-श्रृंगार (Light Make-up) :

यह प्रत्येक महिला के जीवन का आवश्यक भाग है। इसके बगैर स्त्री अपूर्ण है। श्रृंगार स्त्री में आत्मविश्वास ले आता है।

इसलिए प्रत्येक भारतीय सुंदर स्त्री के सौंदर्य के "रहस्य" को समझने के लिए महिलाएं ब्यूटी पार्लर (beauty parlour) जाती हैं।

मेंहदी प्रदर्शनी (Henna Demonstration) :

मेंहदी हिना शुभ मानी जाती है और यह हथेलियों और तलवों में विभिन्न सुंदर प्रारूपों में लगाई जाती है। अधिकांशतः यह विवाह और अन्य उत्सवों के अवसर पर लगाई जाती है। हिना दुल्हन की हथेलियों में लगाई जाती है और इन अवसरों पर उपस्थित अन्य महिलाओं द्वारा भी लगाई जाती है।

सम्मेलन और सभा प्रबन्ध

सम्मेलन वे गतिविधियां होती हैं जिनके लिए सतर्कतापूर्ण नियोजन तथा प्रभावी एवं कुशल और क्रियान्वयन, की आवश्यकता होती है जिससे विभिन्न क्रियाकलापों में समन्वय के द्वारा सही कार्य सही समय पर हो सके। एक ओर तो ग्राहक या उपभोक्ता होते हैं और दूसरी ओर प्रमुख आपूर्ति कर्ता होते हैं जैसे होटल, यातायात वाहक, सभा केन्द्र, यात्रा संचालक और ट्रैवेल एजेन्सी, पर्यटन विभाग, प्रदर्शन आयोजक, प्रायोजक, इत्यादि।

एक सम्मेलन सामान्यतः एक बड़े होटल अथवा सम्मेलन केन्द्र में होता है। सम्मेलन के आयोजन में, अन्य कार्यों के अतिरिक्त, यात्रा, आवास और खान-पान सम्मिलित होते हैं। यात्रा और आवास, पर्यटन के दो प्रमुख तत्व होते हैं। इस प्रकार, सम्मेलन नियोजन और प्रबन्ध बहुत कुछ एक पर्यटन की गतिविधि होती है।

सम्मेलन और सभा प्रबन्धन के कार्य :

सम्मेलन और सभा प्रबन्धन, सर्वोच्च स्तर की कार्य कुशलता और शैली का परीक्षण होता है। इसलिए सम्मेलन की सफलता के लिए निम्नलिखित कार्यों को कुशलतापूर्वक और प्रभावकारी ढंग से अंजाम दिया जाना चाहिए :-

1. आवास
2. यातायात
3. स्थल प्रबन्धन
4. खान-पान सुविधाएं
5. भ्रमण और मनोरंजन
6. बजट बनाना
7. विपणन

1. आवास :

ऐसी कोई भी बैठक या सभा जिसमें सहभागी मेजबान शहर से बाहर से आए हों, आवास और खान-पान हेतु होटल और आवास उद्योग पर निर्भर करेगा। किन्तु आधुनिक सभा व्यवसाय के संदर्भ में होटल और आवास उद्योग की भूमिका ने विस्तृत आयाम अपनाए हैं। होटल सभा और बैठक हालों, सचिवीय सेवाओं, श्रव्य-दृष्य सुविधाओं, सर्वाधिक आधुनिक संचार प्रणाली, इत्यादि सभी सुविधाओं के प्रमुख प्रदायक बन गए हैं। कई होटल अपनी उत्पाद अभिकल्पना में सभा सम्बन्धी आवश्यकताओं को बढ़ चढ़कर सम्मिलित कर रहे हैं। यह इसलिए कि सभा संबंधी आवश्यकताओं का प्रभाव उनके विभागों और संचालनों पर पड़ता है। उदाहरणतः भोजन एवं पेय विभाग को बड़ी संख्या में सभा प्रतिनिधियों की सेवा करनी होगी। इसके अतिरिक्त यह सेवाएं रेस्त्राँ और कमरों में भी प्रदान करनी होंगी। इसी प्रकार 'फ्रंट आफिस' (front office) का संचालन उसी अनुसार कुशन बनाना होगा।

यदि किसी शहर में एक बड़ी सभा आयोजित की जा रही हो तों न सिर्फ एक को बल्कि कई होटलों को काम मिलता है, यद्यपि सभा-स्थल एक होटल का सभाकक्ष हो सकता है। यह इसलिए क्योंकि प्रतिनिधियों को आवास उपलब्ध कराया ही जाना होगा। सभाओं की मेजबानी, होटलों के लिए बड़ा कारोबार हो जाता है और यहां तक कि छोटे शहरों में भी बैठकें या परिसंवादों के आयोजन के लिए गैर-सितारा श्रेणी के होटलों द्वारा ऐसी सुविधाएं उपलब्ध कराई जा रही हैं।

2. यातायात :

सभा हेतु यातायात अपने आप में संचालन के एक विशिष्ट क्षेत्र के रूप में होकर उभरा है। कई अग्रणी वायुयान संचालकों के पास पृथक अधिकारी अथवा विभाग भी होते हैं जो सभा बाजार के प्रबन्धन में विशेषज्ञता रखते हैं। सभा नियोजकों और अति विशिष्ट व्यक्तियों को समादर भाव से निशुल्क टिकट प्रदान करना उनकी विपणन योजना का एक भाग बन गया है।

व्यवहारिक रूप से सभी वायुयान सेवा संचालक व्यवसाय श्रेणी यात्रा (business class travel) प्रदान करते हैं और उनके पास व्यवसायिक यात्रियों के लिए निरंतर उड़ान कार्यक्रम होते हैं। वे अपने वायुयान व्यावसायिक और सभी प्रतिनिधियों के लिए विशेष उड़ानों के लिए प्रदान करते हैं।

सभा गंतव्य स्थान पर स्थानीय पर्यटक यातायात संचालक, प्रतिनिधियों के स्थानीय यातायात हेतु एक बड़ी भूमिका निभाते हैं, चाहे वह सभा स्थल पर जाने के लिए हो या भ्रमण पर, दर्शनीय स्थल अवलोकन हो या मनोरंजन। इस संबंध में भूमि यातायात के लिए विभिन्न प्रकार के वाहनों का उपयोग होता है।

रेल यातायात की स्थिति में भी, बैठक संबंधी सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। 'गुजरात पर्यटन विभाग' ने अपनी पर्यटक रेलगाड़ी – 'दि रॉयल ओरियन्ट' में बैठक सुविधाएं प्रवर्तित की हैं, जिसमें बैठक हेतु एक ऐसा डिब्बा है जिसमें 19 तक लोग आ सकते हैं। वास्तव में 'इंडियन एसोसिएशन आफ टूर आपरेटर्स' (Indian Association of Tour Operators) अवकाश को सम्मिलित कर व्यवसायिक पर्यटन को संवेष्टित करने के लिए ऐसी एक सुविधा की मांग करता रहा है।

3. स्थल प्रबन्धन :

सम्मेलन के प्रबन्धन सम्मेलन के स्थान का प्रबन्ध सर्वाधिक महत्वपूर्ण गतिविधियों में से एक है। इसमें मंच पर, हॉल के अंदर और सम्मेलन हाल के बाहर गतिविधियों का नियोजन और संचालन सम्मिलित होता है। स्थल प्रबन्धन में सम्मिलित प्रमुख गतिविधियां हैं :

(i) संचार एवं तकनीकी सेवाएं :

वीडियो कांफ्रेंसिंग, केबल माइक्रोवेव, आई०एस०डी०एन० सुविधाएं, मल्टी मीडिया प्रस्तुतिकरण, दृष्य-श्रव्य उपकरण, ओवरहेड प्रोजेक्टर, स्लाइड प्रोजेक्टर, लैपटॉप संगतता समेत हाई रिजोल्यूशन डेटा प्रोजेक्टर, जन-सम्बोधन प्रणाली, तार-विहीन माइक्रोफोन, कालर माइक, लेजर प्रिंटर, लेजर प्रदर्शनी और आतिशबाजी, दुभाषिए और सचिव।

(ii) बैनरों, फूलों, पोस्टरों, इत्यादि से मंच, सभाकक्ष और आवास समेत स्थल की सज्जा। प्रतिनिधियों, मंच, संवाददाताओं इत्यादि की बैठने की योजना।

(iii) प्रतिनिधियों का पंजीकरण और पुर्ननिवेष प्रारूपों (Feedback forms) को एकत्रित करना।

(iv) सम्मेलन संबंधी सामग्री (kit) का वितरण।

(v) पेय जल, चाय, जलपान, और भोजन के लिए खान-पान सेवाओं के साथ समन्वय।

(vi) सांस्कृतिक और अन्य गतिविधियों का आयोजन।

(vii) प्रचार में रेडियो, टेलीविजन और समाचार पत्र में व्याप्ति की व्यवस्था सम्मिलित होगी। स्थल प्रबंधक की सफलता, प्रतिनिधियों, वक्ताओं, आमंत्रित व्यक्तियों इत्यादि की आवश्यकताओं की कल्पना करने और उन्हें संतुष्ट करने की गतिविधियों के नियोजन और व्यवस्था की उसकी अपनी क्षमताओं पर निर्भर करेगा। इसके लिए स्थल प्रबन्धक और मेजबान के मध्य उचित समन्वय और संचार की भी आवश्यकता होती है।

4. खान-पान सुविधाएं :

इन सुविधाओं का आयोजन स्थल पर, सामाजिक संध्याओं पर और होटलों में आयोजित करना होता है। स्थल पर खान-पान सुविधाओं में अंतर्सत्र चाय और जलपान, भोजन और सत्रों के दौरान सम्मेलन कक्ष में मेजों पर साफ पेय जल सम्मिलित होंगे। सामाजिक संध्याओं में खान-पान सुविधओं में पेय पदार्थ और भोजन सम्मिलित होंगे। सामाजिक संध्याओं में सदैव कुछ मनोरंजन आयोजित किया जाता है जैसे नृत्य, संगीत, इत्यादि। सामाजिक संध्याओं में 'थीम पार्टी' (Theme Parties) विशेष आकर्षण होते हैं। होटलों में खान-पान सुविधाएं सामान्यतः होटलों द्वारा ही प्रदान की जाती हैं। सम्मेलन आयोजक यूरोपीय योजना के आधार पर होटलों में कमरे प्रदान करते हैं जिसमें शयन और नाश्ता सम्मिलित होता है।

5. भ्रमण एवं मनोरंजन :

सम्मेलन न सिर्फ व्यवसायिक गतिविधि बल्कि सामाजिक-आर्थिक गतिविधि भी होते हैं। सम्मेलन के स्थान और उसके आसपास के आकर्षक स्थलों पर भ्रमण की योजना बनाना आवश्यक होता है। यह उन्हें न सिर्फ काम के दबाव से मुक्त करेगा बल्कि वे गंतव्य स्थान के प्रवर्तक भी बन सकते हैं। व्यवसायिक यात्री प्रभावशाली लोग होते हैं और गंतव्य स्थान के बारे में उनका मत उन लोगों द्वारा बहुत मान्य होगा जो पहले गंतव्य स्थान की यात्रा नहीं कर पाए हैं।

स्वयं को बन्धन मुक्त करने और सर्वाधिक शामक वातावरण में आराम के लिए मनोरंजन कार्यक्रम आवश्यक होते हैं। सम्मेलन के प्रतिनिधियों के साथ आए उनके पति/पत्नियों और बच्चों के लिए खरीद-फरोख्त हेतु सैर और विशेष मनोरंजन की योजना भी बनाई जाती है। उद्देश्य यह है कि जब प्रतिनिधि, सम्मेलन की व्यवसायिक चर्चा में व्यस्त हों तो उन्हें भी व्यस्त रखा जा सके।

6. बजट बनाना :

एक सम्मेलन के आयोजन एवं संचालन हेतु धन की आवश्यकता के साथ ही व्यय करने और उस पर नियंत्रण की भी आवश्यकता होती है। यह बहुत आवश्यक है कि सम्मेलन के बजट की योजना बनाई जाए और इसके अंतर्गत निम्नलिखित शीर्षो पर विचार किया जाना चाहिए:

1. आवास एवं स्थल पर व्यय :

(क) सम्मेलन हॉल, बैठक कक्ष, इत्यादि

(ख) प्रतिनिधियों का आवास।

2. यातायात :

(क) प्रतिनिधियों की यात्रा

(ख) यातायात (स्थानीय)

3. **खान-पान (भोजन, चाय, पेय, नाश्ता, इत्यादि)**
4. **मनोरंजन**
5. **संचार एवं तकनीकी सेवाएं**
6. **भ्रमण**
7. **प्रदर्शनी**
8. **सम्मेलन**

कुछ स्थितियों में सभाएं/सम्मेलन कुछ आय भी अर्जित करते है, जैसे प्रतिनिधियों और प्रायोजकों से पंजीकरण शुल्क और कभी कभी सरकार से वित्त और उनसे भी आय जो प्रदर्शनी हेतु स्टाल लगाते हैं।

7. विपणन :

किसी अन्य सेवा उत्पाद की भांति, सभा प्रदायकों को एक सुदृढ़ विपणन

नीति भी अपनानी पड़ती है। इसमें विपणन के सभी तत्व सम्मिलित होते हैं, विपणन शोध से आरंभ कर, ग्राहक रूपरेखा, उत्पाद अभिकल्पना, कीमत निर्धारण योजना, प्रवर्तन, विज्ञापन और जोरदार विक्रय, विभिन्न सेवाओं के प्रदायकों के साथ संबंध स्थापित करने तक। सम्मेलन बाजार हेतु विपणन योजना निर्धारित करते समय निम्नलिखित पहलुओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए:-

(i) लक्ष्यित बाजार **(Target Market) :** सभा ग्राहकों की पहचान सतर्कतापूर्वक की जानी चाहिए और साथ ही उन्हें उनकी आवश्यकताओं के अनुसार समूहीकृत करना चाहिए। उदाहरणतः अंतर्राष्ट्रीय सभाओं और बैठकों को एक श्रेणी के अंतर्गत समूहीकृत किया जा सकता है जबकि बड़े व्यापारिक संस्थाओं के साथ संबन्ध एक अन्य श्रेणी होगी। इसी प्रकार, व्यवसायिक संगठनों और स्वैच्छिक संगठनों के शब्दों में एक समूह बनाया जाना चाहिए क्योंकि प्रत्येक संगठन की मांगे उनकी आवश्यकतानुसार भिन्न होती है। फिर भी आगे बढ़ने के लिए एक आधार के रूप में कुछ साझे लक्षणों की पहचान की जा सकती है। उचित उत्पाद नियोजन और उत्पाद अभिकल्प के माध्यम से ग्राहक की मांगों को उत्पादों में रूपांतरित करने की आवश्यकता होती है।

प्रतिपूर्तिकर्ताओं को ग्राहकों और संस्थाओं के विस्तृत आंकड़े रखने चाहिए। इन आंकड़ों में सम्मिलित हो सकते हैं : बैठकों की वार्षिक संख्या जो यह संस्थाएं करती हैं, बैठकों के प्रकार और विभिन्न आवश्यकताएं इत्यादि। यह आंकड़े बाजार प्रथकीकरण (market segmentation) और बाजार के अवसरों के विश्लेषण में उपयोगी होंगे।

(ii) **उत्पाद अभिकल्पना या प्रस्ताव मिश्रण :** किसी भी आयोजन में सभा स्थल, आवास, यातायात, खानपान, आकर्षण के स्थानों, मनोरंजन कार्यक्रमों, सचिवीय सेवाओं, संचार सेवाओं, इत्यादि की आवश्यकता होती है। किंतु प्रस्ताव मिश्रण (Offer mix) का अभिप्राय है सेवाओं की अभिकल्पना प्रदान और उनका स्तर, जैसा ग्राहक को चाहिए। प्रस्ताव मिश्रण, सम्मेलन मेजबान की आवश्यकतानुसार बना, अभिकल्पकों का उत्पाद है। प्रस्ताव मिश्रण अभिकल्पना, मेजबान

संस्था/संगठन की आवश्यकताओं के अध्ययन और मेजबान संस्था के सम्मेलन नियोजकों के जनसांख्यिकीय/मनोचित्रण चरित्रों पर भी निर्भर करेगा।

(iii) **बोली लगाना :** प्रस्ताव मिश्रण की कीमत निर्धारण कठिन और नीतिनियोजन कार्य है। प्रस्ताव और सर्वाधिक प्रतियोगी दामों पर इसकी कीमत प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है।

(iv) **प्रवर्तन :** इससे तात्पर्य है संभावित ग्राहकों के समकक्ष उत्पाद या प्रस्ताव मिश्रण का प्रस्तुतिकरण। आकर्षक विवरणिकाएं और पुस्तिकाएं एक विशेषज्ञ सम्मेलन प्रबन्धन संस्था की सुविधाओं और प्रत्यायक के प्रभावकारी विवरण प्रदान करते हैं। विज्ञापन प्रचार सामान्यतयः सम्मेलन में निवेष सेवाओं के कई प्रतिपूर्तिकर्ताओं द्वारा संयुक्त रूप से चलाया जाता है। विज्ञापन सम्मेलन गंतव्य स्थान और सुविधाओं की एक सहायक मनोवृत्ति और छवि उत्पन्न करने के लिए दिए जाते हैं।

सम्मेलन गंतव्य स्थानों और सुविधाओं के प्रवर्तन हेतु 'परिचयात्मक भ्रमण' (Fam Trip) आयोजित की जानी चाहिए। सम्मेलन आयोजक विज्ञापन और विक्रय उद्देश्य से छपे और साथ ही 'इलेक्ट्रानिक' (electronic) संचार माध्यमों का उपयोग करते हैं। साथ ही सम्मेलन आपूर्तिकर्ता, यात्रा और पर्यटन बाजारों में भी अपने उत्पादों का प्रदर्शन कर रहे हैं, जैसे आई०टी०बी० बर्लिन, डब्लू०टी०एम० लंदन या पी०ए०टी०ए० ट्रैवेल मार्टस, इत्यादि। ग्राहकों के लिए अपने उत्पाद उपलब्ध कराने हेतु सभा प्रतिपूर्तिकर्ताओं को आवश्यक तंत्र और संबंध स्थापित करने चाहिए। इसका अर्थ है विपणन और जन संबंध प्रयासों को सुदृढ़ बनाना।

(v) मात्र यही आवश्यक नहीं है कि बाजार में चालू रुझानों के प्रति सजग रहा जाए बल्कि भविष्य के रुझानों पर भी एक नजर रखना आवश्यक है। उदाहरणतः, आकार, उद्देश्य, प्रतिनिधि रूपरेखा, इत्यादि के दृष्टिकोण से सम्मेलन बाजार अधिकाधिक खण्डित होता जा रहा है और संस्थाओं और संगठनों की संख्या बढ़ती जा रही है।

निगम क्षेत्र के ग्राहकों की स्थिति में मुख्य समय सिकुड़ता रह सकता है और प्रदर्शनियों के लिए अधिक मांग हो सकती है। भविष्य में प्रतियोगिता बढ़ेगी और प्रतिपूर्तिकर्ताओं को अपने उत्पादों में, मूल्यवर्धन के साथ-साथ सेवाओं और सुविधाओं के संदर्भ में, निरंतर गुणकारी वृद्धि करते रहना होगा। उदाहरणतः महिला प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ेगी और प्रतिपूर्तिकर्ता उनकी आवश्यकतानुसार कुछ विशेष सेवाएं प्रदान कर सकते हैं।

(vi) सभा/सम्मेलन के उद्देश्य से अपने कार्मिकों को तैनात करने में प्रतिपूर्तिकर्ताओं को बहुत सतर्क रहना चाहिए। जिम्मेदारी के निर्वाह के लिए कार्मिकों को उचित ढंग से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए और उन्हें अन्य विभागों के साथ संबंधों के बारे में जानकारी होनी चाहिए।

(vii) प्रतिपूर्तिकर्ताओं को 'इंटरनैशनल कांग्रेस कनवेंशन एसोसिएशन' (International Congress Convention Association) के साथ भी संबंध बनाने चाहिए।

सभाओं का प्रबन्धन एवं क्रियान्वयन एक कठिन कार्य होता है और जब तक पर्याप्त अनुभव और व्यवसायिक क्षमताओं से युक्त प्रबन्धक इन कार्यों के लिए न रखे जाएं, सेवा की गुणवत्ता निश्चित रूप से प्रभावित होगी। एक सभा की सफलता के लिए निम्नलिखित समितियां सम्मिलित होती हैं :

(i) संचालन समिति (Steering Committee)
(ii) स्वागत समिति (Reception Committee)
(iii) आवास समिति (Accommodation Committee)
(iv) यातायात समिति (Transportation Committee)
(v) पंजीकरण समिति (Registration Committee)
(vi) प्रवर्तन एवं प्रचार समिति (Promotion and Publicity committee)
(vii) शैक्षिक समिति (Academic Committee)
(viii) पूर्व तथा उत्तर-सम्मेलन यात्रा समिति (Pre and Post Conference Tours Committee)

(ix) मनोरंजन समिति (Entertainment Committee)
(x) सज्जा एवं सभागार समिति (Decoration and Hall Committee)
(xi) प्रदर्शनी समिति (Exhibition and Display Committee)
(xii) बजट और वित्त समिति (Budget and Finance Committee)

भारत में सम्मेलनों और सभाओं का आरंभ

सभा और सम्मेलन पर्यटन बड़ा महत्वपूर्ण है। पण्डित नेहरू ने 1955 में यूनेस्को (Unesco) सभा भारत में आयोजित कर भारत को विश्व के सम्मेलन मानचित्र में रख दिया, जिसके कारण अशोक, जनपथ और लोधी होटल बने। मील का दूसरा पत्थर 1968 में रखा गया जब नई दिल्ली में अन्कटैड (Unctad) सभा आयोजित की गई। तीसरी घटना थी 1982 का एशियाड जिसने सुविधाओं को एक नया रूप दिया और राजधानी में कई नई सभा-सुविधाएं जोड़ीं। यह वह वर्ष भी था जब पर्यटन विभाग, एअर इंडिया और आई०टी०डी०सी० समेत नौ सदस्यों के साथ 'इंटरनेशनल कांफ्रेंस कनवेंशन एसोसिएशन' का भारतीय चैप्टर (Indian Chapter) खोला गया। इसके बाद से तो भारत में सम्मेलनों तथा सभाओं की एक लम्बी श्रंखला सी बन गई है।

□□□

अध्याय - 9

साहसिक पर्यटन
(Adventure Tourism)

साहस ने हमारे पर्यटन में एक नया आयाम जोड़ा है और भविष्य इस पर्यटन गतिविधि पर अधिकतम् महत्व दिये जाते देखेगा। भारत में हिमालय की अतिविशाल चोटियों से लेकर गोवा के स्वर्णिम बलुए तटों तक बहुत सुंदरता है। इसमें बहुसंख्यक नदियां और झीलें और चौड़े मरुस्थल हैं जो साहस पर्यटन के विकास के ढेरों अवसर प्रदान करते हैं। वह दिन दूर नहीं जब साहस पर्यटन भारत के पर्यटन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण विस्तृत रूप से स्वीकृत और व्यवहार्य भाग हो जाएगा।

साहस में एक यात्रा या एक दीर्घकालिक प्रयास सम्मिलित, होता है जिसमें जोखिम के अज्ञात तत्व होते हैं तथा जिन्हें व्यक्ति की शरीरिक कौशल द्वारा जीता जाना होता है। साहस कुछ ऐसा होता है जिसे करने के लिए स्वयं व्यक्ति चुनता है ओर जहाँ सम्मिलित जोखिम स्वयं द्वारा थोपा गया हो और किसी और को नहीं बल्कि स्वयं को खतरा उत्पन्न करता हो।

इसलिए साहस के आधारभूत तत्व स्वयं अपने शरीर पर और प्रक्रिया में जोखिम की एक स्थिति पर पूर्ण नियंत्रण के संतोष में, सौंदर्य के प्रति जागरुकता में और अज्ञात को खोजने में है। रेखा के रूप में यह निम्नलिखित ढंग से दर्शाया जा सकता है :-

साहस के तत्व :

शारीरिक जोखिम

उत्साह

उमंग

जोखिम की इच्छा

अज्ञात का ज्ञान

पुनरुज्जीवन

स्थान

असामान्यता

पर्यटन के प्रवर्तन में साहस और खेलों की बड़ी संभावनाएं हैं। वे व्यक्ति की खुशी, फुर्सत, मनोरंजन, प्रसन्नता और 'कुछ अलग' करने की इच्छा की पूर्ति करते हैं। और बड़े अर्थ में यह 'कुछ अलग' साहस पर्यटन का रूप लेता है। विस्तृत रूप से साहस खेल गतिविधियां निम्नलिखित श्रेणियों के पर्यटकों को आकर्षित करती हैं।

1. व्यवसायिकता की उच्च्व उपलब्धता से युक्त पर्यटक।
2. लोग जो इसे एक नियमित शौक के रूप में अभ्यास करते रहे हैं।
3. लोग जो नौसिखिए हैं और मौका मिलने पर इसे आजमाना चाहेंगे।
4. दर्शक जो एक प्रतियोगिता या एक तमाशा देखना चाहते हो।
5. लोग जो सिर्फ कुछ अलग सा करना चाहते हैं और स्वयं के लिए नई प्रत्याशाओं की खोज करने के लिए बहुत उत्साहित हैं।

हवाई साहसिक खेल

वर्ष 1905 हवाई खेलों के लिए एक 'मंचचिन्हित वर्ष' (benchmark years) रहा जब सभी अंतर्राष्ट्रीय हवाई प्रतियोगिताओं के निरीक्षण करने और

सभी सरकारी हवाई और अंतरिक्ष अभिलेखों को प्रमाणित करने के लिए 'फेडेरेशन ऐरोनॉटिक इंटरनैशनल' का गठन किया गया। संपूर्ण विश्व में प्रसिद्ध कुछ महत्वपूर्ण हवाई खेल निम्नलिखित हैं :

पैराशूट के खेल (Parachuting) :

इस खेल में एक वायुयान या गुब्बारे से कूदना और पैराशूट की मदद से उतरना सम्मिलित है। पैराशूट का उपयोग एक वायुयान से जुड़ी (स्टेटिक लाइन नामक) एक रेखा द्वारा होता है जो एक कूदने वाले के भार से खींचे जाने पर पैराशूट को स्वतः बाहर खींच लेता है। जहां तक पर्यटन का प्रश्न है इस खेल का दायरा सीमित है। इसकी विशेष आवश्यकताओं में वायुयान, पैराशूट और उतरने के बड़े क्षेत्र सम्मिलित हैं। ये आवश्यकताएं पैराशूट के खेल को बहुत महंगा बनाती हैं और भारत में इसे एक प्रसिद्ध खेल बनाने में मदद नहीं करतीं।

आकाश गोताखोरी (Sky Diving)

आकाश गोताखोरी में एक आकाश गोताखोर एक वायुयान या गुब्बारे से शुरुआत में बगैर पैराशूट खोले बहुत ऊँचाई से कूट जाता है और कुछ समय बाद एक पूर्वनिर्धारित ऊँचाई (सामान्यतः 4000 से 2200 फिट) तक गिरने के बाद खोलता है। आरंभ में कूदने वाले के गिरने की गति दर उच्च गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कारण बढ़ती रहती है किन्तु 11 सेकेन्ड में बाद वह अपनी सीमान्त गति पर पहुंच जाता है, जो एक व्यक्ति की स्थाई स्थिति में गिरने के लिए लगभग 200 किलोमीटर प्रति घंटा होती है। यह व्यक्ति को हवा में तैरने जैसी अनुभूति देती है और अपने शरीर की स्थिति को परिवर्तित कर वह विभिन्न कलाबाजियां कर सकता है और किसी भी दिशा में समस्तरतः दूरी भी तय कर सकता है।

अपने आश्चर्य जनक आकर्षणों के बावजूद भी ये खेल कुछ कमजोरियों से क्षति प्राप्त करते हैं। इसमें वायुयान और पैराशूटों की ऊँची निषेधात्मक कीमतें होती हैं और कुछ स्तर की विशेषज्ञता की आवश्यकता यात्री को इसके अभ्यास की ओर प्रेरित नहीं करती। वर्तमान के भारत में यह रक्षा

कर्मियों के लिए सीमित है और एक औसत पर्यटक के लिए बड़ी मुश्किल से ही सुविधाएं मिलती हैं।

हैंग-ग्लाइडिंग (Hang Gliding) :

हैंग ग्लाइडिंग आवश्यक रूप में एक ग्लाइडर के समान उड़ना होता है जहां दिशा नियंत्रण स्वयं चालक के अपने भार में परिवर्तन द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें किन्हीं विशेष ढाँचागत सुविधाओं की आवश्यकता नहीं होती, सिर्फ संतुलित तत्वों से मुक्त पर्वतीय भूभाग चाहिए जो निम्नलिखित प्रदान करें :

1. दौड़ कर उड़ने के लिए एक ढलान पट्टी।
2. अपेक्षाकृत बाधा रहित उड़ान पथ।
3. उतरने के लिए एक सपाट क्षेत्र जो बाधा रहित हो।
4. उड़ान के क्षेत्र और उतरने के क्षेत्र के मध्य एक मोटर से आने जाने लायक मार्ग।

जहां तक पर्यटन का प्रश्न है भारत में इस खेल की बड़ी संभावनाएं हैं। इस खेल में सहभागिता सीमित रही है, इस कारण से कि यह दक्षता जल्दबाजी में नहीं हासिल की जा सकती और इसके लिए सघन प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

भारत में हैंग-ग्लाइडिंग के प्रवर्तन हेतु चिन्हित मुख्य स्थानं हैं:

1. श्रीनगर घाटी, जम्मू और कश्मीर में।
2. कांगड़ा घाटी, हिमाचल प्रदेश में -बिलिंग, कांगड़ा, धर्मशाला, शिमला और कसौली समेत।
3. मुंबई-पुणे राजमार्ग पर कामशेट।
4. महाराष्ट्र में तेलेगांव, सतारा, सिंहगढ़, मुराद और जंजीरा।
5. तमिलनाडु में नीलगिरि की पहाड़ियां।
6. मध्य प्रदेश में माण्डू।
7. कर्नाटक में बैंगलोर के निकट चामुण्डी पर्वत।
8. मेघालय में शिलांग।

पैरा ग्लाइडिंग (Para Gliding) :

पैरा ग्लाइडिंग सबसे नया हवाई खेल है जिसने दुनिया को अपने बहाव में ले लिया है। पैरा ग्लाइडर एक विशेष रूप से निर्मित चौकोर ग्लाइडर होता है जिसकी रेखाओं में साज चढ़े होते हैं और यह 'रिपस्टाप नायलोन' (ripstop nylon) का बना होता है जिस पर, शून्य चौगान (Zero polosity) सुनिश्चित करने के लिए, 'पालीमेथेन' (Polymethane) की एक परत चढ़ी होती है। इसकी छतरी, कई अर्द्धाकार खण्डों से जुड़ी इसकी ऊपरी और निचली सहत से मिलकर बनी है- इस तरह जो कक्ष बना उसे 'सेल' (cells) कहते हैं। जब छतरी पूरी तरह फुलाई जाती है, यह 'सेल' (cells) एक 'वायुपर्णिका' (aerofoil) का आकार ले लेता है जिसकी निचली सतह मोटी और ऊपरी सतह वक्री (गोलाई में) होती है। पंख का पिछला भाग 'ट्रेलिंग एज' (trailing edge) कहलाता है।

भारत में कुछ संस्थाओं जैसे 'इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ स्कीइंग एण्ड माउंटेनियरिंग', 'हिमाचल प्रदेश टूरिस्म डेवलपमेंट कारपोरेशन', और कुछ एक निजी क्लबों ने पैरा-ग्लाइडिंग में प्रशिक्षण आरंभ कर दिया है। उत्तर प्रदेश में औली, जम्मू और कश्मीर में सैआसर, हिमाचल प्रदेश में विलासपुर, सोलोंग नल्ला (मनाली) और बीर बिलिंग कुछ ऐसे स्थान हैं जहां पर्यटक नियमित रूप से पैरा-ग्लाइडिंग का आनन्द ले सकते हैं।

पैरा सेलिंग (Para-Sailing) :

पैरा सेलिंग एक बड़ा आसान खेल है जिसमें एक पैराशूट वाले खिलाड़ी को खींच कर कुछ एक सौ फीट की ऊँचाई में हवा में ले जाते हैं और फिर वह पैराशूट की मदद से धीरे-धीरे उतरता है। पूरे साल भर की गतिविधि के रूप में पैरा सेलिंग जमीन और पानी दोनों ही में की जा सकती है। भारत में पर्यटन के संदर्भ में इस खेल की बड़ी संभावनाएं हैं क्योंकि ढांचागत सुविधाओं की कीमत बहुत कम है और इसे सप्ताहांत गतिविधि के रूप में भी अपनाया जा सकता है। वर्तमान में पैरा-सेलिंग, दिल्ली, पुणे,

मुंबई, चंडीगढ़, बैंगलोर और कालाहाती के 'उड़ान क्लबों' में कराई जाती है। जहां तक पानी का सवाल है यह गतिविधि गोवा के 'अगुआडा बीच' में की जाती है।

बंगी कूद (Bungee Jumping) :

इस खेल में किसी यंत्र इत्यादि की आवश्यकता नहीं होती, सिर्फ एक 'बंगी रस्सी' (Bungee Chord) चाहिए जो इतने लचीले 'नायलान के तंतुओं की बनी हो जो छलांग के बाद झटकों को सोख लेने की क्षमता रखता हो। ढांचागत सुविधाओं की आवश्यकता में सिर्फ एक पुल, मीनार या कोई अन्य ढांचा जो कुछ सौ फिट की मुक्त छलांग प्रदान कर सके। कूदने वाला, खाली स्थान में सिर के बल कूदता है और परिणामतः अधिवृक्कता की हड़बड़ी बड़ा आनन्ददायक अनुभव प्रदान करती है।

इस खेल की संभावनाएं आश्चर्यजनक है। क्योंकि इसमें कीमतें लगभग बहुत कम लगती हैं और ढांचागत सुविधाएं लगभग सभी जगह उपलब्ध होती हैं। इसमें सिर्फ एक विशेषज्ञ की देखरेख के अतिरिक्त, अधिक प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती है। भारत में बंगी-कूद की बड़ी संभावनाएं हैं, किन्तु फिर भी भारत के क्षितिज में अभी हाल ही में 'वण्डरलस्ट ट्रैवल्स' ने दिल्ली में एक बंगी-कूद परियोजना का शुभारंभ किया है।

गुब्बारे का खेल (Ballooning) :

लगभग 1000 वर्ग गज 'रिजस्टाप नायलान' से बना, एक औसत गुब्बारा 50 फीट चौड़ा, 70 फीट ऊँचा और घनत्व में 57000 क्यूबिक फीट होता है। इसके बड़े रूपान्तर भी उपलब्ध हैं। गुब्बारा एक बड़ी टोकरी से स्टील के तारों से बनी रस्सियों से जुड़ा होता है। इसकी टोकरी लचीले मोटे पदार्थ की बनी और धातु की रस्सियों से मजबूत बंधी होती है। गुब्बारे के मुख पर 'प्रोपेन' (Propane) या 'ब्रूटेन' (Brutane) के सिलिण्डर 'बर्नर' (Burner) में आग उत्पन्न करते हैं। जब इसके मुख में एक पंखे द्वारा ठंडी हवा भरी जाती है, और बर्नर जलने लगते हैं, तो तेज लपटें गर्म हवा को और गर्म करती हैं और यह गुब्बारे को हवा में उठाने लगता

है। ठंढी और गर्म हवा को नियंत्रित कर, चालक किसी भी निर्धारित मार्ग की दिशा में गुब्बारे को ले जा सकता है।

सिर्फ एक व्यक्ति गुब्बारे के साथ 800 फीट की ऊँचाई तक जा सकता है जबकि समूहों में जाने पर इसकी ऊँचाई 200 से 500 फीट तक सीमित रह सकती है। 'वैलून क्लब आफ इंडिया' नई दिल्ली के सफदरजंग हवाई अड्डे पर स्थित है। कोई भी सुखद यात्रा कर सकता है किन्तु चालक का लाइसेंस सघन परीक्षणों के बाद ही दिया जाता है। गुब्बारे की व्यवसायिक यात्रा भारत में अभी भी उपलब्ध होना बाकी है। 'इंडिया इंटरनैशनल बैलून फेस्टिवल' प्रतिवर्ष नवम्बर में होता है जो विश्व भर से सहभागियों को आकर्षित करता है।

जल पर आधारित साहसिक खेल

व्हाइल वाटर रैफ्टिंग (While Water Rafting) :

यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण और उत्तेजक जल क्रीड़ाओं में से एक है। इस खेल में, सांश्लेषिक सामग्री (Synthetic material) से निर्मित एक फूलने योग्य 'रैफ्ट' (tsgy) नामक नौका का उपयोग तेज बहती नदियों का मार्ग तय करने के लिए किया जाता है। इस खेल में, उफनती, हरहारे नदी के तेज और तीखे बहाव के दौरे के साथ ही लंबी अवधियों की मंद गति से तैरने और नदी तटों के निरंतर बदलते दृश्यों के साथ ही प्राकृतिक आश्चर्यों के निहारने का अवसर प्राप्त होता है।

कई अग्रणी नदी गमन विशेषज्ञों का मत है कि भारत के, विश्व भर की नदी गमन राजधानी बनने की संभावनाएं होती हैं। इस खेल की एक युक्तिसंगत पर्यटन संभावना है और पर्यटकों द्वारा काफी मात्रा में संरक्षण प्राप्त करता है। पर्यटन के दृष्टिकोण से मुख्य लाभ यह है कि नौसिखिए भी इसे सीख कर अभ्यास कर सकते हैं। भारत में नदी गमन हेतु सर्वाधिक प्रसिद्ध जल है :

अलकनन्दा	–	श्रेणी III - IV
ब्रह्मपुत्र	–	श्रेणी III - IV
भागीरथी	–	श्रेणी IV
टोन्स	–	श्रेणी IV - V

शारदा	–	श्रेणी III - IV
जांक्कार	–	श्रेणी III
सिंधु	–	श्रेणी II - III
चेनाब	–	श्रेणी IV -V
लिद्दर	–	श्रेणी III - IV
बियर	–	श्रेणी III - IV
सतलज	–	श्रेणी IV - V
गंगा	–	श्रेणी III -IV
तीस्ता	–	श्रेणी IV
रंगित	–	श्रेणी III - IV

कैनोइंग तथा कायाकिंग (Canoeing and Kayaking) :

सभी प्रकार के नदी जल क्रीड़ाओं में वास्तविक जोखिम ऊपरी धाराओं से आरंभ होता है जहां जल जैसे जैसे गर्जना के साथ बड़ी नुकीली चट्टानों की नालियों से होकर ढाल में गिरता है, जल अधिक उच्छंखल और सफेद हो जाता है। एक आसान 'कैनो' यात्रा का सुख एक हल्की मिश्रधातु से बनी नौका में आता है जिसमें दो से तीन लोग बैठ सकते हैं। 'कैनोइंग' के लिए सर्वाधिक बेहतर ढाल वह चरण होता है जहां नदी मैदानों में प्रवेश करती है जहां यह यात्रा, जंगलों में एक प्राकृतिक अवकाश के रूप में जोड़ी जा सकती है। उपयुक्त क्षेत्र हैं : ऋषिकेश, डाकपत्थर और रामगंगा। ये सभी उत्तरांचल में हैं।

थोड़े अधिक साहसी लोगों के लिए 'काया किंग' आकर्षक होगी क्योंकि यह एक या दो नौका चालकों द्वारा नदी में नवीनता देती है। कठिनाई का स्तर नदी के ढालों और इसकी तीव्रता पर निर्भर करेगा। पैडल चलाने का अनुभव वांछनीय है।

सभी प्रकार के नदी गमन का उपयुक्त समयावधि जल-घनत्व की पर्याप्तता पर निर्भर करता है। सितम्बर-नवम्बर और मार्च-अप्रैल और मई सर्वाधिक उपयुक्त हैं।

समुद्र जल में साहसिक खेल :

साहस और रोमांच की चाह रखने वाले अधिकाधिक लोग भारत की ओर आकर्षित हो रहे हैं, जिनमें से कई बड़े 3000 किलोमीटर में फैली समुद्र तट रेखा की ओर। बंगाल की खाड़ी, अरब सागर और भारतीय समुद्र से घिरा भारत, अपने कोष के सुंदर लक्षद्वीप और अण्डमान और निकोबार के द्वीप समूहों समेत, जल क्रीड़ा प्रेमियों को एक स्वर्ग प्रदान करता है। यह सिर्फ द्वीप और समुद्र-तटीय क्षेत्र ही नहीं हैं जो जल क्रीड़ा हेतु ऐसे अवसर प्रदान करते हैं, बल्कि पर्वतों की ढलानों पर द्रुतिगति और बड़ी झीलें भी ढेर सारा रोमांच प्रदान करती हैं।

समुद्र के जल में, 'विंड सर्किंग' (Eomh Ditlomh), कायाइकिंग कैन्योइंग (Kayaking Canoeing), वाटर स्कीइंग (water skiing), याचिंग (Yatching), स्क्यूबा डाइविंग (Scuba diving), स्नोरकेलिंग (Snorkelling) और अन्य खेल ऐसी उत्तेजना प्रदान करते हैं जिसकी बहुत कम बराबरी हो सकती है। यहां तक कि स्वचालित नौका (motor boat) की सवारी भी रोमांचकारी हो सकती है। यह रोमांच कई गुना अधिक हो सकता है यदि आप स्वचालित नौका के पीछे स्की (Skii) करें।

कई हजार किलोमीटर में फैला, भारतीय समुद्र-तट- विशाल अरब सागर, भारतीय सागर और बंगाल की खाड़ी में फैला पड़ा है। सर्वाधिक उत्तम समुद्र तट (beaches), चट्टानी अंतरीपों (clift promovatories), कच्छ वनस्पति (mangrones), अप्रवाही जल स्थलों (Back waters), जवाहरातों जैसे द्वीप समूहों और समुद्रीय जीवन द्वारा बिन्दु-चिन्हित इसमें बड़ी संभावनाएं छिपी हैं। एक ओर जहां आसानी से पहुंचे जा सकने वाले प्रसिद्ध स्थल हैं, वहीं कई और ऐसे स्थल भी हैं जो पूर्णतः अज्ञात हैं। कांच के मुखौटे और सांस लेने वाली नली पहन कर समुद्रतल में डुबकी लगाना बड़ा मजेदार होता है। जब आप स्कूयबा गियर (Scuba Gear) पहनते हैं जो मजा और उत्साह कई गुना बढ़ जाता है यह पहनावा गहरे समुद्र के गोताखोरों के लिए विशेष रूप से बनाया गया है और अतुलनीय और अकल्पित रोमांच और साहस के अवसर प्रदान करता है।

साहसिक खेलों का वर्गीकरण
स्थल-प्रकृति के आधार पर
खतरे की मात्रा के आधार पर
भूतल आधारित साहसिक खेल
जल-आधारित साहसिक खेल
वायु-आधारित साहसिक खेल
कठोर साहसिक खेल
सरल साहसिक खेल
पर्वतारोहरण
चट्टानारोहण
ट्रेकिंग
स्कीइंग
हेलि स्कीइंग
आइस स्केटिंग
ऊँट सफारी
मोटर रैली
वन्य जीव पर्यटंन
शुद्ध जल आधारित
सामुद्रिक जल आधारित
नदी जल
शान्त/स्थिर जल
सतह पर
सतह के नीचे
गोताखोरी
बन्धन मुक्त गोताखोरी (Tethered Diving)
स्नोर्केलिंग
नौकाचालन (Rowing)
सर्फ बोर्डिंग
विन्ड सर्फिंग
वाटर स्कीइंग
कायाकिंग
कैनोइंग
श्वेत जल नौका चालन (White Water Rafting)
शक्ति चालित
बिना शक्ति चालित
अत्याधिक खतरनाक
व्यापारिक उद्देश्य हेतु अशोध्य
बहुधा न जाये जाने वाले स्थलों का अन्वेषण जैसे उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव तथा ऊँची पर्वती चोटियों पर चढ़ना
कम खतरनाक
बहुधा जाये जाने वाले स्थलों पर जाना
व्यापारिक रुप से योग्य पर्यटन हेतु अधिक उपयोगी
गुब्बारा सैर
पैरा सेलिंग
पैरा ग्लाइडिंग
पैराशूटिंग
हैंग ग्लाइडिंग
माइक्रोलाइटिंग
स्काई डाइविंग (हवाई गोताखोरी)
ग्लाइडिंग तथा सोरिंग
बंगी जंपिंग

अध्याय - 10

समुद्र तट पर्यटन
(Beach Tourism)

समुद्र-तट पर्यटन की अवधारणा :

समुद्र तट पर्यटन धनाढ्य समाज और साथ ही मध्य वर्गीय लोगों में बड़ा ही लोकप्रिय है। यह विविध अभिप्रेरणाओं से युक्त सभी आयु वर्गों के लोगों में प्रसिद्ध है। यह मुख्यतः एक फुर्सत की गतिविधि है और यह गर्म और ठंडे देशों के लोगों के मध्य अधिक प्रसिद्ध है।

आकर्षण और विक्रयक्षमता के पहलुओं के अलावा, समुद्र तट पर अवकाश, विश्व के कई भागों में पर्यटन के संपूर्ण विकास की ओर ले जा रहा है। समुद्र तट का मुख्य महत्व यह है कि वे सौंदर्यपरक और पर्यावरणीय मूल्य प्रदान करते हैं, जैसे कि सुनहरी रेत के साथ सुंदर प्राकृतिक दृश्य, हरियाली और बादलों वाला नीला आकाश। पानी साफ, बहाव और पानी के अंदर की चट्टानों से मुक्त होना चाहिए। धूप के प्यासे यात्रियों को पूर्ण मनोवैज्ञानिक संतोष देने के लिए समुद्र तट (beach) का आकार और तटीय लक्षण भी महत्वपूर्ण होते हैं।

समुद्र तट पर्यटन गतिविधियों में जल और भूमि संसाधनों का उपयोग सम्मिलित होता है। जल के उपयोग में तैराकी, सर्फिंग (surfing), नौकायन (sailing), वायु सर्फिंग (wind surfing), जल स्कूटर (water scootering), मोटर बोट स्कीइंग (Motorboat skiing), पैरा सेलिंग (para sailing), स्नोर्केलिंग (snorkelling), इत्यादि और कई और जल आधारित गतिविधियां सम्मिलित हैं।

दूसरी ओर भूमि उपयोग के बहुत से आयाम हैं : रेत में धूप सेंकना, चट्टानों और हरियाली का सुंदर परिदृष्य पर्यटक गतिविधियों के लिए होता है (पार्क, खेल के मैदान, क्लब, रंगशाला, मनोरंजन पार्क, जुंआघर और सांस्कृतिक संग्रहालय इत्यादि), आवास सुविधाएं (होटल काटेज, विला, शिविर स्थल, ट्रेलर पार्क, इत्यादि), कार और बस पार्क क्षेत्र, मनोरंजन और खरीदारी के लिए बाजार, गतंव्य तक पहुंचने हेतु सड़कें और यातायात जाल। कुछ अन्य आकर्षणों में बीच (beach) क्षेत्रों के निकट के अन्य पर्यटक आकर्षणों की यात्रा भी सम्मिलित हो सकती है। अपनी बहुआयामी आवश्यकताओं के कारण पर्यटन हेतु एक विशेष समुद्र तट विकसित करने में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। एक समुद्र तटीय आश्रय स्थल को एक स्वयं सम्पन्न समुदाय के रूप में कार्य करने हेतु एक एकीकृत भवन समूह के रूप में विकसित करने की आवश्यकता होती है। आस पास के वातावरण के संबंध में भवनों और ढांचों की शैली, रूप, ऊँचाई, निर्माण सामग्री उपयोग, रंग योजना, इत्यादि पर भी पर्यावरण नियंत्रण की आवश्यकता होती है।

समुद्र तटीय पर्यटन के पर्यावरणीय प्रबन्धन का भी विचार किया जाना चाहिए। सड़क प्रणाली ऐसी होनी चाहिए जो रेखांगत विकास के बजाय सामूहिक प्रकार (cluster type) को प्रेरित करे; मुख्य मार्ग समुद्र तट से काफी दूर और समुद्र तटीय क्षेत्रों पर पहुंच के विन्दु प्रदान करते हुए। यह न सिर्फ विकास की कीमत कम करेगा। बल्कि यह मिट्टी की कटान और अन्य पारिस्थितिकीय गिरावट को कम भी करेगा। पर्यावरणीय प्रबन्धन में, जलवायु प्रणाली को बनाए रखने के लिए तट पर विकास के समर्थन में तटीय क्षेत्र के तत्काल भीतरी प्रदेश में आवश्यक सुविधाएं ढांचे की उपलब्धता भी सुनिश्चित की जानी चाहिए।

समुद्र तट (beach) की पूर्व प्रेक्षाएं

समुद्र तटीय पर्यटन की पूर्व प्रेक्षाएं :

1. धूप सेंकने, नहाने, तैरने और जल पर आधारित मनोरंजन के अन्य रूपों के लिए लोगों द्वारा संसाधनों के पूर्ण उपयोग करने देने के लिए समुद्र तट और तट से दूर का जल पर्याप्त रूप से उच्च गुणवत्ता का होना चाहिए। तापमान और जल के खारापन, लहरों और ज्वार-भाटों की ऊँचाई, वहाव की लंबाई चौड़ाई और गति, भंवरों/बवण्डरों के आने की बारम्बारता इत्यादि पर उचित अध्ययन किया जाना चाहिए।

2. समुद्र तट की वहन क्षमता स्थापित की जानी चाहिए। बगैर भीड़भाड़ बड़ी संख्या में लोगों को वहन करने हेतु समुद्र तट, लंबाई और चौड़ाई में पर्याप्त आकार का होना चाहिए। स्थल के आगे अधिक विकास की गुंजाइश होनी चाहिए।

3. समुद्र तट पर अच्छी गुणवत्ता की पर्याप्त रेत होनी चाहिए। यह रंग में आकर्षक, संरचना में उत्तम, छूने में प्रीतिकर और चट्टानों, मूंगों और कवाड़ से रहित होनी चाहिए।

4. महाद्वीपीय रेती के संबंध में, तट पर ऐसी रेती होनी चाहिए जो 'सर्फ' (surf) पर जाने और बाहर निकलने का सुरक्षित स्थान प्रदान करे। तैरने और नहाने के अतिरिक्त जल क्रीड़ा गतिविधियां प्रदान करने के लिए पानी साफ, गर्म और तगड़े बहाव से रहित होना चाहिए।

5. आश्रय स्थल आकर्षक होना चाहिए, ग्रामीण परिवेश का अधिक हो जो फुर्सत और विश्राम के लिए सहायक हो जाए इसके कि शहरी केन्द्र जैसा एक भीड़भाड़ वाला परिवेश बनाया जाए। आशय स्थल की दृष्यगत सुंदरता ऐसी हो जिसका बल प्रकृति पर और एक अधिक प्राकृतिक चरित्र पर हो।

6. संपूर्ण परिवेश अनोखेपन का भाव दर्शाए और एक गुणवत्ता और चरित्र जो अन्य प्रतियोगी गंतव्य स्थानों से इसे अलग दर्शाए, विशेषकर अवकाश पर्यटन गतिविधियों का।

7. जलवायु एक महत्वपूर्ण पहलू है। आदर्श परिस्थितियों में समुद्र तटीय आश्रय स्थल की जलवायु, वर्ष के अधिकांश समय के लिए समुद्र तट का उपयोग और बहिर्द्वारी मनोरंजन की सुविधाएं प्रदान करे। आश्रय स्थल की एक आदर्श जलवायु के लक्षण इस प्रकार हों : दिन में धूप, कम बादल हों, गर्म जलवायु, निम्न आर्दता, लगातार ठंडी हवाएं (भूमि और समुद्रीय हवाएं), बवण्डरों और तेज हवाओं की कम बारम्बारता (जैसी पश्चिमी तट पर है) और अच्छी स्पष्ट दृष्यता।

8. सुगम्यता एक महत्वपूर्ण मापदण्ड है। समुद्र तटीय आश्रय स्थल गंतव्य स्थान, यातायात के हवाई और अन्य साधनों द्वारा अपेक्षाकृत बड़ी संख्या में यात्रियों द्वारा, सुविधाजनक रूप से गम्य होने चाहिए। यह आश्रय स्थल, हवाई अड्डे, जनसंख्या केन्द्रों और पर्यटकों की रुचि के अन्य स्थानों से सीधी और सुंदर दृश्यों वाली सड़कों द्वारा जुड़ी होनी चाहिए। आश्रय स्थल को हवाई अड्डे, रेलवे स्टेशन और महत्वपूर्ण बस अड्डों से एक घंटे की वाहन यात्रा के दायरे में होना चाहिए और समुद्र तट तक जाने वाली सड़क उत्तम होनी चाहिए।

9. आधुनिक और आवश्यक जनसुविधाएं एक समुद्र तटीय आश्रय स्थल के लिए महत्वपूर्ण होनी चाहिए। इसमें उचित पेय जल आपूर्ति, बिजली, मल बहाव प्रणाली, नालों की प्रणाली और प्रभावकारी संचार सुविधाएं हों। विजली की नियमित आपूर्ति एक अनिवार्यता है, साथ ही बिजली के उपकरणों की धातु सतहों का रखरखाव कठिन होता है, क्योंकि हवा की नमी में नमक के कारण वे खराब हो जाती हैं।

10. आश्रय स्थल में सामान्य सौंदर्यपरक लक्षण होने चाहिए जैसे रुचिपूर्ण अथवा सुंदर स्थलाकृति, फूल और पत्तियां, क्षेत्रीय वास्तुशिल्पीय शैली, क्षेत्रीय जीवन शैली, स्थानीय पाककला, खरीद फरोख्त और मनोरंजक खेल और मनोरंजन की सुविधाएं, स्थानीय सांस्कृतिक आकर्षण और यथासंभव मनोरंजक शामें। उपरोक्त वर्णित सुविधाओं से युक्त समुद्र तट पर्यटक को लंबी अवधि के लिए रुकने को आकर्षित करते हैं। लंबी अवधि तक पर्यटक को ठहरने के लिए साहसिक खेलों/अंतर्द्वारी खेलों/मनोरंजन/शराब घर/योज-आयुर्वेदिक और प्राकृतिक चिकित्सा, इत्यादि का प्रावधान होना चाहिए।

11. सुरक्षा का उचित प्रबन्ध होना चाहिए। प्रशिक्षित जीवन रक्षक पर्याप्त संख्या में होने चाहिए। इनमें उच्च स्तर की निगरानी की आवश्यकता होती है। आश्रय स्थल का यह दायित्व होता है कि वह पर्यटकों का कल्याण सुनिश्चित करे। वे खो सकते हैं, डूब सकते हैं या उन पर

असामाजिक तत्व आक्रमण कर सकते हैं। इसलिए उचित सुरक्षा व्यवस्था की आवश्यकता होती है क्योंकि समुद्र तट को पूरी तरह बाड़ से नहीं घेरा जा सकता। अतिक्रमण कर्ताओं और चोरी के विरुद्ध भी सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है।

किसी समुद्र तट के विकास की योजना बनाने से पूर्व यह ध्यान रखना चाहिए कि समुद्र तट आश्रय स्थल स्वयं में एक अस्तित्व है, इसलिए यह आवश्यक है कि इससे संबद्ध सभी लागतें और लाभ स्थापित किए जाएं। इस स्तर की एक परियोजना को मूल्यांकित करते समय आर्थिक और वित्तीय व्यवहार्यता पर भी ध्यान दिया जाए। कुछ मुद्दों पर विचार किया जाना चाहिए जैसे, सभी परिमाणों का क्षेत्र और क्षमता; पर्यटक सुविधाओं का प्रकार और संख्या; सेवा उपयोगिता संयन्त्रों का प्रतिष्ठापन, परियोजना के लिए उपलब्ध कुशल कार्मिकों का स्तर और उनका प्रकार, स्थानीय सहभागिता और प्रतिपूर्ति और विस्थापित परिवारों को अन्य भुगतान और अंततः स्थानीय लोगों के लिए रोजगार के अवसरों पर विचार।

गोवा में पर्यटक संसाधनों के दो आधारभूत प्रकार हैं : प्राकृतिक और मानव निर्मित। प्राकृतिक आकर्षणों में मुख्य हैं समुद्र तट (beaches), विहार (sanetuaries), अंतर्देशीय जलमार्ग और टापू। गोवा के 107 किलोमीटर लम्बी तटीय विस्तार में चांदी के रंगों के समुद्र तटों की एक श्रंखला है। ऊँचे-ऊँचे हरे नालियल के पेड़ों से युक्त और पृष्ठभूमि में हरी झाड़ियों समेत कैलेंगूट, बेगा, वागाटोर, अंजुना, कोटवा, बेतुल, पालोलेम, देशी और विदेशी पर्यटकों के मध्य, बड़े प्रसिद्ध समुद्र तट (beaches) हैं। कुछ समुद्र तट ऐसे हैं जो एकांत, शांत और अ-प्रदूषित हैं, जैसे अरामबोल और पालोलेम।

माण्डोवी और जुआरी दो ऐसी मुख्य नदियां हैं जो राज्य को पार करती हैं। अन्य छोटी नदियां हैं तिरोकोल, चपोरा, साल तालपोना इत्यादि। ये नदियां प्रकृति में मौसमी हैं। दो मुख्य नदियां नौगम्य हैं। वे संचार का प्राकृतिक मार्ग प्रदान करती हैं। पर्यटन हेतु उनका पूर्ण उपयोग किया जा सकता है और वे जल क्रीड़ा के विकास के लिए बहुत अवसर प्रदान करती हैं।

उत्तर में पाण्डोवी नदी पर और दक्षिण में जुआरी नदी पर कुछ टापू हैं। टापुओं की सुंदर स्थिति पिकनिक स्थलों के रूप में आदर्श हैं। टापुओं में दीवर और

चोरावों की अच्छी पर्यटन संभावनाएं हैं।

झीलें, गोवा की सुंदरता में वृद्धि करती हैं। झीलों में सर्वाधिक प्रसिद्ध हरी पहाड़ियों से घिरी मायेम झील है जो नौकायन, सर्फिंग और सेलिंग का एक विस्तृत अवसर प्रदान करती है। दूध सागर और अर्रालेम दो मुख्य जल प्रपात हैं। वन्य प्राणी विहारों भगवान महावीर विहार, बोंधा और कटिगाओं, अपने प्राकृतिक वास में फूल पौधों की विस्तृत श्रंखला का एक खजाना छिपाए हुए हैं।

गोवा अपनी ऐतिहासिक और सांसकृतिक विरासत में बड़ा समृद्ध है। लगभग साढ़े चार दशकों के पुर्तगाली शासन ने जहां जहां अपनी छाप छोड़ी है। राज्य, भव्य चर्चों, मंदिरों, किलों से भरा पड़ा है। गोवा अपने कार्निवल उत्सव के लिए भी बड़ा प्रसिद्ध है।

तथ्य : एक नजर में

नाम	-	गोवा
जनसंख्या	-	1.3 मिलियन
राजधानी	-	पणजी (जनसंख्या : 90,000)
क्षेत्रफल	-	3659 वर्ग किलोमीटर
मुख्य भाषाएं	-	कोंकणी, मराठी और अंग्रेजी।

इतिहास :

गोवा इतिहास के अभिलेखों में, ईसापूर्व तीसरी शताब्दी में मौर्य साम्राज्य के एक भाग के रूप में प्रवेश ग्रहण करता है। ईसाई युग के आरंभ में कोल्हापुर के सतवाहनों ने शासन किया, 580 और 750 ईस्वी के मध्य यह बदामी के चालुक्यों के हाथ में आया, फिर आगामी कुछ शताब्दियों तक क्रमशः भिलहारों, कदंम्बों, और कल्याणी के चालुक्यों ने शासन किया। पहली बार 1312 में यह मुस्लिमों के हाथ में आया, किन्तु उन्हें 1370 में विजयनगर साम्राज्य ने उखाड़ फेंका, जो अपनी घुड़सवार सेना को मजबूत

बनाने के लिए अरबी घोड़ों के आयात हेतु गोवा के बन्दरगाहों का उपयोग करते थे। फिर 1469 में गुलबर्गा के बाहमानी सुल्तानों ने गोवा को जीत लिया और जब यह वंश टूट गया तो यह क्षेत्र बीजापुर के आदिल शाहियों के हाथ में चला गया। गोवा बेल्हा, आदिल शाही की दूसरी राजधानी और मक्का जाने वाले हज यात्रियों के लिए एक महत्वपूर्ण पारगमन स्थल बन गया।

पूर्व की ओर से मसालों के व्यापार का मार्ग नियंत्रित करने के उद्देश्य से पुर्तगाली 1510 में गोवा में छा गए। प्रथम ईसाई धर्मप्रचारकों का एक मण्डल, संत फ्रांसिस जेवियर के नेतृत्व में, 1542 में यहां पहुंचा। धर्माधिकर के ज्वलन्त धर्मोत्साह के चलते उन्होंने 'विधर्मियों' का शिकार, अ़न्य धर्मों पर प्रतिबन्ध और सभी मूर्ति पूज्य हिंदू मंदिरों का विध्वंस आरंभ कर दिया। यह उपनिवेश, परिणामतः, पूर्व के पुर्तगाली साम्राज्य की वाइसरीगल का गद्दी स्थान बन गया, जिसमें विभिन्न पूर्वी अफ्रीकी बन्दरगाह नगर, पूर्वी तिमोर और मकाऊ सम्मिलित थे। सोलहवीं शताब्दी के अंतिम तीन दशकों में पुराना गोवा खिल उठा और आकार और भव्यता में लिस्बन से प्रतिद्वन्दिता करने लगा। ब्रितानियों, फ्रांसीसियों, और डच से प्रतिद्वंदिता और साम्राज्य के दूर दराज के क्षेत्रों को साधने की पुर्तगालियों की अक्षमता के कारण इसके बहार के दिन बहुत कम रहे।

समामेलनों की एक पूरी श्रृंखला के बाद गोवा 18 वीं शताब्दी में अपने वर्तमान आकार में पहुंचा। मराठाओं ने 18 वीं शताब्दी के अंत तक पुर्तगालियों का लगभग दमन कर जीत लिया और यूरोप की नैपोलियाई युद्ध के दौरान ब्रितानियों ने बहुत थोड़े समय के लिए इस पर कब्जा किया, किनतु पुर्तगाली बिन बुलाए मेहमानों की तरह इधर उधर भटकते रहे जब तक कि १९६१ में भारतीयों ने उन्हें पूरी तरह नहीं भगा दिया। गोवा एक बार पुनः भारत में सम्मिलित हो गया, पहले एक केन्द्र शासित क्षेत्र के रूप में और फिर 1987 में भारतीय संघ के 25 वें राज्य के रूप में।

उत्तरी गोवा :

गोवा सिर्फ दो जिलों से मिलकर बना है : उत्तरी और दक्षिणी गोवा।

उत्तरी गोवा में राज्य की राजधानी पणजी है; अपने रुचिकर चर्चों और प्रार्थनाघरों से युक्त पुराने गोवा की पूर्ववर्ती राजधानी; और समुद्र तटों (beaches) की एक संपूर्ण लड़ी जो महाराष्ट्र के तट तक चली जाती है। इसमें कैलेंगूट, बागा और कैण्डोलिम जैसे विकसित स्थानों से लेकर अंजुना, चपोरा और वागातोर जैसे भी है जो दीर्घावधि के लिए आवासियों और यात्रियों को आकर्षित करते हैं। दूर उत्तर में, आरामोल, शांत स्थान हैं।

पणजी :

अधिकांश यात्री पणजी को यातायात के स्थान से अधिक कुछ नहीं मानते, किन्तु इस सुंदर राज्य की राजधानी ने कुछ पुर्तगाली विरासत को बनाए रखा है। इसमें सब अनूठा भूमध्यसागरीय प्रतिमाशास्त्र छिपा है - तंग पैबन्द लगे जैसे रास्ते, पैस्टल रंगों की छतें और फूलों से ढके छज्जे से लेकर टेराकोटा टाइलों से बनी छतों, सफेद पुते चर्चों और उन छोटे छोटे शराबखानों और कॉफीघरों तक जो धर्मनिरपेक्ष पुर्तगाल की सामाजिक जीवन रक्त हैं।

फाऊंटेन के पुराने जिले में चहलकदमी करने के लिए सर्वाधिक रमणीय क्षेत्र हैं, और इसमें 'चैपल आफ सेंट सेबास्टियन' सम्मिलित हैं जिसमें एक विलक्षण सलीब है जो पुराने गोआ के धर्मांतरण के एक महल में मूलतः रखा था। सन् 1541 ईस्वी में प्रतिष्ठित 'दि चर्च आफ दि इमैक्यूलेट कानसेप्शन', पणजी का मुख्य प्रार्थनागृह है।

पुराना गोवा :

आधा दर्जन आकर्षक चर्च और कैथेड्रल और एक प्रवेशद्वार का एक भाग- यह सब उसके अवशेष हैं जो बीजापुर के आदिल शाही वंश की दूसरी राजधानी और पुर्तगाली राजधानी थी, जो एक समय भव्यता में लिस्बन की प्रतिद्वंदी शहर था।

पुराना गोवा अभी भी ईसाई गोवा का धार्मिक हृदय है, और इसकी सर्वाधिक प्रसिद्ध इमारत है 'बैसिलिका आफ बॉम जीसस' (Basilica of Bom

Jesus), जिसमें संत फ्रांसिस जेवियर का मकबरा और पार्थिव शारीरिक अवशेष हैं, जिन्हें दक्षिण-पूर्व एशिया में ईसाई धर्म का परिचय कराने का श्रेय प्रापत है। 'कान्वेंट एण्ड चर्च आफ सेंट फ्रांसिस आफ अरिस्सी' भी रुचिकर है, जिसमें सोना मढ़ा नक्काशीदार लकड़ी की कृतियां, संत के जीवन के दृष्यों को प्रदर्शित करते भित्तिचित्र, और नक्काशीदार समाधि पत्थरों के अधिकांशतः निर्मित फर्श हैं। चर्चों में सबसे बड़ा है। 1562 का 'पोर्तुगीज-गोथिक-से-कैथेड्रल' (Portuguese-Gothic-Se-Cathedral), जिसमें वह तथाकथित 'सुनहरा घंटा' है, जिसकी गूंज दिन में तीन बार सुनाई देती है। अन्य आकर्षणों में 'चर्च आफ सेंट कैजेटन' सम्मिलित हैं जो रोम में 'सेंट पीटर्स' और 'रॉयल चैपेल आफ सेंट एन्थोनी' के आदर्शों पर बना।

मापुसा (Mapusa) :

मापुसा उत्तरी गोवा में जनसंख्या का मुख्य केन्द्र है और प्रतिपूर्ति का मुख्य शहर, यदि आप अंजुना या चपोरा में रह रहे हों। मापुसा में देखने के लिए बहुत कुछ है किंतु शुक्रवार की बाजार एक बार जाकर देखने लायक है।

उत्तरी गोवा के समुद्र तट

(Beaches of Northern Goa)

मीरामार :

पणजी से तीन किलोमीटर पश्चिम में, पणजी का सर्वाधिक निकटस्थ समुद्रतट मीरामार है, किंतु यह आकर्षक नहीं है और तैरने के लिए अच्छा स्थान नहीं है। यहां पर्याप्त आवास, यूथ हास्टल समेत, उपलब्ध हैं।

दोना पौला :

एक छोटा शहर और साथ ही कई आश्रय-स्थल भवन-समूह (resort complexes) जो इस मछुओं के गांव के आस पास उभरे। मार्मा गोवा बन्दरगाह के सामने यह एक रमणीय और नयनाभिराम पिकनिक स्थल है।

फोर्ट अगुआडा और कैण्डोलिम :

उत्तरी गोवा के समुद्र तट फोर्ट अगुआडा से लगभग 30 किलोमीटर के लगातार फैले बलुआ क्षेत्र में, महाराष्ट्र की सीमा तक फैले हैं। सिनक्वेरिम (अगुआडा बीच), फोर्ट के नीचे का बीच, और कैण्डोलिम, पर्यटकों में बहुत प्रसिद्ध है। यह समुद्र तट कैलेंगूट से भी अधिक शांत होते हैं, विशेषकर सप्ताहांत में।

माण्डवी नदी के मुख की रक्षा करता फोर्ट अगुआडा, पुर्तगालियों द्वारा 1612 में बनवाया गया। इसके पूर्व में अगुआडा कारागार है।

कैलांगूटे और बागा :

लहराते ताड़ के पेड़ और धवल रेती कैलांगूट को एक विशेष आकर्षण प्रदान करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत पहले की बात नहीं है जब कैलांगूट, आत्म-सम्मानित हिप्पियों का समुद्र तट होता था, विशेषकर क्रिसमस के आस-पास।

सभी प्रवासी हिप्पियों के मक्का के रूप में कैलांगूट के बहारों के दिन गुजर चुके हैं। स्थानीय लोग, जो बहुत थोड़ी धनराशि के लिए अपने मकानों में से कमरे किराए पर उठा दिया करते थे, अधिक लाभकारी कार्यों में लग गए हैं और कैलांगूट, गोवा की तेजी से बढ़ते पैकेज-पर्यटक बाजार का एक केन्द्र बनने के लिए, कायापलट कर चुका है।

अंजुना :

अंजुना के आस पास के सुंदर पर्यावरण में ढेरों नारियल के पेड़ों के झुरमुट, विशाल धान के खेत, और एक सुंदर दृश्य हैं। अंजुना, स्थलमार्ग चालकों, साधुओं, विद्रोही पूर्ववर्ती हिप्पियों, भद्र पागलों, कलाकारों, शिल्पकारों, संतों, खोजी लोगों, विलासी और भ्रमणकारी प्रवासी लोगों का एक आश्चर्यजनक संग्रह अपनी ओर आकर्षित करता है। यह संपूर्ण गोवा में अपनी बुधवार की पिस्सू बाजार के लिए प्रसिद्ध है और इसमें एक अपना आकर्षण है।

चपोरा और वागातोर :

यह गोवा की तटरेखा का सर्वाधिक रुचिकर भागों में से एक है, और

अंजुना की अपेक्षा कहीं अधिक आकर्षक, चाहे थोड़ी अवधि के निवास के लिए हो या दीर्घावधि के लिए। बस्ती का अधिकतर क्षेत्र एक घने नारियल और ताड़ की छतरी के नीचे पलता है, चपोरा गांव एक आकर्षक बेलगाम खेत खलिहानों के रूप में अधिक याद रहेगा बजाए एक मछुआरों के समुदाय के रूप में। इस गांव में चट्टानी पहाड़ियां, संरक्षित पुर्तगाली किले के अवशेष और चपोरा नदी का मुहाना है। निकटवर्ती बागातोर में बलुआ लघु खाड़ियां, मनोहारी समुद्र तट और खड़ी नुकीली चट्टाने हैं।

अरामबोल :

कुछ वर्ष पहले, कुछ यात्री समूहों द्वारा चलाई जा रही अधिक उल्लंघनकारी गतिविधियों (नग्नता और मादक द्रव्य उपयोग) को नियंत्रित करने के लिए जब चूड़िया कसी गईं तो हठधर्मी एक अधिक दयामय समुद्र तट की तलाश करने लगे। चपोरा के उत्तर में अरामबोल एक ऐसा ही था जिसे उन्होंने चुना। आरंभ में सिर्फ वही लोग यहां आते थे जो बहुत ही आदिकालीन परिस्थितियों में रहने के इच्छुक थे।

गांव शांत और मित्रवत है - सिर्फ कुछ सौ स्थानीय लोग, अधिकांश मछुआरे, और नवम्बर से फरवरी के ऊँचे समय में कुछ सौ पाख्यात्य आवासीय। तटरेखा में दक्षिणी गोवा के समुद्र तटों के ताड़ के झब्बों से युक्त मोहक पिष्टोक्तियों की कमी है किंतु इसमें बहुत कुछ है ओर यह अपने आप में सुंदर है। मुख्य समुद्र तट में पर्याप्त शारीरिक 'सर्फिंग' है और कुछ कदम उत्तर में कई आकर्षक खाड़ियां है। मुख्य समुद्र तट के निकट एक गर्म पानी का स्त्रोत एक मीठे पानी की झील में गिरता है, हिप्पी जिससे नहाकर अपनी त्वचा को निखारते हैं।

दक्षिणी गोवा :

दक्षिणी गोवा 1966 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैला पड़ा है, जिसका मुख्यालय मारगाव में है। दक्षिणी गोवा के उत्तर में उत्तरी गोवा, दक्षिण और पूर्व में कर्नाटक और पश्चिम में अरब सागर है।

मारगाव, क्षेत्र की राजधानी और यातायात का केन्द्र दोनों ही है। गोवा का डाबोलिम हवाई अड्डा, वासकोडिगामा के निकट है जो राज्य का रेल शीर्ष भी है।

मारगाव (मडगांव) :

सालसेटे (Salcete) प्रांत की राजधानी, मारगाव दक्षिणी गोवा का मुख्य जनसंख्या केन्द्र है और एक मनोरम प्रानतीय नगर जो अब भी पुर्तगाली पूर्व की यादें प्रदर्शित करता है। यह यात्रियों के लिए बहुत रुचिकर नहीं है, यद्यपि मारगाव का समृद्ध रूप से सज्जित 'चर्च आफ दि होली स्पिरिट' जाकर देखने लायक है. और ढका हुआ बाजार गोवा में अपने ही प्रकार का सर्वोत्तम है। मारगाव क महत्व, कोलवा और बेनौलिम समुद्र तटों में रहने वाले लोगों के लिए एक सेवा औ यातायात के केन्द्र के रूप में है।

दक्षिणी गोवा के समुद्र तट

बोगमालो :

बोगमालो बीच, वास्कोडिगामा से आठ किलोमीटर और हवाई अड्डे से मात्र चार किलोमीटर की दूरी है। यह एक छोटी बलुआ खाड़ी है जिसमें एक पांच सितारा ओबेराय होटल है, जिसमें बीच से कम से कम पांच सौ मीटर दूर सभी होटल बनाने की अनिवार्य प्रतिबन्ध का अपवंचन किया है। इस होटल के सिवाय यहां और कुछ बहुत कम है और रहने के लिए कुछ छोटी जगहें, पर्याप्त मनोहारी बीच, कई महंगे काफी घर और बोगमालों का छोटा गांव।

कोलवा और बेनौलिम :

गोवा में सफेद रेत के सर्वाधिक सुंदर विस्तार, धूप और ताड़ के झब्बों से युक्त कई किलोमीटर में, मजोर्दा से कोलवा, बेनौलिम वार्का और कैवेलास्सिम होते हुए मोबोर तक फैले पड़े हैं।

कोलवा में आश्रय स्थलों (resorts), पर्यटक काटेजों, डिस्को, साधारण गहनों की दुकानों और शीतल पेय की दुकानों की भरमार सी है। अधिकांश मछुआरों के पास अब मोटर चलित ट्रालर हैं जो तट पर लंगर डाले एक पंक्ति में बंधे खड़े रहते हैं। बेनौलिम, कोलवा के दक्षिण में दो किलोमीटर से भी कम दूरी पर है।

बारका और कैवेलास्सिम :

बेनौलिम के दक्षिण में पूर्व बीच (beach) की 10 किलोमीटर की पट्टी, गोवा का आश्रय समुद्र तट (resort beach) बन गया है। बारका, बेनौलिम से पांच

किलोमीटर दक्षिण में है और कैवेलास्सिम, सात किलोमीटर और दक्षिण में, जो अधिक विकसित है।

बेतुल :

'लीला बीच रिसार्ट' के कब्जे में संकरे प्रायद्वीप के ठीक सामने मछुआरों का गांव बेतुल है, जहां या तो नौका द्वारा अथवा मारागौविया चिनचिनिम या कुनकोलिम से बस द्वारा पहुंचा जा सकता है।

अगोण्डा :

दक्षिणी गोवा में एक खाली दो किलोमीटर की रेती के किनारे अगोण्डा एक छोटा सा गांव है। अगोण्डा को जाने वाली पहाड़ियों पर घुमावदार सड़क 'काबो डे रामा' के पुर्तगाली किले के पार से जाती है।

राजबाग :

पालोलेम के दक्षिण में कुछ एक किलोमीटर दूर, राजबाग, एक खुला किंतु रेत का एकान्तक विस्तार है।

पालोलेम :

यह असंभव रूप से सुंदर अर्धचंद्राकार छोटी सुंदर खाड़ी गोवा के दूर दक्षिण में, पश्चिमी घाटों के पृष्ठ भाग में और घने जंगलों से भरे पहाड़ जो ट्रेकिंग के अवसर प्रदान करते हैं। यहां सिर्फ एक होटल है, किंतु बीच (beach) के रेस्त्रां में भद्रतापूर्वक आग्रह करने पर किसी गांव वाले के घर का एक कमरा भी किराए पर लेना संभव है।

महाराष्ट्र के समुद्र तट

(Beaches of Maharashtra)

पश्चिमी महाराष्ट्र की सीमावर्ती तटरेखा 720 किलोमीटर लंबी है और उत्तर में दाहिनी ओर बोरडी से लेकर दक्षिण में गोवा तक फैली पड़ी है। ढेर सारे समुद्र तटों से युक्त यह तटरेखा प्रदान करती है : उत्तेजक जल क्रीड़ाएं, सुनहरी रेत पर धूप सेंकने की सुविधा, विशाल किलों, मंदिरों और चर्चों की खोज और छोटे दूर दराज के गाँवों की खोज के अवसर। ऐसी कोंकणी पाककला जिससे आपके मुंह में पानी आ जाए, ऐसा स्वाद आपके मन में छोड़ जाएगा जिसे आप भूल नहीं

पाएंगे। इस तटरेखा के पार फैला विशाल अरब सागर एक सम्मोहक आकर्षण प्रदान करता है।

मार्वे-मानोरी-गोराईः

यह तीन शांत और मनोरम समुद्र तट मुंबई के उत्तर में स्थित हैं। शहर के भीड़ भाड़ वाले जीवन से दूर यह स्थान थके हरे शहरियों को बड़ा आराम देते हैं। निकटस्थ, मुंबई से 40 किलोमीटर दूर मार्वे एक आकर्षक मछुआरों का गांव है। यह गांव निचली पहाड़ियों से सूर्योदय और सूर्यास्त के विस्मयकारी दृष्य प्रदान करता है। थोड़ी दूर पर, गोराई और मनोरी, यद्यपि रंगरेलियां मनाने वालों की भीड़ से भरे यह स्थान, अपनी आकर्षक रात भर की पार्टियों के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। मार्वे या बोरीवली से 15 मिनट की नाव यात्रा आपको गोराई और मानोरी ले जाती है। गोराई में मुंबई का पहला मनोरंजन पार्क, एस्सेलवर्ल्ड भी है जहां 'रोलर कोस्टर' इत्यादि जैसे कई मनोरंजन के साधन हैं।

कैसे पहुंचे वहां :

पश्चिमी रेलवे के उपनगरीय खण्ड में, मलाड, एक निकटस्थ रेलवे स्टेशन है। सड़क द्वारा मुंबई से मलाड होते हुए मार्वे तक का सफर 40 किलोमीटर का है।

किहिम :

यह एक सुंदर किन्तु भीड़-भाड़ रहित समुद्र तट है। यह मुंबई से 120 किलोमीटर दूर है। यहां घने नारियल के पेड़ों का अच्छादन है, और संभवतः इसी कारण इतना शांत और गन्दगी रहित है। कोमल सफेद रेती और चमकदार समुद्री फेन में, किहिम में तम्बू लगाकर छुट्टी बिताना बड़ा बढ़िया लगता है।

निकटवर्ती दर्शनीय स्थलों में अद्भुत 'मुरुड' तट, चौल, ऐतिहासिक किले, यहूदी प्रार्थना घर या संत बारबरा की मोहक मीनार।

कैसे पहुंचे :

निकटस्थ हवाई अड्डा है मुंबई जो 136 किलोमीटर पर है। निकटस्थ रेलवे स्टेशन है पानवेल, जो कोंकण रेलवे की दीवा-पानवेल खण्ड में 85 किलोमीटर

पर है। सड़क द्वारा मुंबई - किहिम :136 किलोमीटर, पानवेल - किहिम : 85 किलोमीटर, अलीबाग-किहिम : 12 किलोमीटर दूर है। राज्य यातायात निगम की बसे मुंबई से अलीबाग और अलीबाग से रेवास से किहिम जाती आती हैं। रेवास के लिए नौका की सेवा भी उपलब्ध है जो किहिम से 8 किलोमीटर पर है।

वर्षा ऋतु के अलावा बाकी पूरा वर्ष यात्रा का सर्वोत्तम समय है। आवास के लिए महाराष्ट्र पर्यटन विकास निगम के पूर्णतः सुविधायुक्त तम्बू (मानसून के मौसम के अतिरिक्त) पूरे वर्ष उपलब्ध रहते हैं।

हरिहरेश्वर :

नाम उतना ही लम्बा है जितना कि तट, मुलायम रेती, स्वच्छ पानी और चमकीली धूप लिए हुए। हरिहरेश्वर धार्मिक और ऐतिहासिक दोनो ही रूप में महत्वपूर्ण है। महाराष्ट्र के लोग कालभैरव (भगवान शिव) के मंदिर को बहुत पवित्र मानते हैं। मराठा साम्राज्य के प्रधान मंत्रियों (जो मूलतः यहीं के निवासी थे) का 'पेशवा स्मारक' ऐतिहासिक महत्व रखता है। इस नगर से चार किलोमीटर दूर बागमण्डल में बानकोट किला भी है।

कैसे पहुंचे :

निकटस्थ हवाई अड्डा मुंबई 215 किलोमीटर पर है। निकटस्थ रेलवे स्टेशन है कोंकण रेलवे मार्ग पर मानगांव। सड़क मार्ग द्वारा दूरियां : मुंबई - गोवा राजमार्ग पर मुंबई - पानवेल - मानगांव - गोरेगांव फाटा होते हुए मुंबई से हरिहरेश्वर - 230 किलोमीटर; श्री वर्धन से हरिहरेश्वर - 20 किलोमीटर; बागमण्डल से हरिहरेश्वर - 4 किलोमीटर पहुंचने का सर्वोत्तम समय मानसून का समय छोड़कर संपूर्ण वर्ष। आवास हेतु : आधुनिक सुविधा युक्त 'महाराष्ट्र पर्यटन विकास निगम' के आश्रय स्थल। तंबू स्थल। सस्ते लाज, स्वतः पूर्ण ब्लाक (चार, प्रत्येक में दो बिस्तर), तंबुओं की व्यवस्था 80 के लिए, इसके अतिरिक्त बिस्तरबन्द समेत एक परिवार के लिए 30 तम्बू उपलब्ध हैं।

गणपतिपुले :

एक ऐतिहासिक तीर्थ स्थल, भगवान की स्वयं प्रतिष्ठित प्रतिभा समेत,

गणपतिपुले, एक प्रसिद्ध गणेश मंदिर है। सफेद बालू के इस तट में साफ पारदर्शी समुद्र जल है, और चांदनी रात में और अधिक सुंदर हो जाता है। समुद्र में एक पवित्र डुबकी शरीर और आत्मा को नवजीवन प्रदान करती है। निकटवर्ती जयगढ़ का किला, बेलनेश्वर तट मंदिर और निकटवर्ती गांव पावस रूचिपूर्ण दर्शनीय स्थल हैं। स्वादिष्ट मोदल - चावल के आटे, नारियल, शकर और इलायची में मिल कर बना यह मिष्ठान - सुनिश्चित करता है कि यात्री मीठी यादें लेकर वापस जाएं।

कैसे पहुंचे :

निकटस्थ हवाई अड्डा मुंबई। निकटस्थ रेलवे स्टेशन रत्नागिरि, कोंकण रेलवे पर 45 किलोमीटर पर। सड़क द्वारा : मुंबई से गणपतिपुले, महाड होकर : 375 किलोमीटर; सतारा होते हुए पुणे से गणपतिपुले : 331 किलोमीटर; कोल्हापुर से गणपतिपुले : 144 किलोमीटर। राज्य यातायात निगम की बसें मुंबई से रत्नागिरि के मध्य चलती हैं। पहुंचने का सर्वोत्तम समय है वर्षा ऋतु के अतिरिक्त संपूर्ण वर्ष। आवास उपलब्धता : परिवार सुइट (36 ब्लाक), डारमिटरी (19 ब्लाक), तंबू और आधुनिक सुविधाओं से युक्त महाराष्ट्र पर्यटन विकास निगम के आश्रय स्थल या तम्बू, सस्ते लाज और ठाठ बाठ वाले होटल भी उपलब्ध है।

बसई :

17वीं शताब्दी का एक महत्वपूर्ण जलपोत निर्माण केन्द्र, 1739 में यहीं मराठाओं ने पुर्तगालियों को हराया था। घने ताड़ के उपवन के बीच पुर्तगाली किले के अब खण्डहर बचे हैं। यहां से 10 किलोमीटर दूर कोंकण की राजधानी (ईसा पूर्व 1500 से लेकर 1300 ईस्वी तक), है जो अब नालासोपरा गांव के नाम से जानी जाती है। मान्यता है कि बुद्ध के पूर्व जन्म में नालासोपरा उनका जनम स्थान था। कई बाद्ध समृतिशेष भी यहां पाए गए। वज्रेश्वरी मंदिर, अकलोली नामक गर्म पानी के स्त्रोत, गणेषपुरी में सद्गुरु नित्यानन्द महाराज समाधि मन्दिर, भीमेश्वर मन्दिर और अन्य आश्रम बसई से थोड़ी ही दूर पर हैं। बसई में कुछ रुचिकर चर्च भी हैं, जो पुर्तगाली भूत की याद दिलाते हैं। नालासोपरा के चर्च पुर्तगालियों की याददाश्त के रूप में खड़े हैं।

कैसे पहुंचे :

पश्चिमी रेलवे लाइन पर निकटस्थ रेलवे स्टेशन है बसई रोड। सड़क द्वारा, मुंबई - अहमदाबाद राजमार्ग पर बसई 77 किलोमीटर दूर है।

मुरूड जंजीरा :

जंजीरा का भव्य किला महाराष्ट्र का एक आकर्षण है। इस असाधारण किले की वास्तुकला का यह शानदार नमूना तीन शताब्दियों से खड़ा है। एक टापू पर स्थित, इस स्थान पर नाव द्वारा भी जाया जा सकता है। यह जंजीरा के सिदियों की पूर्ववर्ती राजधानी थी। मुरुड़, जहां यह प्रसिद्ध किला स्थित है, अपने मोहक समुद्र तटों और नारियल और ताड़ के उपवनों के पुनर्यौवनकारी विस्तार के लिए भी प्रसिद्ध है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश का प्रतिनिधिता करती तीन शीर्षों वाली प्रतिमा को प्रतिष्ठित किये, भगवान दत्तात्रय मंदिर एक पहाड़ी की चोटी पर स्थित है। थोड़ी ही दूर पर है नंदगांव और काशीड नामक दो सुंदर और सम्मोहक समुद्र तट, गणपति मंदिर, और भगवान की शान में प्रत्येक वर्ष फरवरी में होने वाला मेला। इस क्षेत्र के अन्य रुचिकर स्थान हैं नवाब का महल और जंजीरा की गुफाएं।

कैसे पहुंचे :

पानवेल निकटस्थ रेल स्टेशन है। सड़क द्वारा, मुंबई 165 किलोमीटर दूर है।

आवास :

समुद्र तट पर 'महाराष्ट्र पर्यटन विकास निगम' का 'हॉलिडे रिसार्ट', आवास का प्रसिद्ध माध्यम है।

कर्नाटक के समुद्र तट

(Beaches of Karnataka)

आकर्षक तटरेखा ताड़ के उपवन, सेद रेती, शांत तटों, हरा-नीला समुद्र जल और एक रंगविरंगी संस्कृति का सम्मिश्रण है। कर्नाटक में 320 किलोमीटर लम्बी फैली तटरेखा में बहुसंख्यक तट हैं जो थके मांदे लोगों को आराम देते हैं।

एक यात्री तटीय लोगों की तत्परता और स्वादिष्ट खान-पान प्राप्त करता है और साथ ही शांत तट और साफ-स्वच्छ समुद्र जल दिल मोह लेता है।

कारवार :

धूप, समुद्र और रेत के रोमांच का आनन्द लेने का एक अच्छा स्थन है कारवार। कारवार की सुंदरता ने महान कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर को अपना पहला नाटक लिखने के लिए प्रेरित किया था। गोवा से मात्र 100 किलोमीटर दूर यह स्थान कई आकर्षण प्रदान करता है जैसे 'सदाशिव पहाड़ी किला' जिसमें एक दुर्गा मन्दिर भी है, अपने ही प्रकार का अष्टभुजाकार चर्च और 300 वर्ष पुराना 'वेंकटरमण मंदिर' जिसमें कुछ उत्कृष्ट गेरुई चित्रकलाएं हैं। 'दाण्डेली शिकार स्थल', जो 157 किलोमीटर दूर स्थित है, वन्य प्राणी प्रेमियों के लिए एक दावत देता है।

दर्शनीय स्थल :

गोकर्णा :

यह स्थान कारवार से 60 किलोमीटर दक्षिण में है। तटीय नगर में एक प्राचीन मंदिर है जिसमें आत्मलिंग प्रतिष्ठित है। यह स्थान संस्कृत विद्यालय और शिक्षा के लिए प्रसिद्ध है। पास में ही विस्मयकारी 'ओम बीच' और 'कुटले बीच' है।

बनवासी :

यह सिरसी के निकट एक ऐतिहासिक स्थल है। यहां से 60 किलोमीटर दूर है 'यण', चट्टानों के बीच में बसा एक छोटा अनोखा गांव। 'यण' चट्टानों पर चढ़ने वालों (rock climbers) के लिए एक आदर्श स्थान है। 'भटकल' नामक एक स्थान 135 किलोमीटर दक्षिण में एक ऐतिहासिक नगर है जहां सुंदर और रुचिकर जैन स्मारक हैं। यह मंदिरों वाला एक ऐतिहासिक बन्दरगाह है। मुरदेश्वर नामक नयनाभिराम पवित्र स्थल 16 किलोमीटर दूर है। यह मंदिर अनन्य भक्तों और पर्यटकों को आकर्षित करता है। मुरदेश्वर तट से कुछ अलग हट के 'पिजन आइलैण्ड' (Pigeon Island) है, जो अब तक अनाविष्कृत और साफ-सुथरा है।

मनोरम दृष्यों के वातावरण में 'शिवगंगा जलप्रपात' 140 किलोमीटर दूर है। यहां सौडा नदी 74 किलोमीटर की ऊँचाई से एक गहरी घटी में गिर कर यह जल प्रपात बनाती है। कारवार से 93 किलोमीटर दूर, दाण्डेली नामक एक प्रसिद्ध अवकाश शरण स्थल है। यहां एक वन्य जीव विहार, जहां दुर्लभ जीव जन्तु देखे जा सकते हैं। इस स्थान पर एक गुफा है जहां शिवलिंग जैसी एक स्थापना है। मागोड जल प्रपात, कारवार से 80 किलोमीटर दूर हैं। यहां बेदती नदी दो छलांगों में 180 मीटर नीचे एक गहरी घाटी में गिरती है। लालगुली जलप्रपात काली नदी से बना है। एक अन्य आकर्षण है मालेमाने जलप्रपात।

मारवानाथे :

जल क्रीड़ाएं और समुद्र तट आश्रय स्थल, मारवानथे को एक अनोखा समुद्र तटीय नगर और एक आनन्ददायक अवकाश स्थल बनाते हैं। एक ओर यह अरब सागर और पश्चिम तटीय राजमार्ग से बंधा है तो दूसरी ओर सौपर्णिक नदी से। यहां का सूर्यास्त वास्तव में सुंदर होता है। इस विस्तार में मोटर चालन एक यादगार अनुभव बन सकता है।

मालपे :

उडूपी से मात्र 6 किलोमीटर दूर मालपा एक शान्त समुद्र तट है जहां एक अच्छादित बन्दरगाह भी है। यह उस मंदिर के कारण भी प्रसिद्ध है जहां भगवान कृष्ण की प्रतिमा स्थापित है। संत मेरी टापू एक आदर्ष पिकनिक स्थल है। निकट ही एक और तट विश्राम स्थल उल्लल है, जिसकसे चांदनी रंग के तट से कैसुआरिना उपवनों के बीच में से सुंदर सूर्यास्त का नजारा दिखता है।

केरल के समुद्र तट

(Beaches of Kerala)

केरल एक छोटा राज्य है जो एक ओर पूर्वी उच्चभूमि और पश्चिम में अरब सागर के अंतहीन जल से घिरा है। केरल की तटरेखा 575 किलोमीटर में फैली है।

केरल के समुद्र तटों के अनोखे लक्षणों में से एक है ताड़ के पेड़ों की निरंतर पंक्तियों से बन्धी साफ - स्वच्छ रेती। यह धूप स्नान, नौकायन और यहां के जल में तैरने उत्पन्न जादू में अधिक वृद्धि करता है।

पापनाशम बीच (वारकला) :

'पापनाशम' एक पवित्र तट है जिसका अर्थ है 'पापों का नाश करने वाला'। तट की सीमावर्ती चट्टानों से धातु जल स्त्रोत फूट कर बहते हैं और अपने चिकित्सकीय गुणों के लिए प्रसिद्ध हैं। वारकला से इस बीच की ओर आने वाली चौड़ी सड़क के दोनों ओर धान के खेत और ऊँचे ताड़ के पेड़ हैं। एक प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र और जगन्नाथ स्वामी (विष्णु) मंदिर निकट ही स्थित है। यात्री केरल के संत और सुधारक श्री नारायण गुरू को श्रद्धांजलि अर्पित कर सकते हैं।

अलेप्पी बीच :

यह 'अलेप्पी समुद्र तट' का लम्बा तट विस्तार घने ताड़ के उपवनों से लदा है। तट के आसपास का भूदृष्य बहुत सुहावना है जैसा कि संपूर्ण केरल का है। एक ऊँचा दीपस्तंभ तट से दिखता है।

कप्पड़ बीच :

यह वह तट है जहां 27 मई 1498 को तीन जलपोतों में 170 लोगों के साथ वास्को-डे-गामा उतरा था - ऐसा स्थल जिसने उस ऐतिहासिक घटना को देखा जिसने भारतीय इतिहास की दिशा बदल दी। कोजीकोड (कालीकट) से 16 किलोमीटर दूर, स्थानीय रूप से कप्पकडऊ के नाम से जाना जाने वाला यह आकर्षक, शांत तट पत्थर की चट्टानों से सजा और मित्रवत लहरों द्वारा सहलाया जाता है।

बेकल बीच :

पुराने ढंग का छोटा सा नगर, कसरगोडे, कोझीकोड के उत्तर में 153 किलोमीटर दूर, कर्नाटक सीमा के निकट, मुख्यतः एक मदुआरों का गांव है।

यहां बेकल का किला भी है। यह केरल के सबसे बड़े किलों में से एक है और विभिन्न सत्ताओं के नियंत्रण में रहा, जैसे विजयनगर, टीपू सुल्तान और ब्रितानी। किले की प्रभावशाली स्थिति, और साथ ही उत्तरी और दक्षिणी खाड़ी के नजारे विस्मयकारी।

शणमुघम बीच :

हवाई अड्डे के निकट यह शहर का प्रसिद्ध समुद्र तट है। एक अंतर्द्वार मनोरंजन क्लब, बच्चों के लिए यातायात प्रशिक्षण पार्क और सितारे की आकृति का एक रेस्त्रां इत्यादि इस बीच की कुछ सुविधाएं है।

कोवलम :

कोवलम एक सुंदर समुद्र तटीय आश्रय स्थल है, केरल में मात्र अकेला। यह सुंदर मछुआरों का गांव थिरुवनन्तपुरम से 10 किलोमीटर दूर स्थित है।

कोवलम में तीन निरंतर छोटे छोटे अर्धचंद्राकार बीच हैं; सबसे दक्षिण की ओर 'लाइटहाउस' नामक बीच है जहां अधिकांश यात्री अपना समय बिताते हैं। इस तट पर कम कीमत के आवास गृह, और रेस्त्रां हैं जो ठीक ठाक कीमतों पर पर्याप्त सुविधाएं प्रदान करते हैं - अधिक दिनों तक ठहरने के लिए आदर्श स्थल। बीच के दक्षिणी छोर पर एक प्रकाश स्तंभ (lighthouse) विझिंजम मस्जिद के पार विहंगम दृष्य प्रदान करता है। यहां फोटो खींचना वर्जित है।

स्थानीय मछुआरे दिन के समय मध्य के बीच में भीड़ लगाए रहते हैं। 'अशोक रैडिसन रिसार्ट', एक पांच सितारा होटल, बीच के निकट ही स्थित दिखता है। तीसरा बीच 'अशोक' के उत्तर में स्थित है जहां कुछ मछलीमार नौकाएं हैं।

बीचों पर तैरना सदैव सुरक्षित नहीं रहता, इसलिए सुरक्षा झंडियों की चेतावनी का अनुसरण करना अनिवार्य होता है। किंतु रेती पर मौज मनाते या काफीघरों के सायबान में विश्राम कर दिन बिताए जा सकते हैं।

यहां कई कला और गलीचों की दुकानें (सामान्यतः तिब्बती, काश्मीरी और राजस्थानी मूल की), कपड़ों की दुकानें और आम दुकानें, योगा विद्यालय, ट्रवेल एजेंट और मसाज पार्लर हैं।

यहां आने का सर्वोत्तम समय है नवम्बर से फरवरी।

थिरुवनन्तपुरम से सीधी और नित्य नियमित बस सेवा उपलब्ध है। यहां से सीधी बस एर्नाकुलम और कन्याकुमारी (केप कॉमोरिन) के लिए मिलती है, जो दो घंटे की यात्रा जितना दूर है। यहां से थेकड्डी में पेरियर वन्यजीव विहार के लिए भी बस मिलती है।

थिरुवनन्तपुरम, वायुयान सेवा से कोलोम्बो, माले से और भारतीय शहरों मुंबई, कोची, दिल्ली और मद्रास से जुड़ा है। यहां के लिए बस संपर्क केरल के सभी मुख्य शहरों और मद्रास, बंगलौर, कोची, मदुरई, पाण्डिचेरी, नागरक्वायल और एरोड से थिरुवनन्तपुरम के लिए उपलब्ध हैं। यह रेल मार्ग द्वारा भी देश के सभी मुख्य शहरों से भलीभांति जुड़ा है।

आवास की इस क्षेत्र में कोई कमी नहीं है। बीच से निकटता और ऋतु के अनुसार होटलों में दाम भिन्न होते हैं। सबसे अग्रणी है अशोक रैडिसन बीच रिसार्ट, एक पांच सितारा होटल (टेलीफोन 4723-480101, फैक्स : 481522) दूसरे 'बीच' के उत्तर में स्थित है। सस्ते होटलों में सम्मिलित हैं : राज्य सरकार द्वारा संचालित होटल समुद्र (टेलीफोन 4723-840242/481412), कोडालोरम बीच रिसार्ट (टेलीफोन 481115, फैक्स : 62762) और होटल सी राक।

पर्यटन कार्यालय, हवाई अड्डे पर (टेलीफोन 4723-71085) और रेलवे स्टेश्न पर (टेलीफोन : 67224) पर भी हैं।

उड़ीसा के समुद्र तट

(Beaches of Orissa)

पुरी बीच :

पुरी न ही सिर्फ भारत का पवित्रतम् तीर्थ स्थल है, इसे सुंदर समुद्र तट रेखा और समुद्र तट मिले है।। यहां के तट स्थल तट क्रीड़ाओं के लिए आदर्श हैं किंतु तैरने का परामर्श नहीं दिया जा सकता जब तक कि साथ में जीवन रक्षक

न हो, जो पीली शंकु आका की टोपी पहने रहता है। यहां कई तट आश्रय स्थल हैं जो सस्ते से लेकर बहुत मंहगे तक हैं। उग्र समुद्र कई जल क्रीड़ाएं नहीं होने देता।

गोपालपुर - ऑन - सी (Gopalpur-On-Sea) :

भुवनेश्वर से 170 किलोमीटर दूर और बेरहमापुर से 15 किलोमीटर पर एक और प्रसिद्ध तट आश्रय स्थल है, 'गोपालपुर-आन-सी'। यह एक सर्वोत्तम तट है, काफी एकांत और शांत। यह स्थान 'सेलिंग' और 'सर्फिंग' दोनो ही के लिए अच्छा है।

चांदीपुर :

बालासोर से 16 किलोमीटर दूर पर एक देवीय समुद्र तट आश्रय स्थल स्थित है जिसे चांदीपुर कहते हैं। इस तट की अनोखी बात यह है कि 'ज्वार-भाटा' वाले 'भाटा' के समय समुद्र प्रतिदिन पांच किलोमीटर पीछे तक घट जाता है और ज्वार के समय फिर तट रेखा तक आ जाता है। यह रोज होता है।

अध्याय-11

द्वीप पर्यटन
(Island Tourism)

भारतीय सीमा क्षेत्र के अंतर्गत, बंगाल की खाड़ी और अरब सागर दोनों ही में बहुत से द्वीप हैं। जो खाड़ी में हैं वे अधिक बड़े और अधिक वास योग्य हैं। उद्भव के दृष्टिकोण से बंगाल की खाड़ी के द्वीप अरब सागर के द्वीपों से भिन्न हैं, पूर्ववर्ती, अंतःसमुद्री पर्वतों के उन्नत मार्ग हैं, जबकि अरब सागर के द्वीप पूर्णतः प्रवाल द्वीपों से बने हैं।

भारतीय द्वीप प्राकृतिक सौंदर्य से पूर्ण हैं। जहाँ दुर्लभ फूल-पत्तियाँ और जनजातियाँ रहती हैं। यह साहसिक, प्रकृति और संस्कृति प्रेमियों द्वारा इन द्वीपों की यात्रा हेतु एक आदर्श स्थान बनाती हैं। इन द्वीपों को पर्यटकों के स्वर्ग के रूप में विकसित करने की पर्याप्त संभावना है। इसलिए विभिन्न रुचियों के पर्यटकों को इन द्वीपों के विभिन्न पहलुओं को जानना चाहिए।

पर्यटन रुचि के स्थान और गतिविधियों, संचार, औपचारिकताओं को जानने के अतिरिक्त पर्यटक को इन द्वीपों के लोगों, उनकी संस्कृति, भूगोल और भूविज्ञान के बारे में भी जानना चाहिए ताकि वे उसी के अनुसार अपनी यात्रा की योजना बना सकें।

अण्डमान और निकोबार द्वीप

भारत का एक केन्द्र शासित क्षेत्र, अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह, 92° और 94° के मध्य, पूर्व देशांतर में और 6° और 14° के मध्य उत्तर अक्षांश में स्थित है। अण्डमान और निकोबार द्वीप भारतीय मुख्यभूमि के लगभग 1200 किलोमीटर दूर, बंगाल की खाड़ी में स्थित हैं, इसलिए खाड़ी के द्वीप भी कहे जाते

हैं। धार्मिक दृष्टिकोण से मान्यता है कि अण्डमान शब्द, हनुमान से निकला है जो मलाया के लोगों के मध्य हण्डुमान के नाम से जाने जाते हैं। ये द्वीप एक समय पर 'कालापानी' भी कहे जाते थे जहाँ ब्रितानियों द्वारा कठोर दण्ड प्राप्त लोगों को सजा काटने के लिए भेज दिया जाता था।

इन द्वीपों के दो प्रथक समूह है : पहला अण्डमान द्वीप समूह तथा दूसरा निकोबार द्वीप समूह। अण्डमान समूह के द्वीप, प्रचण्ड 10 डिग्री जलमार्ग द्वारा निकोबार समूह के द्वीपों से प्रथक किया गया है।

अण्डमान कुल 203 निकटता से जुड़े द्वीपों का समूह है, जो कुल मिला कर 6,496 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र अवस्थित है। मुख्य भाग जिसे संयुक्त रूप से 'ग्रेट अण्डमान्स' (Great Andamans) कहते हैं असंख्य छोटे-छोटे टापुओं के अतिरिक्त, उत्तरी अण्डमान, मध्य अण्डमान, दक्षिणी अण्डमान, बारातंग और रूटलैण्ड द्वीप सम्मिलित हैं। यह सब लगभग 260 किलोमीटर लम्बाई और 30 किलोमीटर चौड़ाई में बिखरा है। 'एक डंकन पैसेज' नामक समुद्र के एक 50 किलोमीटर चौड़े विस्तार, द्वारा प्रथक किया गया एक छोटा अण्डमान है, जो 43 किलोमीटर लम्बा और 23 किलोमीटर चौड़ा है। दक्षिण अण्डमान के पूर्व 12 से 25 किलोमीटर दूर कुछ लगभग 600 किलोमीटर तक, 'रिचीज आर्किपेलागो' (Ritchies Archipelago) है।

निकोबार चौड़े बिखरे द्वीपों का एक समूह है जो समुद्र में लम्बाई में 262 किलोमीटर से अधिक और चौड़ाई में 58 किलोमीटर है, और इस प्रकार 1647 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र घेरता है। यह 7 बड़े, 12 छोटे द्वीपों और साथ ही कई अत्यन्त छोटे-छोटे द्वीपों से मिलकर बना है। कार निकोबार, टेरेसा, कैमोर्टा, काटचल, नानकौरी, लिटिल निकोबार और ग्रेट निकोबार इस समूह के मुख्य द्वीप हैं। ग्रेट निकोबार सर्वाधिक बड़ा है। यह आर्किपेलागो का सर्वाधिक दक्षिणी द्वीप है, और इंडोनेशिया के द्वीप सुमात्रा से मात्र 147 किलोमीटर दूर है– दोनों के बीच में ग्रेट चैनेल इन्हें प्रथक करती है।

लगभग 8300 वर्ग किलोमीटर से भी अधिक क्षेत्र में फैले अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह की जनसंख्या दो लाख नागरिकों और मूलतः आदिवासियों से अधिक है। एक ओर जहाँ वाशिन्दों की संख्या बढ़ रही है वहीं दूसरी ओर मूल आदिवासियों जिनके नाम हैं ओंगे, जरावा और सेंटिनेली–की जनसंख्या बुरी तरह घट रही है।

यह क्षेत्र सामान्यतः पहाड़ी और तरंगीय और लहरों से युक्त है। सपाट भूमि सामान्यतः दुर्लभ है। 'सैडल' चोटी, उत्तरी अण्डमान (समुद्र के स्तर से 732 मीटर ऊँची) टापुओं का सर्वोच्च बिन्दु है। ढालान के क्षेत्र सामान्य से लेकर खड़ी और ऊबड़-खाबड़ है। 'रिचीज' आर्चिपेलागों' (Ritchie's Archipelago), और लिटिल अण्डमान (Little Andaman) के द्वीप और अधिकांश निकोबार द्वीप लगभग सपाट हैं। और प्रवाल जलशैलों और छिछले समुद्र से घिरे हुए हैं। रेतीली समुद्र तटों के लम्बें, सँकरे विस्तार इन द्वीपों के भू-विज्ञान के प्रमुख लक्षण हैं।

अण्डमान और निकोबार द्वीप समूहों की जलवायु ऊष्णकटिबन्धीय और गर्म है। वर्ष के अधिकांश समय में सापेक्ष आर्द्रता बहुत अधिक होती है। यहाँ दो मुख्य ऋतुएं-ग्रीम और वर्षा हैं। शरत ऋतु बहुत कम अवधि की होती है और सिर्फ मध्य और उत्तरी अण्डमान में महसूस की जा सकती है। जलवायु जनवरी से लेकर फरवरी के मध्य तक सामान्यतः संतुलित, और अक्टूबर में कुछ कम सीमा तक संतुलित होता है। फरवरी से लेकर मई तक ग्रीष्म ऋतु होती है।

द्वीप वन्य बाहुल्यता में समृद्ध हैं। प्रकृति में ये अधिकांशतः ऊष्णकटिबन्धीय हरियाली लिए हुए हैं। अण्डमान निकोबार द्वीप समूह के कुछ क्षेत्र का 87% वन हैं, जिसका लगभग 25% सुरक्षित वन (Resrve Forests), 31% संरक्षित वन (Protocted Forest), 28% आदिवासीय राजस्व और लगभग 1.2% विहार और राष्ट्रीय उद्यान हैं और बाकी अन्य वन हैं (जनगणना)

पर्यटन आकर्षक

अण्डमान और निकोबार द्वीपों के पर्यटन आकर्षणों को चार भागों में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है,- प्राकृतिक, धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक।

आकर्षण और पर्यटन रुचि के स्थानः

1. प्राकृतिक आकर्षणः

1.1 जलवायु
1.2 दृश्य सौंदर्य
1.3 फूल और पौधे

2. धार्मिक आकर्षणः

2.1 मन्दिर

2.2 गिरजाघर

2.3 मस्जिद

2.4 गुरूद्वारे

1.5 अन्य

3. सामाजिक और सांस्कृतिक आकर्षणः

3.1 स्थानीय जीवन शैली

3.2 मेले और उत्सव

3.3 वाणिज्यिक और औद्योगिक इकाइयाँ

3.4 शैक्षणिक संस्थाएं

3.5 दृश्य एवं श्रव्य कार्यक्रम

3.6 सिनेमा हाल

4. रुचिकर स्थानः

4.1 पोर्ट ब्लेयर शहर

- सेल्यूलर जेल
- अण्डमान जलक्रीड़ा भवन समूह
- बच्चों का यातायात पार्क
- गाँधी पार्क
- मैरीना पार्क
- कार्बाइन्' ज कोव बीच
- चाथन आरा मील
- मानवशास्त्रीय संग्रहालय
- मत्स्य संग्रहालय
- छोटा चिड़ियाघर
- कुटीर उद्योग वाणिज्य-कंन्द्र
- समुद्रिका

- जिमखाना मैदान

4.2 वाण्डूर बीच
4.3 वाइपर द्वीप
4.4 चिड्डियाट व्यू
4.5 माउण्ट हैरिऐट
4.6 सिंक द्वीप
4.7 मधुबन
4.8 महात्मा गाँधी राष्ट्रीय सामुद्रिक पार्क (जालीवॉए और रेडस्किन)
4.9 रॉस द्वीप
4.10 सिप्पी घाट
4.11 नील द्वीप
4.12 हैवलाक
4.13 लांग द्वीप
4.14 रंगट
4.15 बैटेन द्वीप
4.16 मायाबन्दर
4.17 दिगलीपुर

प्राकृतिक आकर्षण

जलवायु : अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह की यात्रा का सबसे अच्छा समय अक्टूबर से मई तक का है। जनवरी और अप्रैल के मध्य धूप और गर्मी बहुत होती है। विदेशी यह मौसम पसन्द करते हैं और इसी ऋतु में विदेशी धूप का आनन्द लेते हैं और समुद्र स्नान करते हैं। भारतीय पर्यटक वह ऋतु पसन्द करते है जब बादल हों– कम धूप, सुखद ठण्ढा मौसम, जो अक्टूबर से दिसम्बर के मध्य में होता है।

प्राकृतिक सौंदर्य : इन द्वीपों के पर्वतों, और उतार चढ़ावों में प्राकृतिक सौंदर्य का अधिकांश भाग छुपा है। स्वर्णिम समुद्र तटीय रेत, चमकता पारदर्शी समुद्र प्रकृति द्वारा इन द्वीपों को दिया गया वरदान है। प्रवाल द्वीप, जलगत सामुद्रिक जीवन,

बहुरंगी मछलियाँ, समुद्री वनस्पति और फूल इन द्वीपों को स्वप्न लोक सा बनाते हैं।

सँकरी खाड़ियाँ और विहार यहाँ के प्रमुख आकर्षण हैं। महत्वपूर्ण सँकरी खाड़ियाँ हैं:

1. दक्षिणी अण्डमान में राइट मेओ (Wright Meyo)
2. दक्षिणी अण्डमान में बाराताँग (Baratang)
3. मध्य अण्डमान में उत्तरा (Uttara)
4. मध्य अण्डमान में येरट्ट (Yeratta)
5. उत्तरी अण्डमान में कालीघाट (Kalighat)
6. उत्तरी अण्डमान में परांगरा (Parangara)

अण्डमान और निकोबार द्वीपों में 94 विहार हैं। कुछ विहार बसे हुए हैं और अन्य बसने योग्य नहीं हैं।

फूल पौधे और जीवजन्तुः–अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह का 86% वन हैं। यह वन प्रकृति में अनोखे है और बहुत जैविक विविधता लिए हुए हैं। भारत के 15,000 फूलने वाले पौधों में, 2200 प्रजातियाँ इस हरियाली भरे स्वर्ग में पायी जाती है। जिसमें से 200 (10%) प्रजातियां इन द्वीपों में स्थानिक हैं और 1300 प्रजातियां मुख्य भूमि (भारत के अन्य भागों) में नहीं पायी जाती हैं। वर्तमान में लगभग 400 प्रजातियों की व्यवसायिक खेती होती है। लगभग सभी प्रकार के फूलों के पौधे, अण्डमान निकोबार के द्वीपों में विभिन्न मार्गो में स्थित प्रत्येक उद्यान में लगाए जाते हैं।

जहाँ तक इन द्वीपों पर जीव-जन्तुओं का प्रश्न है, स्तनपाई प्राणियों की लगभग 55 प्रजातियां और पक्षियों की लगभग 255 प्रजातियां इन द्वीपों में अभिलिखित की जा चुकी हैं। कुछ स्थनिक, खतरे में पड़े स्तनपाई जीवों की प्रजातिययों में सम्मिलित हैं : निकोबार केंकड़े, अण्डमान जंगली सुअर और कृन्तकों और चमगादड़ों की कुछ प्रजातियां। कई उड़ने वाले स्थानीय खतरे में पड़े

पक्षियों में सम्मिलित हैं : अण्डमान तील (Teal), नारकोण्डम धनेश (Hoonbill), निकोबार मेगापोड (Nicobar) समुद्र तटीय और उथले पानी के समुद्र पक्षियों का बड़ी संख्या में आगमन होता है। यहां कई जंगली स्तनपाई भी हैं, जैसे चित्तीदार हिरन, भौंकने वाला हिरन, बकरियां और जंगली हाथी, जो यात्रियों का आकर्षित करते हैं।

धार्मेक आकर्षण

आदिवासी जातियों के अतिरिक्त विभिन्न राज्यों से आए विभिन्न धर्मों के लोग इस क्षेत्र में रहते रहे हैं। हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध, जैन, बहाई, इत्यादि इन द्वीपों के प्रमुख धर्म हैं। उन मंदिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों और धार्मिक केन्द्रों की सूची उपलब्ध हो सकती है जहां इन द्वीपों की यात्रा पर आने वाले यात्री आसानी से देखने जा सकते हैं।

सामाजिक और सांस्कृतिक आकर्षण

अण्डमान और निकोबार द्वीपों की मिश्रित संस्कृति और सामाजिक जीवन अधिकाश पर्यटकों को आकर्षित करता है और उनके समक्ष जीवन, तौर तरीकों, आदतों, सामाजिक परंपराओं, सांस्कृतिक परम्पराओं, आतिथ्य सत्कार, शांति, उत्सवों, इत्यादि, के साथ ही आकर्षक स्थलों और दृष्यों के विभिन्न प्रारूपों को प्रस्तुत करता है।

मेले और उत्सव

पर्यटकों के इस स्वर्ग में मेले और उत्सव लगभग सभी भागों में मनाए जाते हैं। सामान्यतः मेले सरकारी कार्यक्रमों से संबद्ध होते हैं जैसे 'आइलैंण्ड' आन मार्च, (Islands an Match), व्यापार मेले, नौसेना मेला प्रदर्शनी, इत्यादि। स्वतंत्रता के बाद प्रशासन ने इन द्वीपों की विशेष पहचान के रूप में लोगों को धर्मनिरपेक्ष उत्सव उत्पन्न करने के लिए प्रोत्साहित किया। इन सभी धर्मनिरपेक्ष उत्सकों में सबसे बड़ा है "द्वीप पर्यटन उत्सव"

अण्डमान निकोबार प्रशासन द्वारा आयोजित, दस दिनों तक चलने वाला "द्वीप पर्यटन उत्सव" इन द्वीपों को पर्व-मय बना देते हैं। इस अवसर पर होने

वाली प्रदर्शनी इन द्वीपों के विकास और अन्य पहलुओं को उजागर करती है। इन उत्सवों में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के कलाकार आमन्त्रित किए जाते हैं। सरकारी और निजी भवन प्रकाशमान किए जाते हैं। जल क्रीड़ाएं और निकोबारी "होड़ी" दौड़ आयोजित की जाती है। यह उत्सव इन द्वीपों की छवि को एक पर्यावरण मित्रवत पर्यटन गंतव्य स्थान के रूप में दर्शाता है। किन्तु यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि इन पर्याप्त आवास और वायुयान। जलयान इन दिनों यहां आने से कतराते हैं क्योंकि वे सब कलाकारों सहभागियों के लिए संरक्षित उपयोग होता है। यदि यहां पर्यटन विकसित करना हो तो प्रशासन को इन पहलुओं की ओर भी देखना होगा।

'अण्डमान उत्सव', 'द्वीप पर्यटन उत्सव' का लघु रूप है जो प्रत्येक वर्ष जनवरी में मनाया जाता है। इसमें भारतीय शास्त्रीय नृत्य, कंठ संगीत और बैले का आयोजन अण्डमान और निकोबार प्रशासन द्वारा किया जाता है। भारत के विभिन्न राज्यों से आने वाले विख्यात कलाकार और सांस्कृतिक समूह अपना प्रदर्शन यहां करते हैं।

नेताजी सुभाष च्रद्र बोस के वार्षिक जन्मोत्सव पर जनवरी माह में हैवलाक (Havelock) में 'सुभाष मेला' आयोजित किया जाता है, जो सांस्कृतिक कार्यक्रमों से परिपूर्ण एक सप्ताह का उत्सव होता है।

प्रतिवर्ष जनवरी/फरवरी में 'ब्लाक मेला' आयोजित किया जाता है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में किए गए विकास को उजागर करता है और इन द्वीपों में विशिष्ट ग्रामीण जीवन को प्रदर्शित करता है।

दीपावली, रमजान, क्रिसमस, गणेश पूजा, दुर्गा पूजा, काली पूजा, सरस्वती पूजा, राम नवमी, गोकुल अष्टमी, गुरूनानक जयंती, नाग पंचमी, होली, पोंगल, शिवरात्रि, वसंत पंचमी, और रामलीला अण्डमान और निकाबार द्वीपों के महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध पर्व हैं।

यहां अण्डमान और निकोबार के दो महत्वपूर्ण स्थानीय पर्व भी मनाए जाते हैं जो पर्यटकों के मध्य भी प्रसिद्ध हैं।

पंगुनि उत्थिरम्

यह इन द्वीपों का सबसे बड़ा और सर्वाधिक महत्वपूर्ण पर्व है। यह उत्सव शिव और पार्वती के एक पुत्र, भगवान श्री वेत्रिमलई मुरुगन (भगवान कार्तिक) के सम्मान में मनाया जाता है। श्री वेत्रिमलई (विक्टरी हिल) मुरुगन मंदिर इन द्वीपों का सर्वाधिक पुराना मंदिर है। अब एक नया (दो मंजिला) कल्याण मंडपम् बन चुका है और मुख्य मंदिर का जीर्णोद्धार कार्य भी पूर्ण हो चुका है। इस मंदिर का महत्वपूर्ण लक्षण यह है कि हमारे देश के सभी क्षेत्रों और धर्मों के लोग और विदेशी पर्यटक इस मंदिर में आते हैं।

लोगों का प्रबल विश्वास है कि उनकी विनती सुनी जाती है और भगवान मुरूगन उन पर कृपा करते हैं।

उत्सव के दौरान, मंदिर रंगों और दीपों से सुसज्जित किया जाता है। यह अत्थिरम उत्सव, प्रत्येक वर्ष पंगुनी के तमिल माह में, पूर्णमासी में, दस दिनों तक चलता है। पर्व के दौरान प्रत्येक दिन 'अन्न धानम' दिया जाता है।

लगभग 10000 से 15000 लोग 'अन्न धानम' (पूर्ण भोजन) प्राप्त करने के लिए मंदिर में आते हैं। समारोह के अंतिम दिन, जिसे 'थी मिठी' कहते हैं, जिन लोगों की विनती शक्तिमान श्री बेत्तिमलई मुरूगन पूर्ण कर चुके होते हैं वे अपने शरीर, चेहरे, जीभ, इत्यादि पर 'कवाड़ियों' समेत एक प्रकार के गहने (Sedal Ornaments) धारण करते हैं। कवाड़ियों में 'अरूगंदम कवाडियों' और 'परक्कम कवाड़ियों' को उठाना वास्तव में बहुत कठिन होता है।

अन्य द्वीपों के लोग भी इस समारोह में भाग लेने के लिए पोर्ट ब्लेयर आते हैं। उन्हें देखने के लिए लोग सड़कों पर आ जाते हैं। अपनी प्रतिज्ञा की आंशिक पूर्णता के रूप में सभी धार्मिक लोग भक्तों, यात्रियों, पर्यटकों इत्यादि को नीबू और संतरे का रस, मीठा-नमकीन, शर्बत, मट्ठा और पानी पिलाते हैं। कवाड़ी और आभूषण (Sedal Ornaments) धारी अग्नि (थी मिठी) पर चल कर 'मूलस्थानम' पहूंचते हैं। कोई व्यक्ति छः मीटर के फासले पर भी अग्नि के निकट नहीं खड़ा हो सकता। भक्त अग्नि पर चलते हैं जिसका अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति को भगवान श्री वेत्तिमलई मुरूगन की परम् शक्ति को स्वीकारना चाहिए।

श्री मरियम्मन थिरूविझा उत्सव

यह दूसरा सबसे बड़ा हिन्दुओं का त्योहार है जो देवी अरूलमिगु श्री मरियम्मन के सम्भान में मनाया जाता है। यह मंदिर चिड़िडियाटप्पु मार्ग पर पोर्ट ब्लेयर बस अड्डे से छ किलोमीटर दूर ऑस्तिनाबाद नामक गांव में स्थित है।

सभी धर्मों के लोगों का यह विश्वास है कि देवी मरियम्मा इन द्वीपों की रक्षा करती रही हैं।

एक घटना भक्त लोग कुछ इस प्रकार बताते हैं जैसे यह वास्तविक हो। जब धन्निकारी धाम का निर्माण हो रहा था तो ठेकेदार बार बार चटकती दीवारों के कारण सफलतापूर्वक इसे पूर्ण नहीं कर सका। तब उसने आभूषणों (Sedal Ornaments) धारण कर देवी मरियम्मन से प्रार्थना की जिन्होंने उसे स्वप्न में दर्शन देकर अपने प्रयास जारी रखने को प्रोत्साहित किया। अगले सप्ताह उसने पूरा बांध सफलतापूर्वक बनवा दिया। बांध का निर्माण पूर्ण होने के बाद ठेकेदार ने वर्तमान मन्दिर बनवाया और कुछ धनराशि मंदिर के नाम पर नित्य पूजा, उत्सवों और रखरखाव के लिए जमा करवा दिया। अब सभी लोग इस मन्दिर में आते हैं और देवी मरियम्मन की पूजा उपासना करते हैं, चाहे उनका धर्म कोई भी हो। पर्यटक, विशेषकर विदेशी, इन दोनों मन्दिरों में पूजा अर्चन किए वर्गर इन द्वीपों से वापस नहीं जाते। यह उत्सव प्रत्येक वर्ष फरवरी माह में मनाया जाता है। देवी मरियम्मन के लिए भी भक्तगण उसी प्रकार पूजा और आरती करते हैं जैसी कि भगवान री वेत्तिमलई मुरूगन के लिए होती है। थीमीठी, अरूगंदम् कावाड़ी, लन्नीर कवाड़ी, लोगों, भक्तों और पर्यटकों के लिए विशेष आकर्षण होते हैं।

शष्टि पर्व

यह पर्व श्री वेत्तिमलई मुरूगन के सम्मान में दीपावली के तत्काल बाद छः दिनों तक मनाया जाता है, चूंकि भगवान मुरूगन के छः चेहरे होते हैं जो 'अरूमुगम' के नाम से प्रसिद्ध हैं, प्रत्येक चेहरा छः में से प्रत्येक दिवस का प्रतिनिधित्व करता है। इन दिनों में लक्षार्चन और विशेष पूजा/आरती मंदिर में की जाती है। भक्त 101/- रुपये मूल्य की लक्षार्चन टिकट क्रय कर सकते हैं। पर्यटक

इस उत्सव के दौरान इन द्वीपों में आते हैं, टिकट खरीदते हैं, पूजा में भाग लेते हैं और भगवान श्री वेत्तिमलई मुरूगन की कृपा का प्रसाद अपने अपने गांवों/देशों को लेकर जाते हैं।

वाणिज्य एवं उद्योग

अण्डमान और निकोबार द्वीपों का वाणिज्यिक एवं औद्योगिक विकास पर्यटन उद्योग के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पोर्ट ब्लेयर अपनी हस्तकला के लिए प्रसिद्ध है। सर्वोत्तम आदिवासीय हस्तकला एक बुनी हुई चटाई है जिसे निकोबार की जनजाति के लोग बनाते हैं। जनजाति द्वारा उपयोग में आने वाले विभिन्न उपकरण आकर्षक सज्जित वस्तुओं में परिवर्तित कर दिए जातसे हैं। जनजातियां लकड़ी पर नक्काशी करना भी जानती हैं। यह हस्तकला भी भारी संख्या में पर्यटकों को आकर्षित करती है। सीपियों से निर्मित शिल्पकला बहुत अधिक विकसित है। विभिन्न समुद्री सीपों का उपयोग कर ऐशट्रे, कलमदानी, मेज का कैलेण्डर, फूलदान इत्यादि जैसी विभिन्न मोहक और उपयोगिताकारी वस्तुएं बनाई जातीी हैं। यद्यपि यह कला तमिल और बंगाली प्रवासियों द्वारा लाई गई थी किंतु प्रत्येक जातीय समूह ने अपनी जातीय छाप देकर परिकल्पना में सहयोग किया, इस प्रकार इन द्वीपों के लिए एक अनोखी परिकल्पना उत्पन्न कर दी।

लकड़ी पर हस्तशिल्प एक अन्य क्षेत्र है जिस पर अण्डमान और निकोबार द्वीपों को गर्व होना चाहिए। अण्डमान और निकोबार द्वीपों में उत्पन्न लकड़ी के उत्पाद दो प्रकार के होते हैं। एक पूर्णतः उपयोगिताकारी किंतु सज्जा के साथ, जबकि दूसरा विशुद्ध रूप से सज्जाकारी और पूर्णतः कलात्मक कृतियां।

चमड़े की हस्तकला/शिल्पकला अण्डमान में आदि-आंध्र समूह तक सीमित है जो अधिकांशतः पोर्ट ब्लेयर और उसके आसपास बस गए। यह हस्तकला प्रदर्शन एवं विक्रय हेतु दो विक्रय केन्द्रों 'उद्योग परिषद' और 'खादी ग्रामोद्योग भवन' में उपलब्ध हैं जो क्रमशः अण्डमान एवं निकोबार द्वीप खादी एवं ग्रामीण उद्योग परिषद और दूसरा उद्योग निदेशालय द्वारा संचालित है। इनके अतिरिक्त अबरेदीन बाजार, मिडल प्वाइंट, गोल घर और जंगलीघाट में भी दुकाने हैं। अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह सामाजिक क़ल्याण परिषद भी गोलघर के निकट एक केन्द्र संचालित करता है।

शैक्षणिक संस्थाएं

इस क्षेत्र में सिर्फ दो महाविद्यालय हैं - जवाहरलाल नेहरू गवर्नमेंट कालेज, पोर्ट ब्लेयर और महात्मा गांधी गवर्नमेंट कालेज, माया बन्दर। यह महाविद्यालय स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर पर कला, विज्ञान और वाणिज्य पाठ्यक्रम प्रदान करते हैं। गवर्नमेंट बी०एड० कालेज पोर्ट ब्लेयर में है। अण्डमान और निकोबार द्वीपों में साक्षरता की दर इस प्रकार है - पुरुष - 78.99%, महिलाएं- 65.46% और संपूर्ण - 73.02%, 1991 की जनगणना के अनुसार, जबकि पोर्ट ब्लेयर में क्रमशः 86.59%, 75.08% और 81.69% है। इन द्वीपों में कुल मिलाकर 340 शैक्षणिक संस्थाएं हैं जिनमें से 70 संस्थाएं सिर्फ निकोबार द्वीपों में हैं।

प्रकाश एवं ध्वनि कार्यक्रम

एक राष्ट्रीय स्मारक सेल्युलर जेल, में एक प्रकाश एवं ध्वनि कार्यक्रम होता है। हिन्दी और अंग्रेजी में यह कार्यक्रम होता है। हिन्दी और अंग्रेजी में यह कार्यक्रम प्रतिदिन शाम को दिखाए जाते हैं।

सिनेमा घर

पोर्ट ब्लेयर के अतिरिक्त अण्डमान और निकोबार द्वीपों में वाणिज्यिक सिनेमा घर नहीं है। पोर्ट ब्लेयर में बस अड्डे एक से चार किलोमीटर की दूरी पर है। विभिन्न जगहों में कुल छः सिनेमा घर हैं। अधिकांश सिनेमा घरों में प्रतिदिन दो शो होते हैं, शनिवार और रविवार को तीन शो और उत्सव के दिनों में पांच शो तक हो जाते हैं। सभी सिनेमा घर तमिल, हिन्दी और तेलगू फिल्में दिखाते हैं। कभी कभी यह सिनेमाघर मलूयालम, बंगाली और अंग्रेजी फिल्में भी दिखाते हैं।

रुचिकर स्थान

पोर्ट ब्लेयर शहर

पोर्ट ब्लेयर, अण्डमान और निकोबार द्वीपों का मात्र एक शहर और द्वीपों की अर्थव्यवस्था का केन्द्र है। यह शहर दक्षिणी अण्डमान खण्ड के दक्षिण-पूर्वी भाग में स्थित है। इस शहर को यह नाम आर्चिवाल्ड ब्लेयर के नाम से मिला, जो एक प्रतिभावान सर्वेक्षक थे और जिन्हें 18 वीं शताब्दी में भारत सरकार ने एक

सजायाफ्ता बस्ती के लिए काम पर रखा था। यह अण्डमान और निकोबार ... की राजधानी है। यह इन द्वीपों में एक महत्वपूर्ण बन्दरगाह है जो अधिकांश मालवाहन और यात्री आवागमन में काम आता है। इस शहर में एक हवाई अड्डा भी है। इस शहर का कुल भौगोलिक क्षेत्र 7.9 वर्ग किलोमीटर है।

टैक्सी और सरकारी यातायात बसें यात्रा का मात्र एक साधन हैं। पोर्ट ब्लेयर शहर में कई पर्यटन आकर्षण और ऐतिहासिक महत्व के स्थान हैं। पोर्ट ब्लेयर सिटी में पर्यटकों के आकर्षण के महत्वपूर्ण स्थान निम्नलिखित हैं।

सेल्यूलर जेल

सेलूलर जेल उन यंत्रणाओं की मूक गवाह है जो यहां भेजे गए स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को दी जाती थीं। 1906 ईस्वी में बन कर पूरे हुए इस जेल ने अपना नाम 'सेल्यूलर' (Cellular) इसलिए पाया क्योंकि यह कैदियों के एकान्त कारावास के लिए छोटे छोटे कक्षों से मिल कर बना है। यह मूलतः सात कांटेदार, बैंगनी रंग की इमारत, साथ में आलम्ब के रूप में काम आती एक मध्यवर्ती मीनार और एक विशाल ढांचा है जिसमें गलियारे बहुत से हैं। यह इमारत बाद में क्षतिग्रस्त हो गई और वर्तमान में सात में से तीन शूल (कांटे) सुरक्षित हैं। इस जेल को, जो सभी स्वतंत्रता प्रेमियों का तीर्थ स्थल है, एक राष्ट्रीय स्मारक घोषित कर दिया गया है।

1857 में स्वतंत्रता के प्रथम युद्ध के बाद अंग्रेजों ने यहां जो ...याता बस्ती बसाई, वहीं इस विशाल और यंत्रणाकारी सेलुलर जेल की पीड़ा... कथा का आरंभ था। ब्रितानी राज के विरुद्ध आवाज उठाने वाले देशभक्तों ... जेल में भेज दिया जाता था, जहां कई मर गए। वीरता के इस संग्राम की ... अब एक चलते फिरते 'प्रकाश एवं ध्वनि कार्यक्रम' (Son-et-Lumiere) के ...म से जीवन्त लाया गया है।

चाथन आरा मील (Chathan Saw Mill) :

एक छोटे द्वीप पर स्थित, एशिया की सबसे बड़ी और सबसे पु... आरा मिल, यह द्वीप पोर्ट ब्लेयर से एक पुल द्वारा जुड़ा है। यह पडौक, गुर... ...र्बल

साटिन लकड़ी, इत्यादि लकड़ियों का भण्डार गृह है। इस द्वीप में द्वीपों का दूसरा सबसे बड़ा जलपोत घाट है, जहां जहाज लंगर डाल सकते है।।

छोटा चिड़ियाघर (Mini Zoo)

यह पोर्ट ब्लेयर में हडको नामक स्थान पर स्थित है। यहां इन द्वीपों में पाई जाने वाले स्थानीय पशुओं और पक्षियों की कुछ प्रजातियां पाई जाती हैं।

वन संग्रहालय (Forest Museum)

यह पोर्ट ब्लेयर के हडको नामक स्थान पर स्थित है। यह संग्रहालय वन्य गतिविधियों की एक अंर्तदृष्टि प्रदान करता है पादौक, मार्बल, पिओमा, गुरजन, साटिन लकड़ी इत्यादि से बनी सज्जाकारी वस्तुएं प्रदर्शित करता है। यहां कलाकृत लकड़ी पर नक्काशी के उत्पाद भी प्रदर्शित हैं।

मानवशास्त्रीय संग्रहालय (Anthropological Museum)

पोर्ट ब्लेयर में स्थित यह पुरातत्वीय द्वीपवासियों के जीवन को दर्शाता है। यहां मूल आदिवासियों और उनके उपकरणों के 'माडल' भी रखे हुए हैं। घरों और झोपड़ियों के माडल पारंपरिक वेशभूषा और नृत्यों के चित्र आदिवासीय जीवन की संपूर्ण तस्वीर दिखाते हैं। यह संग्रहालय 'एन्थ्रोपोलाजिकल सर्वे आफ इंडिया' द्वारा संचालित है।

मत्स्य संग्रहालय (Fisheries Museum)

यह अंडमान और निकोबार द्वीप समूह प्रशासन के मत्स विभाग द्वारा संचालित है। यह 'अण्डमान जल क्रीड़ा परिसर' के निकट स्थित है। यह इन द्वीपों विशेष के सामुद्रिक जीवन की प्रजातियों और इंडो-पैसिफिक और बंगाल की खाड़ी में प्रापत समुद्रिक जीवन की प्रजातियों को दर्शाता है।

'समुद्रिका' (नौसेना सामुद्रिक संग्रहालय)

यह 'अण्डमान टील आउस' के निकट, पोर्ट ब्लेयर में स्थित है, जिसे सामुद्रिक पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर जानकारी देने के लिए स्थापित किया

गया। सीपों/शंखो, मछलियों और इन द्वीपों में पाई जाने वाली रंगबिरंगी मछलियों का एक अच्छा संग्रह यहां प्रदर्शित है। इसके अतिरिक्त, यह संग्रहालय विश्व भर में समुद्र के बहाओं की भी जानकारी और विभिन्न अन्य जानकारी और आंकड़ी भी देता है।

'जूओलाजिकल सर्वे आफ इंडिया' संग्रहालय

यह अण्डमान टील आउस के निकट स्थित है। इसमें एक अच्छा शोध ग्रंथालय है और सीपों/शंखों, तितलियों, कनखजूरों इत्यादि की कई प्रजातियां यहां प्रदर्शित हैं।

अण्डमान जल क्रीड़ा परिसर (Andamari Water Sports Complex)'

यह भारत में अपने तरह का एक अनोखा क्रीड़ा परिसर है। यहां सुरक्षित जल क्रीड़ा (जैसे रोइंग, कायाक, अक्वा साइकिल, अक्वा ग्लाइड, बम्पर बोट इत्यादि), और साहसिक खेलों (जैसे वाटर स्कीइंग, वाटर स्कूटर, जेमिनी बोट, पैरासेलिंग, सेल बोट, विण्ड सर्फर, स्पीड बोट, ग्लास बाटम बोट इत्यादि) के लिए सुविधाएं उपलब्ध है।। यहां एक खारा जल तरण ताल, 'नेचर वाक', 'चेंज रूम' और 'फूड प्लाजा' भी हैं। यहां एवरदीन के युद्ध की याद में एक स्मारक भी बना है। यह युद्ध मई 1859 ईस्वी में ब्रितानियों और यहां की मूल अण्डमानी जनजातियों के मध्य लड़ा गया, जिसमें कई आण्डमानी मारे गए। यहां एक कृत्रिम जल प्रपात भी निकट में ही है।

बच्चों का यातायात पार्क

ऐबरदीन क्रीड़ा परिसर के निकट स्थित यह यातायात पुलिस द्वारा बच्चों को ट्रैफिक ने नियम समझाने के लिए बनवाया गया। यहां शाम को फुर्सत में भी शाम बिताई जा सकती है।

गांधी पार्क

यह पोर्ट ब्लेयर में एक सुंदर पार्क है जहां बच्चों का पार्क, मनोरंजन पार्क, जल क्रीड़ा, प्रकृति पथ, झील, बाग, रेस्त्रां, जापानी मंदिर और बंकर जैसी

सुविधाएं हैं। पूर्ववर्ती 'दिलथामन ताल', जो एक समय पोर्ट ब्लेयर में पेय जल का मात्र एक स्त्रोत था, गांधी पार्क के रूप में विकसित कर दिया गया है।

कोरबाइन की लघुनिवेषिका (Corbyne's Cove)

पोर्ट ब्लेयर से सात किलोमीटर दूर, नारियल और ताड़ के झब्बों से युक्त एक समुद्र तट है, जो तैरने, 'सर्फिंग' और धूप सेंकने के लिए एक आदर्श स्थान है। जड़ क्रीड़ा, रेस्त्रां और 'बार्क' कपड़े बदलने का कमरा, इत्यादि, सुविधाएं उपलब्ध हैं। घुड़सवारी की सुविधाएं भी उपलब्ध हैं।

वाइपर आइसलैण्ड (Viper Island)

पोर्ट ब्लेयर के सबसे निकट एक जेल थी, जो 'सेल्यूलर जेल' के निर्माण से पूर्व काम में लाई जाती थी। बाद में यह महिलाओं की जेल बना दिया गया। पहाड़ी पर, दण्डित कैदियों का फांसीघर, का अब खण्डहर बचा है। समुद्र यात्रा की सुविधा भी है जिसमें, बुधवार के अतिरिक्त वाइपर के लिए रोज़ यात्रा भी सम्मिलित है।

रॉस आइलैण्ड (Ross Island)

यह अण्डमान जल क्रीड़ा परिसर के पार स्थित है। यहां से कुछ दूर, ब्रितानी प्रशासन का मुख्य स्थान था। महत्वपूर्ण खण्डहरों में एक गिरजाघर, कब्रिस्तान, तरणताल, बेकरी, मुख्य आयुक्त का आवास, आवासों की कतार, टेनिस कोर्ट, रेस्त्रां, कैन्टीन इत्यादि। भारतीय नौसेना के एक छोटे संग्रहालय 'स्म्रितिका' में पुराने अभिलेखों का अच्छा संग्रह है। बुधवार के अतिरिक्त प्रतिदिन, 'फोनिक्स बे जेट्टी' और पोर्ट ब्लेयर से नौकाएं उपलब्ध हैं।

सिप्पीघाट फार्म (Sippighat Form)

यह पोर्ट ब्लेयर से 14 किलोमीटर दूर स्थित है। 80 एकड़ के क्षेत्र में फैला एक सरकारी फार्म है। लौंग, जायफल, नारियल और कालीमिर्च की खेती के लिए शोध एवं विकास कार्यक्रम यहां चलाये जाते हैं। यह स्थान प्रकृति के पृष्ठभाग में खेती के वातावरण का आनन्द उठाने का एक अच्छा स्थान है।

महात्मा गांधी सामुद्रिक राष्ट्रीय उद्यान, वाण्डूर और उपनेवेषीय द्वीय

यह पोर्ट ब्लेयर से लगभग 29 किलोमीटर दूर स्थित है। यह उद्यान खुले समुद्री निवेषिकाओं और पंद्रह छोटे और बड़ी द्वीपों से मिलकर बना है। आप निवेषिकाओं में वन और उष्णकटिबन्धीय वन, मोहक प्रबाल द्वीपी जल-शैल और दुर्लभ जलमग्न समुद्री जीवन देख सकते हैं। यह उद्यान, जाली बाए, रेड स्किन और क्लिंक लैसे द्वीपों में जाने का आधार स्थल है जहां आप सुंदर समुद्री जीवन, दुर्लभ रंगबिरंगे जलमग्न प्रबाल-द्वीप और कच्छ वनस्पति युक्त संकरी खाड़ी देख सकते हैं। कांच के तलों वाली नावों से आप प्रबालद्वीपी बस्ती देख सकते हैं, जो एक यादगार अनुभव होगा। 'स्नोर्केलिंग' (Snorkelling) उपकरण उपलब्ध हैं। वाण्डूर से जॉली बॉए और रेड स्किन के लिए नौकाएं मिलती हैं।

क्लिंक द्वीप (Clinque Island)

यह पोर्ट ब्लेयर से 265 किलोमीटर दूर है। अभयारण्य (Sanctuary) घोषित यह एक मोहक द्वीप है जहां दुर्लभ प्रवाल द्वीप और जलमग्न समुद्री जीवन एक सुंदर तट रेती और उष्णकटिबन्धीय वर्षा वन दिखते हैं। स्वीकृत श्रेणी की नौकाएं किराए पर पोर्ट ब्लेयर और वाण्डूर से मिलती हैं।

चिड़िया टापू

यह पोर्ट से 25 किलोमीटर दूर स्थित है। दक्षिणी अण्डमान सर्वाधिक दक्षिणी कोने पर स्थित, सामान्यतः 'बर्ड आइलैण्ड' के नाम से विख्यात हरे भरे कच्छ वनस्पति और समुद्र तट इसे एक आदर्श पिकनिक स्पाट बना देते हैं। पहाड़ी की चोटी पर स्थित वन अतिथि गृह एकांत द्वीपों, डूबे प्रबाल महाद्वीपों और मोहक सूर्यास्त का एक सुंदर दृष्य उपलब्ध कराता है।

माउंट हैरियट (Mount Harriet)

एक समय पर अंग्रेजी राज के मुख्य आयुक्त का ग्रीष्म मुख्यालय, यह आज पैदल यात्रा (Trekking) के लिए आदर्श स्थान है। यह 365 मीटर ऊँचा और अण्डमान की दूसरी सर्वाधिक ऊँची चोटी है। आप एक प्राकृतिक मार्ग से होकर

मधुबन तक की पैदल यात्रा कर दुर्लभ फूल पत्तियां और पेड़ पौधे, स्थानीय पक्षी, पशु और तितलियां देख सकते हैं। मधुबन तक की पैदल यात्रा अब भी बड़ी आनन्ददायक है।

नील द्वीप (Neil Island)

यह पोर्ट ब्लेयर से 32 किलोमीटर दूर स्थित है। घने वनों और रेतीले तटों से युक्त इस सुंदर द्वीप के लिए पोर्ट ब्लेयर से सप्ताह में चार दिन नौकाएं मिलती हैं। यह पर्यावरण-मित्रवत पर्यटकों के लिए एक आदर्श अवकाश स्थल है। एक पर्यटक परिसर जल्दी ही बनने वाला है।

हैवलाक आइलैण्ड (Havelock Island)

यह पोर्ट ब्लेयर से 38 किलोमीटर दूर स्थित है। यहां घने वन और सुंदर रेतीले तट हैं। एक पर्यावरण प्रेमी के लिए राधा नगर समुद्र तट में शिविर, एक वास्तविक प्रदूषण-मुक्त अनुभव होगा। यहां के लिए नौकाएं सप्ताह में चार दिन 'फीनिक्स बे जेट्टी' (Phoenix Bay Jetty) से मिलती हैं।

लांग आइलैण्ड (Long Island)

पोर्ट ब्लेयर से 82 किलोमीटर दूर यह 'लालाजी बे' (Lalaji Bay) में एक सुंदर रेतीला समुद्र तट, प्रदूषण-रहित पर्यावरण और सदाबहार हरे वन प्रदान करता है।

रंगल (Rangat)

यह पर्यावरण की दृष्टि से एक वास्तविक आकर्षण है जहां पर्यटक अछूती प्रकृति और प्रदूषण रहित वायु में सांस ले सकते हैं। पंद्रह किलोमीटर दूर 'कथबेस्ट बे बीच' में एक कछुआ आवास स्थल भी है और एक पर्यटक परिसर विकसित करने के लिए इस स्थान की पहचान की गयी है।

मायाबन्दर (Mayabunder)

यह पोर्ट ब्लेयर से सड़क द्वारा 240 किलोमीटर और समुद्र मार्ग द्वारा

136 किलोमीटर दूर है। मध्य अण्डमान के उत्तरी भाग में स्थित, यहां उत्तम प्राकृतिक दृष्य और सुंदर समुद्र तट हैं। म्यान्मार से आए लोगों, पूर्वी पाकिस्तान के विस्थापितों और पूर्व-दण्ड भोगियों से मिल कर बसा, मायाबन्दर की संस्कृति में एक भिन्नता है। यहां उत्सवों का अच्छा आनन्द लिया जा सकता है। 'कारमाटांग समुद्रतट' एक कदुआ आवास/प्रजनन स्थल, को एक पर्यटक परिसर के रूप में विकसित किया जा रहा है।

दिगलीपुर

यह मायाबन्दर के उत्तर में स्थित है। यह पर्यावरण - मित्रवत पर्यटकों को एक दुर्लभ समुद्र-धूप-आनन्द का मजा उपलब्ध कराता है। यह संतरों, धान और समुद्री जीवन के लिए प्रसिद्ध है। कालीपुर नामक एक रेतीले समुद्र तट को एक पर्यटक परिसर के रूप में विकसित किया जा रहा है। 'सैडल पीक', द्वीप का सर्वाधिक ऊँचा स्थान (732मीटर) निकट ही है। इसे भविष्य में 'ट्रेकिंग' (Trekking) के स्थान के रूप में विकसित किया जा सकता है। अण्डमान की सिर्फ अकेली नदी, कालपोंग, यहीं पर है जिस पर द्वीप का पहली पन-बिजली (Hydro-electric) परियोजना बन रही है। यह मायाबन्दर और पोर्ट ब्लेयर दोनों ही से समुद्र मार्ग से जुड़ा है।

निर्जन द्वीप (Barren Island)

यह भारत का एकमात्र क्रियाशील ज्वालामुखी है, जो लगभग 177 वर्ष निष्क्रिय रहने के बाद अभी हाल ही में दो बार फटा - पहली बार 1991 ईस्वी में और दूसरी बार 1994-95 ईस्वी में। लगभग तीन किलोमीटर की परिधि में फैले इस द्वीप में एक बड़ा ज्वालामुखी का गढ़ है, जो अकस्मात समुद्र से उठता है, तट से लगभग आधा किलोमीटर और लगभग 150 फुट गहरा। ज्वालामुखी फिर शांत हौ। यह वर्तमान में पर्यटक स्थल नहीं है किंतु एक नाव में रहकर दूर से देखा जा सकता है।

'कार निकोबार' (Car Nicobar) चारों ओर हरहराते समुद्र समेत कुछ मोहक समुद्र तटों और नारियल के उपवनों से घिरा एक समतल उपजाऊ द्वीप है।

निकोबारी झोपड़ियां इस द्वीप की अनोखी विशेषता है - जिनमें मंजिलों से होकर एक लकड़ी की सीढ़ी से प्रवेश होता है। निकोबरी आदिवासी लोगों द्वारा बुनी हुई चटाई एक अनोखी कला है।

वास्तव में कार निकोबार, निकोबार जिले का जिला मुख्यालय है जिसमें 28 द्वीप सम्मिलित हैं और जिनहें अन्यथा निकोबार द्वीप समूह के नाम से जाना जाता है। द्वीपों का यह समूह, अण्डमान समूह से 'दस डिग्री चैनेल' द्वारा पृथक है। यह द्वीप नारियल, कैसुरिना (Casurina) और पण्डानु (Pandauns) के वनों से घिरे हैं। ग्रेट निकोबार और लिट्ल निकोबार में काले रंग के केंकड़ी खाने वाले बन्दर पाए जाते हैं जिनकी पूंछ लम्बी होती है। यहां निकोबारी कबूतर बहुत पाए जाते हैं। एक दुर्लभ पक्षी, मागापोड, ग्रेट निकोबार में पाया जाता है। भारत की सर्वाधिक दक्षिणी नोक, इंदिरा प्वाइंट (Indira Point) जिसे पहले पिगमेलियन प्वाइंट कहते थे, ग्रेट निकोबार में स्थित है। निकोबार समूह वर्तमान में विदेशियों के लिए वर्जित नहीं है। आवेदन करने पर भारतीयों को अपवाद रूप में यहां जाने की स्वीकृति दी जा सकती है।

ग्रेट निकोबार में माउंट थुलियर (Mount Thullier) नामक 642 मीटर ऊँचा पर्वत है। यह 'ट्रेकिंग' (Trekking) की अपेक्षा पर्वतारोहण के लिए अधिक उपयुक्त है। किंतु सुविधाओं की कमी के कारण बड़ी मुश्किल से कोई यहां पहुंचता है। यदि उचित ढंग से विकसित किया जाए तो यह एक पर्यटक आकर्षण बन सकता है।

अण्डमान समूह में, नारकोण्डम (Norcondum) द्वीप भी एक पर्यटक आकर्षण के रूप में विकसित किया जा सकता है - न ही सिर्फ शांत ज्वालामुखी के कारण बल्कि समुद्र तटों, वर्षा वनों, और एक सुंदर दुर्लभ पक्षी नारकोण्डम हार्नबिल (Norcondum Hornbill) के कारण भी। किन्तु पहुंच और सुविधाओं की कमी के कारण पर्यटक यहां नहीं आ सकते।

मधुबन

यह सुंदर स्थान और चट्टानारोहण (Trekking) क्षेत्र दक्षिणी उण्डमान से 80 किलोमीटर दूर उत्तर-पूर्व में स्थित है। मधुवन समुद्र स्थान के लिए बड़ा प्रसिद्ध है। यह क्षेत्र धूप और सुनहरे समुद्र तटों से परिपूर्ण है जहां आप धूप सेंक सकते

हैं। पर्यटक सुंदर फूल, पौधों, वनों, स्थानीय पक्षियों, पशुओं, तितलियों, और प्रशिक्षित हाथियों की सवारी का आनन्द उठा सकते हैं, जो चट्टानारोहण (trekking) का सर्वाधिक रुचिकर भाग है।

यात्रा हेतु वैधानिक औपचारिकताएं

अण्डमान और निकोबार की यात्रा के इच्छुक पर्यटकों को यात्रा से पूर्व कुछ औपचारिकताएं पूर्ण करनी पड़ती हैं जो वैधानिक अनिवार्यता है। सभी विदेशी नागरिक 30 दिनां तक द्वीपों में ठहर सकते हैं। उन्हें ठहरने के लिए स्वीकृति की आवश्यकता होती है जो पोर्ट ब्लेयर, पहुंचने पर अप्रवास अधिकरण (immigation authorities) से आसानी से मिल सकता है। इनके अतिरिक्त इन निम्नलिखित स्थानों/अधिकरणों से भी स्वीकृति प्राप्त की जा सकती है :

1. विदेशों में भारतीय दूतावास
2. विदेशी पंजीकरण कार्यालय (मुंबई, दिल्ली, चेन्नई और कोलकाता में)
3. अप्रवास अधिकरण (दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, और कोलकाता)

रात बिताने की इस स्वीकृति के लिए निम्नलिखित स्थान सम्मिलित हैं :

1. पोर्ट ब्लेयर नगर पालिका क्षेत्र
2. हैवलाक आइलैण्ड
3. नील आइलैण्ड
4. लॉग आइलैण्ड
5. मायाबन्दर
6. दिगलीपुर *
7. रंगत

इनके अतिरिक्त : जाली बॉए, रेड स्किन, दक्षिणी क्लिंक, माउंट हैरियट और मधुबन में दिन में जाने की स्वीकृति होती है।

भारतीय नागरिकों को अण्डमान जाने के लिए स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होती। किन्तु निकोबार द्वीपों और अन्य आदिवासी क्षेत्रों में यात्रा करने के लिए स्वीकृति की आवश्यकता होती है। यह स्वीकृति प्राप्त करने के लिए एक निर्दिष्ट

* म्यान्मार के नागरिकों को यहाँ जाने या रात बिताने की स्वीकृति नहीं होती।

प्रारूप में एक प्रार्थना-पत्र उप-आयुक्त, अण्डमान जिला (पोर्ट ब्लेयर में) के नाम से दिया जा सकता है। वैधानिक औपचारिकताओं की चूक की स्थिति में परेशान किए जाने की संभावना या कुछ दण्डात्मक कार्यवाही की भी संभावना हो सकती है।

इन द्वीपों पर जिन सामान्य नियमों का पालन आवश्यक होता है वे इस प्रकार है:

(i) जो व्यक्ति एक आश्रयस्थल (Sanctuary) या सामुद्रिक राष्ट्रीय उद्यान (Marine National Park) में फोटो खींचने/जांच पड़ताल करने को इच्छुक हों उन्हें मुख्य वन्यजीव रक्षक (Chief Wildlife Warden) टेलीफोन नं०- 21152/215-49 से स्वीकृति ले लेनी चाहिए।

(ii) हवाई अड्डे, सरकारी गोदी-बाड़ा (Government Dockyard) प्रतिष्ठानों, नौसैनिक जहाज-घाट, धानीकारी बांध और चाथम आरा मील की फोटो खींचना वर्जित है।

(iii) वन्यजंतुओं का शिकार वर्जित है।

(iv) एक वन्यजीव/स्मृतिचिन्ह/वस्तु द्वीपों से बाहर ले जाने के लिए : उप-वन संरक्षक, वन्यप्राणी प्रभाग पोर्ट ब्लेयर, से अनुमति के रूप में एक 'ट्रांसिट पास' की आवश्यकता होती है। उनका फोन नं० है : 20816

(v) दस से अधिक संख्या में समुद्री शंख ले जाना तब तक वर्जित है जब तक कि मत्स्य विभाग से विशेष अनुमति न प्राप्त कर ली जाए।

उपरोक्त सभी के अतिरिक्त कुछ ऐसे नियम हैं जिन्हें सिर्फ याद रखा जाना या जिनका पालन किया जाना चाहिए, चाहे कागजों/दस्तावेजों की आवश्यकता हो या नहीं। कुछ तो सामान्य नियम है जबकि कुछ अन्य सामान्य नीतियां/आचार हैं। क्या करें और क्या न करें यह पर्यटकों के परामर्श हेतु निम्नलिखित हैं :

क्या करें

* उद्यानों को वही सम्मान दें जो हमारी बहुमूल्य प्राकृतिक विरासत के पवित्र स्थान के लिए उचित हैं।

* पर्यटक मार्गदर्शकों की सेवाओं का उपयोग करें।

* जल शैलों, अन्य समुद्री जीवन और ऊष्ण कटिबन्धीय वनों के विषय में अधिक जानकारी लें। इससे आपकी यात्रा अधिक जानन्ददायक हो जाएगी।

* इन द्वीपों के इतिहास, संस्कृति और अन्य पहलुओं के बारे में जानें।

* समुद्र तटों और पर्यावरण को साफ रखने में मदद करें। कचरा सदैव वापस लाएं।

* जल शैल का ध्यान रखें, न स्वयं अपने लिए बल्कि उन सभी लोगों के लिए जो आपके बाद आएंगे।

* आपकी अपनी सेवा के बेहतर प्रबन्धन के लिए अपनी बहुमूल्य टिप्पणी और प्रेक्षण दें।

क्या न करें

* बगैर अनुमति राष्ट्रीय उद्यान में प्रवेश न करें।

* किसी जीवित या मृत प्राणी/पौधे का संचय, विनाश न करें और उन्हें न हटाएं।

* मृत सीपियों का संचय न करें या उन्हें न तोड़ें। 'स्नोर्कल' (Snorkel) करते समय प्रवाल जल शैल पर न खड़े हों।

* प्रतिबंधित क्षेत्रों में बगैर अनुमति फिल्म या वीडियो न बनाएं।

अण्डमान की यात्रा करने के इच्छुक पर्यटक यहाँ समुद्री और वायुमार्ग दोनों ही से आ सकते हैं, क्योंकि पोर्ट ब्लेयर, कलकत्ता, चेन्नई और विशाखापटनम से जलपोत और वायुयान चलते है।। आजकल पर्यटकों के लिए 'एकमुश्त यात्रा' (packaged Tour) का भी आयोजन किया जा रहा है और इन द्वीपों में प्रवेश हेतु आवश्यक स्वीकृति की व्यवस्था यात्रा आयोजक करते हैं। पोर्ट ब्लेयर और उसकसे आसपास मूलभूत सुविधाओं से युक्त पर्यटक गृह, अतिथि गृह उपलब्ध हैं। स्थानीय अधिकरणों में अण्डमान और निकोबार द्वीपों को 21 वीं शताब्दी का 'पर्यटक गंतव्य स्थान' बनाने हेतु परियोजनाएं बनाई हैं। आधारभूत उद्देश्य है अण्डमान में उच्च गुणवत्ता युक्त कम घनत्व पर्यावरणीय रूप से पोषण योग्य पर्यटन का प्रवर्तन।

'यू.एन.डी.पी./डब्लू.टी.ओ.' उध्ययन दल ने पर्यावरणीय-गांवों (eco-villages) में पर्यावरणीय-मित्रवत (eco-friendly) समुद्र तटीय आश्रय स्थलों (resorts) की स्थापना, जल क्रीड़ा, साहसिक जल क्रीड़ा, स्क्यूबा गोताखोरी इत्यादि समुद्र संबंधी गतिविधियों के विकास, यूरोप और एशिया के पर्यटन बाजार की संभावनाओं को काम में लाने के लक्ष्य के साथ उत्साहपूर्ण विपणन, और पर्यटन के विषयों के प्रबन्धन हेतु 'अण्डमान और निकोबार पर्यटन विकास प्राधिकरण' की स्थापना का सुझाव दिया है।

पर्यटकों की बाढ़ की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए अण्डमान और निकोबार द्वीप पर्यटन विकास निगम ने, निजि सहभागिता के साथ यातायात और आवास जैसी सुविधागत ढांचें में वृद्धि के अतिरिक्त, नौवीं पंचवर्षीय योजना में सभी द्वीपों में 350 होटल विस्तर बढ़ाने का प्रस्ताव किया है। पर्यटकों को बिजली, पानी इत्यादि प्रदान करने हेतु शहरी विकास के क्षेत्र में अच्छे खासे पूंजी निवेष की आवश्यकता होगी। स्थलों के सौंदर्यीकरण और पर्यटकों के लिए अधिक आवास के निर्माण की भी योजनाएं हैं। आठवीं पंचवर्षीय योजना में अण्डमान और निकोबार द्वीपों में पर्यटन के विकास के लिए 3.5 करोड़ रुपये स्वीकृत किए गए थे।

लक्ष द्वीप

लक्षद्वीप द्वीप समूहों में 36 द्वीप केरल तट से कुछ 280 से 480 किलोमीटर दूर हैं। वहां सिर्फ ग्यारह द्वीप बसे हुए हैं और उनमें से 'कावारत्ती' में इस केन्द्र शासित क्षेत्र की राजधानी स्थित है।

अरब सागर के इन द्वीप समूहों को लक्कादीवी, मिनिकॉए और अनुन्दीपी द्वीपों के समूह के रूप में जाना जाता था और नवम्बर 1874 में उन्हें नया नाम 'लक्षद्वीप' दिया गया। ये द्वीप समूह भारत के केन्द्र शसित क्षेत्रों में सबसे छोटा है। यहां की जनसंख्या है 93% मुसलमान (जो सुन्नी संप्रदाय के शफी मत के हैं)। मलयालम सभी द्वीपों में बोली जाने वाली भाषा है, सिर्फ मिनिकॉए को छोड़कर जहाँ लोग माहल (Mahl) भाषा बोलते हैं-जो मालद्वीव (Maldives) में बोली जाती है।

अरब सागर प्रबालद्वीपों के इन सुंदर द्वीपों में 12 प्रबालद्वीप, 3 समुद्री चट्टानें या जलशैल और 5 जलमग्न तट हैं। लक्षद्वीप में विस्तृत समुद्र ताल (lagoons) (लगभग 4200 वर्ग किलोमीटर में), 2000 वर्ग किलोमीटर में क्षेत्रीय

समुद्र जल और चार लाख वर्ग किलोमीटर में आर्थिक क्षेत्र हैं जो कुल 4000 टन मदलियों का योगदान करता है।

इतिहास

दन्तकथा के अनुसार इन द्वीपों में पहले बसने वाले कांडुगलुर (crangarnore) के नाविक थे जिनका जहाज, उनके राजा चेरामन पेरूमल, (जो चुपचाप मक्का की तीर्थयात्रा पर चले गए थे) की खोज में जाने के बाद यहां क्षतिग्रस्त हो गया था। प्रथम ऐतिहासिक अभिलेख 7 वीं शताब्दी का है जब एक माराबउत (मुसलमान संत) का जलपोत अमीनी के द्वीप पर क्षतिग्रस्त हो गया था। द्वीप वासियों के इस्लाम में धर्मांतरण के उनके प्रयासों के आरंभिक विरोध के बावजूद के अंततः सफल हुए। जब उनकी मृत्यु हुई तो उन्हें एण्ड्रोट में दफना दिया गया। उनकी मजार को आज तक एक पवित्र ज्ञस्थान के रूप में सम्मान दिया जाता है।

संपूर्ण जनसंख्या के इस्लाम में धर्मांतरण के बाद भी प्रभुता चिक्कल के हिंदू राजा के हाथ में रही। अंततः यह 16 वीं शताब्दी में कन्नूर के मुसलमान शासकों और 1783 में टीपू सुल्तान के हाथों में चली गई। 1799 की श्रीरंगपटनम के युद्ध में अंग्रेजों के हाथों टीपू सुल्तान की पराजय के बाद ईस्ट इंडिया कम्पनी ने द्वीप पर कब्जा जमा लिया। सन् 1956 में संघशासित क्षेत्र का गठन किया गया।

पर्यटन

यह द्वीप वास्तव में पर्यटकों का स्वर्ग है और इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि यह बड़ी संख्या में यात्रियों को आकर्षित करता है। यहाँ पर्यटकों की संख्या बढ़ाने की योजना है। इस ओर बड़ा ध्यान दिया गया है कि पर्यावरण और संस्कृति को बनाए रखा जाए और कि लक्षद्वीप के वाशिंदों का जीवन किसी भी तरह बाधित न हो। इन्हीं परिमाणों के अंतर्गत पर्यटन को प्रोत्साहित किया जाता है। चमकीले समसुद्र तट और मछली मारना, विश्राम, 'सर्फिंग' और अन्य गतिविधियां कुछ ऐसे आकर्षण हैं जो अनोखे हैं, क्रियाशील पर्यटक के लिए और उनके लिए भी जो विश्राम और व्यस्ततामय जीवनचर्या से एक परिवर्तन चाहते हैं।

(1) अहमद ओलियुल्ला का मकबरा

कालपेनी में अहमद उलोयुल्ला (पल्लिकायेन्हो) का एक मकबरा है। यह मकबरा 200 वर्ष पूर्व 'मोहिइद्दीन पल्ली' के सामने बनवाया गया था। यह मान्यता है कि मकबरे से उठाई गई रेत भी आंख और पेट की तकलीफों को ठीक करने के लिए औषधि के रूप में उपयोग होती है। 'अण्डुनेर्चा' हर साल 'सफर' के महीने में किया जाता है।

(2) चाना-का-कोजा का मकबरा

कालपेनी में 120 वर्षों से भी अधिक पुराना चाना-का-कोजा का मकबरा है। संत चाना-का-कोजा मदीने से इस्लाम के प्रचार हेतु एण्ड्रोट आए थे। कहते हैं कि मुर्गों और मुर्गियों का असामान्य लगातार शोर सुनकर लोग यहां ढूंढ़ते हुए आए और संत चाना-का-कोजा का मृत शरीर यहां पाया। उन्हें वहीं दफना दिया गया और बाद में वहां मकबरा बनवा दिया गया।

(3) कालपेनी काइन्हो का मकबरा

कालपेनी में दूसरा मकबरा 200 वर्ष पहले अबूसल्ली के पुत्र कालपेनी काइनहों की यादगार में बनवाया गया। यह मकबरा उजरा मस्जिद में है। यहां 'नेर्चा' किया जाता है। कालपेनी द्वीप में पुथियापल्ली में 450 वर्ष पुराना 'कोयाकुट्टिओलियुल्ला' का एक पुराना मकबरा भी है। 'नेर्चा' यहां भी होता है। यहां अन्य धर्मों के लोग भी अपनी श्रद्ध अर्पित करते है।।

(4) संत उबैदुल्ला का मकबरा

यह एण्ड्रोट द्वीप में 300 वर्ष पूर्व बनवाया गया। संत उबैदुल्ला का मृत शरीर यहां दफनाया गया था। दन्तकथा के अनुसार संत उबैदुल्ला एण्ड्रोट के कैडाथिकुन्नु में पहली बार दिखे थे और इस्लाम का प्रचार करते थे। बाद में 13वीं शताब्दी में उनहोंने लक्षद्वीप के सभी वाशिन्दों को मुसलमान बना दिया।

(5) संत सैयद मोहम्मद जलालुदीन बुखारी (इप्पाकाइन्हो)

यह एण्ड्रो में स्थित लगभग 100 वर्ष पुराना मकबरा है जहां संत सैयद

मोहम्मद बुखारी के मृत शरीर को दफनाया गया। विभिन्न द्वीपों और मुख्यभूमि से "नेर्चा" यहां आते हैं।

(6) सैयद मोहम्मद कासिम का मकबरा

कावारत्ती में लगभग 300 वर्ष पुराना सैयद मोहम्मद कासिम का मकबरा है। यह मकबरा उजरा मस्जिद के सामने निर्मित है जो कचेरी जेट्टी से लगभग एक किलोमीटर पर है। संत सैयद मोहम्मद कासिम पूर्ववती मैसूर राज्य के दक्षिणी कनारा जिले में अंगोले से आए थे और यहां उन्होने पहली बार लक्षद्वीप में 'रिफाई' पंथ का प्रचार किया। उन्होंने 'कावारत्ती' में प्रसिद्ध उजरा मस्जिद के निर्माण की देख भी की। यह मस्जिद लकड़ी पर की गई नक्काशी के लिए प्रसिद्ध है। यह मान्यता है कि नक्काशी की विभिन्न परिकल्पनाओं का विचार मस्जिद के सामने उगे फूलों से लिया गया। ईद-उल-जुहा और ईद-उल-फित्र मस्जिद में मनाए जाते हैं। रिफाई शेक और सैयद मोहम्मद कासिम की पुण्य बरसी हर साल हजरा मस्जिद में मनाई जाती है। सभी द्वीपों और मुख्यभूमि से भी चढ़ावा यहाँ पहुँचता है।

(7) कावारत्ती के निकट, सेहेली (चेरियाकारा)

जहां कोई नहीं रहता, भी एक मकबरा है। यह सैयद अबोआबाओकर सीदी ओलियुल्ला के पुत्र का मकबरा है। धर्मिक अण्डुनेर्चा, रजब 24 को मरक्कर मस्जिद, कवारत्ती में किया जाता है जो इसी संत की याद में बना।

(8) मिनिकॉय द्वीपों में एक पुराना दीप स्तंभ है जो अंग्रेजों के शासन काल मे 1885 में बनवाया गया। यह 167 फीट ऊंचा है और इसमें 168000 मोमबत्तियों की रोशनी है। अंतर्राष्ट्रीय मार्गों के लिए यह एशिया में महत्वपूर्ण दीपस्तंभों में से एक है।

(9) अगत्ति

यह लक्षद्वीप के सर्वाधिक सुंदर समुद्रतालों मे से एक है, जहां हवाई अड्डा है। यह जिले का सर्वाधिक पश्चिमी द्वीप है। मानव बस्ती इस द्वीप के उत्तरी भाग तक सीमित है। द्वीप का पश्चिमी ओर एक सुंदर समुद्रताल द्वारा बन्धित है जहां विभिन्न प्रकार के शंख और रंगबिरंगी मछलियां बहुतायत में पाई जाती है। इस श्रेणी के अन्य द्वीपों की तुलना में इस द्वीप की जलवायु गर्म है। अन्य द्वीपों की

ही भांति मछली मारना और नारियल की खेती करना यहाँ के लोगों के जीवन यापन का मुख्य स्त्रोत है। यह उन द्वीपों में से एक है जहां इस्लाम धर्म के वाहाबी पंथ का अनुसरण होता है।

यह द्वीप बहुत जल्दी ही पर्यटकों के लिए खुल जाएगा। एक 20 बिस्तरों वाला पर्यटक परिसर यहां बनवाया जा चुका है।

(10) अमीनी

द्वीप का नाम अरबी शब्द ''अमीनी'' से लिया गया होगा जिसका अर्थ है ईमानदार। यहा द्वीप आयताकार है, जो कुछ बहुत छिछले और संकरे समुद्रतालों को छोड़ कर लगभग पूरे जल शैल को घेर लेता है। पूर्वी और पश्चिमी समुद्र तटों पर प्रबाली बलुआ पत्थर है, जिसे स्थानीय लोग काट कर घर बनाने के काम में लाते हैं। जलवायु वैसी ही है जैसी कि केरल के मालाबार तट में है। अमीनी द्वीपों (जिनके नाम हैं कदमत, किलटन, चेटलट, और वित्रा) के इस समूह का तहसील मुख्यालय है। इस द्वीप में प्रतिभावान हस्तशिल्पकार हैं जो कछुए की खोल और नारियल के खोपरों से चलने वाली सुंदर छड़ियां बनाते हैं। यह द्वीप पत्थरों पर खुदाई करने वालों के लिए भी प्रसिद्ध है जो कठोर प्रबाल पत्थरों पर सुदर फूलों के प्रारूपों की नक्काशी करत हैं। यहां लोक गीतों की समृद्ध परंपरा है। अमीनदीवी समूह का विशिष्ट नौका गीत इसी द्वीप में अपना सर्वोच्च प्रारूप पाता है।

(11) एण्ड्रोट

एण्ड्रोट सबसे बड़ा द्वीप है। यही एक मात्र ऐसा द्वीप है जहां कोई समुद्रतल नहीं है। इस द्वीप में नारियल के पेड़ बड़े घने रोपे गए है। जो जिले में उत्तम उपलब्ध नारियल प्रदान करते हैं। परंपरा के अनुसार, यह इस्लाम धर्म स्वीकारने वाला पहला द्वीप था। कहते हैं कि एक अरबी धर्मप्रचारक, उबैदुल्ला (जो इस जिले के सभी वाशिन्दों के इस्लाम मे धर्मांतरण के लिए जिम्मेदार थे) की मृत्यु यहीं हुई। उनका मकबरा इस द्वीप के जुमा मस्जिद में है।

(12) बंगारम् द्वीप

यह कावारत्ती के उत्तर में है। यह भारत के सर्वोत्कृष्ट पर्यटन स्थलों मे से एक है। इस द्वीप में बस्ती नहीं है और यह उगत्ती से 8 किलोमीटर उत्तर में

स्थित है। उसी प्रबालद्वीप में तीन बस्ती-रहित द्वीप हैं-टिन्नाकारा, पराली-I और पराली -II, इनमें से प्रत्येक पर बंगारम से पहुंच आसान है। इस द्वीप में एक बहुत बड़ा और सुंदर समुद्रताल है। यह समुद्रताल बहुत गहरा है। इस द्वीप में अगात्ति के लोगों का एक मनपसंद मछली मारने और कछुए का शिकार करने का स्थान है। द्वीप के पूर्वी बिन्दू में एक अर्धगोलाकार खाड़ी है जो एक राष्ट्रीय तरण-ताल के रूप में काम आता है।

बंगारम में सात पर्यटक काटेज हैं। लक्षद्वीप प्रशासन ने द्वीप की अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के लिए, आंतरिक और अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन को विकसित करने के लिए कार्यवाही आरंभ कर दी है। बस्ती-रहित द्वीप, बंगारम , एक प्रसिद्ध अंतर्राष्ट्रीय पर्यटक रिसार्ट के रूप में रहेगा। विदेशी पर्यटक भी सुहेलती (Suhelti) और थिकक्कोम (Thikakkom) नामक दो क्षिपों में आते हैं। जल क्रीडाएं भी बडी संख्या में पर्यटकों को आकर्षित करती हैं। एक अर्ध-सरकारी संगठन "दि सोसाइटी फार प्रोमोशन आफ रिक्रिएशनल टूरिस्म एण्ड स्पोर्टस" (SPORT) इन द्वीपों के लिए एकमुश्त यात्रा (Package tour) आयोजित करता है। बंगारम के निकट अगात्ती में एक हवाई पट्टी बन जाने से पर्यटक यातायात और बढ़ गया है।

(13) बित्रा (Bitra)

यह क्षेत्र का सबसे छोटा बसा हुआ द्वीप है। यह कावारात्ती से उत्तर दिशा में दूर स्थित है। सर विलियम राबिन्सन ने लिखा है कि लगभग 19 वीं शताब्दी के मध्य तक यह द्वीप पक्षियों का प्रजनन स्थल और अन्य द्वीपों के लोगों की शिकारगाह था। इसमे एक बहुत बड़ा समुद्रताल है जो कछुओं और असंख्य मछलियों से भरा पड़ा है।

(14) चेटलट

चेटलट, अमीनी के उत्तर में 56 किलोमीटर दूर हैं। द्वीप के पूर्वी ओर

तूफान से उत्पन्न प्रबाल मलबें की एक चौड़ी पट्टी है, जो उत्तर में और चौड़ी हो जाती है और द्वीप के संपूर्ण दक्षिणी छोर को घेर लेता है। चेटलट में अमीनी से आए मेला चेरियों की बस्ती थी। इसी क्षेप को 16 वीं शताब्दी में पुर्तगालियों के हाथों भारी क्षति पहुंची। यहां के वाशिन्दे समान्यतयः गरीब हैं और रस्सी बटने और मछली मारने से प्राप्त आमदनी से अपना जीवनयापन करते हैं। इस द्वीप की एक बहुत रूचिकर पंरपरा है। महिलाए सामान्तयः रात में समुद्र तट पर एकत्रित होती हैं और गहरे समुद्र नौकाएं लेकर मछली मारने गए पुरूषों को अंधेरे में द्वीप ढूंढ़ने में मदद करने के लिए तट पर आग जलाकर बैठती हैं। इस द्वीप की एक अनोखी शिल्पकला उद्योग है-मुलायम नारियल के पत्तों से टोपियां बनाना- जिनकी जिले में भारी मांग है। इस द्वीप में कुछ पुराने मकबरे भी पाए जाते हैं।

(15) कडमट (Kadmat)

यह अमीनी से 10 किलोमीटर उत्तर में स्थित है। पश्चिमी ओर पर एक बहुत विशाल समुद्रताल के अतिरिक्त, पूर्वी ओर पर एक संकरा समुद्रताल भी है। लोगों की आजीविका का मुख्य साधन है रस्सी बटना। कडमट, निर्माण कार्य के लिए उपयोग होने वाले अपने पत्थरों के लिए प्रसिद्ध है। यहां 1948 में कुछ स्वर्ण मुद्राएं पाई गईं थीं जो प्रथम और दूसरी शताब्दी के रोमन सम्राटों के समय की थीं। ऐसा प्रतीत होता है कि उपनिवेषन से पहले भी विदेशी इस द्वीप पर आते रहे थे। किंतु द्वीप पर व्यवस्थित रू से बस्ती 19 वीं शताब्दी के आरंभ में ही बसनी शुरू हुई।

अपनी अंतहीन तटरेखा के कारण कडमट तैरने के लिए एक आदर्श स्थान है। पर्यटक आवास ऊंचे नारियल के पेड़ों के बीच में स्थित हैं जो एक दैवी वातावरण बनाते हैं। यही मात्र एक ऐसा द्वीप है जिसके पूर्वी और पश्चिमी (दोनों) ओर समुद्रताल हैं। जल क्रीड़ा सुविधाएं प्रदान करने वाला एक "वाटर स्पोर्ट्स इंस्टीट्यूट" कडमट में स्थापित किया गया है। आवास में, समुद्रतटों पर नारियल

के पेड़ों के उपवनों में सौंदर्यपरक रूप से स्थित वातानुकूलित और गैर-वातानुकूलित पर्यटक आवास उपलब्ध हैं। वहां एक "स्क्यूबा" गोताखोरी केंद्र भी स्थापित किया गया है।

(16) कालपेनी (Kalpeni)

कालपेनी, एण्ड्राट से 76 किलोमीटर दक्षिण में स्थित है। यह द्वीप, साथ में अन्य अधीन द्वीपों- कोडिथला, चेरियम, टिलक्कम और पिट्टी- के साथ एक बहुत विस्तृत छिछले समुद्रताल में स्थित है। यह उन द्वीपों में से एक है जिनका उपनिवेषीकरण बहुत पहले हो गया था। अरबी लेखकों के लेखन में इस द्वीप का उल्लेख है। अरबी लेखक इस द्वीप को "कोलफैनी" लिखते थे। इस सद्वीप का एक विशेष लक्षण है पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी समुद्रतटों के साथ-साथ तूफान से उत्पन्न विशाल तूफान मलबे की उपस्थिति। यह द्वीप प्रायः चक्रवात से क्षतिग्रस्त होता रहता है।

कालपेनी सुदरता से परिपूर्ण है। कूमेल, वह घुमावदार खाड़ी है जहां पर्यटक सुविधाए स्थित हैं। यहां आप तैर सकते हैं, जलशैल पर पैदल चल सकत हैं, "स्नोर्कल" कर सकते हैं, या कायाक जैसे जल क्रीड़ा उपकरणों का उपयोग कर सकते हैं या नौकायन कर सकते हैं। पर्यटक निजी क्षेत्र के आवासों में रह सकते हैं।

(17) कावारात्ती (Kavaratti)

यह प्रशासनिक राजधानी कोचिन से 404 किलोमीटर दूर स्थित है। यह सर्वाधिक विकसित द्वीपों में से एक है, जिसका सर्वाधिक प्रतिशत द्वीप के बाहर से आकर बसे वाशिन्दों का है। उत्तरी कोने पर एक छोटी झील और पश्चिमी ओर पर एक बड़ा समुद्रताल है। यह समुद्रताल छिछला है और तैरने के लिए एक सुंदर तरण ताल प्रदान करता है। द्वीप के वाशिंदे एक छोट से क्षेत्र के अंदर ही सीमित हैं। यहाँ प्रशासन का प्रतिष्ठान होने के कारण, सभी सरकारी कार्यालय और अधिकांश सरकारी भवन इसी द्वीप में स्थित हैं। इस द्वीप में 52 मस्जिदें हैं, जिनमे

से उजरा मस्जिद सर्वाधिक सुंदर है। उजरा मस्जिद के अंदर एक कुंआ है जिसके पानी में, मान्यता है कि, रोगनाशक शक्ति है। उजरा मस्जिद लकड़ी पर की गई बारीक नककाशी के लिए प्रसिद्ध हैं। ''जुमाथ'' मस्जिद जिसका भवन बहुत बड़ा है और जिसमें जिले की सभी मस्जिदों में से सबसे बड़ा जलाशय है, उसी द्वीप पर स्थित है। कारावत्ती में एक मछलीघर है जहां कई रंगबिरंगी मछलियों की प्रजातियाँ हैं। यहाँ एक ऐसी नौका है जिसका तलावा काँच का है जिससे समुदी जीवन स्पष्टतः देखा जा सकता है, और कई प्रबाल गठन हैं जो समुद्रतालों और उनके अंदर द्वीपों का परिदृष्य बनाते हैं। कायाकिंग, कैनोइंग और स्नोर्कलिंग जैसी कुछ जल क्रीड़ाएं पर्यटकों के लिए उपलब्ध हैं।

(18) किल्टन (Kiltan)

किल्टन, अमीनी से 51 किलोमीटर उत्तर-पूर्व में फारस की खाड़ी गुल्फ और श्रीलंका के अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्य मार्ग पर स्थित है। द्वीप के उत्तरी और दक्षिणी छोर पर ऐसे तट हैं जहां तेज तूफान आते रहते हैं। द्वीप उपजाऊ और जंगल घने हैं। यह द्वीप पारंपरिक लोक गीतों और लोक नृत्यों में बड़ा समृद्ध है।

(19) मिनिकॉय (Minicoy)

मिनिकॉय एक बहुत बड़ा द्वीप और लक्षद्वीप में सर्वाधिक दक्षिणी द्वीप है। इसमें एक बहुत बड़ा और गहरा समुद्रताल है। मिनिकॉय के दक्षिण में ''विरिंगिली'' नामक एक छोटा बस्ती-रहित द्वीप है जिसे ''छोटी चेचक द्वीप'' भी कहते है, क्योंकि शुरूआत के दिनों में यह ''छोटी-चेचक'' के रोगियों को अलग रखने के लिए उपयोग किया जाता था। कामकाजी उम्र के वाशिन्दों की एक बड़ी संख्या संपूर्ण विश्व में समुद्रगामी जलपोतों में नाविकों के रूप में रोजगार में हैं। मिनिकॉय अन्य द्वीपों से वेशभूषा, भोजन, भाषा के संबंध में और कई अन्य दृष्टिकोणों से, भिन्न है। पारंपरिक नृत्य, लावा, विभिन्न अवसरों पर किया जाता है। द्वीप का मुख्य लक्षण है इसके व्यवस्थित गांव-जिन्हें ''अथीरिस'' कहते हैं, जिनमें से प्रत्येक का मुखिया एक ''मूपन'' होता है। मिनिकॉय, जिले का एक

महत्वपूर्ण "ट्यूना" मछली मारे का केन्द्र है। इस द्वीप में एक दीपस्तंभ है जिसे अंग्रेजो ने 1885 में बनवाया था। निजि स्तर पर प्रबन्धित आवास भवन एकान्त तटों पर बने हैं और पर्यटकों के लिए उपलब्ध हैं।

(20) पिटी द्वीप (Piti Island)

"बर्डस् आइसलैण्ड" (पक्षी द्वीप) के नाम से भी विख्यात इस द्वीप के दक्षिणी छोर पर बलुआ तट समेत एक छोटी जलशैल है। इस द्वीप पर घास का तिनका भी नहीं उगता। यह छोटा द्वीप असंख्य पक्षियों का प्रजनन स्थल है। यहां घोसले नहीं पाए जाते और न ही कोई ऐसी सामग्री जिससे घोसले बन सकें। किंतु पक्षी अपने अण्डे नंगी बालू पर ही देते हैं। इस पक्षी विहार की यात्रा एक ऐसा अनुभव होगी जिसे भूला नहीं जा सकता।

(21) चेरियाकारा और वेलिया कारा

यह दोनों ऐसे द्वीप जहां कोई नहीं रहता, एक समुद्रतल से घिरे हैं। चूंकि इस समुद्रतल में मछली मारना बहुत अच्छा और आसान है, कावारात्ती के द्वीपवासी यहाँ आते रहते हैं, और कभी-कभी आगत्ती और अमीनी के द्वीपवासी भी आते हैं।

अध्याय-12

विरासत पर्यटन
(Heritage Tourism)

विरासत (heritage) शब्द का अर्थ है एक दाय (भाग) अथवा वैधानिक रूप से वे मूल्यवान वस्तुएं जिन्हें एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी को हस्तांतरित किया जाता है। पर्यटन में इस 'विरासत' शब्द के अर्थ के अन्तर्गत न केवल वे भू-दृष्य, प्राकृतिक इतिहास, भवन, शिल्पतथ्य, सांस्कृतिक परंपराएं इत्यादि जो या तो शाब्दिक रूप से अथवा लाक्षणिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी को हस्तांतरित कर दी गईं हैं बल्कि इनमें से वे भी जिन्हें सांस्कृतिक विरासत जैसे पर्यटन उत्पादों के रूप में दर्शाया जा सके, विशेषकर, वास्तुकला, ऐतिहासिक स्थल और कलात्मक स्मारक आते हैं। हिंदू, बौद्ध, जैन और इस्लामी स्मांरकों की कला और वास्तुकला को विश्वव्यापी रूप से सराहा गया। स्मरणातीत काल से ही जीवन के सभी भागों से लोग वास्तुकला की समृद्ध विविधता को देखने के लिए भारत आते रहे हैं। 'भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण' (ASI) ही केन्द्र की एक ऐसी राष्ट्रीय संस्था है जो स्मारकों की देख भाल करती है, जहां तक खराब हो रहे स्मारकों के संरक्षण और क्षयग्रस्त शिल्पकृतियों का प्रश्न है। कुछ वर्ष पहले 'इंडियन नैशनल ट्रस्ट फार आर्ट एण्ड कल्चरल हेरिटेज' (Intach) नामक एक गैर-सरकारी संस्था का गठन हुआ था और इसने उपेक्षित ऐतिहासिक भवनों के संरक्षण पर कार्य करना आरंभ कर दिया है। किन्तु यात्रियों की बढ़ती संख्या, आसपास के उद्योगों, स्थानीय लोगों और विरासती भवनों पर भौतिक और सांस्कृतिक खतरों पर प्रभावकारी अंकुश नहीं लगाया जा सका है। यह एक गंभीर दुर्घटना की ओर ले जा सकता है और मूल्यवान सांस्कृतिक पर्यटन उत्पाद की हानि हो सकती है।

यूनेस्को (UNESCO) की भूमिका और भारत में विरासती परिरक्षण

भारत, अति मूल्यवान प्राचीन सांसकृतिक और प्राकृतिक खजाने का एक महान भण्डार है। यह वास्तव में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के क्षेत्र में 1972 का एक स्मरणीय दिन था जब यूनेस्कों के आम सम्मेलन ने अभिभूतकारक उत्साह के साथ एक प्रस्ताव स्वीकृत कर विश्व संस्कृति और प्राकृतिक विरासत के संरक्षण से संबंधित एक प्रथा का शुभारंभ किया। इस मंच के मुख्य उद्देश्य हैं :

(i) सांस्कृतिक और प्राकृतिक दोनों ही पक्षों में विश्व विरासत को परिभाषित करना।

(ii) सदस्य राष्ट्रों के उन स्थलों और स्मारकों का सूचिकरण जो अत्याधिक रुचि और सार्वभौमिक मूल्य की है, जिनका संरक्षण सब प्राणीजाति की चिंता का विषय है।

(iii) आगामी पीढ़ियों के लिए इन सार्वभौमिक खजानों को संभाल कर रखने हेतु संरक्षण के लिए सभी राष्ट्रों और लोगों के मध्य सहयोग प्रवर्तित करने में सहयोग करना।

विश्व की विरासत के अभिलिखित स्थलों की सूची अब 288 की हो चुकी है जिसमें सांस्कृतिक और प्राकृतिक आश्चर्य दोनों ही ससिम्मलित हैं। यह एक स्थाई निधि है जिसकी भागीदार संपूर्ण मानवजाति है और जिसका संरक्षण संपूर्ण मानव जाति के लिए चिन्ता का विषय है। अक्तूबर 2001 तक 167 राष्ट्र इस मंच में सम्मिलित हो चुके हैं। भारत 1977 से ही विश्व विरासत (World Heritage) का एक क्रियाशील सदस्य राष्ट्र रहा है और अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ निकटता से सहयोग करता रहा है, जैसे 'इण्टरनैशनल काउंसिल आफ मानूमेंट्स एण्ड साइट्स' (ICOMOS), 'इंटरनैशनल यूनियन फार दि कंजर्वेशन ऑफ नेचर एण्ड नैचुरल रिसोर्सेज' (IUCN), और 'इंटरनैशनल सेंटर फार दि स्टडी ऑफ दि प्रिजर्वेशन एण्ड रिस्टोरेशन ऑफ कल्चरल प्रापर्टी (ICCROM) । भारत 1985 से विश्व विरासत समिति (World Heritage Committee) का चयनित सदस्य रहा है और नियमित रूप से विश्व विरासत के प्रवर्तन के लिए सहयोग करता रहा है।

इसने 17 सांस्कृतिक स्थलों और 5 प्राकृतिक स्थलों को अंकित कर लिया है। **सांस्कृतिक स्थल इस प्रकार हैं :** अजंता की गुफाएं (1983), एलोरा की गुफाएं (1983), आगरा का किला (1983), ताज महल (1983), सूर्य मन्दिर कोणार्क (1984), महाबलिपुरम समूह के स्मारक (1984), फतेहपुर सीकरी (1983), गोवा के चर्च तथा कान्वेन्ट (1986), खुजराहो का स्मारक समूह (1986), हाम्पी का स्मारक समूह (1986), पट्टड्कल में स्मारक समूह (1986), एलिफैंटा की गुफाएं (1987), तन्जबूर का वृहदेश्वर मन्दिर (1987), साँची के बौद्ध स्मारक (1989), हुमायूँ का मकबरा, दिल्ली (1993), कुतुबमीनार तथा इसके स्मारक, दिल्ली (1993) और दार्जिलिंग हिमालयन रेलवे (1999).

प्राकृतिक स्थल हैं : काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान (1983), मानस वन्यजीव अभयारण्य (1985), केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान (1985), सुन्दरबन राष्ट्रीय उद्यान (1987), और नन्दादेवी राष्ट्रीय उद्यान (1988),

यूनेस्कों की एक शाखा ICOMOS द्वारा प्रत्येक वर्ष की 18 अप्रैल को विश्व विरासत दिवस (World Heritage Day) घोषित कर दिया है।

सांस्कृतिक विभाग और भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण ने, इस विश्व विरासत दिवस को मनाने और विश्वविरासत स्मारकों के संरक्षण के संबंध में विभिन्न व्यवहारिक परिमाणों के संवर्धन के अतिरिक्त, प्रतिवर्ष 19 नवम्बर से विश्व विरासत सप्ताह (World Heritage week) मनाने का निर्णय किया। यह दिन पूर्व प्रधानमंत्री स्व० इंदिरा गाँधी का जन्म दिवस भी है, सांस्कृतिक और प्राकृतिक विरासत के बारे में जिनकी चिंता और प्रेम सर्वज्ञात है। इसका विशेष उद्‌देश्य है 'नैशनल केडेट कोर' और 'राष्ट्रीय सेवा योजना' (NSS/NCC) इकाइयों के माध्यम से देश के युवाओं को इस महान विरासत के संरक्षण और प्रवर्तन में सम्मिलित करना जिसके लिए हमारा राष्ट्र विश्व-विख्यात है।

डकार, सेलेगल, में नवम्बर 1993 में UNEP और UNESCO द्वारा आयोजित प्राकृतिक विश्वविरासत स्थलों के पर्यटन प्रबन्धन में एक अंतर्राष्ट्रीय कार्यशाला (Intemational Workshop on Managing Tourism in Natural World Heritage Sites) ने देश के विश्व विरासत के स्थलों के संरक्षण हेतु दस निर्देश

विकसित किए :

1. पर्यटन विकास में स्थल के पर्यावरणीय और सामाजिक - सांस्कृतिक मूल्यों का विचार और सम्मान होना चाहिए और इसे विश्व विरासत के विचार के अनुरूप होना चाहिए।

2. क्षेत्रीय संदर्भ और पर्यटन के घटक के विचार के अनुसार एक प्रबन्धन योजना स्थापित कर नियमित रूप से आधुनिक बनाई जानी चाहिए।

3. मनोरंजनकारी और वाणिज्यिक सुविधाओं और गतिविधियों पर संचयी प्रभावों समेत पर्यावरणीय मूल्यांकन, स्वीकृति प्रदान किए जाने से पहले करना चाहिए।

4. उपयुक्त और नवीनतम् सूचकों पर आधारित अनुश्रवण कार्यक्रम (Monitoring Programmes) होने चाहिए, और नियोजन एवं निर्णय प्रक्रिया में उनके परिणामों पर विचार किया जाना चाहिए।

5. स्थल और उसके आस पास की स्थानीय जनता को सम्मिलित किया जाना चाहिए ताकि उन्हें अपने विरासत पर गर्व हो और पर्यटन से लाभ प्राप्त हो।

6. स्थल के प्रवर्तन हेतु समन्वय सुनिश्चित करने के लिए पर्यटन विकास में विभिन्न साझीदारों का सहयोग मांगा जाना चाहिए।

7. सभी स्थल कार्मिक विश्व विरासत मूल्यों से अवगत और पर्यटक प्रबन्धन में भलीभांति प्रशिक्षित होने चाहिए।

8. संबद्ध जानकारी और शैक्षणिक कार्यक्रम यथास्थन होने चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि आगंतुक और स्थानीय लोग स्थल को समझें और उसका सम्मान करें।

9. प्रवेश शुल्क से उत्पन्न आय का एक बड़ा भाग सीधे स्थल के लिए, उसके सुधार एवं प्रबन्धन के लिए, आवंटित किया जाना चाहिए।

10. प्रत्येक स्थल, सभी उपयुक्त माध्यमों से, विश्व विरासत के विचार के प्रवर्तन में सहभागी हों।

भारत के विश्व विरासती स्थल

भारत की प्राचीन काल की समृद्ध वास्तुशिल्पीय विरासत रही हैं। समयसीमा रहित स्मारक, भव्य मंदिर, और आकर्षक स्थल.... भारत ने यात्रियों को लुभाना कभी बन्द नहीं किया।

इसके गौरवमय स्मारकों और प्राकृतिक आश्चर्यों में से 16 सांस्कृतिक और 5 प्राकृतिक स्थल पहले से ही यूनेस्को के आम सम्मेलन द्वारा विश्व विरासती स्थल घोषित किए जा चुके हैं। ये स्थल अपने अत्याधिक रुचि और सार्वभौमिक मूल्यों के लिए जाने जाते हैं। जिनकी सुरक्षा सभी प्राणी जाति के लिए चिंता का विषय है।

अजंता की गुफाएं (गौरव, उत्कृष्टता और संस्कृति की छाप)

यह 19 वीं शताब्दी की बात है जब अंग्रेज अफसरों के एक दल ने महाराष्ट्र में वाघोरा नदी के तट पर अजंता की गुफाओं की खोज की जो दीर्घ समय से मलबे के तले बहुत अर्से से दबी पड़ी थीं।

ये 30 गुफाएं बौद्ध भिक्षुओं को एकान्त प्रदान करने के लिए बनवाई गई थीं, जो चैत्यों और विहारों में रहते, पढ़ाते और धार्मिक अनुष्ठान करते थे, तथा जो शिक्षा और सांस्कृतिक आन्दोलन के प्रतिष्ठान थे।

अजन्ता, आकृतियों का एक समृद्ध चित्रपट प्रदान करता है जो प्राचीन भारत के शाहीपन, संस्कृति और राजमर्रा के जीवन की गाथा कहते हैं। अजंता की कई गुफाओं में पट्टिकाएं हैं जो जातक से कहानियां प्रदर्शित करती हैं। बुद्ध से लेकर परियों और राजकुमारियों और विभिन्न अन्य चरित्रों की बहुसंख्यक प्रतिमाएं, अजंता की नक्काशी एक अद्वितीय दृष्य आकर्षण हैं।

ये गुफाएं या तो चैत्य (प्रार्थना सभागार) हैं, या विहार (भिक्षुओं का निवास स्थल)।

गुफा 19 में एक आंगन है जिसमें एक स्तंभयुक्त मण्डप के रूप में गुफा के लिए प्रवेशद्वार है। अग्रभाग में भगवान बुद्ध की बहुसंख्यक शिल्पकृतियां हैं।

गुफा 26 में उत्कृष्ट नक्काशी है जिसका सर्वाधिक प्रभावशाली दीवाल के

साथ लगी हुई सात मीटर लम्बी बुद्ध की शिल्पकृति है। एक अन्य भव्य आश्चर्य है 'मारविजय' का दृष्य, बुद्ध के जीवन की एक घटना जो 'मारा' (दुष्ट) पर उनकी विजय दर्शाता है।

पर्यटक सूचना

यह स्थान (सोमवार छोड़कर) प्रातः 9:00 बजे से लेकर सायं 5:00 बजे तक खुला रहता है। बारह वर्ष से ऊपर की उम्र के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपये प्रति व्यक्ति है तथा शुक्रवार को प्रवेश निशुल्क है।

पहुंच

महाराष्ट्र में औरंगाबाद शहर से 100 किलोमीटर पर स्थित है। औरंगाबाद तक हवाई जहाज या रेलगाड़ी से पहुंचा जा सकता है, मनमाड से सड़क मार्ग द्वारा भी पहुंचा जा सकता है। यदि आप थोड़ा अधिक साहसी हैं तो आप मुंबई से नासिक होते हुए औरंगाबाद, सड़क मार्ग से भी जा सकते हैं।

कहां ठहरें

प्रत्येक वर्ग के पर्यटक के लिए सुविधाजनक होटल मुंबई, पुणे, अहमदनगर, जलगांव, शिरडी, नासिक, धुले, औरंगाबाद, इत्यादि में उपलब्ध हैं। औरंगाबाद रेलवे स्टेशन के निकट 'महाराष्ट्र पर्यटन विकास निगम' का 'हालिडे रिसार्ट', गुफाओं के निकट 'अजंता ट्रैवेलर्स लाज' और (अजंता से लगभग चार किलोमीटर दूर) फर्दपुर में 'महाराष्ट्र पर्यटन विकास निगम' का 'हॉलिडे रिसार्ट' स्वच्छ एवं सुविधाजनक आवास प्रदान करते हैं।

एलोरा की गुफाएं

एलोरा, बारीक आंतरिक सज्जा और सज्जाकारी अग्रभागों वाली 34 गुफाओं के गुफा मंदिरों का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। सन् 350 ईस्वी और 700 ईस्वी की अवधि में तराशी गई नक्काशी से युक्त पत्थरों के बने ये मंदिर और मठ तीन धर्मों – हिन्दू, बौद्ध और जैन – का प्रतिनिधित्व करते हैं। गुफा 10, 'विश्वकर्मा', के नाम से प्रसिद्ध एक 'चैत्य-हॉल' (प्रार्थना सभागार) जिसमें एक स्तूप में बैठे हुए बुद्ध हैं। रामेश्वर गुफा में नदी की देवियों की आकृतियां प्रवेश द्वार पर बनी हैं। 'दूमर लेना गुफा' भगवान शिव को समर्पित है। विहारों (भिक्षुओं के आवास) में से

गुफा 5 सबसे बड़ी है। सर्वाधिक प्रभावशाली विहार हैं एक तीन मंजिली गुफा जिसे 'तीन-तला' कहते हैं।

गुफा 16 में कैलाश मंदिर स्वयं में एक उत्कृष्ट कलाकृति है। यह मंदिर, जिसे पूरा होने में लगभग 100 वर्ष लग गए, पुराणों के विषयों और घटनाओं से सज्जित हैं। सूक्ष्म नक्काशीदार कलाकृतियों से युक्त, यह गुफा मंदिर, स्थल पर अन्य 30 मंदिरों में से सर्वाधिक असाधारण है। यद्यपि यह एक ही चट्टान को काट कर बनाया गया है, तथापि यह मंदिर दक्षिण के मंदिर जैसा एक स्वतंत्र रूप से खड़ा ढांचा दिखता है।

मंदिर की वाह्य सज्जा समृद्ध रूप से नक्काशीकृत आलों, पलस्तर, खिड़कियों से युक्त और देवताओं, मिथुन (उत्तेजक मुद्राओं में पुरुष और महिला आकृति) और अन्य आकृतियों से सजी है।

प्रवेश द्वार के बाएं हाथ पर अधिकांश देवता शिवपंथी (भगवान शिव के उपासक) हैं, जबकि दाहिने हाथ पर देवता विष्णुपंथी (भगवान विष्णु के उपासक) हैं।

संपूर्ण मंदिर परिसर में 'हॉल' के पीछे एक मंदिर में शिवलिंग स्थापित है जिसका शिखर द्रविण शैली का है, 16 स्तंभों द्वारा समर्थित एक सपाट छत वाला मण्डप, नन्दी के लिए एक पृथक ड्योढ़ी जिसमें प्रवेश एक नीची गोपुर से होता है। आंगन में दो ध्वजास्तंभ है। भगवान शिव का निवास स्थान, कैलाश पर्वत उठाने का भरपूर प्रयास करते रावण की विशाल प्रतिमा, भारतीय कला का सूचक है।

सब नक्काशीदार शिल्पकला एक से अधिक स्तरों पर की गई है। निचली मंजिल में कई बड़े मंदिर हैं जबकि पीछे तीनों ओर की दीर्घा में विशाल शिल्पकलाकृत पट्टिकाएं हैं। पश्चिम की ओर एक दो-मंजिला प्रवेशद्वार, मुख्य मंदिर और नंदी मण्डप के लिए रास्ता प्रदान करता है, दोनों एक ही स्तर पर, और लगभग सात मीटर ऊँचा है। मुख्य मंदिर और नन्दी मन्दिर की निचली मंजिलें ठोस हैं और उनमें प्रवेश नहीं पाया जा सकता। जीवित चट्टान को काट कर बनाए गए पत्थर के पुल नंदी मण्डप को मंदिर की प्रवेश ड्योढ़ी से जोड़ते हैं। मुख्य मंदिर की अधिरचना दक्षिणी शैली की है। निचली मंजिल में तराश कर बनाए गए लगभग सजीव आकार के हाथी हैं जो ऐसे दिखते हैं जैसे वे मंदिर संभाले हुए हों।

जैन गुफाएं (30 से 34) अतिविशाल, समानुपातिक तथा सज्जित हैं और एलोरा में गतिविधि के अंतिम चरण को चिन्हित करते हैं।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक (सोमवार छोड़कर) प्रतिदिन खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश मुफ्त है।

पहुंचने का सबसे अच्छा समय

संपूर्ण वर्ष भर। यद्यपि अजंता और एलोरा पहुंचने का सबसे अच्छा समयकाल है अक्टूबर से लेकर मार्च तक।

पहुंच

यह स्थल औरंगाबाद से 30 किलोमीटर पर स्थित है, जो मुंबई और दिल्ली से मनमाड होते हुए रेलमार्ग द्वारा जुड़ा है। औरंगाबाद सड़क मार्ग द्वारा भी मुंबई, पुणे, नासिक और शिरडी से पहुंचा जा सकता है।

कहां ठहरें

सभी वर्ग के पर्यटकों के लिए सुविधाजनक होटल मुंबई, पुणे, अहमदनगर, जलगांव, शिरडी, नासिक, धुले, औरंगाबाद इत्यादि में उपलब्ध हैं।

औरंगाबाद रेलवे स्टेशन के निकट 'महाराष्ट्र पर्यटन विकास निगम' का 'हॉलिडे रिसॉर्ट', गुफाओं के निकट 'अजंता ट्रैवेलर्स लाज' और (अजंता से लगभग चार किलोमीटर दूर) फर्दपुर में 'महाराष्ट्र पर्यटन विकास निगम' का 'हॉलिडे रिसार्ट', स्वच्छ एवं सुविधाजनक आवास प्रदान करते हैं।

आगरा का किला

यमुना नदी के तट पर, तीन किलोमीटर के दायरे में फैला, अर्धचन्द्राकार आगरे का किला बना है। अकबर द्वारा 1565 ईस्वी में परिकल्पित और निर्मित,

यह किला एक 70 फुट ऊँची दीवार से घिरा है। इसमें सुंदर मोती मस्जिद और अनेक अन्य महल हैं, जिनमें जहांगीर महल, दीवान-ए-खास, दीवान-ए-आम और मोती मस्जिद सम्मिलित हैं।

किले के चार द्वार हैं और यह लाल बलुआ पत्थर की दोहरी रोक से घिरी एक दीवाल से घिरा है। कई भवन किले के अंदर ही बने थे जिनमें से सिर्फ कुछ अब बचे हैं। इनमें से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जहांगीर महल जो अकबर ने अपनी पत्नी जोधाबाई के लिए बनवाया था।

महल में एक प्रभावशाली प्रवेशद्वार से पहुंचा जा सकता है और इसके अंदरूनी आंगन में सुंदर हॉल, पत्थरों पर उदारता से की गई नक्काशी, बारीकी से तराश कर की गई नक्काशी युक्त भारी बन्धनियां, पाए और स्तंभ हैं। पूर्वी हाल की अधिकांश पट्टियाँ, सुनहरे और नीले रंगों की फारसी शैली की गचकारी चित्रकला से सजी हुई थीं।

यह माना जाता है कि एक शताब्दी बाद, शाहजहां के अधिकांश भवन तुड़वा दिए गए और उनके स्थान पर बारीक जड़ाऊ कलाकृतियों से आच्छादित सफेद संगमरमर के मण्डप बनवा दिए। इनमें से सर्वाधिक विशिष्ट हैं : दीवान-ए-खास, मौसम बुर्ज और शाहाबुर्ज। तटीय नगरभाग से दूर उन्होंने मोती मस्जिद और दीवान-ए-आम बनवाया।

पर्यटक सूचना

यह सप्ताह के सातों दिन सूर्योदय से सूर्यास्त तक खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपए प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश मुफ्त है।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

नवम्बर से फरवरी।

पहुंच

यह स्थल आगरा दिल्ली से वायुमार्ग द्वारा जुड़ा है। वहां पहुंचने के लिए 'ताज-एक्सप्रेस' या 'शताब्दी' नामक ट्रेने भी ले सकते हैं। आप सड़क मार्ग से भी जा सकते हैं या बस भी ले सकते हैं (दिल्ली से 204 किलोमीटर)

कहां ठहरे

आगरा में होटलों और अतिथि गृहों की एक बड़ी श्रृंखला है। 'उ०प्र०रा०प०वि०नि० पर्यटक परिसर', ताज महल के निकट 'ताज खेमा' तंबुओं में और सुखकारी कमरों में आवास प्रदान करते हैं। वहां एक 'उ०प्र०रा०प०वि०नि० पर्यटक बंगला' भी है।

देखने के स्थान

इतमाद-उद-दौला का मकबरा, चीनी-का-रौजा, रामबाग, फतेहपुर सीकरी।

. ताजमहल

आगरा ताजमहल का शहर है। यह उस महानतम प्रेम कथा का लोकोत्तर अनुभव है जैसी पहले कभी नहीं कही गई होगी। आज के भारत का सर्वाधिक मोहक और सुंदर श्रेष्ठकृति, यह सटीक रूप से सम्मति (Symmetrical) भवन यमुना नदी के तट पर बगीचों के बीच स्थित है।

ताज, मुगल बादशाह शाहजहां की सहचरी बेगम मुमताज महल के अवशेषों को प्रतिष्ठित करने के लिए बनवाया गया। फारसी वास्तुशिल्पी उस्ताद ईसा द्वारा निर्मित ताज में पवित्र कुरान खुदी है, जिसके द्वार पर 22 छोटे छोटे गुंबज हैं।

अपनी वास्तुकलात्मक भव्यता और सुंदरता के लिए विख्यात, ताज, मनुष्य की सर्वाधिक गौरवमय रचनाओं में से एक है। ताज, एक 313 वर्ग फीट के संगमरमर के बने चबूतरे पर निर्मित है, जो एक बलुआ पत्थर के चबूतरे पर खड़ा है। यह संपूर्ण भाग एक ऊँची सीमावर्ती दीवाल से घिरा है जिसके कोनों पर चौड़े अष्टभुजीय मण्डप हैं।

स्मारक का सबसे सुंदर गुंबज 60 फीट के व्यास का और भवन से 80 फीट ऊँचा है। 'पिएट्र ड्यूरा' (Pietra Dura) के नाम से ज्ञात एक प्रक्रिया में शानदार कलाकारी से संगमरमर में सुंदर प्रारूपों में अर्ध-बहुमूल्य पत्थर जड़े हैं। गुंबज के अंतर्गत महारानी का जवाहरातों से जड़ा स्मारक है।

अपनी सभी कालजयी सुंदरता में ताज, आज भी कवियों, चित्रकारों, लेखकों और छायाचित्रकारों की प्रेरणा है। गुंबज सफेद संगमरमर का बना है, किंतु

मकबरा नदी पार के मैदानों के अनुसार निश्चित किया गया है, और यही वह पृष्ठभाग है जो इसके रंगों का जादू चलाते हैं, अर्थात उनके प्रतिबिम्बन से ताज का दृष्य बदल जाता है।

ताज इतना परिपूर्ण है, तथा इसकी कलाकारी इतनी उत्कृष्ट है, कि इसे महान लोगों द्वारा परिकल्पित और जौहरियों द्वारा परिष्कृत बताया गया है।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से लेकर सायं 5 बजे तक खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपए प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश निःशुल्क है।

देखने का सर्वोत्तम समय

नवम्बर से फरवरी।

फतेहपुर सीकरी

फतेहपुर सीकरी 12 वर्ष तक अकबर की राजधानी रही। स्वयं के लिए शुभ मानते हुए अकबर ने सीकरी को अपनी सरकार का अधिष्ठान चुना। उसने वास्तुशिल्प और कला दोनों ही के साथ प्रयोग किए और उसने अपने आदर्शों और दर्शन की अभिव्यक्त करता एक शहर बनवाया।

आज फतेहपुर सीकरी एक उजाड़ और वेताल नगरी है। किंतु आंतरिक नगर दुर्ग बेदाग संरक्षित हैं।

इस क्षेत्र के अंतर्गत सर्वोत्कृष्ट स्मारक हैं : दीवान-ए-आम, दीवान-ए-खास, पंच महल, बुलंद दरवाजा और संत शेख सलीम चिश्ती का मकबरा और जामा मस्जिद (भारत की सबसे बड़ी मस्जिदों में से एक)।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक सप्ताह के सभी दिन खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक की आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपये प्रति व्यक्ति। शुक्रवार को प्रवेश मुफ्त।

देखने का सर्वोत्तम समय

नवम्बर से फरवरी तक।

मामल्लपुरम समूह के स्मारक

ढांचाकृत मंदिर वास्तुशिल्प का शुभारंभ

चेन्नई से 58 किलोमीटर दक्षिण में स्थित, पल्लव राजाओं द्वारा स्थापित विहारों (Sanctuaries) का यह समूह, 7 वीं और 8 वीं शताब्दी में कोरोमण्डल तट के साथ-साथ चट्टानों को काट कर बनाया गया, जो अपने रथों (रथों के रूप में मंदिर), मण्डपों (गुफा विहारों) और विशाल मुक्त-वायु-भूआकृतियों के लिए विख्यात हैं।

प्रसिद्ध तट मंदिर, दक्षिण भारत में सबसे पुराना, अपने मार्गयुक्त अग्रप्रांगणों समेत समुद्र तट पर खड़ा है।

एक अन्य अचंभा है अर्जुन का प्रायश्चित, जो कि विश्व की सर्वाधिक बड़ी नक्काशी है। इस 27 मीटर लम्बी और 8 मीटर ऊँची विशाल पत्थर की पट्टिका का नाम अर्जुन के नाम पर पड़ा, जो भारतीय महाग्रंथ 'महाभारत' के नायक थे।

'गंगा का अवतरण' जो नक्काशी का एक अन्य प्रतिपादन है, पत्थर में एक वैभवशाली संरचना है। दैवीय गणों की असंख्य सज्जाकारी आकृतियाँ दैवीय ऐनक पहने दर्शाई गईं हैं। अन्य भित्तिचित्रों में पंचतंत्र की कथाओं की पुनर्रचनाएं हैं।

मण्डपम्, कला के महान नमूने हैं। एक पर्वत के किनारे से ठोस चट्टान को खोद कर बनाया गया, प्रत्येक मण्डपम् विस्तार से समृद्ध सम्पूर्ण नक्काशी दर्शाता है।

कृष्ण मण्डपम में एक प्रशांत ग्राम्य दृष्य, वर्षा के देवता, इंद्र के क्रोध से अपने कुटुम्बियों को बचाने के लिए भगवान कृष्ण को गोवर्धन पर्वत उठाते दिखाता है। वाराह गुफा, भगवान विष्णु के दो अवतारों को बाराह और वामन के रूप में

दर्शाती है। महिशासुरमर्दिनी गुफा जो भगवती दुर्गा को एक राक्षस का विनाश करते दिखाती हैं और भगवान विष्णु को अपनी अंतरिक्षीय निद्रा में, विशेषकर उल्लेखनीय हैं। वास्तुशिल्पीय उत्कृष्टता का एक अन्य अचंभा है पांच रथ, हिंदू देवताओं को समर्पित एकाश्मिक (monolithic) मंदिर। उन्हें पांच पाण्डव रथों के नाम से भी जाना जाता है।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से सूर्यास्त तक सप्ताह के सातों दिन खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक की आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपये प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश निःशुल्क है।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

दिसंबर और जनवरी।

पहुंच

निकटतम हवाई अड्डा चेन्नई (49 किलोमीटर) है। चेन्नई, कांचीपुरम और अर्कोणम रेल मार्ग से जुड़े हैं। चेन्नई, पॉण्डिचेरी और बंगलौर सड़क मार्ग से जुड़े हैं। राज्य परिवहन/पर्यटन की बसों या टैक्सियों द्वारा सड़क मार्ग से भी पहुंचा जा सकता है।

कहां ठहरें

टेंपल बे अशोक बीच रिसॉर्ट, होटल तमिलनाडु, सिल्वर सैंड्स, आइडियल बीच रिसॉर्ट इत्यादि।

कोणार्क का सूर्य मंदिर (भगवान सूर्य का रथ)

'ब्लैक पगोडा' के नाम से भी विख्यात कोणार्क का सूर्य मंदिर, प्राचीन उड़ीसा की मंदिर वास्तुकला का सर्वोच्च गौरव चिन्ह है।

पूर्वी गंगा शासक नरसिंहदेव प्रथम के शासनकाल में सन् 1250 ईस्वी में निर्मित, इसके इतिहास में शताब्दियों के मिथक और दन्तकथाएं छिपी हैं।

परिकल्पना (design) है : यह सात उत्कृष्ट रूप से नक्काशीकृत सज्जित घोड़ों द्वारा खींचा जा रहा सूर्य देवता का दैवीय रथ है जो दोनो तरफ बारह-बारह पहियों पर खड़ा है। विशाल एकाश्मक पहिया समय, एकता, पूर्णता, न्याय, और गति का प्रतिनिधित्व करता है और प्रत्येक पहिया पक्ष (fortnight) के लिए और प्रत्येक घोड़ा सप्ताह के प्रत्येक दिन के लिए दर्शाया गया है।

मंदिर की दीवालों में फूल-पत्तियों और ज्यामितीय सज्जा के मध्य दैवीय अर्ध-दैवीय, मानव और पशु आकृतियों की उत्कृष्ट नक्काशी है।

यद्यपि मुख्य दृष्य अब खण्डहरों में हैं, 39 मीटर ऊँचा सभागार, नृत्य 'हाल' और खण्डहरों में पड़ा छाया देवी का मंदिर अब भी है। दो घोड़े और दो एकाश्मक हाथी शिल्पकला की ऊर्जात्मकता दर्शाते हैं।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से सूर्यास्त तक सप्ताह के सभी दिन खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपये प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश निःशुल्क है।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

नवम्बर से फरवरी।

पहुंच

यह सभी ऋतुओं में मोटर गमन योग्य सड़कों द्वारा पुरी, भुवनेश्वर और राज्य के अन्य भागों से जुड़ा है। यह भुवनेश्वर से 65 किलोमीटर, पुरी से 35 किलोमीटर और पिपली होते हुए 85 किलोमीटर दूर है। कोणार्क से निकटतम रेलवे स्टेशन हैं भुवनेश्वर और पुरी। निकटतम् हवाई अड्डा है भुवनेश्वर।

कहां ठहरें

कोणार्क में पंथनिवास, ट्रैवेलर्स लॉज, निरीक्षण बंगला, यात्री निवास में सरकार द्वारा स्वीकृत आवास उपलब्ध हैं।

अन्य दर्शनीय स्थल

कुरुमा, चौरासी, रामचंदी, अष्ट्रांग, काकटपुर, पिपली।

खजुराहो समूह के स्मारक

मनोवेग के स्तंभ

मध्य प्रदेश में खजुराहों के मंदिर विश्व के लिए भारत की अनोखी देनों में से एक है। यह 950 ईस्वी से 1050 ईसवी के मध्य खजुराहों गांव के निकट उत्तरी मध्य भारत के चंदेल राजाओं के संरक्षण में बनवाए गए, जिन्होंने 1000 वर्षों तक राज्य किया।

खजुराहों के यह 'ग्रेनाइट' और बलुआ पत्थर के बने 85 मंदिर शिल्पकला और वास्तुकला के उत्कृष्ट सम्मिलन के लिए प्रसिद्ध हैं। इनमें समस्तर शिल्पकृतियों के पट्टे हैं जो मंदिर की अधिरचना की लम्ब रेखा के साथ सम्मिलित और संतुलित होते हैं।

चौंसठ योगिनी, ब्रह्मा और महादेव मंदिरों के अतिरिक्त, जो ग्रेनाइट के बने हैं, अन्य सभी मंदिर सूक्ष्म दानेदार बलुआ पत्थर के बने हैं और रंग में पाण्ड गुलाबी या फीके पीले हैं।

यह ऊँचे और ठोस चबूतरे पर निर्मित हैं।

यशोवर्मन (954 ई०) द्वारा निर्मित विष्णु मंदिर, अब लक्ष्मण मंदिर के नाम से प्रसिद्ध, यंदेलों के गौरव की घोषणा करता है। विश्वनाथ, पार्श्वनाथ और वैद्यनाथ मंदिर, राजा घंग के समय के हैं जो यशोवर्मन के उत्तराधिकारी थे।

खजुराहो के शाही मंदिरों के पश्चिमी समूहों के मध्य जगदंबी और चित्रगुप्त मंदिर उल्लेखनीय हैं।

अविनाशी कण्दारिया महादेव मंदिर खजुराहो के मंदिरों में सबसे बड़ा और सर्वाधिक भव्य है, जिसके बारे में मान्यता है कि इसे राजा गण्डा (1017 से 1029 ई०) ने बनवाया।

यह मंदिर अपनी ऊंची छतों (जगति) और व्यवहारिक रूप से प्रभावकारी योजनाओं के लिए प्रसिद्ध हैं। शिल्पकलात्मक अलंकरणों में परिवार, पार्श्व, अवर्ण देवता, दिकपाल, अप्सराएं और सुरा-सुंदरियाँ अपनी अपार सुंदरता के कोमल, युवा महिला रूपों से सम्मिलित हैं, जो आकर्षण और लावण्य विखेरते हैं।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से सूर्यास्त तक सप्ताह के सातों दिन खुले रहते हैं। बारह वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपए प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश निशुल्क है।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

अक्टूबर से अप्रैल तक।

पहुंच

दिल्ली, आगरा और वाराणसी से वायुमार्ग द्वारा जुड़ा है। निकटतम रेवले स्टेशन : हरपालपुर, महोबा, झांसी सड़क मार्ग से सतना, हरपालपुर, झांसी (175 किलोमीटर) और ग्वालियर से जुड़ा है।

कहां ठहरें

होटल चंदेला, जास ओबेरॉय, हालिडे इन खजुराहो क्लार्क्स बुंदेला, होटल खजुराहो अशोक। मध्य प्रदेश राज्य पर्यटन विकास निगम, होटल झंकार, होटल पायल, होटल राहिल, टूरिस्ट विलेज और टूरिस्ट बंगले चलाता है।

अन्य दर्शनीय स्थल

राजगढ़ पैलेस, धुबेला संग्रहालय (65 किलोमीटर), पाण्डल जलप्रपात (34 किलोमीर), रानेह जलप्रपात (19 किलोमीटर), केन नैचुरल ट्रेल (22 किलोमीटर), बेनी सागर झील (11 किलोमीटर), रंगुअन झील (25 किलोमीटर), गंगऊ बांध (34 किलोमीटर), पन्ना राष्ट्रीय उद्यान (25 किलोमीटर), पन्ना (45 किलोमीटर)।

हाम्पी समूह के स्मारक

(Hampi Group of Monuments)

मध्यकालीन हिन्दू साम्राज्यों का गौरव

बंगलौर से 353 किलोमीटर दूर हाम्पी गांव के निकट विजयनगर शहर के खण्डहर दक्षिण भारत के सर्वाधिक मंत्रमुग्ध कर देने वाले स्थलों में से एक हैं।

हाम्पी में बहुत से आश्चर्य छुपे हुए हैं। सर्वाधिक प्रसिद्ध है राजा की तुला जिसमें राजा को सोने ओर चांदी के सिक्कों से तौला जाता था जो बाद में गरीबों में बांट दिए जाते थे।

महारानी का स्नानागार भी देखने लायक स्थान है जिसमें मेहराबदार गलियारे, उभरे हुए छज्जे और कमल के फूल के आकार का फव्वारा, दो मंजिला कमल महल, विशाल हाथी शाला, अपने संगीतमय स्तंभों और पत्थर के रथ वाला विट्ठल मंदिर, विरूपक्ष मंदिर, उग्र नरसिंह, 6.7 मीटर ऊँचा एकाश्मक पत्थर, पुष्करणी तालाब, महानवमी दिब्बा, इत्यादि हैं।

इस शहर के मंदिर अपने बड़े आयामों, गुलाबी सज्जा, स्पष्ट और कोमल नक्काशी, शाही स्तंभों, भव्य मण्डपों, प्रतिमा विज्ञान और रामायण और महाभारत के विषयों समेत पारंपरिक चित्रणों के लिए उल्लेखनीय हैं।

पंपापति मंदिर हाम्पी के सबसे बड़े मंदिरों में से एक है। विट्ठल मंदिर, विजयनगर शैली का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

लक्ष्मी, नरसिंह और गणेश की कुछ एकाश्मक प्रतिमाएं भी यहां उपस्थित हैं जो अपनी विशालता और लावण्य के लिए उल्लसेखनीय हैं। आसपास के अन्य मंदिर हैं कृष्ण मंदिर, पट्टाभिराम मंदिर, हजरा रामचंद्र, चंद्रशेखर मंदिर और जैन मंदिर।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से सूर्यास्त तक सप्ताह के सातों दिन खुला रहता है। बारह वर्ष की आयु से अधिक आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपये प्रति व्यक्ति शाही घेरे और विट्ठल मंदिर के लिए। शुक्रवार को प्रवेश शुल्क नहीं लगता।

पहुंच

रेल द्वारा निकटतम रेलवे स्टेशन है होसपेट, जहां से हैंपी के लिए सड़क मार्ग से 12 किलोमीटर की यात्रा करनी होगी। सड़क द्वारा : बंगलौर से होसपेट के लिए नियमित बस सेवा उपलब्ध है। वायुमार्ग द्वारा : निकटतम हवाई अड्डा है बेल्लारी (974 किमी०)। अन्य सुविधाजनक हवाई अड्डे हैं बेलगांव (190 कि०मी०) और बंगलौर (353 कि०मी०)।

पहुंचने का सबसे अच्छा समय

सितंबर से फरवरी तक।

कहां ठहरें

हाम्पी पावर गेस्ट आउस, तुंगभद्र बांध-बैकुण्ठ अतिथि गृह, निरीक्षण बंगला, हास्पेट में - होटल मयूर विजयनगर (के०एस०टी०डी०सी०), कमलापुरा में- पी०डब्लू०डी० निरीक्षण बंगला।

पट्टडकल समूह के स्मारक

कर्नाटक में पट्टड़कल, चालुक्याई कला दर्शाता है जिस पर, चालुक्य वंश के अंतर्गत 7 वीं और 8 वीं शताब्दी में, उत्तरी और दक्षिणी भारत से वास्तुकलात्मक प्रारूपों का एक सम्मिश्रण हासिल किया गया।

नौ हिंदू मंदिरों और साथ ही एक जैन विहार की एक भव्य श्रंखला यहां उपस्थित है।

पट्टडकल में सबसे पुराना मंदिर है संघमेश्वर मंदिर जो विजयदत्त सत्याठा (697 ई० से 733 ई०) द्वारा बनवाया गया। यह एक साधारण किंतु विशाल ढांचा है।

वीरूपक्ष मंदिर, जो महारानी लोकमहादेवी द्वारा 740 ई० में दक्षिण के राजाओं पर अपने पति की विजय की यादगार के रूप में बनवाया गया, अपने आप में एक उत्कृष्ट कलाकृति है।

आरम्भिक चालुक्यों की शिल्पकला की विशेषता रही है लावण्य और कोमल विस्तृत कृतियां। वर्णकारी भूआकृतियां, महान हिंदू ग्रंथो-रामायण और

महाभारत, पवित्र ग्रंथों भागवत और पंचतंत्र की कथाओं और उपकथाओं को दर्शाती हैं।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से सूर्यास्त तक सप्ताह के सातों दिन खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक वय के लोगों के लिए शाही घेरे और विट्ठल मंदिर में प्रवेश शुल्क 5.00 रुपए प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश शुल्क नहीं लगता।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

अक्टूबर से फरवरी तक।

पहुंच

निकटतम रेवले स्टेशन बादामी, 29 कि०मी० दूर है। पट्टड़कल सड़क मार्ग द्वारा बादामी (29 कि०मी०) और औहोले (17 कि०मी०) से जुड़ा है।

कहां ठहरें

बादामी (29 कि०मी०) या बीजापुर (17 कि०मी०) में ठहरा जा सकता है।

एलिफेंटा की गुफाएं

अपोलो बंदर से 10 किमोमीटर उत्तर-पूर्व में भगवान शिव का गौरवमय आवास, एलिफेंटा का द्वीप है।

हिंदू गुफा संस्कृति का एक सार-संग्रह, एलिफेंटा में सात गुफाएं हैं जिनमें सर्वाधिक उल्लेखनीय है महेश-मूर्ति गुफा। इसका आकार बड़ा प्रभावशाली है जिसमें 27 वर्ग मीटर का मुख्य भाग प्रत्येक ओर से छः स्तंभों की पंक्तियों पर खड़ा है। मुख्य मंदिर में बड़े स्तंभों युक्त मण्डप और इसके पश्चिमी छोर पर एक मुक्त रूप से खड़ा चौकोर मंदिर है। गुफा में स्तंभ और उभार परिमाण में विशाल हैं।

विभिन्न आलोक में स्थित, शिवपंथी प्रतिमा विज्ञान के विभिन्न पहलुओं को दर्शाते बड़े उभार हैं। गुफा की परिधि के आसपास हिंदू धर्म की आकृतियों से युक्त शिल्पकलाकृत उपखण्ड हैं। वे भगवान शिव को अंधकासुरवध के रूप में अंधकार

के राक्षस का वध करते, कल्याणसुन्दर के रूप में एक सौम्य प्रेमी ईश्वर, अर्धनारीश्वर के रूप में शिव और शक्ति को पुरुष और महिला, नटराज के रूप में शिव को एक अंतरिक्षीय नर्तक और रावण अनुग्रह के रूप में शत्रुओं का नाश करने वाले के रूप में दर्शाते हैं।

पर्यटक सूचना

(सोमवार छोड़कर) प्रातः 9:00 बजे से सायं 5:00 बजे तक खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक की आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपये प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश शुल्क नहीं लगता है।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

नवम्बर से मार्च।

पहुंच

महाराष्ट्र में मुंबई के एक छोटे द्वीप पर स्थित, एलिफैंटा नियमित नौका सेवा द्वारा पहुंचा जा सकता है जो संपूर्ण वर्ष (सिर्फ वर्षा ऋतु को छोड़कर) गेटवे आफ इंडिया बन्दरगाह से चलती हैं।

सांची बौद्ध स्मारक

सांची अपनी बौद्ध कला की उत्कृष्ट कलाकृतियों के लिए विख्यात है - बौद्ध स्तूप, मठ, मंदिर और स्तंभ, जो ईसापूर्व तीसरी शताब्दी से लेकर 12 वीं शताब्दी ईस्वी के हैं। इस स्थल पर मुख्यतः तीन स्तूप हैं। सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं :

स्तूप संख्या 1 : यहाँ एक अर्ध गोलाकार गुंबज है, जिस पर 36.60 मीटर के व्यास का एक तिहरा छत्र है। एक 'रेलिंग' (बाड़ा) स्तूप को घेरे हुए है जिसमें चार उत्कृष्ट नक्काशी दार प्रवेशद्वार या तोरण बने हैं। तोरण में दो सीधे खड़े स्तंभ हैं जो आकार में चौकोर हैं और तीन प्रस्तरपादों वाली एक अधिरचना को समर्थन देते हैं। प्रस्तरपादों के दोनों भाग और साथ ही सीधे खड़े स्तम्भों के विभिन्न भागों पर धार्मिक विषय हाथियों, गणों, सिंहों, पवित्र चिन्हों, वृक्ष देवताओं, भगवान बुद्ध के

जीवन की विभिन्न कथाओं और घटनाओं को दर्शाती नक्काशी और शिल्पकृतियां हैं।

स्तूप संख्या 2 : स्तूप संख्या दो में बौद्ध चिन्ह जैसे बोधिवृक्ष, एक सिंहासन और विधान का चक्र हैं। प्रवेशद्वारों के दोनो ओर के स्तंभों पर विस्तृत नक्काशी और शिल्पकृतियाँ हैं। उनमें से कुछ हैं : एक चक्र को समर्थन देते हुए सिंह, फूलों के हार और इच्छा पूर्ति करने वाली मदिरा लाते विद्याधार।

मंदिर 17 : में एक समतल छत वाला चौकोर मंदिर और साथ में चार ठोस स्तंभों पर खड़ा एक (द्वार) मण्डप है। पास ही हैं, ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी का "हैलियोडोरस्पिलर" (Haliodoruspillar), पांचवीं शताब्दी ईस्वी की उदयगिरि गुफा और विदिशा के स्मारक, ये सब दस किलोमीटर की परिधि में हैं।

यात्रा जानकारी

सूर्योदय से सूर्यास्त तक, सप्ताह के सभी दिन खुले रहते हैं। बारह वर्ष से अधिक की वय के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रुपये प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश शुल्क नहीं लगता।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

नवम्बर से फरवरी।

पहुंच

मध्य प्रदेश में स्थित सांची, सड़क मार्ग द्वारा भोपाल से दीवानगंज होकर 46 किलोमीटर और रायसेन होकर 78 किमी० दूर है। इस स्थान पर पहुंचने के लिए पहले भोपाल पहुंचना होता है जो दिल्ली, मुंबई, ग्वालियर और इंदौर से वायु, रेल, और सड़क मार्ग द्वारा जुड़ा है और उसके बाद सांची के लिए मोटरगम्य मार्ग का उपयोग करना होता है।

कहां ठहरें

श्रीलंका महोबोधि सोसायटी विश्राम गृह, ट्रैवेलर्स लाज, बुद्धिस्थ गेस्ट हाउस, सर्किट हाउस।

अन्य दर्शनीय स्थल

विदिशा, उदयगिरि की गुफाएं, गैरसपुर, उदयपुर।

वृद्धीश्वर मंदिर, तंजौर (तंजवूर)

चोल साम्राज्य के संस्थापक, महान सम्राट राजाराज के शासन काल में 1003 ई० और 1010 ई० के मध्य तंजवूर का महान मंदिर बनवाया गया।

शहर में स्पष्ट रूप से दिखता 66.5 मीटर ऊँचा 'श्रीविमण' युक्त बृद्धीश्वर मंदिर ग्रेनाइट पत्थर का बना है।

मंदिर में एक अष्टभुजाकार गुंबज है और एक ही (एकाश्मक) ग्रेनाइट के चौकोर खण्ड पर टिका है, जिसका वजन 81.3 टन है। गढ़ी हुआ आधार विस्तृत शिलालेखों से परिपूर्ण है। अंदरूनी गलियारों की दीवालों पर विभिन्न हिंदू देवी देवताओं की सजीव प्रतिमाएं हैं।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से सूर्यास्त तक सप्ताह के सभी दिन (सिर्फ वे दिन छोड़कर जब मंदिरों में पूजा होती है) खुला रहता है।

पहुंच

निकटतम हवाई अड्डा और रेलवे स्टेशन, ऋची, 58 किमी० दूर है। तंजवूर, सीधे रेलमार्ग द्वारा मदुरई, तिरुपति, चेन्नई और रामेश्वरम् से जुड़ा है। तमिलनाडु के दूसरे नगरों के लिए बहुत अच्छी बस सेवा उपलब्ध है।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

अक्टूबर से अप्रैल।

गोवा, गिरजाघर और कानवेन्ट

पुराने गोवा में 16 वीं शताब्दी से लेकर 17 वीं शताब्दी के मध्य मखरला और चूना पत्थरों से बने गिरजाघर और प्रार्थनाघर, पुर्तगालियों द्वारा छोड़ी गई विरासत है। इनमें सेंट कैथेड्रल चर्च और कान्वेंट आफ सेंट फ्रांसिस ऑफ असीसी, चैपेल और कैथेरीन, बैसिलका आफ बॉम जीसस, चर्च आफ लेडी आफ रोसारो

और चर्च आफ सेंट ऑगस्टाइन हैं। पुर्नजागरण (renaissance) और बैरोक (baroque) शैलियों के संयोग से निर्मित पुराने गोवा के यह गिरजाघर और कानवेंट वास्तुकलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट कृतियां हैं।

बैसिलका आफ बॉम जीसस, जहां संत फ्रांसिस जेवियर के अवशेष स्थापित हैं, परिकल्पना और शैली में सर्वोत्तम कृतियों में से एक हैं।

चर्च आफ सेंट कैजेटन में एक अग्रभाग है जो लोनिक (Ionic) , डोरिक (Doric) और कॉरिनियिन प्लास्टरों से सज्जित है। सेंट कैथेड्रल के तुसकान (Tuscan) बाह्यसज्जा, कॉरिन्थियम (Corinthiam) स्तंभ, उठा हुआ चबूतरा जिसकी सीढ़ियां प्रवेशद्वार की ओर जाती हैं और एक बैरेल'वॉल्ट (barrel Vault), निरेसां (renaissance) वास्तुशिल्प का एक अन्य उदाहरण है।

गिरजाघर में चित्रकलाकृतियां लकड़ी के किनारों पर की गई और फूलदार परिकल्पनाओं के साथ पट्टिकाओं के मध्य में लगी हैं। सिर्फ कुछ मूर्तियों को छोड़कर, जो पत्थर की हैं, संतों, मदर मेरी और जीसस की अन्य मूर्तियां अधिकांशतः पहले लकड़ी पर नक्काशीकृत हैं और फिर वेदिकाओं को सजाने के लिए रंगी गई हैं।

यात्रा जानकारी

सर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक सप्ताह के सातों दिन खुला रहता है। कोई प्रवेश शुल्क नहीं है।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

शरद ऋतु में।

पहुंच

वायुमार्ग द्वारा : बंगलौर, मुंबई, दिल्ली, कोची, थिरुवनन्तपुरम, चेन्नई और पुणे से वायुमार्ग से जुड़ा है। रेल द्वारा : पणजी से निकटतम रेलवे स्टेशन है वास्को-डि-गामा (35 किलोमीटर)। गोवा, दक्षिण-मध्य रेलवे की मीराज-बंगलौर खण्ड पर लोण्डा जंकशन से जुड़ा है। मुंबई और मैंगलोर को जोड़ती कोंकण रेलवे गोवा से होकर जाती है। सड़क द्वारा : अच्छी मोटरगामी सड़क, गोवा को अन्य

नगरों से, राष्ट्रीय राजमार्ग NH-4A, NH-17 और NH-17 A से होकर जोड़ती है। सड़क मार्ग से जुड़ाव : अहमदाबाद (1138 किमी०), औरंगाबाद (699 किमी०), बंगलौर (592 किमी०), मुंबई (597 किमी०), चेन्नई (923 किमी०), पुणे (473 किमी०) के लिए उपलब्धं हैं। बस सेवाएं गोवा को बंगलौर, मुंबई, पुणे, मंगलोर और पड़ोसी राज्यों के अन्य प्रमुख नगरों से जोड़ती है। समुद्र मार्ग : मुंबई से दमानिया शिपिंग द्वारा संचालित बेड़ा सेवाएं, अक्टूबर से मई माह तक की समयावधि के लिए उपलब्ध है।

कहां ठहरें

डीलक्स होटल : अगुआडा हर्मिटेज, फोर्ट अगुआडा बीच रिसार्ट, दि ताज हालिडे विले, मजोर्डा बीच रिसोर्ट, ओबेरॉय कोरोमालो बीच, सिडाडे-डे-गोवा। **सामान्य होटल** : फिडालगो, माण्डोवी, होटन नोवा गोवा। **अन्य होटलः** मूल्य चुकाकर अतिथि आवास और कई निचले श्रेणी के होटल उपलब्ध हैं।

अन्य दर्शनीय स्थल

पणजी, बागा, कालांगुटे, सिनक्युरीम, अंजुमा, चपोरा/वागाटोर, आरामबोल/टेरेकोल, बोगमालो, कोलवा पुराना गोवा, अगुआडा-फोर्ट।

कुतुब परिसर

दिल्ली से 15 कि० मी० यह स्मारक परिसर भारत में मुगल शासन के आरंभ के समय का है और यह भवन आरंभिक अफगानी वास्तुशिल्प की उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

कुतुबमीनार

आसमान में अपना सिर गर्व से ऊंचा उठाए 238 फीट लंबी कुतुब मीनार से दिल्ली के शहर में फैले हरे भरे खेतों का संपूर्ण नजरा दिखता है। इसका निर्माण कार्य 1190 में कुतुबुद्दीन ऐबक ने आरंभ करवाया और यह मीनार तीन चरणों में बन कर तैयार हुई।

कुतुबुद्दीन ऐबक ने पहली मंजिल का निर्माण पूर्ण करवाया जबकि दूसरी दो मंजिलें 1220 में इल्तुतमिश ने बनवाईं। यह मीनार 1322 में क्षतिग्रस्त हो गई

जिसकी मरम्मत मुहम्मद बिन तुगलक ने करवाई और फिर 1368 में फीरोज शाह तुगलक ने। कुतुब मीनार की सभी पांचों मंजिलों में कुरान की आयतें खुदी हैं। प्रत्येक मंजिल में एक छज्जा निकला हुआ है। पहली तीन मंजिलें लाल बलुआ पत्थर से, जबकि चौथी और पांचवी बलुआ पत्थर के संगमरमर से बनी हैं।

मीनार का विशिष्ट लक्षण है छज्जों को आरोहीनिक्षेप समर्थन और इसकी गोलाकार योजना।

कुव्वत-उल-इस्लाम मस्जिद

राय पिथोरा पर अपनी विजय को चिन्हित करेने के लिए कुतुबुद्दीन ऐबक ने 1192 में यह कुव्वत-उल-इस्लाम मस्जिद बनवाई जो 1198 में बन कर पूरी हो गई।

यह भारत की वर्तमान मस्जिदों में सबसे पुरानी है जिसमें एक आयताकार आंगन है। यह छत से घिरा है जो 27 हिंदू और जैन मंदिरों के नक्काशी कृत स्तंभों और अन्य वास्तुकलात्मक वस्तुओं से बनवाया गया, जो बाद में ध्वस्त कर दिए गए।

लोहे का स्तंभ

परिसर में मस्जिद के आंगन में एक लोहे का स्तंभ है। स्तंभ के निर्माण में उपयोग किए गए लोहे की गुणवत्ता अति-शुद्ध है जिस पर 2000 वर्षों बाद भी जंग नहीं लगा है।

संस्कृत में खुदवा कर लिखा गया एक लेख स्पष्टतः यह दिखाता है कि यह आरंभ में, संभवतः बिहार में एक विष्णु मंदिर के बाहर खड़ा था। यह, गुप्त सम्राट चंद्रगुप्त विक्रमादित्य की याद में बनवाया गया था, जिसने 375 से 413 के मध्य शासन किया। कहते हैं कि 11 वीं शताब्दी में किसी समय यह तोमर सम्राट अनंगपाल द्वारा दिल्ली लाया गया था।

इल्तुतमिश का मकबरा

परिसर में, लोहे के स्तंभ के उत्तर-पश्चिम में इल्तुतमिश का मकबरा भी

है। इल्तुतमिश 1236 में मरा किंतु उसने अपना मकबरा एक वर्ष पहले 1235 में ही बनवा लिया था। यह भारतीय-इस्लामी वास्तुकला का एक चिन्ह है।

अलाई दरवाजा

इस्लामी वास्तुकला के खजाने के रत्नों में से एक, यह द्वार पूर्णतः इस्लामी सिद्धातों पर बना। यह प्रथम भवन है जो सटीक निर्माण और ज्यामितीय सज्जा के संपूर्ण इस्लामी सिद्धांतों पर बनी थी। अलाई दरवाजा एक चौकोर गुंबजनुमा भवन है जिसमें लाल बलुआ पत्थर और संगमरमर में सूक्ष्म नक्काशी है।

अलाई मिनार

अलाउद्दीन विजय स्मृति के रूप में कुतुब मीनार जितनी ही ऊंची एक दूसरी मीनार बनवाना चाहता था, किंतु जब वह मरा तो मीनार सिर्फ 27 मीटर की ऊंचाई तक ही पहुंच पाई और बाद में कोई और महत्वाकांक्षी परियोजना को जारी नहीं रख सका। अलाई मीनार आज अपूर्ण है जो कुतुब मीनार और मस्जिद के उत्तर में खड़ी है।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से सूर्यास्त तक सप्ताह के सातों दिन खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक की आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रूपए प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश मुफ्त होता है।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

नवम्बर से फरवरी

पहुंच

विश्व के सभी प्रमुख शहरों और महत्वपूर्ण भारतीय शहरों से वायुमार्ग द्वारा संपर्क है। अधिकांश भारतीय स्थलों से रेल संपर्क है। पड़ोसी राज्यों और प्रमुख शहरों से सड़क मार्ग द्वारा संपर्क।

कहां ठहरें

डीलक्स होटल : अशोक होटल, बेस्ट वेस्टर्न सूर्या हयात रीजेंसी, दि ओवेरॉय, वेलकमग्रुप मौर्या शेरेटन, ताज महल ले मेरीडियन, हाली डे इन, क्राउन प्लाजा, ताज पैलेस इंटर कांटिनेंटल, सेंटोर प्लाजा होटल, होटर सम्राट, वसंत कांटिनेंटल, पार्क होटल। **लक्जरी होटल :** अम्बैसेडर, दि क्लारिजेस, इम्पीरियल कुतुब होटल, होटल जनपथ, होटल कनिष्क, दि ओबेरॉय मेडेन्स, होटल सिद्धार्थ। **सामान्य होटल :** डिप्लोमैट, हंस प्लाजा, होटर रंजीत, मरीना, लोधी होटल, राजदूत, विक्रम, वाई० एम० सी० ए० पर्यटक आवास।

अन्य आवास सुविधाएं

अशोक यात्री निवास, इंडिया इंटरनैशनल सेंटर, वाई० एम० सी० ए० अंतर्राष्ट्रीय अतिथि गृह, विश्व युवा केन्द्र, यूथ हास्टेल, पर्यटक शिविर उद्यान, रेल यात्री निवास और कईसय बहुत से सरकार द्वारा स्वीकृत होटल।

अन्य दर्शनीय स्थल

पुराना किला, जामा मस्जिद, लाल किला, जंतर मंतर, इण्डिया गेट, संसद भवन, राष्ट्रीय संग्रहालय, राजघाट, लक्ष्मी नारायण मंदिर, तीन मूर्ति हाउस।

हुमायूं का मकबरा (एक मुगल शैली का स्मारक)

दूसरे मुगल बादशाह हुमायूं की बड़ी पत्नी हाजी बेगम द्वारा 16 वीं शताब्दी के मध्य में निर्मित, हुमायू का मकबरा दिल्ली में निर्मित मुगल वास्तुकला का एक आरंभिक उदाहरण है। उचित मुगल शैली में निर्मित एक गुलाब की पंखुडी के समान बलुआ पत्थर का मकबरा कवि सम्राट का एक सुंदर स्मारक है।

आकार में अष्टभुजाकार, एक चबूतरे पवर बना दोहरे गुंबज और ऊंचे मेहराबों से युक्त, एक विशाल दीवाल के घेरे के मध्य में बना, यह स्मारक एक प्रभावशाली ढांचा है। बारादरी, पूर्वी दीवाल के मध्य में और हम्माम (स्नानागार) उत्तरी दीवाल के मध्य में है।

चारों दिशाओं से आगमन के लिए पत्थरों से मार्ग बनाए गऐ हैं जो बगीचे को चार वर्गों में काट देते हैं, इस मकबरे को कई मुगल शासकों के यहां दफन किए जाने का गौरव प्राप्त है। स्वयं बेगम के अतिरिक्त, हामिदा बेगम (अकबर की मां), दारा शिकोह (शाहजहां का पुत्र), बहादुर शाह द्वितीय (आखिरी मुगल बादशाह) और कई अन्य यहीं दफन हैं। हुमायुं की पत्नी भी, लाल और सफेद बलुआ पत्थर और काले और पीले संगमरमर के मकबरे में दफन है।

इस मकबरे के बाग चार बाग की फारसी शैली में बने हैं, जिसमें पत्थर से बने मार्ग और संकरे जल मार्ग हैं। इसे अब भी इसकी मूल भव्यता में बनाए रखा गया है।

पर्यटक सूचना

सूर्योदय से सूर्यास्त तक सप्ताह के सातो दिन खुला रहता है। बारह वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए प्रवेश शुल्क 5.00 रूपए प्रति व्यक्ति है। शुक्रवार को प्रवेश शुल्क नहीं लगता।

पहुंच

विश्व के सभी प्रमुख शहरों और महत्वपूर्ण भारतीय शहरो से वायुमार्ग द्वारा संपर्क। अधिकांश भारतीय स्थलों से रेल संपर्क है। पड़ोसी राज्यों और प्रमुख शहरों से सड़क मार्ग द्वारा संपर्क।

दार्जिलिंग हिमालयन रेलवे

पश्चिम बंगाल में समुद्र तल से 6800 की ऊंचाई पर स्थित आकर्षक हिल स्टेशन, दार्जिलिंग मैदानों से एक दो फीट के गेज की और 83 किलोमीटर लंबी रेल लाइन से जुड़ा है जिस पर एक सुंदर खिलौना गाड़ी चलती है। इस खिलौना रेलगाड़ी ने यांत्रिकी श्रेष्ठता, सुदर भूदृष्यों और पर्यटक आकर्षण के चलते विश्वव्यापी ख्याति अर्जित कर ली है। यह रेलगाड़ी अब भी उस छोटे से भाप के इंजन से खींची जाती है जो 20 वीं शताब्दी के आरंभ में बना था। एक हठी रेल उत्साही के लिए.भारत में यात्रा तब तक अधूरी रहती है जब तक कि इस अनोखी रेलगाड़ी में सफर न कर ले। यूनेस्को (UNESCO) जल्द ही इस रेल प्रणाली ने 1999 देश के 22 वें विश्व-विरासती स्थल (World Heritage Site) के रूप में अंकित किया।

प्राकृतिक स्थल

काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान

आसाम में ब्रह्मपुत्र नदी के तट पर स्थित, काजीरंगा, खतरे में पड़े भारतीय एक सींग वाले गैण्डे का गढ़ है। एक खुला प्रदेश, अधिकांशतः हाथी घास से ढंका, काजीरंगा आंगतुक को बहुत निकटता से जीवजन्तुओं को देखने का मौका देता है।

क्षेत्र

430 किलोमीटर।

जाने का सवोत्तम समय

नवंबर से मार्च।

पहुंच

सड़क मार्ग, निकटतम नगर - बोकाघाट (23 किलोमीटर)।

रेल द्वारा

निकटतम रेलवे स्टेशन - मरियानी (115 किलोमीटर)।

वायुमार्ग

निकटतम हवाई अड्डा -जोरहाट (95 किलोमीटर)।

कहां ठहरें

फारेस्ट लाज, विश्राम गृह, फारेस्ट बंगला।

केवलादेव घाना पक्षी विहार, भरतपुर

यह केवलादेव घाना पक्षी विहार, आगरा के ताज महल से 55 किलोमीटर दूर स्थित है।

भरतपुर के उथले, ताजे जल के दलदल में समृद्ध जल वनस्पति और पक्षी जीवन, स्मरणातीत काल से ही हजारों की संख्या में स्थानीय और प्रवासी पक्षियों को आकर्षित करता रहा है। यहां 56 पक्षी परिवारों की 353 प्रजातियों हैं। साइबेरियाई सारस (Siberian Cirane) केवलादेव के दलदलों को छोड़ कर भारत के अन्य सभी जल स्थानों में प्रवास पर शायद ही जाते हैं।

पक्षियों की संख्या और विविधता में केओलादेव अतुलनीय है। अनोखा पक्षी स्थल होने के कारण यूनेस्कों (UNESCO) ने इसे एक विश्व-विरासती-स्थल (World Heritage Site) के रूप में मान्यता दे रखी है। यह उद्यान अब भारत का सर्वोतम जल-पक्षी विहार है। यह वास्तव में पंखदार जीवन का स्वर्ग है जो पक्षी प्रेक्षकों, वन्यजीव छायाचित्रकारों, भूदृष्य चित्रकलाकारों, प्रकृति पसर लेखकों और शोधकर्ताओं को असीमित अवसर प्रदान करता है।

क्षेत्र

29 वर्ग किलोमीटर

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

अक्टूबर से फरवरी

प्रमुख जीव

एग्रट (Egrats), डार्टर्स (Darters), ग्रे हेरोन (Gray herons) कोरमोरेंट (Cormorants), फीसेंट टलड और ब्रोंज-विग्ड जैकाना (Pheasant-tailed and branze-winged jacanas), ग्रेलाग गीज (Greylag Geere) , शदर ऋतु में साइबेरियाई सारस और नीलगाय, चीतल, सांभर, अजगर।

पहुंच

भरतपुर शहर से तीन किलोमीटर, आगरा 55 किलोमीटर, नई दिल्ली 212 किलोमीटर। सड़क और रेल मार्गों द्वारा संपर्क अच्छा है। निकटतम हवाई अड्डा- आगरा।

कहां ठहरें

आई० टी० डी० सी० भरतपुर, फारेस्ट लाज, फारेस्ट गेस्ट हाउस, सारस टूरिस्ट बंगला।

मनास अभयारण्य आसाम

मनास नदी उन हरे भरे, मिश्रित पतझड़ी वनों को विभाजित करती है जो भारत से भूआन तक फैल पड़े हैं। दोनों ओर से प्राकृतिक वास बड़े उत्साह से संरक्षित है क्योंकि इनमें 20 से कम प्रजातियों के पक्षी और पशु हैं जो आज खतरे में हैं। मनास, दुर्लभ सुनहरे लंगूर का प्रमुख आवास भी है।

क्षेत्र

391 वर्ग किलोमीटर।

पहुंचने का सर्वोत्तम समय

नवम्बर से मार्च।

प्रमुख वन्यजीव

सुनहरा लंगूर, जंगली भैंसा, हिस्पिड खरगोश, टोपीदार लंगूर, भारतीय एक सींग वाला गैंडा, जल भैंसा, गौर, पाढ़ा, बाघ।

पहुंच

सड़क मार्ग द्वारा : निकटतम नगर? (41 कि० मी०)

निकटतम रेलवे स्टेशन : बारपेटा,

निकटतम हवाई अड्डा : गौहाटी (186 कि०मी०)

कहां ठहरें

टूरिस्ट लॉज और फारेस्ट बंगला।

सुंदरबन राष्ट्रीय उद्यान

कुल 1330.10 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले सुंदरबन राष्ट्रीय उद्यान में लगभग 200 शाही बंगाल बाघ (Royal Bengal Tiger) रहते हैं। बांगलादेश,

उद्यान के पूर्व में है और यह अंदाजा लगाया गया है कि इस क्षेत्र में कुल संख्या में लगभग 400 बाघ होंगे। नमकीन और जलीय पर्यावरण में अपने आप को ढालते हुए, उद्यान के बाघ अच्छे तैराक हैं और व्यवहारिक रूप से जलस्थलचर हैं।

कच्छ वनों में मोटर लांच द्वारा जाना एक अनोखा अनुभव है क्योंकि क्षेत्र पूर्णतः स्वच्छ है और अधिक पारंपरिक वन्यप्राणी उद्यानों से बहुत भिन्न है। नवीमुखीय मगरमच्छ प्रायः तटों पर दिख जाते हैं किंतु घने झाड़-झंकाड़ों के कारण बाघ देखना दुर्लभ हैं। यह उद्यान 'रिडली' समुद्री कछुए के संरक्षण के लिए भी उल्लेखनीय है।

पहुचने का सर्वोत्तम समय

सितम्बर से मई

कहां ठहरें

सजनारवाली में फारेस्ट लॉज,

निकटतम नगर : गोसाबा (50 किलोमीटर)

कैसे पहुंचें

रेल द्वारा : केनिंग (48 किलोमीटर)

वायुमार्ग द्वारा : कलकत्ता (112 किलोमीटर)

नंदा देवी राष्ट्रीय उद्यान

नंदा देवी राष्ट्रीय उद्यान, हिमालय के सर्वाधिक शानदार बीहड़ क्षेत्रों में से एक है, जहां 7,800 मीटर ऊंची नंदा देवी की चोटी मुख्य है। यह कई खतरे में पड़े स्तनपाई वन्यजीवों का आवास है, विशेषकर वर्फ का तेंदुआ, हिमालय का कस्तूरी मृग और भरल।

□□□

अध्याय-13

स्वास्थ्य पर्यटन
(Health Tourism)

समृद्ध भारतीय विरासत ने सदैव ही विश्व के लोगों के मध्य एक बड़े विस्मय का भाव उत्पन्न किंया है। इस विरासत का संरक्षण आधुनिक पर्यटन प्रबंधन का एक अनिवार्य अंग है। पर्यटन, अपने वास्तविक भाव में प्रकृति, समाज और मानवीय सभ्यता के मूल की एक खोज है। वही मुख्य कारणों में से एक है जिसके कारण पर्यटन विश्व के सभी भागों में एक प्रमुख उद्योग बन गया है। लोग मानसिक और शारीरिक सुख की तलाश में और फिर आनन्द की खोज में यात्रा करते हैं। धर्म और स्वास्थ्य ने स्मरणातीत काल से ही ऐसी यात्राओं को प्रेरित किया है। लोग मन-मस्तिष्क की शांति की प्राप्ति हेतु धार्मिक यात्राएं करते थे। यात्री कष्टों और कई बीमारियों से स्थाई मुक्ति की खोज में 'बाथ इन इंग्लैण्ड' (Bagh in England) जैसे कई स्थानों और हिमालय और स्विटजरलैण्ड के कई स्थानों पर भीड़ लगा देते थे।

अब संपूर्ण विश्व में, विशेषकर पश्चिम में, प्रकृति के पास वापस जाने और उससे राहत और सुख पाने की मनोवृत्ति है। आधुनिक जीवन, यांत्रिक सभ्यता और स्वयं में सीमित रहने की मनोवृत्ति इस रुझान के मुख्य कारण हैं। यही कारण है कि लोग राहत और निरंतर शांति पाने और प्रकृति से आधुनिक जीवन के मानसिक तनावों को निकालने के लिए हवाई और भारत जैसे सुंदर स्थानों को जाते हैं। पर्यटन सिर्फ इसी कारण से, प्रमुख आधुनिक उद्योगों में से एक बन गया है।

स्वास्थ्य, यात्रा और पर्यटन से निकटता से जुड़ा है। हमारी एक स्वास्थ्य प्रणाली है जो वेदों और पुराणों जितनी ही पुरानी है और सदियों तक जीवित रही।

यह प्रणाली, सदियों पुरानी परम्पराओं तथा प्राकृतिक माध्यमों से प्रादुर्भूत हुई है तथा अनेक व्यक्ति इसकी सहायता से स्थायी निदान के लिए हजारों किलोमीटर की यात्रा करते हैं। स्मरणातीत काल से ही अरबी व्यापारी और चीनी लोग इलाज करवाने के लिए भारत आते रहे हैं।

भारत अपने खनिज-स्त्रोतों और झरनों के लिए प्रसिद्ध है जिनमें अपार चिकित्सकीय गुण हैं, और उचित प्रोत्साहन और प्रबंधन के साथ ये स्थल प्रमुख पर्यटक आकर्षण बन जाएंगे।

वेदों में आयुर्वेद के कई संदर्भ हैं जो इसे विश्व में चिकित्सा प्रणालियों में सबसे पुराना बना देता है। चरक और सुश्रुता के सार संग्रह इस पूर्णतः विकसित स्वास्थ्य प्रणाली के उत्पाद है। जो प्रकृति के अभिन्न अंग है और कई मायनों में यह गैलेन (Galen) और हिप्पोक्रेटस (Hippocrats)द्वारा विकसित प्रणालियों से कहीं आगे है। योग के माध्यम से शरीर विज्ञान में रुचि के विकास में चिकित्सकीय ज्ञान को विकसित किया। संपूर्ण विश्व में आयुर्वेदिक आश्रयस्थलों क़े तेजी से उभरने के पीछे यही एक मुख्य कारण है, जिसके चलते ऐम्सटर्डम में एक आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय भी स्थापित हो गया।

भारतीय चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांत इसे प्रकृति के निकट ले आते हैं। यही कारण है कि जो लोग रासायनिक औषधियों के अत्यधिक उपयोग और अब तक अज्ञात नए रोगों के आक्रमण से थक-हार चुके हैं, अब चिकित्सा की प्राकृतिक प्रणाली की ओर मुड़ रहे हैं उचित प्रोत्साहन के साथ आयुर्वेद और योग एक बड़े पर्यटक आकर्षण बनते जा रहे हैं।

यह समृद्ध परम्परा और विरासत सदैव ही उस जिज्ञासु के लिए मददगार रही है जो मस्तिष्क और शरीर के मध्य समन्वय की खोज में हैं। सामान्यतः पर्यटक दो प्रकार के होते हैं। एक वे जो क्षणिक सुख की खोज में हैं, और दूसरे वे जो वाह्य और आंतरिक ब्रह्माण्ड के मध्य एक समन्वय खोजते हैं। पर्यटक को मानसिक और शारीरिक समन्वय का एक समवेष्टम् (package) प्रदान करने में भारत को एक अनोखी अनुकूलता उपलब्ध है। इसकी सुंदर प्रकृति जो आंखों और मस्तिष्क के लिए सुखदाई है और इसकी स्वास्थ्य प्रणाली जो बगैर किसी दुष्प्रभाव के शरीर को आरोग्य बनाती है, प्रति वर्ष हजारों लोगों को आकर्षित करती है।

भारत की पर्वतीय श्रंखलाएं अपने फूल-पत्तियों के लिए प्रसिद्ध हैं जो संपूर्ण विश्व में अपने चिकित्सकीय गुणों के लिए विख्यात हैं। हिमालय श्रंखलाएं, नीलगिरि, विंध्य और अरावली पर्वत श्रंखलाएं जड़ी बूटियों की एक विस्तृत श्रृंखला प्रदान करती हैं जिनमें चिकित्सकीय गुण होते हैं। पथरी, सन्धिपात, मधुमेह जैसे पुराने रोग और कई यकृत संबंधी रोग इन जड़ी बूटियों से ठीक हो सकते हैं। ऐसी प्राकृतिक औषधियों की तलाश में भारत में आने वाले पर्यटकों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती ही चली जा रही है।

भारत की नदियां, खनिज-स्त्रोत और झरने विश्व भर में प्रसिद्ध हैं। मसूरी, मनाली, कुल्लू और कुट्टलम के खनिज-स्त्रोत प्राकृतिक गंधक की समृद्ध सुगंध छोड़ते हैं जो त्वचा रोगों को ठीक करने के गुणों के लिए विख्यात हैं। स्मरणातीत काल से ही पर्यटक इन स्थानों की यात्रा करते रहे हैं। इन्हें स्वास्थ्य आश्रयस्थलों (health resorts) के रूप में विकसित किया जा सकता है, ठीक 'बाथ' की तरह, पश्चिमी इंग्लैण्ड में एक विख्यात शहर जो अपने गर्म पानी के स्त्रोतों के कारण इस नाम से जाना गया और 17 वीं शताब्दी से.प्रसिद्ध हुआ।

विश्व की सबसे बड़ी पर्वतीय श्रंखला, हिमालय, अपने पत्थरों के कारण प्रसिद्ध है जिनमें विशेष पुनरुज्जीवनकारी गुण हैं और मस्तिष्क और स्नायुतंत्र के लिए अच्छे हैं। आयुर्वेद में इन पत्थरों के चिकित्सकीय गुण और वैज्ञानिकों में शिलाजीत और ब्राह्मी विश्व भर में सुविख्यात हैं। इन पत्थरों के पुनरुज्जीवनकारी गुण और इन पर्वत श्रंखलाओं के नदी-नाले प्रत्येक वर्ष भारत और विदेशों से पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। इस स्थान का रहस्य दिनोंदिन गहराता जाता है क्योंकि साधु लोग इन औषधियों के रहस्यों की रक्षा कर रहे हैं। इन स्थानों की बड़ी पर्यटन संभावनाएं हैं और यहां तक कि इन स्थानों की ठण्डी बयार भी रोग दूर करती है। इन स्थानों की शांति और समन्वय अतुलनीय है।

आयुर्वेद

ऋग्वेद का यह एक विस्तार 3000 वर्षों से भी पुराना है। यह अभिगम रोगनाशक से अधिक निरोधक है। इसमें जड़ी बूटियों से लेकर पेड़ों तक 1000 से भी अधिक पौधों का उपयोग होता है। 'नैशनल इंस्टीट्यूट ऑफ इम्यूनोलाजी'

में किए गए अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि सात आयुर्वेदिक जड़ी बूटियां प्रतिरक्षण प्रणाली को तीव्र करने में सक्षम हैं। सभी औषधियां जड़ी बूटियों, फूलों, फलों, शहद, छाल, जड़ों, पशु उत्पादों और खनिजों के तत्वों से मिल कर बनती हैं।

'आयुर्वेद' दो शब्दों से मिलकर बना है- 'आयुश' जिसका अर्थ है जीवन और 'वेद' जिसका अर्थ है ज्ञान। इस प्रकार आयुर्वेद, जीवन का विज्ञान है। इस विज्ञान पर नकुल, शैलहोत्र और पाराशर जैसे प्रसिद्ध विद्वानों द्वारा ग्रंथ लिखे गए। विस्तृत भाव में, यह पशुओं और पौधों के भी रोगों के उपचार और स्वास्थ्य से संबद्ध है। अश्व-आयुर्वेद, गोव-आयुर्वेद, गज-आयुर्वेद, वृक्ष आयुर्वेद (घोड़ो, गौवों, हाथियों एवं पेड़ों का उपचार)।

ईसा पूर्व 600 वीं शताब्दी में विकसित, एक पूर्णतः प्राकृतिक प्रणाली जो सही संतुलन हासिल करने के लिए आपके शरीर के तरल पदार्थों, वात, पित्त और कफ का निदान है। एक रोग के उपचार के अतिरिक्त यह प्रणाली निरोधन पर भी बल देती है। यह न सिर्फ प्रभावित भाग के उपचार में बल्कि संपूर्ण व्यक्तित्व को ताजा बनाने और पुनरुज्जीवित करने की एक प्राकृतिक विधि में विश्वास करती है। आयुर्वेदिक उपचार जड़ी-बूटी औघधियों के आंतरिक और बाह्य उपयोग के माध्यम से किया जाता है, जो भारत में प्रचुरता में उपलब्ध हैं और पर्यटक की आत्मा और शरीर की शांति की प्राप्ति में मदद करती है।

यह पूर्ण समर्पण के साथ समरूप जलवायु, ताजी और ठंडी वर्षा ऋतु की प्राकृतिक प्रचुरता व्यवहार में लाती है। आयुर्वेदिक के रोगनाशक और पुष्टिकारक समवेष्ठन के लिए जून से लेकर नवम्बर तक का समय काल सर्वाधिक उपयुक्त होता है। प्रत्येक रोगी के लिए प्रत्येक की एक पृथक रोग पहचान और उपचार प्रणाली है।

शरीर के पुनरुज्जीवन में आयुर्वेद द्वारा उपयोग में लायी जा रही विधियां

पुनरुज्जीवन और रोगोपचार, आयुर्वेद में दो विकल्प होते हैं। पहला शरीर के पुनरुज्जीवन के लिए और दूसरा शरीर और मस्तिष्क समेत विशिष्ट रोगों के उपचार के लिए। योग और ध्यान, आयुर्वेद के अभिन्न अंग हैं और तनाव दूर

करने और आंतरिक शक्ति निर्मित करने में मदद करते हैं। पुनरुज्जीवन में निम्न रोगोपचार विधियां उपयोग में लाई जाती हैं:

(1) रसायन चिकित्सा

त्वचा को स्वस्थ बनाता है और सभी ऊतकों (tissues) को पुनरुज्जीवित तक उन्हें बल प्रदान करता है ताकि आदर्श स्वास्थ्य और दीर्घ आयु प्राप्त हो सके। 'ओज' को बढ़ाता है और 'सत्व' को बढ़ाता है और इस प्रकार शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है। इसमें सिर और चेहरे की औषधीय तेलों से मालिश, जड़ी बूटियों से युक्त तेलों से शरीर की मालिश या हार्थे और पैरों में जड़ी-बूटियों के चूर्ण रगड़ना, पुनरुज्जीवनकारी औषधियों का सेवन और औषधीय भाप स्थान सम्मिलित हैं। जड़ी-बूटियों से स्नान भी प्रदान किया जाता है।

(2) कायाकल्प चिकित्सा

यह बढ़ती उम्र की प्रक्रिया को बाधित करने, शरीर की कोशिकाओं और प्रणाली के प्रतिरक्षण की विकृतियों को अवरुद्ध करने का प्राथमिक उपचार है। इसमें रसायनों (विशेष आयुर्वेदिक औषधियों और भोजन) और संपूर्ण शारीरिक देखभाल कार्यक्रमों का सेवन सम्मिलित है। यह दोनों ही लिंग के लोगों के लिए सर्वाधिक प्रभावकारी है, यदि 50 वर्ष की आयु से पूर्ण सेवन किया जाए।

(3) श्वेद कर्म

औषधीय वाष्प स्नान शरीर से अशुद्धताएं हटाता है, उसे सुधार कर ठीक करता है; त्वचा को चमकाता है; चर्बी हटाता है, और कुछ संधिवातीय रोगों विशेषकर दर्द के लिए उपयोगी है। बहुमूल्य जड़ी-बूटियां उबाली जाती हैं और वाष्प पूरे शरीर में 10 से 20 मिनट रोज दिया जाता है। जड़ी बूटियों के तेल या चूर्ण से हाथ से मालिश रक्त संचार सुधारता है और मांसपेशियों को बल प्रदान करता है।

(4) ध्यान और योग

मानसिक और शारीरिक व्यायाम - शरीर और मस्तिष्क से अहं भाव को पृथक करने के लिए- आपके ध्यान को तीव्र बनाने के लिए- प्रशिक्षण के आठ चरणों में स्वास्थ्य सुधारता है और मानसिक शांति प्रदान करता है। यह आठ चरण

हैं - 1. अनुशासित व्यवहार (यम), 2. स्व-शुद्धिकरण (नियम), 3. शारीरिक मुद्राएं जैसे पद्मासन (आसन), 4. श्वास नियंत्रण (प्राणायाम), 5. इंद्रियों पर नियंत्रण (प्रत्याहार), 6. एक विषय पर मस्तिष्क केंद्रित करना, (धारण), 7. समाधि - एक ऐसी दशा जहां आप संपूर्ण शांति और स्वाथ्य का अनुभव करते हैं।

(5) शरीर की देखभाल

हर्बल फेस पैक, जड़ी बूटियों के तेल की मालिश, जड़ी बूटियों की चाय, इत्यादि का सेवन - त्वचा में सुधार लाता है और शरीर को सुंदर बनाता है।

(6) शारीरिक छरहरापन

औषधीय जड़ी बूटियों के चूर्ण और तेल से मालिश, जड़ी बूटियों के रसों से युक्त आयुर्वेदिक भोजन/पेय, इस कार्यक्रम के भाग हैं।

(7) संपूर्ण स्वास्थ्य (पंचकर्म उपचार)

मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए एक 'पंचकर्म' उपचार जो शरीर, अवयवों, मस्तिष्क, श्वास, स्नायुओं आदि को स्वस्थ बनाता है और रक्त को शुद्ध करता है।

शरीर के विशेष रोगों के उपचार के लिए आयुर्वेद में उपयोग की जाने वाली मुख्य उपचार विधियां हैं :

(1) पुराने सिरदर्द, अनिद्रा, मानसिक तनाव और हिस्टीरिया, मतिभ्रम और पागलपन की स्थितियों का उपचार।

धारा : जड़ी-बूटियों युक्त तेल, औषधीय दुग्ध या मठा और काढ़ा एक निरंतर धारा में माथे पर/पूरे शरीर पर गिराया जाता है। धारा की विविधताओं में निम्नलिखित सम्मिलित हैं :

सिरोधारा : औषधीय तेल, दुग्ध, इत्यादि इस उपचार विधि के लिए उपयोग होते हैं। तंत्रिका संबंधी रोगों, अनिद्रा, अवनमन, पुराने सिरदर्द इत्यादि के उपचार के लिए विशेष प्रभावकारी होता है।

टक्र धारा : इस धारा के लिए गर्म औषधीय मठा उपयोग किया जाता है। गिरती याददाश्त, भीषण सिरदर्द, या पागलपन, इत्यादि के लिए विशेष प्रभावकारी होत है।

कोडि धारा : पकाए गए खमीर उठे अनाज से निकाला गया गर्म तरल पदार्थ एक नलिका युक्त लोहे से शरीर पर डाला जाता है। संधिवात, विशेषकर गठिया (rheumatorid arthritis) के उपचार के लिए प्रभावकारी।

(2) आस्टेओ-आर्थराइटिस (Osteoarthritis), ल्यूकेमिया (Leukemia), इत्यादि का इलाज (स्नेहपानम):

इसमें आषधीय घी का पान करने को दिया जाता है और फिर धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाई जाती है।

(3) स्पॉण्डिलासिस (Spondilosis). और सधिवातीय रोगों - जैसे आर्थराइटिस (arthritis), पैरालिसिस (paralysis), हेमिप्लेगिया (hemiplegia), तंत्र संबंधी कष्टों के उपचार :

सात से इक्कीस दिनों तक रोजाना एक से डेढ़ घंटे तक प्रशिक्षित मालिशकर्ता एक लय में गुनगुना जड़ी-बूटियों से युक्त औषिधीय तेल पूरे शरीर पर लगाते हैं।

(4) हेमिप्लेगिया (Hemiplegia), पैरालिसिस (paralysis), मोटापा (obesity) और कुछ संधिवातीय रोगों का उपचार (उद्वर्थनम):

जड़ी बूटियों के चूर्ण द्वारा चिकित्सकीय मालिश।

(5) मानसिक आघात या दुर्घटना के कारण मस्तिश्क संबंधी (musculs - skeletal) रोगों के उपचार (मर्म चिकित्सा):

एक उपचार जो शरीर के अतिसंवेदनशील महत्वपूर्ण भागों (107 मर्मों) पर कार्य करता है।

(6) नाक के रोगों के उपचार (नास्यम) : सिर और नाक के क्षेत्रों से रोगग्रस्त तत्वों को ठीक करने के लिए औषधीय जड़ी-बूटियों से निर्मित पदार्थों, काढ़ा, तेलों, घी, इत्यादि का अंतःश्वसन।

(7) कान के रोगों के उपचार (कर्णपूर्णम) : कान में औषधीय तेल पांच से दस मिनट के लिए रोज डाला जाता है ताकि सफाई और कान के विशिष्ट रोगों का उपचार हो सके।

(8) मोतियाबिन्द से बचाव और दृष्टि संवर्धन (थार्पणम): आंखों का ऐसा उपचार जो मोतियाबिन्द से बचाव में और आंख की मांसपेशियों और तंत्रिकाओं को बलशाली बनाने में प्रभावकारी हो।

(9) मांसपेशियों के रोग, सभी प्रकार के संधिपात, खेलों में लगी चोटों, जोड़ों के दर्द, शरीर और अंगों की क्षीणता और कुछ त्वचा के रोगों का उपचार : औषधीय चाल के बने 'पैक' (packs) को बाहर से शरीर के सभी अंगों पर लगा कर संपूर्ण शरीर से पसीना निकलने दिया जाता है।

(10) नथुनों, मुख और गले का सूखापन, भीषण सिरदर्द, चेहरे का फालिस और सिर में दर्द जैसे रोगों का उपचार: गुनगुना जड़ी बूटी युक्त तेल, सिर पर फिट की गई एक टोपी पर, विशेष समयावधि के लिए, चिकित्सक के परामर्श के अनुसार, डाला जाता है।

दिल्ली का आयुर्वेद केन्द्र और खजुराहो, पलक्कड, कोट्टायम और गोवा के स्वास्थ्य 'रिसार्ट' संपूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हैं। भारतीय जड़ी बूटियों के मांतिवर्धक और औषधीय गुण उन्हें रासायनिक कांतिवर्धकों और औषधियों से भिन्न रखते हैं। भारतीय जड़ी बूटियां विश्व के हर कोने में निर्यात की जाती हैं। इस उर्वरक क्षेत्र में बहुत कुछ किए जाने की आवश्यकता है। भारतीय पर्वतों और नदियों की तरह ही आयुर्वेद में भी अंतर्राष्ट्र्य स्तर पर प्रसिद्ध होने की बहुत संभावनाएं हैं।

इसकी पर्यटन संभावनाओं को समसझते हुए सरकार ने आयुर्वेदिक 'रिसार्ट' खोलने वाले उद्यमियों को प्रोत्साहन देना आरंभ कर दिया है। 'केरल पर्यटन विकास निगम' अपने सेवाओं में अनोखा है। यह आयुर्वेदिक उपचार पर आधारित स्वास्थ्य अवकाश संवेष्टन प्रदान करता है और केरल आने वाले पर्यटकों को पुनरुज्जीवनकारी और चिकित्सकसीय उपचार प्रदान करता है। एक आंकलन के अनुसार हर साल केरल आने वाले 1.8 लाख पर्यटकों में से कम से कम आधे आयुर्वेदिक उपचार की कोई विधि अपनाने का प्रयास करते हैं और उनमें

से अधिकांश विदेशी होते हैं। 'केरल पर्यटन विकास निगम' उपचार करने के बजाय बीमारी से बचाव के आयुर्वेदिक दर्शन पर आधारित 'एज हाफ प्रोग्राम्स' (Age Half Programmes) प्रदान करता है और अच्छे स्वास्थ्य और दीर्घायु की उपलब्धि हेतु यह प्रशिक्षण प्रणाली मजबूत करने के लिए विकसित किया गया है।

भारत, प्रचुर औषधीय जड़ी बूटियों से भरे वनों की लम्बी श्रृंखला और चिकित्सकीय मूल्यों के पत्थरों से भरपूर पर्वतीय क्षेत्रों समेत प्रत्येक पर्यटक के लिए प्रकृति का भाग हो जाने और मस्तिष्क और शरीर के पुनरुज्जीवन करने के लिए एक आदर्श स्थान है। सुंदर ढंग से संरक्षित हिमालय की निर्मल जल नदियां और नाले ओर भारत के कई अन्य पर्वतीय क्षेत्र आयुर्वेदिक उपचार के लिए एक आदर्श वातावरण बनाते हैं। यह स्थान यात्रियों को प्रचुर सुंदर प्राकृतिक दृष्य उपलब्ध कराते हैं।

योग एवं ध्यान

'योग' शब्द अपने मूल 'युज' से निकला है जिसका अर्थ है आत्मा का परमात्मा से मिलन और एकत्व का अनुभव। इसे कई तरीकों से परिभाषित और वर्णित किया गया है, जैसे - (i) शिव की शक्ति से मिलन, (ii) आत्मा का परमात्मा से मिलन, (iii) मन का शरीर से मिलन, (iv) प्राण का अपान से मिलन, (v) भौतिक शरीर का सामाजिक शरीर से मिलन, इत्यादि। यह स्वयं की अनुभूति के लिए मस्तिष्क को नियंत्रित करने और ज्ञान के सर्वोच्च स्तर की उपलब्धि की प्रक्रिया है।

योग के विभिन्न सिद्धांत हैं। उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

1. सीमित का अनंत से मिलन योग है।
2. चढ़ती और उतरती श्वास का समन्वय योग है।
3. सूर्य (पुरुष) और चंद्र (महिला) शक्तियों का उभयलिंगी संयोग, योग है।
4. सहानुभूतिशील और परा-सहानुभूतिशील प्रर्त्यावर्तन के मध्य प्राकृतिक पारस्परिकता, योग है।

योग की विशिष्टताए

1. मानव विज्ञान के रूप में योग

योग एक मानव विज्ञान माना जाता है जो मानवीय क्रियाओं के मार्ग तलाशता है। यह मानव, उसे लक्षणों, मूल्यों, क्रियाओं और जीवन की वास्तविकताओं का एक वैज्ञानिक चित्र प्रस्तुत करता है।

2. जीवन दर्शन के रूप में योग

दर्शन वह नीव है जिस पर जीवन खड़ा होता है। श्री अरविन्दो ने कहा है कि प्रकृति ने मानव को तीन प्रकार के जीवन विकल्पों में से चयन करने का विकल्प प्रदान किया है : भौतिक अस्तित्व का जीवन, बौद्धिक विकास का जीवन और अपरिवर्तनीय आत्मिक परमानन्द का जीवन। आत्मिक परमानन्द के जीवन का लक्ष्य आत्मसंतोष, अनन्त प्रेमम का अनुभव, आनन्द, प्रेम, करुणा, ज्ञान और एकत्व होता है। योग का संबन्ध इन सभी गुणों से है।

3. आचरण संहिता के रूप में योग

योग के पहले दो अवयव, अर्थात यम और नियम मानव जाति के लिए विभिन्न प्रकार के नियम निर्धारित करते हैं : अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिगृह और ब्रह्मचर्य के यम हैं जो सामाजिक जीवन की गुणवत्ता पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। शौच, संतोष, स्वाध्याय, ईश्वर प्राणिधान और तप वे नियम हैं जो व्यक्तिगत व्यवहार संहिता निर्धारित करते हैं।

4. जीवन कला के रूप में योग

एक व्यक्ति जो विभिन्न परिस्थितियों और समस्याओं को निपटाना जानता है एक सफल व्यक्ति और स्वस्थ मस्तिष्क का स्वामी माना जाता है। योग हमें न केवल शांतिपूर्वक जीना सिखाता है बल्कि सभी प्रकार की समस्याएं निपटाने की ऊर्जा भी देता है।

5. सकारात्मक मनोवृत्ति के रूप में योग :

हर बात के दो पहलू होते हैं : सकारात्मक (Positive) और नकारात्मक (Negative) सकारात्मक होना खुशियां, मानसिक संतोष और व्यक्तित्व का विकास लाता है। योग सदैव ही सकारात्मक सोच के लिए होता है। यह एक सकारात्मक मनोवृत्ति उत्पन्न करने में मदद करता है।

6. मानव परिवर्तन के रूप में योग :

योग एक लंबी और कठिन यात्रा होती है जो अध्यवसाय, दृढ़ता, और पूर्ण समर्पण मांगती है। यह एक व्यवहारिक दर्शन है जिसे जिया ही जाना चाहिए। परिवर्तन क्रिया की कीमत पर नहीं होता बल्कि यह कर्म को अधिक प्रभावकारी ढंग से और ईमानदारी से करने में मदद करता है।

योग के कार्य

1. आत्म-जागृति

योग के दर्शन के अनुसार आत्म-जागृति की यात्रा में एक व्यक्ति दो भिन्न अवस्थाओं से होकर गुजरता है। पहली स्थिति को विकास (evolution) के रूप में संदर्भित किया जाता है जिसके द्वारा वह बाह्यय विश्व के साथ अपनी पूर्ण पहचान करता है। दूसरी है जटिलता (Inrolution) जिसकसे द्वारा व्यक्ति अंतर्मुखी हो जाता है और स्वयं की अनुभूति करता है, अर्थात, जागृति की अवस्था। किन्तु व्यक्ति मसितश्क के माध्यम से जागृति अथवा परम सत्य को नहीं जान सकता। इसे अंतर्मुखी होकर जागृति (consciousness) के साथ मिलना होता है जब मस्तिष्क वास्तविक जीवन लक्ष्य की ओर अंतर्मुखी हो जाता है तो वास्तविक स्वयं उभरता है।

2. विचारों की उचित धारा

मस्तिष्क, विचारों की अनवरत धारा है। यदि विचार शुद्ध हों तो मस्तिष्क शुद्ध होता है और यदि विचार दूषित हों तो मस्तिष्क दूषित होता है। यदि विचार शांत हों तो मस्तिष्क शांत होता है। इस प्रकार, विचारों की प्रकृति, मस्तिष्क की

प्रकृति को निर्धारित करती है। योग, नकारात्मक विचारों को सकारात्मक विचारों में, आशा को प्रेम में भय के विचारों को साहस में और ईर्ष्याभाव को उदारता में परिवर्तित कर देता है।

3. आत्मानुभूति/स्वयं की अनुभूति

शांति और ईश्वर को पाने की मानव की शाश्वत इच्छा, हर प्रकार की भौतिक उपलब्धियों से घिरे होने के बावजूद, उसकी अधीरता और अशांति में दिखती है। इस विश्व में मनुष्य की अशांति की तुलना ऊपर हवा में फेंके गए एक पत्थर से की जा सकती है, जो तब तक उतना ही अशांत होता है जब तक कि वह पृथ्वी पर वापस नहीं गिर जाता। उसी प्रकार जल भी तब तक अशांत रहता है जब तक वह समुद्र में नहीं मिल जाता। मस्तिष्क की शांति आत्मानुभूति में होती है। योगाभ्यास, भूत और भविष्य को भुला कर वर्तमान में जीने में मदद करता है। इस प्रकार वर्तमान के क्षण की पवित्र गहराइयों में शाश्वतत्व का अनुभव होता है। यही है आत्मानुभूति। योग हमें सिखाता है कि इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि एक बौद्धिक रूप से हेकड़ी वाले व्यति या आलसी व्यक्ति के सामने सत्य कभी प्रकट नहीं होता।

4. मानसिक शांति और प्रसन्नता

प्रसन्नता, व्यक्ति की वास्तविक प्रकृति है। प्रत्येक व्यक्ति अपने अस्तित्व के प्रत्येक क्षण में इसे पाने और सदैव के लिए रखने का प्रयास करता है। मनुष्य इसे वस्तुओं के बाह्य विश्व में बेकार ढूंढ़ता रहता है, जब तक कि वह योगाभ्यास द्वारा यह नहीं जान पाता कि प्रसन्नता स्वयं में निहित होती है। योगाभ्यास की प्रत्येक क्रिया मनुष्य को शांति की ओर ले जाने के लिए रची जाती है।

5. तनाव प्रबन्धन

आधुनिक समाज में हाल के कुछ वर्षों में तेजी से बदलती जीवन शैली बहुत तनाव और खींचतान उत्पन्न करती रही है जो मनोवैज्ञानिक रोगों की उच्च व्यापकता का एक बड़ा कारण बन गया है। ध्यान समेत योगाभ्यास पर हुए

वैज्ञानिक अध्ययन इस ओर इशारा करते हैं कि यह शरीर और मस्तिष्क दोनों को ही आराम देता है। योगाभ्यास से उत्पन्न मनो-शारीरिक परिवर्तन यह दर्शाते हैं कि यह शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्पष्टता और धैर्य में सुधार करता है और तनावों से अधिक प्रभावकारी ढंग से निपटने में व्यक्ति की मदद करता है। योगासन, ध्यान और प्राणायाम का नियमित अभ्यास, तनाव और खींचतान से उत्पन्न कई रोगों से बचाव कर उनहें नियंत्रित भी करता है।

6. आत्म-पूर्णता

योग का उद्देश्य, भौतिक अस्तित्व, अर्थात शरीर, जीवन और मस्तिष्क को नकारना नहीं होता बल्कि भौतिक अस्तित्व को आधार को प्रकट करने के उपकरणों के रूप में उपयोग करना होता है। योग, स्वयं शरीर के बजाय इस खोज में ध्यान केन्द्रित करता है कि शरीर में कौन है, इसके जीवन में कौन है बजाय स्वयं जीवन के, इसमें कि मस्तिष्क में कौन है बजाए स्वयं मस्तिश्क के। यह योग को मानव में छिपी संभावनाओसं की अभिव्यक्ति द्वारा आत्म-परिष्करण की ओर एक व्यवस्थित प्रयास और मानव की सार्वभौमिक और लोकोत्तर उत्पत्तिकर्ता के साथ संयोग बना देता है।

7. जीवन में परिवर्तन

एक व्यक्ति की योग जीवन की यात्रा ऊपर से देखने में एक जैसी दिखती है किंतु आंतरिक रूप से भिन्न होगी जो स्वभाव, ज्ञान के स्तर, इच्छा शक्ति और तीव्रता और अभ्यास के प्रकार के स्तर पर निर्भर करता है। योग जीवन में प्रवेश करने वाला व्यक्ति निचली प्रकृति, जैसे प्राण, भाव, मस्तिश्क, बुद्धि, इत्यादि के परिवर्तन की अनुभूति प्राप्त करना आरंभ करता है। उसकी संपूर्ण जीवन प्रक्रिया प्रभावित होती है और एक उच्च आधार की ओर बढ़ती है, जिसके लक्षण हैं विभिन्न शक्तियों की जागृति, और आनंद, सौंदर्य, एकत्व, शांति, समन्वय, इत्यादि का अनुभव।

8. जीवन में संतुलन

हम सदैव 'राग' (आसक्ति) और द्वेष (ईर्ष्या) के बीच झूलते रहते हैं,

और जब तक हम इस दशा में होते हैं, लालसाएं, द्वंद, अप्रसन्नता, दुर्दशाएं और कष्ट होंगे ही। योग के अनुसार, 'राग' और 'द्वेष' सभी शारीरिक रोगों, मानसिक असंतुलन और आत्मिक असंतोष के मुख्य कारण होते हैं। योग एक शक्तिशाली विधि है जो 'कष्ट' और 'सुख' दोनों के ही बन्धन काट देता है। यह जीवन की एक संतुलित स्थिति है।

9. सार्वभौमिक भाईचारा

योग एक ऐसी ही प्रक्रिया है जिसके माध्यम से हम मस्तिष्क और भावों की सीमाओं को दूर कर सकते हैं और संपूर्ण ब्रह्माण्ड के संदर्भ में एक व्यापक दृष्टि विकसित कर सकते हैं। यह हमें, संपूर्ण ब्रह्माण्ड को स्वयं हमारे और हमारे परिवार के एक भाग के रूप में, अनुभव करने में मदद करती है। बहुत पहले ही हमारे ऋषि मुनियों में संपूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में देखा था। (वसुधैव कुटुंबकम्)।

10. शारीरिक तनाव से मुक्ति

शारीरिक तनाव से निपटने के लिए, योग विभिन्न प्रकार के आसनों की तकनीकों पर बल देता है। यह शारीरिक व्यायाम नहीं बल्कि ऐसी मुद्राएं होती हैं जो मांसपेशियों, जोड़ों और अवयवों से तनाव दूर करती हैं। आसनों का उचित अभ्यास शरीर के असंतुलनों को दूर करता है। योग एक रोगोपचार विधि नहीं है, यह शारीरिक स्थितियों का उपचार नहीं, बल्कि शरीर के स्वयं के साथ समन्वय की उपलब्धि के बाद रोगों से मुक्ति पाने के लिए होता है।

11. मानसिक प्रशिक्षण

पातंजलि, योग को इस प्रकार वर्णित करते हैं – अथ योग : अनुशासनम्, योग और कुछ नहीं बल्कि मस्तिष्क की सूक्ष्म क्षमताओं, अनुभवों और अभिव्यक्ति पर एक प्रकार का नियंत्रण है। सूत्र, पूर्ण यौगिक प्रक्रिया को परिभाषित करता है। सूक्ष्म अनुभव हमारे ज्ञान की सीमाओं के परे हैं। प्राणायाम और धर्म, आंतरिक मस्तिष्क में पहुंचने के साधन हैं। योग का सिद्धांत है कि शरीर और मस्तिष्क समेत सूक्ष्म क्षमताओं पर प्राण और चित्र के प्रभाव होते हैं। प्राणशक्ति, भौतिक संवेदी शरीर को नियंत्रित करने वाली आवश्यक ऊर्जा है। सूक्ष्म ज्ञान का अर्थ है दैवीय

चेतना का ज्ञान। तात्विक चेतना का अर्थ है पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और मस्तिष्क का ज्ञान। दैवीय चेतना तक पहुंचने के लिए, कुण्डलिनि जागरण का अभ्यास आवश्यक होता है।

12. शारीरिक परिवर्तन

विभिन्न अध्ययन यह दर्शाते हैं कि योगाभ्यास आक्सीजन उपभोग, कार्बनडाइ ऑक्साइड निष्कासन, और धमनीय दुग्ध सान्द्रता को कम करता है। यह छद्म गति और श्वास गति कम करता है। आधारीय त्वचा प्रतिरोधन में तीव्र वृद्धि होती है। यह अनुसंवेदी गतिविधि भी कम करता है। एक साथ देखे जाने पर यह परिवर्तन, योगाभ्यास की तकनीकों द्वारा तनावों में कमी का शरीर वैज्ञानिक आधार दर्शाते हैं। यह भी देखा गया है कि योगभ्यास के बाद प्लाविका (Plasma) का स्तर घटता है।

13. मनोवैज्ञानिक सुधार

बहुत से अध्ययन यह दर्शाते हैं कि योगाभ्यास द्वारा शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय परिवर्तन प्रभावित होते हैं। सृजनशीलता, बौद्धिकता, जटिलता, समानुरूपता और ऊर्जा स्तर बढ़ता है। नवीनता और आत्म-सम्मान शक्ति बढ़ती है।

14. स्वास्थ्य प्रबन्धन

एक रोगोपचार के रूप में योग के तीन पहलू होते हैं : प्रवर्तनकारी (Promotive), रोगनाशक (Curative), और निरोधनकारी (Preventive)। योग का मुख्य बल स्वास्थ्य के प्रवर्तन पर होता है। यह सिर्फ भौतिक शरीर के सुधार तक ही सीमित नहीं रहता बल्कि यह पूर्ण शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक भलाई में मानवीय व्यक्तित्व के संपूर्ण स्वास्थ्य से संबद्ध होता है। योग का एक अन्य पहलू जो अब तेजी से आगे आ रहा हे, रोगनाशक पहलू या रोगोपचारक पहलू है। यद्यपि आधुनिक चिकित्सा प्रणाली ने संसर्गज और संक्रामक रोगों की कुछ चुनौती भरी समस्याओं का समाधान किया है, फिर भी कैंसर, हृदय, श्वसन, पाचन संबंधी और मानसिक रोगों जैसे तनाव संबंधी रोगों और मनःकायिक

गड़बड़ियों की धटनाओं में चिन्ताजनक वृद्धि के रूप में नई चुनौतियां अधिक शक्तिशाली हैं। एक प्रमुख जीवन शैली हस्तक्षेप तकनीक के रूप में मनःकायिक रोगों के यौगिक प्रबन्धन ने संपूर्ण विश्व को जाग्रत कर दिया है। योग का तीसरा पहलू निरोधात्मक है। योग, स्वास्थ्य की श्रेष्ठ दशा तक पहुंचने का एक माध्यम है, और इस प्रकार तनाव के उन लक्षणों से बचने का जो असंतुलन उत्पन्न कर सकते हैं।

योगाभ्यास के आवश्यक तत्व

योगाभ्यास से पूर्ण लाभ प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित नियमों की समझ और उन पर अनुसरण आवश्यक है :

1. समय

योगाभ्यास के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय, सुबह, शरद ऋतु में प्रातः 7.00 बजे से पूर्व और ग्रीष्म ऋतु में प्रातः 6.00 बजे से पूर्व होता है। इसका अभ्यास सुबह के नाश्ते से पूर्व किया जाना चाहिए। आप इसे शाम को भी या किसी भी समय कर सकते हैं बशर्ते कि पेट खाली हो या किसी भी प्रकार का भोजन ग्रहण किए हुए 4 से 5 घंटे बीत चुके हों। सामान्य सिद्धांत यह है कि भोजन ग्रहण और योगाभ्यास में कम से कम तीन से चार घंटे का अंतराल होना चाहिए। चाय या पानी पीने के बाद कम से कम आधे घंटे का अंतराल होना चाहिए।

2. स्थान

योगाभ्यास जमीन पर करना चाहिए, बिस्तर पर नहीं। एक गलीचा या कम्बल या कालीन जमीन पर बिछाया जाना चाहिए। योगाभ्यास का स्थान हवायुक्त, साफ और खुला होना चाहिए। उस स्थान पर सूर्य की किरणें कम से कम दिन में एक बार पड़ती हों। ताजी हवा की अनवरत आपूर्ति होनी चाहिए। कोई शोर या प्रदूषण भी नहीं होना चाहिए।

3. पोशाक

योगाभ्यास के समय शरीर पर न्यूनतम वस्त्र होने चाहिए। कुर्ता-पायजामा या बनियान और नेकर, पुरुषों के लिए आदर्श पोशाक है। महिलाओं के

लिए कुर्ता-पायजामा पर्याप्त है। किंतु किसी प्रकार से वस्त्र, योगासनों के अभ्यास में हस्तक्षेप न करें। बहुत कसे हुए कपड़ों से बचना चाहिए क्योंकि वे रक्त संचार, श्वसन और माँसपेशियों की क्रियाओं में हस्तक्षेप करते हैं।

4. स्नान

अपने शरीर की देखभाल व्यक्तिगत स्वास्थ्य का एक भाग है। जेसा कि हम जानते हैं कि श्वसन हमारे शरीर के रोम छिद्रों द्वारा भी होता है। वे कुछ रुग्ण उत्पादों के निष्कासन का स्त्रोत भी होते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि रोमछिद्रों को साफ और कार्य योग्य रखा जाए। हमारे शरीर में असंख्य रोमछिद्र होते हैं और उनमें से प्रत्येक का मूल त्वचा में गहरे तक जाता है। शरीर इन रोमछिद्रों से पसीना और अशुद्धताएं निष्कासित करता रहता है और उनके माध्यम से हवा जाने देता है। नित्य प्रतिदिन उचित स्नान द्वारा उन्हें इस योग्य बनाए रखा जा सकता है।

5. वृहदान्त्र (Color) सफाई

स्नान से पूर्व वृहदान्त्र की सफाई उचित ढंग से की जानी चाहिए। मनुष्य निरंतर विशक्तता की संभावनाओं में जीता है। विष का निष्कासन आंतों, अधिक निर्णायक ढंग से, बड़ी आंतों की गतिविधियों पर निर्भर करता है। यदि यह अवयव ठीक से काम न करे तो खाद्य अवशेष और इसके उपोत्पाद अन्य अवयवों द्वारा छोड़े गए विषैले तत्व वृहदान्त्र में एकत्रित हो जाते हैं और पुनर्अवशोषण की सर्वाधिक घातक प्रक्रिया से होकर गुजरते हैं। इसके परिणामस्वरूप, विष जिसे तत्काल निष्कासित किया जाना चाहिए था, रक्त में पहुंचा दिया जाता है और फिर वहां से ऊतकों, नाड़ियों और मस्तिष्क में। यदि वृहदान्त्र की सफाई उचित ढंग से हो पा रही हो तो आंत्रों की मालिश (Intestional Massage) और योग 'एनिमा' (Yogic enema) दिया जाता है।

6. हांथों की सफाई

हाथों को नियमित रूप से साफ किया जाना चाहिए। विभिन्न प्रकार की वस्तुओं जैसे फर्नीचर, दरवाजों, खिड़कियों, किताबों, कलम, पालतू जानवरों और असंख्य अन्य विभिन्न घरेलू वस्तुओं, इत्यादि, को छूना ही पड़ता है। यह सभी

वस्तुएं कीटाणु युक्त होंगी जो हमारी उंगलियों पर और वहां से शरीर के अन्य अंगों या भोजन के साथ मुख में स्थानांतरित होते रहते है। हाथ धोने के लिए साफ मिट्टी या राख (यदि साबुन उपलब्ध न हो) का उपयोग किया जाना चाहिए।

7. बालों की सफाई

नियमित धुलाई, कंघी या ब्रुश द्वारा बाल साफ रखे जाने चाहिए। चने के बेसन का उपयोग बाल धोने के लिए किया जाना चाहिए। पिण्डर (मिट्टी) बाल साफ करने के लिए बड़ी उपयोगी होती है।

8. दांतों और मुख की सफाई

मुख, संक्रमण और स्व-विषाक्तता का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। यह मुख ही है जो हमें विभिन्न प्रकार की बीमारियों की ओर ले जाता है। मुख के माध्यम से प्रायः संक्रमण होता है जिसका साधारण कारण यह है कि मुख के द्रव्य पदार्थ और आस-पास के श्लेष्मल झिल्ली में उतनी संरक्षिण शक्ति नहीं होती जितनी कि शरीर के अन्य भागों में यह मान्यता है कि रक्त चाप के उतार चढ़ाव, गुर्दे की समस्याएं, जोड़ों में दर्द और पाचन की गड़बड़िया, जोड़ों में दर्द और पाचन की गड़बड़ियां प्रायः मुख संक्रमण के कारण होती हैं। अतः मुख और दांत सदैव स्वच्छ रखे जाने चाहिए।

9. कानों की सफाई

यह सामान्यतः मान्यता है कि कानों को सफाई की आवश्यकता नहीं होती, किंतु यह दिमाग में रखा जाना चाहिए कि कानों का सामानय स्वास्थ्य पर एक दूर का रिश्ता होता है। बाहरी कानों की सफाई में कानों के बाहर घुमावदार रगड़ आवश्यक होता है ताकि धूल या खूंट (मैल) ढीला पड़कर बाहर निकल सके। अंदर के लिए तेल का उपयोग किया जाना चाहिए।

10. आंखों को स्वस्थ रखना

नेत्रों सर्वाधिक सुप्रभाव्य और नाजुक अंग होते हैं और संपूर्ण शरीर के साथ निकटता से संबद्ध होते है। यदि शरीर को कोई भी गंभीर क्रियात्मक या

आंगिक परिवर्तन होता है वो सामान्यतः आंखें बीमारी दर्शा देती हैं। सिर दर्द, उबकाई आना, चक्कर आना इत्यादि आंखों के तनाव का प्रायः परिणाम होते हैं। आंखों को नित्य प्रति साफ किया जाना चाहिए।

11. नाक की सफाई

डिप्थीरिया, गठिया, चेचक, तपेदिक, दमा इत्यादि जैसी कई बीमारियों की रोकथाम नाक की अच्छी देखभाल से हो सकती है। नाक के नथुनों की सफाई, पागलपन समेत कई शारीरिक और मनोवैज्ञानिक रोगों का इलाज होता है। श्वसन नथुनों के मार्ग से होता है और नथुनों के मार्ग में एकत्रित दूषण के परिणाम स्वरूप खींची गई सांस के सामान्य परिमाण में तनिक भी परिवर्तन प्राकृतिक श्वसन प्रक्रिया को बाधित करता है जो सदैव रक्त संचार पर दुष्प्रभाव डालता है और संचार प्रणाली, पाचन प्रणाली और अन्य प्रणालियों को बाधित करता है। इसलिए 'नेति लोटा' के माध्यम से नाक की नियमित सफाई आवश्यक होती है।

12. उचित आहार

आहार का मानसिकता से सीधा संबंध होता है। एक प्रसिद्ध उक्ति है: 'जैसा आप खाते हैं वैसा ही आप सोचते हैं'। योगाभ्यास में आहार का महत्वपूर्ण स्थान होता है। भोजन का प्रकार और उसकी गुणवत्ता एक व्यक्ति की शारीरिक और साथ ही मानसिक स्थिति को प्रभावित करता है। भोजन तीन प्रकार के होते हैं : राजसी, तामसी और सात्विक। राजसी भोज बड़ा ही समृद्ध और स्वादिष्ट होता है। इस प्रकार का भोजन योगाभ्यास के लिए अवांछनीय माना जाता है। तामसी भोजन कई मसालों और नमक, मिर्च, चिकनाई इत्यादि के अत्यधिक उपयोग से बनाया जाता है। योगाभ्यास के लिए इस प्रकार के आहार की भी आवश्यकता नहीं होती है। सात्विक भोजन पोषक तत्वों और प्राकृतिक तत्वों से परिपूर्ण होता है किन्तु प्रारंभिक भी, जो योगाभ्यासियों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त होता है। योग में भोजन का मूल्यांकन उसकी कैलोरी मूल्य से नहीं होता किन्तु भोजन की गुणवत्ता और भोजन विधि का विशेष विचार होता है। वास्तव में आवश्यक यह होता है कि संतुलित आहार लिया जाए। दोनों ही समय सलाद कुछ अधिक मात्रा में लिया जाना चाहिए।

13. कॉफी और चाय से बचें :

कॉफी और चाय दोनों ही स्वास्थ्य के लिए हानिकारक और योगाभ्यास में बाधक होते हैं। यदि उनसे दूर रहें तो अच्छा है, यदि नहीं, तो किसी भी प्रकार की गंभीर हानि से बचने के लिए इन्हें एक दिन में दो बार से अधिक नहीं लिया जाना चाहिए।

योग का महत्व

जबकि मनुष्य ने भौतिक समृद्धि हासिल कर ली है, वैज्ञानिक और तकनीकी क्षमता विकसित कर ली है और उनके बौद्धिक उपयोग से जीवन स्तर में सुधार के प्रयास में विकास कसी गति तीव्र कर ली है, यदि जीवन की गुणवत्ता नहीं, तो मष्तिष्क कम से कम जीवन में व्याप्त कष्टों और दर्द के लिए तो उत्तरदाई रहा ही है। प्राचीन काल से ही मष्तिष्क, मनुष्य का महानतम् परामर्शदाता माना जाता रहा है जिसमें शरीर में रोगों को उत्पन्न करने की खतरनाक संभावनाएं रही हैं जो उसका विनाश भी कर सकते हैं। इसी कारण मष्तिष्क आत्मसंयम की व्यवस्था विकसित की गई ताकि किसी भी प्रकार की शरारत की मनुष्य द्वारा संभावनाओं को रोका जा सके। योग, मनुष्य के मस्तिष्क की गतिविधियों को नियंत्रित करने का एक संभाव्य और शक्तिशाली माध्यम है। कई कारणों से समकालीन समाज में योग महत्वपूर्ण होता है।

1. योग, जीवन को अर्थपूर्ण और सामाजिक बनाता है।
2. यह सभी परिस्थितियों में मनुष्य को संतुलित रखता है।
3. यह मनुष्य की वास्तविक प्रकृति और समाज के साथ उसके संबंधों को समझने में मदद करता है।
4. योग, मनोवैज्ञानिक और शारीरिक रोगों का प्रबन्धन करता है।
5. योग, इंद्रियों पर नियंत्रण रखता है।
6. योग, वास्तविक ज्ञान को पहचानने की शक्ति का विकास करता है।

7. योग, शरीर को स्वस्थ करता है।
8. योग, मस्तिष्क की रूपात्मकताओं को नियंत्रित करने में मदद करता है।
9. योग, आत्मा को पल्लवित होने के अवसर प्रदान करता है।
10. योग, सभी प्रकार की उपलब्धियों और विकास का मुख्य स्त्रोत होता है।
11. योगाभ्यास द्वारा सभी प्रकार के संशय दूर किए जा सकते हैं।
12. योगाभ्यास द्वारा मनुष्य अपने जीवन का सर्वोत्तम लक्ष्य हासिल कर सकता है।
13. योग सभी स्थितियों में सामान्य रूप से कार्य करने के लिए स्वंशासीय तंत्रिका प्रणाली को निर्देशित करता है।
14. योगाभ्यासी कभी खाली नहीं बैठता।
15. योगाभ्यास द्वारा इच्छा शक्ति दृढ़ होती है।
16. योग द्वारा सभी प्रकार के भय दूर किए जा सकते हैं।
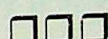
अध्याय-14

भारत के प्रमुख व्यंजन
(Main Cuisines of India)

भारतीय पाक कला की लालसा मध्यकालीन युग स आरंभ हुई जब योरोपीय लोग मसालों के व्यापार हेतु भारतीय उप-महाद्वीप में आए। डच, अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के मसालों के लिए उपनिवेषीय उधम ने उन्हें न सिर्फ सौभाग्य प्रदान किया बल्कि उन्होंने भारतीय भोजन का एक अच्छा स्वाद भी चख लिया था।

आज भारतीय व्यंजन विश्वविख्यात हैं और उन्हें विश्व की तीन भिन्न पाककलाओं में से एक माना जाता है, अन्य दो हैं चीनी और फ्रांसीसी।

भारतीय पाक कला पर्यटकों में सर्वोत्तम पाककलाओं में से एक मानी जाती है। युगों से भारतीयों ने अपने महाद्वीप के आसपास से विभिन्न पाक शैलियां अपनाई हैं। विचारों के इस आदान प्रदान में इसे एक शानदार विविधता प्रदान की। किंतु, सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह है कि यह एक सूक्ष्म, सांस्कृतिक संस्लेषण भी लेकर आया।

भारत में भोजन की विविधताएं इतनी हैं कि एक वह यात्री जो यह विचार लेकर आया है कि यह रसा और चावल (Curry and rice) का देश है अचंभे में पड़ जाता है। भारतीयों के लिए 'करी' एक व्यंजन का नाम नहीं है। इसमें व्यंजनों का एक संपूर्ण वर्ग समाया है। मांस, मछली, मुर्ग, भाजियों और कुछ अवसरों पर फलों के साथ कितने ही प्रकार के सालन या 'करी' (curry) बनती है। उनमें मात्र एक समानता यह है कि उनमें सबमें हल्दी समेत ताजे पिसे मसाले पड़े होते हैं और वह रसेदार होता है। कोई मानक 'करी' चूर्ण मिश्रण नहीं होता और इसका अनुपात व्यंजन के अनुसार भिन्न होता है। प्रत्येक भोजन के संघटक (ingredients) छः रसों या स्वाद पर आधारित होते हैं मीठा, नमकीन, कड़वा, कठोर

(astringent) खट्टा और तीखा - मान्यता है कि सही अनुपात में उपयोग होने पर प्रत्येक घटक का विशेष भौतिक लाभ होता है। भारतीय पाक कला में उपयोग होने वाले अधिकांश मसाले औषधीय मूल्य के होते हैं। पाक कला में अधिकांशतः सामान्य रूप से उपयोग होने वाले मसाले और बूटियां हैं हींग, बड़ी इलाइची, लौंग, दालचीनी, धनिया, लहसुन, अदरख, हल्दी और सौंफ।

हल्दी लगभग सभी व्यंजनों में पड़ती है। यह भोजन के संरक्षण में मदद करती है और व्यंजन को एक प्राकृतिक पीला रंग दे देती है। इसमें पाचक तत्व भी होते हैं। अदरख पाचन के लिए अच्छा माना जाता है। कई लोग इसे भोजन पकाने में ही नहीं उपयोग करते वरन् इसे सलाद के रूप में भी खाते हैं। धनिया अधिकांश व्यंजनों में उपयोग होती है। इसका, खाने वाले व्यक्ति के शरीर पर ठंढा प्रभाव होता है। इलाइची जरा तेज और मीठी होती है। इसकी महक अच्छी होती है। यह सभी व्यंजनों और सालन में भी उपयोग होती है। यह पाचन में मदद करता है। केसर, सबसे महंगा मसाला, थोड़ी मात्रा में ही बहुत सा प्रभाव और सुगन्ध उत्पन्न करता है। यह कश्मीर की घाटियों में उगाया जाता है। भारतीय व्यंजनों में सरसों, दालचीनी, जायफल, कालीमिर्च, लौंग, पोस्ता और जीरा भी उपयोग होता है।

'मसाला' कई ऐसे तत्वों से मिलकर बनाया जाता है। यह सूखा या तरल गाढ़ा हो सकता है। पकाने वाला ही यह निर्णय करता है कि मसाले के मिश्रण में क्या पड़ेगा। 'गरम मसाला' मात्र सुगंधित मसालों का ही मिश्रण होता है। इसे पहले से ही बना कर भण्डारण किया जा सकता है। अब पैक किए गए गरम मसाले के विभिन्न मिश्रण भी दुकानों में उपलब्ध होते हैं। पैकेट ही आपको बता देता है कि यह किस प्रकार के व्यंजनों में उपयोग होगा। 'गरम मसाले' में सामान्यतः दालचीनी, लौंग, जीरा, जावित्री, धनिया, जायफल और काली मिर्च होती है।

भारतीय पाककला को चार भिन्न क्षेत्रों- उत्तरी,पश्चिमी, पूर्वी,और दक्षिणी में बांटा जा सकता है। क्षेत्र में उपलब्ध कच्ची सामग्री के अनुसार भोजन की आदतें वर्षों के समयकाल में बनी हैं। उत्तरी भारत में मांस, शाक भाजियां, बादाम, दुग्ध उत्पाद, मिर्च और गेहूं प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। इसलिए लोरा नान, रोटी, पूरी या पराठे के रूप में गेहूं के आटे का उपयोग पसंद करते हैं। इस मान्यता

के विरुद्ध कि उत्तर भारतीय मांसाहारी होते हैं, मांस का व्यंजन एक अतिरिक्त व्यंजन होता है। जबकि एक भारतीय घर में परोसे जाने वाले संपूर्ण भोजन में एक सालन युक्त भाजी (Vegetable Curry) और दाल सामान्यतः आवश्यक होती है।

उत्तर भारत में पकाने का माध्यम शुद्ध घी होता है, यद्यपि मंहगा होने के कारण इसका उपयोग अब यदा कदा होता है क्यों कि यह मोटापा भी बढ़ाता है।

पश्चिम और पूर्व में चावल मुख्य आहार होता है। मछली बहुतायत में उपलब्ध होती है। इसलिए अधिकांश व्यंजन इन्हीं कच्ची सामग्रियों के आस पास घूमते हैं। तटीय स्थानों को छोड़ कर दक्षिण भारत मुख्यतः शाकाहारी है। शताब्दियों में ढेर सारे शाकाहारी व्यंजन विकसित किए गए हैं। इनमें इतनी विविधता होती है कि एक पर्यटक अपने सामने रखे विकल्पों से अचंभे में पड़ जाता है।

यदि भारतीयों के लिए भोजन पकाना महत्वपूर्ण है तो इसका प्रस्तुतिकरण कम महत्वपूर्ण नहीं होता। पारंपरिक रूप से भारतीय भोजन एक बड़े केले के पत्ते या एक (बड़ी पीतल, स्टील या चांदी की) थाली में परोसा जाता है। इस पर प्रत्येक व्यंजन को थोड़ा थोड़ा परोसने के लिए कई कटोरियां रखी जाती हैं। एक प्रारूपिक भोजन में एक मांस या मछली का व्यंजन, दो शाक-भाजियों के व्यंजन, दाल, दही और 'खीर' या 'हलवा' नामक एक मीठा व्यंजन होता है। अन्य सहगामी व्यंजन होंगे, अचार, चटनी, पापड़ इत्यादि। यदि मेहमान चाहे तो नींबू का एक छोटा टुकड़ा भी थाली में रखा जा सकता है।

भारत में, ग्रामीण क्षेत्रों में, पकाने के लिए मिट्टी के बर्तन प्रयोग में लाए जाते है। ईंधन का चयन लकड़ी या फिर कोयले में होता है, जिसमें आंच राख की एक परत के नीचे होती है, ताकि पकाना धीमा हो और सुगंध को स्थिर होने के लिए ढेर सारा समय मिल जाए। पारंपरिक रूप से अधिकांशतः पकाने का काम काले मिट्टी की 'चट्टियों' (बर्तनों) में होता था। ग्रामीण पंजाब और उत्तर प्रदेश में, 'साबुत माह' (साबुत मसूर की काली दाल) और 'सरसों का साग' आज भी इसी प्रकार पकाया जाता है। गोवा में 'फिश करी' (मछली सालन), हैदराबाद में 'बिरयानी' या 'चिप्पे का गोश्त'। दही लगभग संपूर्ण देश में मिट्टी के बर्तनों में जमाया जाता है।

कहा जाता है कि 'तंदूर' पूर्ववर्ती उत्तर-पश्चिमी सीमावर्ती प्रांत (North-West Frontier Province) की देन है जो अब पाकिस्तान में है। तंदूर, सड़क के नुक्कड़ों पर और पंजाब, हरियाणा, चंडीगढ़, कश्मीर और उत्तर प्रदेश के राजमार्गों के किनारे के ढाबों में देखे जा सकते हैं।

क्षेत्रीय विकल्प

उत्तर भारतीय भोजन

उत्तर भारतीय पाककला भारत में सर्वाधिक सरस है। यह बहुत कुछ भारत में आए मुगलों और उत्तर भारत से जुड़े 'मुगलाई भोजन' से आया है और यह नाम मुसलमानों के प्रभाव के कारण उपजा।

रोटी चावल से अधिक सामान्यतः खाई जाती है। सर्वव्यापी 'चपाती' सामान्य व्यक्ति का भोजन है। 'नान' एक प्रकार का विलासोपरण है और तंदूरी भोजन के साथ चलती है। रोटी की एक अन्य विविधता है 'परांठा', घी से सिंकी गेहूं के आटे से बनी एक प्रकार की रोटी। यह मुलायम और स्वादिष्ट होती है।

तंदूरी भोजन उत्तर भारतीय विशेषता है और यह उस मिट्टी से बने चूल्हे का संदर्भ करता है जिस पर दही और मसालों के मिश्रण में भिगोने के बाद इसे पकाया जाता है। तंदूरी 'चिकन' या 'मटन' एक भुना भोजन होता है जो पकाने से कुछ घंटे पहले ही से मसालों और दही में भिगोए रखा जाता है। नान हरे सलाद और एक मिठाई समेत 'तंदूरी चिकन' वास्तव में एक महाराजा का भोजन होता है। भारत आने वाले विदेशी पर्यटक इसके लालच से बच नहीं सकते। यह अधिक मसालेदार नहीं होता और पाश्चात्य पाककला से काफी निकट होता है।

भारत 'कबाब' का भी देश है। मांस के कबाब कई विविधताओं में आते हैं। इनमें से कुछ हैं : बोटी कबाब, रेशमी कबाब, पसिन्दा कबाब, सीख कबाब और शम्मी कबाब। अंतिम कबाब (शम्मी कबाब) मसालों के साथ पीसा गया मांस और धीमी आंच पर तल कर पकाया जाता है।

उत्तर भारतीय पाककला का अन्य स्वादिष्ट व्यंजन है 'बिरयानी', जो चावल, जाफरान और मसालों में भिगोया गया मेंमने या मुर्गे के मांस से मिल कर

बनाया जाता है। पुलाव, बिरयानी का एक कम जटिल रूपांतर होता है। एक अन्य रूपांतर है - नारियल, बादामों, आमों और पपीते से बना। मीठा पुलाव-चावल।

मटन, मछली या चिकन के तंदूरी व्यंजनों के अतिरिक्त अन्य विकल्प हैं- रोगन जोश, मेमने के मांस के साथ सालन, कोफ्ता, कोरमा या दो-प्याजा। दो प्याजा में खूब सारा प्याज पड़ता है, कोरमें में घी बहुत पड़ता है और 'कोफ्ते' सालन से युक्त मांस के छोटे गोल टुकड़े होते हैं। कोफ्ते कई रूपों छोटे और बड़े में आते है। बड़े वालों में उबले अंडे भरे जाते हैं। उत्तर भारतीय भोजन के साथ थोड़ी दाल जरूर होती है। जो लोग मांस नहीं खाते उनके लिए कई विकल्प हैं :- पनीर, साग-पनीर, भर्ता, और कई अन्य सालन युक्त व्यंजन जिसमें गोभी, आलू और मिश्रित शाकभाजी का उपयोग होता है। अब तो गोभी और पनीर के व्यंजन भी तंदूर में पकाए जाते हैं। खीर, फिरनी या हलवा जैसे मिष्ठान प्रायः बनाए जाते हैं।

कश्मीरी भोजन भी मुगलई भोजन से बड़ा प्रभावित रहा है। इसमें मांस के व्यंजनों की अधिक विविधताएं होती हैं। कश्मीर में मेमने का मांस बहुत पाया जाता है। उत्तर भारतीय व्यंजनों की अपेक्षा कश्मीरी भोजन थोड़ा अधिक मसालेदार होता है। सालन को गाढ़ा करने के लिए एक छोटे प्याज जैसा लहसुन, कश्मीरी 'प्रान', कश्मीरी मिर्च और पिसे मसाले का उपयोग करते हुए अधिकांश व्यंजन मक्खन या दूध में पकाए जाते हैं। 'रोगन जोश' कश्मीरियों द्वारा बनाये जाने वाले प्रसिद्ध मांस के व्यंजनों मतें से एक है। यह एक प्रकार का 'मटन स्ट्यू' (Mutton Stew) है, जो मिर्च, धनिया, जीरा, पोस्त दाना, इलायची, लहसुन, अदरख और एक दर्जन अन्य संघटकों को मिलाकर टमाटर और दही के साथ धीमी आंच में पकाया जाता है। 'आब घोष' एक अन्य स्वादिष्ट व्यंजन है, एक साधारण मांस का व्यंजन जो हल्के मसालेदार दूध में धीमी आंच में पकाया जाता है। 'धनियल कारा' में धनिया की महक होती है और 'डेगरा दाल' को पकाने में मेथी के पत्ते और अनार के रस का उपयोग होता है। कश्मीरी लोग 'गुस्तबा' या 'रिस्ता' नामक मांस के छोटे-छोटे गोलेदार व्यंजन का आनन्द लेते हैं।

कश्मीरी लोग एक अलग ही प्रकार की चाय, 'कहवा' बनाते हैं। यह हरी चाय की पत्तियों, शकर, दालचीनी और एक चुटकी शुद्ध जाफरान को मिला कर बनाई जाती है। उसमें ताजे बादाम भी डाले जाते हैं।

पंजाब के व्यंजन घी या तेज से तर होते है। 'दम आलू' छोटे-छोटे आलुओं से बनी होती है जिन्हें महीन पिसे मसालों में पकाया जाता है। 'मक्की दी रोटी' (मकई की रोटी) शुद्ध घी से युक्त होती है। 'सरसों दा साग' (सरसों का साग) अदरख, मकई के दाने, लाल मिर्च और शुद्ध घी में धीमी आंच में पकाया जाता है।

उत्तर-पश्चिमी राज्य राजस्थान में आटे और चने की दाल से बने व्यंजनों की गई विविधताएं होती हैं। 'दाल-बाटी' या 'बफले' कंडों (उपलों) पर धीमी आंच में आटे की लोई को पका कर बनाए जाते हैं। जब बाटी सिंक कर हल्की भूरी हो जाती है तो इसे शुद्ध घी में भिगो दिया जाता है। 'बफले' ऐसे ही होते हैं, अंतर मात्र यह होता है कि उन्हें पानी में उबाल कर घी में भिगोया जाता है। इसे सभी दालों को मिला कर पकाई गई एक 'खास दाल' में परोसा जाता है। व्यंजन के साथ मीठे लड्डू भी परोसे जाते हैं।

उत्तर प्रदेश की राजधानी पाक कला में बहुत समृद्ध है क्योंकि इसे अवध के शाही परिवारों से बड़ा संरक्षण प्राप्त हुआ है। पकाने की 'दम' शैली या धीमी आंच में पकाने की कला लखनऊ की ही देन है।

कबाब, कोरमा, कलिया, निहारी-कुलचे, जर्दा, शीरमाल, रूमाली रोटी और वर्की परांठे अवध के ही व्यंजन हैं। अवध के व्यंजनों की समृद्धि न सिर्फ व्यंजनों की विविधता में है बल्कि अवध की पसंद, निहारी, गाढे मसालेदार सालन में साफ मांस को पका कर बनाया जाता है। निहारी मूलतः गौ/भैंस के मांस से बनाया जाता है जिसे कुलचों के साथ खाया जाता है। आज कल गौ मांस की जगह बकरे के मांस (Mutton) का उपयोग होता है। अवधी पाक कला को अपने कबाबों की विविधता -जैसे काकोरी कबाब, गलावट के कबाब, शामी कबाब, बोटी कबाब, पतीली के कबाब, घुटवा कबाब और सीख कबाब - पर गर्व होता है। गाढ़े सालन से युक्त 'कोरमा', 'दस्तरखान' का एक अनिवार्य व्यंजन होता था। 'बिरयानी' एक अन्य व्यंजन हैं जो 'दम' शैली में पकाया जाता है। 'वरकी परांठे' और 'शीरमाल' अवध के स्वादिष्ट व्यंजन होते हैं।

मध्य प्रदेश की पाक कला अपेक्षाकृत साधारण होती है। इसकी विशिष्टता है सभी प्रकार के हल्के नाश्ते, जैसे बेसन से बने नाना प्रकार के सेव, या मूंग दाल

या आलू भरी इन्दौर की प्रसिद्ध कचौड़ी। नाश्ते में : गर्म 'पोहे' साथ में 'सेव' और 'कुरकुरी' जलेबी - गाढ़ी मलाईदार गर्म मीठा दूध चौबीसों घंटे मिलता है।

उत्तर भारत में चाय के साथ 'समोसे', 'पकौड़े' और मिठाइयां जैसे रसगुल्ले, गुलाब जामुन और बर्फी परोसे जाते हैं।

पश्चिमी भारत के स्वादिष्ट व्यंजन

पश्चिमी राज्य, महाराष्ट्र, अपने व्यंजनों की विविधताओं के लिए प्रसिद्ध है। गुड़ और चने की दाल भर कर बनाई गई 'पूरन पोली' शुद्ध घी या दूध के साथ परोसी जाती है। यहां नारियल के व्यंजनों की भी कई विविधताएं हैं जैसे नारियल 'बर्फी' और 'चकली' जिसे हल्के नाश्ते के रूप में परोसा जाता है। 'चकली' चावल के आटे से बनती है जिसमें तेल और मसाले मिलाए जाते हैं। इसे एक मोटे छन्ने से दबा कर गोल-गोल निकाल कर कागज पर रख देते हैं। फिर इसे धीमी आंच में तेल में तल देते हैं।

मुंबई का भोजन देश के अन्य भागों के भोजन से भिन्न होता है। संभवतः यह कुछ छोटे मगर प्रभावकारी समुदायों की उपस्थिति के कारण है - जैसे पारसी, जो लगभग हजार वर्ष पूर्व ईरान से आकर भारत में बस गए थे, और अन्य समुदाय जैसे सिंधी, पंजाबी, गोवा के लोग और खोजा मुसलमान।

'धनसक', पारसियों का एक योगदान, मुर्ग या मेमने के मांस से बना एक व्यंजन है जिसे उदारता से मसालों के साथ, दालों और साग-भाजियों के शोरबे में पकाया जाता है।

बम्बई के वाशिन्दे दो मुसलमन समुदाय - बोरा और खोजा - भी है। प्रत्येक की अपनी पाक शैली है।

सिंधी, जो पाकिस्तान के सिंध से आए थे, अपने साथ अपनी पाक कथा लाए। यह बड़ी प्रसिद्ध है और प्रायः मांस पर आधारित होती है।

'बाम्बे डक', (Bombay Duck) एक समुद्री मछली का उपनाम है, जो सालन के साथ पकाए जाने या तले जाने पर बहुत स्वादिष्ट होती है।

इस क्षेत्र के मूल निवासी, महाराष्ट्रियों और गुजरातियों में भी कुछ वर्ग मांसाहारी हैं। किंतु उनमें से अधिकांशतः शाकाहारी हैं। दक्षिण भारतीय ब्राह्मणों के उनके प्रतिपक्ष के समान उन्होंने शाकाहारी पाक कला में महारथ हासिल कर लिया है। भोजन को सुस्वाद और पौष्टिक बनाने के लिए उनकी पाक कला में अंकुरित का उपयोग कर हल्के मसालों में धीमी आंच पर पकाना सम्मिलित हैं। उन्हें खट्टे मीठे व्यंजन पसंद हैं। पश्चिमी क्षेत्र के लोग गेहूं और चावल दोनो ही खाते हैं, यद्यपि गेहूं से अधिक चावल खाते हैं।

कुछ वर्षों पहले तक गोवा पुर्तगालियों के कब्जे में था। दिसंबर 1961में यह स्वतंत्र हुआ। पुर्तगालियों का प्रभाव इसकी पाक कला में स्पष्ट झलकता है। गोवा के सर्वाधिक प्रसिद्ध व्यंजनों में से एक है 'विण्डालू', मसालों और सिरके के साथ पकाया गया मुर्ग (chicken) सुअर का मांस (pork) या मछली (Fish) जिसने अपना नाम पुर्तगाली 'विंदालहों' से लिया। अन्य भारतीयों से भिन्नता में, गोवा के लोग सुअर का मांस (pork) बहुत खाते हैं, और 'विंदालू' प्रायः सुअर के मांस से पकाया जाता है। उनके ताजे गुलमे (Sausages) का भी एक विशेष स्वाद होता है। वे ताजा समुद्री मछली भी बहुत खाते हैं।

गुजरात हर व्यंजन में अपने हल्के मीठेपन के कारण विख्यात है यहां तक कि हल्के खट्टे 'ढोकले' में भी, जो मट्ठे के साथ बेसन से पकाया जाता है। इस पर सरसों, धनिया और नीम की पत्तियों से छौंका दिया जाता है। विशेष अवसरों पर गुजराती 'उनधिया' पकाते हैं। इस व्यंजन में कई प्रकार की शाक भाजियां पड़ती हैं, जैसे फलियां, बैंगन, मेथी की पत्तियां, शलजम और अन्य जड़ की सब्जियाँ। सब्जियां धीमी आंच पर तेल में पकाई जाती हैं और मसाले अंत में मिलाए जाते हैं।

बंगाली विशेष व्यंजन

बंगाल में भोजन सादा होता है और मुख्य भोजन के रूप में चावल पर निर्भर होता है। अधिकांश बंगालियों के लिए समुद्री मछली प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है। उन्हें मीठे पानी की मछली पसंद होती है। सौभाग्यवश इसकी प्रचुरता है क्योंकि ग्रामीण बंगाल में अधिकांश घरों में अपना मछली का तालाब होता है। मछली के

व्यंजन पकाने के लिए सरसों के बीज (राई) और सरसों का तेज सामान्यतयाः उपयोग होता है। 'बेकड़ी' (bekdi), एक विशेष बंगाली मछली, की पाक शैली पाश्चात्य है।

यदि बंगालियों का पहला प्यार मछली है तो दूसरा निःसंदेह मिठाई। बंगाल से आई विशेष मिठाइयां 'संदेश' और 'रसगुल्ला' – पनीर से अलग अलग तरीकों से बनाई जाती है। एक उल्लेखनीय अपवाद है 'मिट्टी दोई' (मीठा दही)। बंगाली पाक कला भारत में अनोखी है जहां सादा दही नहीं परोसा जाता।

दक्षिण भारतीय भोजन कला

दक्षिण भारत के लोग चावल बहुत खाते हैं। यह दक्षिण में ही है जहां रसा (curry) को सम्मानपूर्वक देखा जाना चाहिए। उनका रसा/सालन उत्तर भारतीयों की तरह समृद्ध हो सकता है किन्तु यह निश्चित रूप से अधिक गर्म होता है।

शाकाहारियों के लिए दक्षिण भारत स्वर्ग है। उनके शाकाहारी भोजन में बहुत विविधता है, विशेषकर ब्राह्मणवादी व्यंजन जो गैर-ब्राह्मणवादी भोजन से भिन्न होता है। रूढ़िवादी दक्षिण भारतीय ब्राह्मण दृढ़ता पूर्वक शाकाहारी होता है जो (महक के कारण) लहसुन और प्याज, और (रक्त जैसे) रंग के कारण टमाटर से भी दूर रहता है। सभी चारों राज्यों में उसका भोजन ग्रामीण परिवेश की उदारता पर निर्भर होता है। इमली और मिर्च यहां उगती है। नारियल बहुतायत में उपलब्ध होता है और यहां अरहर की दाल उगाई जाती है। इसके साथ इमली, मसालों और शाकभाजियों का संगम, उनका मुख्य व्यंजन, सांभर बनाता है। रसम् (मुल्लिगतओनी) एक पतला कालीमिर्च युक्त दाल पर आधारित 'सूप' (soup) होता है, जो दोपहर और रात में दो ही समय के भोजन में लिया जाता है। और यदि बुड्ढी महिलाओं की कथा पर विश्वास किया जाए तो यही ब्राह्मणों की तीव्र बुद्धि की शक्ति के लिए जिम्मेदार है। रसम्, अब प्रसिद्ध 'मिलिगताओनी सूप' का पूर्वज है, यह नाम ही तमिल 'मिलगु तन्नीर' (कालीमिर्च का पानी) का बिगड़ा हुआ रूप है। एक दक्षिण भारतीय भोजन में शामिल होते हैं : सांभर, रसम्, दो या तीन शाकभाजियां, प्रायः कसे हुए (grated) नारियल और दही के साथ पका कर उबले चावल के साथ खाई जाती है।

किन्तु सर्वाधिक प्रसिद्ध व्यंजन जो दक्षिण भारत से आए हैं, 'डोसा' और 'इडली' हैं। इनकी प्रसिद्ध संपूर्ण राष्ट्र में कुछ ऐसी फैली है कि 'इडली' और 'डोसा' भोजनालय लद्दाख में लेह या सिक्किम, भूटान और काठमाण्डू जैसे हिमालय के दूर दराज के क्षेत्रों में भी पाए जा सकते हैं। ये दोनों ही दाल और चावल के पिसे और खमीर उठे मिश्रण से बनते हैं। इन्हें 'सांभर' और नारियल 'चटनी' के साथ परोसा जाता है। 'डोसा' तवे पर सिंका पतला चिल्ला (pancakes) जैसा होता है और इडली वाष्प में पकाई जाती है। यद्यपि दक्षिण भारत के चार राज्यों के भोजन में एक परिमाण में समानता होती है, एक क्षेत्र ऐसा है जहां की पाक कला भिन्न होती है। यह है हैदराबाद जहां मुगलई निजामों का शासन था। प्रतिरूपी हैदराबादी भोजन में मुसलमान स्पर्श होता है और इसमें कई व्यंजन सम्मिलित होते हैं जो इस क्षेत्र के अनोखे होते हैं, जैसे 'बाधारा बैंगन' बकरे के गोश्त से बना एक भिन्नताकारी व्यंजन। हैदराबाद की बिरयानी का स्वाद भी थोड़ा भिन्न होता है। सर्वाधिक पारंपरिक बिरयानी है 'कच्ची गोश्त की बिरयानी'। इसमें मांस के टुकड़े कच्चे या गैर-पके, मसालों के साथ दही और हरे पपीते में (मांस के टुकड़ों को मुलायम बनाने के लिए) भिगोया जाता है। 'जाफरानी बिरयानी' में जाफरान पड़ता है, और यदि यह छोड़ दिया जाए तो यह 'सफेद बिरयानी' या 'सूफियानी बिरयानी' बन जाती है। भिगोए हुए मांस को फिर अधपके अच्छी किस्म के बासमती चावल के साथ परतों में रखा जाता है और फिर यह सब एका तांबे के देगचे में रखा जाता है। फिर इसे आटे से चिपका कर बन्द कर दिया जाता है ताकि इसकी सुगंध इसी में रह जाए और फिर धीमी आंच में चढ़ा दिया जाता है।

कबाब, बारीक पिसे मांस से बनाए जाते हैं जिसे दालचीनी, इलायची और कालीमिर्च के साथ पीसा जाता है। कच्चा अण्डा भी इस मिश्रण में डाला जाता है। छोटे-छोटे गोले बना कर उन्हें फैला लिया जाता है और फिर इसे एक लोहे की छड़ में लपेट कर उसे आंच में घी से भूना जाता है। यह सीख कबाब होता है। अन्य विविधता है शामी कबाब। इसे बनाने के लिए पिसे मांस को लंबे गोलाकार में लोहे की छड़ों में रख धीमी धीमी आंच में देर तक भूना जाता है।

दक्षिण-पश्चिमी राज्य केरल में चावल से बने व्यंजनों की पूरी श्रृंखला पाई जाती है। नारियल इस राज्य में भरपूर है और मछली के साथ गाढ़ा मसालेदार

नारियल का सालन (curry) सामान्यतः प्राप्त होता है। 'अवियल' एक विशेष सब्जी है जो विशेष अवसरों पर बनाई जाती है। कई सब्जियों को पतला-पतला काट कर नारियल के पानी में पकाया जाता है। यह व्यंजन मसालेदार होता है और चावल के साथ खाया जाता है।

कर्नाटक में भी नारियल खाने में खूब उपयोग होता है। यहीं 'उडुपि' शहर भी है, अब प्रसिद्ध मसाला डोसा था उत्पत्तिकर्ता। 'बेसी बेली' चावल का व्यंजन है जो राज्य में बड़ा प्रसिद्ध है।

रोटियां (Breads) :

भारत में रोटियों की गई विविधताएं हैं। पश्चिम से भिन्न, यह रोटियां भारतीय आहार का मुख्य भोजन होती है।

चपाती और नान, ओवन (Oven) या तंदूर में पकाई जाती हैं। पतली छोटी चपातियां मेहनत से बेलकर तवे पर रख चूल्हे की आग में सेंकी जाती हैं। कुछ 'पूरियां' तेल या घी में तली जाती हैं और 'परांठे' थोड़ी घी या तेल से तवा में सेंके जाते हैं।

सर्वाधिक साधारण है 'चपाती' जो भारतीय कहीं पर भी लकड़ी या कोयले की मदद से अंगीठियों या चूल्हों पर सेंकते दिख जाएंगे। मूलतः 'चपाती' पानी से आंटे को माड़, पतला-पतला बेलकर एक 'पैन केक' की तरह धीमी आंच पर सेंकी जाती है।। यह गर्म और ताजी सब्जियों या सालन युक्त मांस के व्यंजन के साथ खाई जाती हैं।

रोटी का एक अन्य रूप है परांठा जो मक्खन से सेंकी जाती हैं। यह नर्म ओर स्वादिष्ट निकलती हैं। आलू या अन्य शाकभाजियों से भरे परांठे पूर्ण आहार होते हैं। और सादे दही और अचार के साथ खाए जाते हैं।

'पूरी' उसी भांति एक लकड़ी के बेलन की मदद से पतली और गोल बेली जाती हैं और घी या तेल में तली जाती हैं। इसी प्रकार की थोड़ी भिन्न लूची कलकत्ते में बनाई जाती है। यह पूरियों से भिन्न होती हैं।

दक्षिण में 'डोसा' और 'इडली' रोटी के स्थान पर खाए जाते हैं। डोसा, चावल से बनाया और 'क्रेप' (Crepe), की तरह पकाया जाता है। 'इडली' वाष्प में पकाई जाती है। 'डोसे' को प्रायः सब्जियों से भर दिया जाता है तो यह पूर्ण आहार हो जाता है। दोनों ही 'सांभर' नामक एक सब्जियों के सूप के साथ खाए जाते हैं।

कालीमिर्च और सौंफ जैसे मसालों से युक्त पापड़, प्रत्येक आहार के साथ चलता है। गर्म परोसे जाने पर वे बड़े स्वादिष्ट लगते हैं। वे पेय पदार्थों के साथ अच्छे चलते हैं।

मिष्ठान (Desserts) :

भारत मिठाइयों का देश है, और भारतीय, आर्थिक कारणों से यदि ऐसा कर सकें, तो प्रत्येक भोजन के साथ मिठाई खाना चाहेंगे। प्रत्येक क्षेत्र की अपनी विशेषता होती है।

मूलतः विभिन्न क्षेत्रीय नुस्खे चावल 'पुडिंग', मिल्क 'पुडिंग', मीठी चाशनी में डुबोए गए सब्जियों और फलों के विभिन्न रूप होते हैं। इनके अतिरिक्त, दूध पर आधारित बर्फियों की कई विविधताएं होती हैं। इनकी सैकड़ों संयुक्तियां विविधताएं उत्पन्न करती हैं। इन्हें किशमिश, बादाम, पिस्ता और ऐसे मेवों से सजाया जाता है।

अधिकांश भारतीय मिठाइयां, पानी उड़ाने के लिए दूध को काफी देर तक उबाल कर बनाई जाती हैं। इसे खोआ कहते है। इसमें घी, शकर और कई अन्य सुगन्धित वस्तुएं डाल कर इनसे बर्फी, मलाई, खीर रसगुल्ला और संदेश बनाया जाता है।

पान (Beetle Leaf)

पान के पत्ते में कई संघटक डाल कर लपेट कर पेश किया जाता है। भारत के राज्यों की तरह पान की भी कई शैलियां हैं। ताम्बूल पत्ते से बना पान सर्वाधिक प्रसिद्ध है। पत्ते को एक 'बीड़ा' में लपेट कर उसमें एक लौंग खोंस दी जाती है। चांदी का वर्क सज्जा के लिए उपयोग किया जाता है। यह पाचक माना जाता है।

जलपान

जलपान के बारे में कुछ शब्द। चूंकि भारत एक अर्ध-ऊष्ण कटिबंधीय देश है, यहां पेय पदार्थों के बहुत से विकल्प हैं।

उत्तर भारत में 'लस्सी' सर्वाधिक प्रसिद्ध पेय है। मीठा या नमकीन मट्ठा ताजा बनाया जाता है। दक्षिण और पश्चिम में ताजा नारियल सर्वाधिक प्रसिद्ध पेय है। कॉफी-ठंडी या गर्म-संपूर्ण भारत में उपलब्ध है। चाय संपूर्ण भारत में प्रसिद्ध है।

संपूर्ण विश्व के भोजन प्रेमियों के लिए एक अवकाश के गंतव्य स्थान के रूप में भारत सही चयन है। क्योंकि भारतीय भोजन में न सिर्फ विविधता मसाले और सुगंध होती है यह समृद्ध और पौष्टिक होता है। इस देश की यात्रा तब तक पूर्ण नहीं होती जब तक कि भारतीय व्यंजनों के स्वाद न चख लिया जाए।

□□□

अध्याय-15

उत्तर प्रदेश के प्रमुख पर्यटन स्थल
(Major Tourism Destinations of Uttar Pradesh)

उत्तर प्रदेश के पास इतने आकर्षण हैं कि यहाँ सभी के लिये कुछ न कुछ हैं चाहे व्यक्ति धार्मिक प्रवृत्ति हो, या जिज्ञासु या अन्वेषक, या इतिहास या मात्र भ्रमणार्थी, उत्तर प्रदेश में सभी की पिपासा को शान्त करने के लिए कुछ न कुछ है। समृद्ध स्मारक, दिव्य स्थल, जल-क्रीड़ा स्थल, शौर्य स्थल एवं देव-स्थान सभी उत्तर प्रदेश में प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं।

उत्तर प्रदेश को दौ भौगोलिक भागों में बाँटा जा सकता है: केन्द्र में वृहद् गंगा का मैदान तथा दक्षिण में विन्ध्य पर्वत श्रंखला एवं पठारी क्षेत्र। साथ ही अनेकों नदियों के प्रदेश पर अपनी कृपा दृष्टि की है। इनमें से प्रमुख हैं गंगा, यमुना, रामगंगा, घाघरा एवं गोमती। गंगा तथा यमुना के प्रत्यक्ष एवं सरस्वती के अद्दर्श संगम स्थल पर तीर्थ राज प्रयाग स्थित है जिसकी महिमा जग विख्यात है।

प्रदेश के प्रमुख पर्यटक स्थलों का वर्णन निम्नवत् है :

प्रमुख स्थल

युगों की प्राचीन परम्परा के इस प्रदेश में बहुत से ऐसे स्थान है, जिनका धार्मिक महत्व है। बहुत से ऐसे स्थल भी हैं, जिन्हें तीर्थ नहीं कहा जा सकता, लेकिन ऐतिहासिक और पर्यटन की दृष्टि से उनका बड़ा महत्व है। हमारा प्रदेश ऐसे सांस्कृतिक केन्द्रों के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इसी प्रकार के कुछ स्थान इस प्रकार है :-

कनखल (जिला सहारनपुर) : मायापुर हेडवर्क से लगभग डेढ़ कि०मी० की दूरी पर एक बहुत बड़े क्षेत्र में यह नगर बसा हुआ है। नगर का मुख्य मन्दिर 'दक्षेश्वर महादेव' दक्षिण सीमा पर है। हनुमान जी का एक मन्दिर भी यहाँ है।

भीतरगाँव : कानपुर जिले की नरवल तहसील में कानपुर से लगभग 32 कि०मी० दक्षिण में स्थित है। यहाँ गुप्तकालीन एक महत्वपूर्ण मन्दिर मिला है। ईंट का बना हुआ यह मन्दिर उत्तरी भारत में गुप्तकालिक वास्तुकला का उत्तम उदाहरण माना जाता है।

प्रयाग (वर्तमान इलाहाबाद) : प्रयाग एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। प्रायः सभी धार्मिक ग्रन्थों में प्रयाग का उल्लेख मिलता है। यहाँ हर बारहवें वर्ष कुम्भ और हर छठे वर्ष अर्द्ध कुम्भ का मेला लगता है। भारद्वाज मुनि का आश्रम तथा प्राचीन अक्षयवट यहीं है। प्रयाग, गंगा और यमुना के संगम पर स्थित है और 'तीर्थराज' के नाम से प्रसिद्ध है। संगम पर एक किला है, जिसे अकबर ने बनवाया था।

अयोध्या (जिला फैजाबाद) : अयोध्या नगरी भारत की सप्तमहापुरियों में से एक है। इस नगरी को भगवान श्री राम का जन्म-स्थान होने का गौरव प्राप्त है। यह नगरी बहुत समय तक प्रसिद्ध इक्ष्वाकुवंशी राजाओं की राजधानी रही। इस नगरी में श्री राम, सीता और दशरथ से सम्बन्धित अनेक स्थान हैं।

सोरों (जिला एटा) : सोरों या शूकर क्षेत्र की गणना भारत के पवित्र तीर्थों में होती है। पौराणिक कथाओं के अनुसार सृष्टि के आदि में सर्वप्रथम पृथ्वी का आविर्भाव यहीं हुआ था। इस तीर्थ में वारह भगवान का एक अति प्राचीन दर्शनीय मन्दि है। इस मन्दिर में भगवान वराह की विशाल प्रतिमा स्थापित है और निकट ही हरिपदी पर वराह घाट है। शूकर क्षेत्र में प्राचीन काल से भगवान वराह की पुण्य स्मृति में मार्गशीर्ष का मेला लगता है।

वाराणसी (काशी) : यह भारत के ही नहीं, संसार के प्राचीनतम नगरों में से एक है। यह नाम वरूणा ओर अस्सी, दो नदियों से मिलकर बना है। वर्तमान काशी में दर्शनीय मन्दिर विश्वनाथ, अन्नपूर्णा, संकटमोचन, दुर्गा मन्दिर, तुलसी

मानस मन्दिर, विश्वविद्यालय का विश्वनाथ मन्दिर, आदि विश्वेश्वर, साक्षी विनायक और पंचरत्न आदि हैं। कुण्डों तथा वापियों में दुर्गा कुण्ड, पुष्कर कुण्ड, पिशाचमोचन, कपिलधारा, लोलार्क, मानसरोवर तथा मन्दाकिनी उल्लेखनीय हैं। यहाँ घाटों की संख्या बहुत है। इनमें अस्सी, तुलसी, हरिश्चन्द्र, अहिल्याबाई, दशाश्वमेघ तथा मणिकर्णिका आदि विशेष प्रसिद्ध हैं।

सारनाथ (जिला वाराणसी) : सारनाथ बौद्ध तीर्थों में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान रखता है। बोधगया में ज्ञान प्राप्ति के या सबसे पहले बुद्ध ने मृदाय (सारनाथ) में आकर अपना धर्मोपदेश किया था। खुदाई में अनेक प्राचीन विहारों ओर मन्दिरों के खण्डहर प्राप्त हुए हैं। यहाँ का पुरातत्व संग्रहालय भी दर्शनीय है।

देवबंद (जिला सहारनपुर) : मुजफ्फरनगर से 24 कि०मी० दूर देवबंद रेलवे स्टेशन है। यहाँ दुर्गा जी का मन्दिर है। मन्दिर के समीप देवीकुण्ड सरोवर है।

शाकम्भरी देवी : यह मन्दिर सहारनपुर से 41.6 कि०मी० है। शाकम्भरी देवी का मन्दिर चारों ओर पहाड़ियों से घिरा हुआ है। यहाँ नवरात्रि में मेला लगता है।

हस्तिनापुर (जिला मेरठ) : यह नगरी मेरठ से 35.5 कि०मी० दूर है। यह पाण्डवों की राजधानी थी। कार्तिक पूर्णिमा का यहाँ बड़ा मेला लगता है। यहाँ प्रसिद्ध जैन तीर्थ भी है। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव जी को राजा श्रेयांस ने यहीं इक्षुरस का दान दिया था। इसलिए इसे 'दानतीर्थ' कहा जाता है। यहाँ से पास ही भसूमा गाँव में प्राचीन गाँव में प्राचीन जैन प्रतिमाएँ है।

गढ़मुक्तेश्वर (जिला गाजियाबाद) : मेरठ से 42 कि०मी० दूर गंगा के दाहिने तट पर स्थिति गढ़मुक्तेश्वर प्राचीन काल में हस्तिनापुर नगर का एक मोहल्ला था। यहाँ मुक्तेश्वर शिव का मन्दिर है। मन्दिर के पास ही झारखण्डेश्वर नाम का प्राचीन शिवलिंग है। कार्तिक पूर्णिमा का यहाँ मेला लगता है।

शहीद मेलाः- हापुड़ (ग़ाजियाबाद) में भारत का प्रसिद्ध शहीद मेला प्रतिवर्ष 10 मई से प्रारम्भ होकर 5 जून तक मनाया जाता है। यह मेला लगभग एक माह तक चलता है।

श्रृंगीरामपुर : यह फर्रूखाबाद जिले में गंगा के दक्षिणी तट पर स्थित है। यहाँ श्रृंगी ऋषि का मन्दिर है। कार्तिक पूर्णिमा तथा दशहरा क़ो यहाँ मेला लगता है।

कालपी (जिला जालौन) : यहाँ व्यास टीला और नृसिंह टीला है। यहाँ के लोग मानते हैं कि यहाँ भगवान व्यास का आश्रम था और नृसिंह टीला पर ही प्रह्लाद की रक्षा के लिए नृसिंह भगवान प्रकट हुए थे।

श्रृंगवेरपुर (जिला इलाहाबाद) : इलाहाबाद से 48 कि०मी० दूर राम चौरा रोड स्टेशन से 3 मील की दूरी पर श्रंगवेरपुर है। यहीं पर भगवान राम ने वन जाते हुए निषादराज का आग्रह मानकर रात्रि में विश्राम किया था।

कौशाम्बी (जिला कौशाम्बी) : यह बौद्धों तथा जैनों का प्रसिद्ध तीर्थ है। यहाँ की खुदाई में बहुत प्राचीन मूर्तियाँ मिली है।

चुनार (जिला मिर्जापुर) : यहाँ के दुर्ग में आदि विक्रमादित्य का बनवाया हुआ भर्तृहरि का मन्दिर है। पास ही बल्लभ सम्प्रदाय का कूप मन्दिर है, जहाँ श्री बिट्ठलनाथ जी की गद्दी है।

विन्ध्याचल (जिला मिर्जापुर) : यहाँ विन्ध्यवासिनी देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है। नवरात्रि में यहाँ विशाल मेला लगता है।

लोधेश्वर : यह बाराबंकी जिले में हैं यहाँ लोधेश्वर जी का मन्दिर है।

देवीपाटन (जिला बलरामपुर) : यहाँ पाटेश्वरी देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है। कहा जाता है कि यहाँ पर देवी की स्थापना महाराज विक्रमादित्य ने की थी। यहाँ प्रतिवर्ष मेला लगता है।

मगहर (जिला बस्ती) : कबीरदास जी ने यहीं पर अपना नश्वर शरीर त्यागा था। संत कवि कबीर की समाधि और मजार, हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रतीक के रूप में यहीं स्थित है। उनके पुत्र कमाल की समाधि भी यहीं है। कबीर पंथियों का यह पवित्र तीर्थस्थल है।

भृगु मन्दिर (बलिया) : ब्रह्माजी के पुत्र भृगु के शिष्य दरदर मुनि की यह तपस्थली रही है। इन्हीं के नाम पर यहाँ भारत का विख्यात ददरी मेला कार्तिक पूर्णिमा के अवसर पर प्रतिवर्ष लगता है।

श्रावस्ती (जिला श्रावस्ती) : बलरामपुर सड़क मार्ग पर बहराइच मुख्यालय से लगभग 50 कि०मी० दूर श्रावस्ती स्थित है। पौराणिक कथाओं के अनुसार इसे सूर्यवंशी राजा श्रावस्त ने बनवाया था। बौद्ध ग्रन्थों में इसका वर्णन भारत के छः प्रमुख नगरों में किया गया है। यह नगरी जैन धर्म का भी महत्वपूर्ण केन्द्र रही है। यह कोशलराज की दूसरी राजधानी थी।

कुशीनगर (जिला कुशीनगर) : यह पडरौना से लगभग 19 कि०मी० दूर राजमार्ग 28 पर वर्तमान कसया नगर के पास स्थित है। प्रमुख बौद्ध स्थानों में इसकी गणना है। भगवान बुद्ध ने यहीं निर्वाण प्राप्त किया था। यहाँ खुदाई में एक प्राचीन निर्वाण स्तूप मिला है। कई गुप्तकालीन विहार और मन्दिर भी खुदाई से प्राप्त हुए हैं। सबसे अधिक् उल्लेखनीय मूर्ति बुद्ध की लेटी हुई विशाल प्रतिमा है। वर्तमान समय में इसके ऊपर धातु की पतली चादर मढ़ी हुई है। इस स्थान के समीप ही बुद्ध की साढ़े दस फुट ऊँची एक और प्रतिमा सुरक्षित है, जो मध्यकाल की है इसे माथाकुंअर कहते है। यह मूर्ति गया के काले पत्थर से बनी है। कुशीनगर का पुराना नाम वसेया था। बुद्ध पूर्णिमा से यहाँ पर मेला लगता है जो लगभग डेढ़ माह तक चलता है।

देवगढ़ : यह स्थान ललितपुर स्टेशन से लगभग 37 कि०मी० पश्चिम में स्थित है। यहाँ का दशावतार मन्दिर प्रसिद्ध है।

मथुरा : सप्त महापुरियों में इसकी गणना होती हैं इसका प्राचीन नाम मथुरा था वर्तमान मथुरा के समीप मधुवन में पहले मधु और उसके पुत्र लवण का शासन था। मधु के नाम पर मधुरी या मधुपुरी नगरी बंसी थी। श्रीराम के भाई शत्रुघ्न ने लवण को मारकर इस नगरी को नया रूप दिया था। चन्द्रवंश की यादव शाखा में श्रीकृष्ण का जन्म यहीं हुआ था। मथुरा में द्वारिकाधीश मन्दिर और विश्राम घाट के दर्शन के लिए लाखों यात्री प्रतिवर्ष यहाँ आते हैं।

वृन्दावन (जिला मथुरा) : वृन्दावन, मथुरा से 9.6 कि०मी० पर स्थित है। यहाँ करीब 4 हजार मन्दिर, घाट और सरोवर हैं। गोविन्द देव मन्दिर बड़ा भव्य और सुन्दर है। जयपुर के महाराज मानसिंह ने सन् 1590 में इसे बनवाया था। गोविन्द देव मन्दिर के सामने द्रविण शैली में निर्मित सफेद पत्थर का बना रंगनाथ का विशाल मन्दिर स्थित है। बिहारी जी का मन्दिर, राधाबल्लभ जी का मन्दिर, राधारमण जी का मन्दिर,, गोपीनाथ जी का मन्दिर, शाह जी का मन्दिर, अष्टसखी मन्दिर आदि वृन्दावन के प्रसिद्ध मन्दिर हैं। निविवंन और सेवाकुंज प्रसिद्ध वन स्थलियाँ हैं। वंशीवट, कालीदाह और केशघाट यमुना के प्रसिद्ध घाट हैं।

नन्दगाँव (जिला मथुरा) : मथुरा से 48 कि०मी० उत्तर-पूर्व में एक पहाड़ी की तलहटी में नन्दगाँव स्थिति है। नंद बाबा का घर जिस स्थान पर था, वहाँ पहाड़ी के ऊपरी भाग में एक विशाल मंदिर स्थित है। यह हिन्दुओं का एक पवित्र स्थल है।

गोवर्धन (जिला मथुरा) : गोवर्धन, मैदान से सौ फुट की ऊँचाई पर स्थित है। यह मथुरा से 23 कि०मी० दूर पड़ता है और मथुरा से डींग (भरतपुर) जाने वाली सड़क पर स्थित है। यहाँ के विशाल पक्के सरोवर (पवित्र मानसी गंगा) के पास हरिदेव का मनोहर मन्दिर है, जिसे अकबर के राज्यकाल में अम्बर के राजा भगवान दास ने बनवाया था।

बरसाना (जिला मथुरा) : बरसाना गांव गोवर्धन से 24 कि०मी० उत्तर में कोसी (आगरा-दिल्ली सड़क पर) के 16 कि०मी० दक्षिण में स्थित है। इसे भगवान कृष्ण की प्रिया राधाजी का जन्म-स्थान होने का गौरव प्राप्त है। बरसाना का मूल नाम ब्रह्मसारिणी था। यह एक पहाड़ी की ढाल पर स्थित है। पहाड़ी के चार प्रमुख शिखर चतुर्मुखी देवत्व के प्रतीक माने जाते हैं। और लाड़ली जी, जो राधाजी का स्थानीय नाम है, के सम्मान में निर्मित मंदिरों से सुशोभित है। यहाँ प्रतिवर्ष राधाष्टमी के अवसर पर मेला लगता है।

दाऊजी (जिला मथुरा) : दाऊजी मथुरा से लगभग 21 कि०मी० की दूरी पर है। नगर के मध्य में भगवान कृष्ण के बड़े भाई बालदाऊ (दाऊजी) का प्रसिद्ध मंदिर बना हुआ है। यहाँ वर्ष में दो मेले लगते हैं। इनमें एक भाद्रपद के शुक्ल पक्ष

की षष्ठी को लगता है, जिसे देवछठ कहते हैं तथा दूसरा अगहन की पूर्णिमा को लगता है।

बिठूर (जिला कानपुर) : कानपुर नगर से लगभग 24 कि०मी० उत्तर-पश्चिम में गंगा के किनारे बसा हुआ कानपुर जिले का यह स्थान ऐतिहासिक और धार्मिक, दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। इसका प्राचीन नाम ब्रह्मावर्त तीर्थ है। यहीं रामायण के रचयिता महर्षि बाल्मीकि का आश्रम बताया जाता है। कार्तिक पूर्णिमा के दिन यहाँ मेला लगता है।

चित्रकूट (जिला चित्रकूट धाम) : बाँदा से झाँसी-मानिकपुर रेलवे लाइन द्वारा चित्रकूट लगभग 80 कि०मी० दक्षिण-पूर्व में स्थित है। चित्रंकूट के पास मन्दाकिनी बहती है। वन जाते समय श्रीराम यहाँ ठहरे थे। जनश्रुति के अनुसार महर्षि बाल्मीकि भी यहाँ रहे थे। बहुत से पवित्र स्थल, छोटी-छोटी पहाड़ियाँ मन्दाकिनी के किनारे पाई जाती है। मन्दाकिनी, जिसे पयस्विनी भी कहते हैं, चित्रकूट के सुरम्य जंगलों से होकर बहती है, इस नदी के बांये तट पर कामतानाथ से लगभग 2.4 कि०मी. पर सीतापुर है, जहाँ नदी के किनारे-किनारे 24 घाट हैं। इनमें से राघव प्रयाग, कैलाश घाट, रामघाट और घृतकल्प घाट विशेष रूप से पवित्र माने जाते हैं। सीतापुर में अनेक प्राचीन मंदिर हैं। रामघाट के समीप स्थित पर्णकुटी के विषय में कहा जाता है कि राम ने यहाँ निवास किया था।

यहाँ से लगभग 3 कि०मी० की दूरी पर सती अनुसूया, अत्रि, दत्तात्रेय और हनुमान जी के मंदिर है। इसे मन्दरांचल कहते है। यहीं से मन्दाकिनी निकलती है।

सीतापुर से 3.30 कि०मी० की दूरी पर रमणीक जानकी कुण्ड है। यहाँ नदी की धरा श्वेत पत्थरों के ऊपर से होकर बहती है। जानकी कुण्ड से 3.2 कि०मी० पर स्फटिक शिला है। यहाँ दो बड़ी चट्टानें हैं। कहा जाता है कि राम, लक्ष्मण और सीता ने यहाँ पर विश्राम किया था।

चित्रकूट में भारत कूप भी है इसके सम्बन्ध में कथा यह है कि श्रीराम के राजतिलक हेतु सभी पवित्र नदियों से एकत्र जल को इस कुएं में डाला गया था।

जौनपुर : इसे 1359 में फिरोजशाह तुगलक ने बसाया था। यहाँ शर्की

शासकों द्वारा निर्मित मस्जिद और किला, अटाला मस्जिद, लाल दरवाजा और जामा मस्जिद आदि उल्लेखनीय हैं।

देवा शरीफ (ज़िला बाराबंकी) : बाराबंकी से लगभग 12 कि०मी० दूर स्थित देवा में प्रसिद्ध सूफी संत हाजी वारिस अली शाह की मजार है। उनके वार्षिक उर्स के अवसर पर कार्तिक में देवा में एक बड़ा मेला लगता है।

कलियर (जिला सहारनपुर) : रुड़की से कुछ दूर कलियर में शाह अलीउद्दीन साबिर, जो पीर-ए-कलियर के नाम से विख्यात है, की दरगाह है।

बहराइच : यहाँ सैयद सालार मसूद गाजी की दरगाह है। यह महमूद गजनवी के साथ भारत आया था।

राजापुर (जिला चित्रकूट धाम) : बाँदा से 99.2 कि०मी० और चित्रकूट से 38.4 कि०मी० की दूरी पर राजापुर नामक स्थान है। कहा जाता है कि महाकवि गोस्वामी तुलसीदास का जन्म यहीं हुआ था। यहाँ तुलसी स्मारक समिति की ओर से एक सुन्दर स्मारक का निर्माण किया गया है।

आगरा : देशी और विदेशी पर्यटक शाहजहाँ द्वारा अपनी पत्नी मुमताज महल की याद में सफेद संगमरमर से बनवायी गयी इस अत्यन्त सुन्दर इमारत और विश्व के आश्चर्य 'ताजमहल' को देखे बिना अपनी यात्रा पूरी नहीं समझते। मुगल स्थापत्य कला का सर्वोत्कृष्ट रूप हमें आगरा और उससे 40 कि०मी० दूर स्थित फतेहपुर सीकरी में देखने को मिलता है। आगरा का प्रसिद्ध किला और फतेहपुर सीकरी के महल अकबर के बनवाये हुए हैं। जहाँगीर के समय की इमारतों में आगरा के पास सिकन्दरा (अकबर का मकबरा) तथा एतमादुद्दौला का मकबरा उल्लेखनीय हैं।

किला, ताजमहल तथा अन्य ऐतिहासिक भवनों के अतिरिक्त आगरा में शिया संत काजी नूरुल्ला शास्त्री की मजार भी है, जो जहाँगीर के शासनकाल में ईरान से भारत आये थे। अतएव भारत ही नहीं, ईरान और इराक के मुसलमानों के लिए भी आगरा एक तीर्थ स्थान बन गया है।

फतेहपुर-सीकरी (जिला आगरा) : आगरा से 40 कि०मी० दूर स्थित इस स्थान पर प्रसिद्ध संत शेख सलीम चिश्ती का मकबरा है। यह मकबरा एक मस्जिद के प्रांगण में स्थित है और अकबर के शासनकाल में निर्मित हुआ था। शेख सलीम चिश्ती का हिन्दू और मुसलमान, दोनों की धर्मों ही धर्मो को मानने वालों के बीच समान आदर है।

लखनऊ : जनश्रुति है कि इस नगर को भगवान श्री राम के भाई लक्ष्मण ने बसाया था और इसका प्राचीन नाम लक्ष्मणपुरी था। यहाँ एक पुराना टीला है, जो लक्ष्मण टीला के नाम से प्रसिद्ध है। लखनऊ को सबसे अधिक प्रसिद्धि नवाबों के समय मिली। आसफुद्दौला ने रूमी दरवाजा और इमामबाड़ा बनवाया। आसफी मस्जिद, दौलतखाना, रेजीडेंसी, बिबियापुर कोठी और चौक बाजार का निर्माण भी आसुफद्दौला ने ही करवाया था। गाजीउद्दीन हैदर ने शाहनजफ, मोतीमहल, मुबारक मंजिल, सआदल अली और खुर्शीदजादी के मकबरे बनवाये। उसने नगर में दक्षिण में एक नहर भी बनवायी। मुहम्मद अली शाह ने हुसैनाबाद का इमामबाड़ा, बड़ी जामा मस्जिद, हुसैनाबाद बारादरी और इमारतें बनवायी। प्रसिद्ध छतर मंजिल का निर्माण नसीरूद्दीन हैदर ने करवाया, जिसमें अब सेंट्रल ड्रग रिसर्च इन्स्टीट्यूट स्थित है। स्वतंत्रता संग्राम सैनिकों के सम्मान में यहाँ बनवाया गया शहीद स्मारक, चिड़ियाघर और नेशनल बोटेनिकल गार्डेन भी दर्शनीय हैं।

यहाँ प्रसिद्ध मुस्लिम संत शाहमीना की मजार है। शाहमीना लगभग 500 वर्ष पूर्व दिवंगत हुए और मुस्लिम महीने 'रजब' के प्रथम गुरूवार को इनका वार्षिक उर्स मनाया जाता है। हिन्दू और मुसलमान, दोनों ही उनके भक्त हैं। बसन्त पंचमी को आयोजित 'बसन्त की नौचन्दी' में दोनों ही भाग लेते हैं।

गोला गोकर्णनाथ (जिला लखीमपुर खीरी) : त्रेतायुग में रावण की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान शिव ने रावण को लंका में शिवलिंग स्थापित करने का आदेश दिया था। शिवलिंग को भूमि पर रखना निषेध था। रावण ने मार्ग में शिवलिंग को एक भक्त के पास कुछ देर के लिए छोड़ा, लेकिन वह उसका भार सहन न कर सका और उसने उस शिवलिंग को भूमि पर रख दिया। शिवलिंग वहीं स्थापित हो गया। लौटकर रावण यह देखकर क्रोधित हुआ और लिंग को अंगूठे से

दबा दिया जो कान के आकार का हो गया। इसी आधार पर इस स्थान का नाम गोला गोकर्णनाथ पड़ा। यह स्थान लखीमपुर खीरी से लगभग 35 कि०मी० दूर है।

कम्पिल (जिला फर्रुखाबाद) : अपने अंतःस्थल में देश के लम्बे इतिहास की रहस्यपूर्ण रोचकता छिपाये यह छोटी सी भाव-मुग्धा नगरी अति प्राचीनकाल से आज तक दर्शन, धर्म और संस्कृति की मनोहर मंजूषा के रूप में विख्यात रही है। विष्णु पुराण, जातक, रामायण तथा उत्तराध्ययन सूत्र एवं अनेक ग्रन्थों व रिपोर्टों में इस नगरी का उल्लेख विभिन्न रूपों, प्रसंगों ओर परिवेशों में किया गया हैं पतित पावनी गंगा के दायें तट पर कायमगंज तहसील के कस्बे से 10 कि०मी० पश्चिम में सड़क द्वारा सम्बद्ध यह तीर्थ स्थान जैन धर्म के प्रवर्तक तेरहवें तीर्थकर भगवान विमलनाथ, महासती द्रौपदी तथा गुरू द्रोणाचार्य की जन्मस्थली है। द्रौपदी का स्वयंवर भी यहीं हुआ था।

हमारी अमूल्य सांस्कृतिक निधि के प्रमुख दिग्दर्शक, जो कम्पिल में विद्यमान हैं, उनका संक्षिप्त विवरण निम्नवत् हैः-

(i) मुगलघाट : द्रौपदी कुण्ड के समीप ही मुगल बादशाह औरंगजेब ने गंगा नदी के किनारे गुम्बदनुमा चार घाटों का निर्माण कराया था।

(ii) कपिल मुनि का आश्रम : यहाँ खुदाई करते समय एक गुफा मिली है, जिसमें कुछ मूर्तियाँ और पूजा-पाठ की सामग्री उपलब्ध हुई है।

(iii) रामेश्वरधाम मन्दिर : कहा जाता है कि भरत के छोटे भाई शत्रुघ्न ने भगवान राम द्वारा लंका से लाये शिवलिंग को, जिसकी पूजा सीता जी लंका निवास के समय अशोक वाटिका में प्रतिदिन करती थीं, इसी स्थान पर प्रतिष्ठित किया था।

(iv) जैन श्वेताम्बर मन्दिर : इस भव्य मन्दिर के मूल नायक भगवान विमलनाथ हैं जो मन्दिर में ऊँचे आसन पर विराजमान हैं। मंदिर के चारों कोनों पर चार कल्याणकों के स्मारक हैं।

(v) जैन दिगम्बर मन्दिर : इसमें भगवान विमलनाथ की मूल नायक प्रतिमा विद्यमान है। अनुमान है कि यह प्रतिमा कई सौ वर्ष पुरानी है।

(vi) भेदकुण्ड : कम्पिल ग्राम से 3 मील पूर्व में स्थित है। कहा जाता है कि अर्जुन ने इसी स्थान पर द्रौपदी के वरण हेतु मीन वेध किया था। हमारी संस्कृति के प्रतीक इन मंदिरों के अतिरिक्त कम्पिल में अनेक छोटे-छोटे मंदिर, खण्डहर, प्राचीन कुएं आदि हैं, जो पर्यटकों, तीर्थ-यात्रियों, शिल्पियों, शोध-छात्रों आदि के लिए आकर्षण और महत्व के केन्द्र हैं।

(vii) संकिस्सा : प्राचीन काल में इसे संकास्य कहते थे। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इसका उल्लेख 'कपित्थ' नाम से किया है। वर्तमान संकिस्सा जिला फर्रुखाबाद में हैं। इसके एक टीले पर जो पूर्व से पश्चिम तक 455 मीटर तथा उत्तर से दक्षिण तक 303 मीटर है, कतिपय भग्नावशेष हैं। बौद्ध मतावलम्बियों के अनुसार भगवान बुद्ध देवलोक से पृथ्वी पर यहाँ अवतरित हुए थे। यह स्थान हिन्दुओं के लिए भी पवित्र है। प्रतिवर्ष यहाँ 'श्रावणी' मेला लगता है।

कन्नौज : इस नगर और इस जनपद का प्राचीन नाम कान्यकुब्ज था। कन्नौज का महत्व सातवीं शती में अधिक बढ़ा, जब यहाँ सम्राट हर्षवर्धन का प्रभुत्व स्थापित हुआ। ह्वेनसांग ने इस नगर का हर्षकालिक विवरण लिखा है। उस समय कन्नौज में अनेक संघालय थे, जिनमें लगभग 10,000 भिक्षु रहा करते थे। इस नगर में दो सौ देव मंदिर भी थे जिनमें से अनेक शिव, विष्णु और देवी के मंदिर थे। यह नगर छठी शताब्दी ई०पू० से बारहवीं शताब्दी तक भारत की राजधानी रहा और उत्सवों की रंगस्थली था। पुरात्तव, कला और संस्कृति का केन्द्र कन्नौज अपने इत्र की सुवासित गंध के लिए भी प्रसिद्ध है। यहाँ हजारों वर्ष पुराने खण्डहर, मंदिर और मस्जिद पर्यटकों के आकर्षण के केन्द्र हैं। इनमें से कुछ हैं :-

(i) क्षेमकली देवी का मन्दिर : यह अब भी जिले के पूर्वी किनारे पर चबूतरे पर सुशोभित है। क्षेमकली देवी राजमहल की प्रमुख देवी थीं। इनका आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद ही कोई कार्य प्रारम्भ किया जाता था। इसी स्थान पर सम्राट जयचन्द्र की विशाल तोप रखी रहती थी।

(ii) पद्मावती सती मन्दिर : कन्नौज से 5 कि०मी० की दूरी पर दक्षिण-पश्चिम दिशा में देवरिया ताल के पूर्वी तट पर लाखन की रानी पद्मावती सती हुई थी। जिनकी पुण्य स्मृति में पद्मावती सती मंदिर बना हुआ है। सावन के महीनें में यहाँ एक मेले का आयोजन भी होता है।

(iii) जयचन्द्र के किले के अवशेष : राजा जयचन्द्र के किले के अवशेष यहाँ पाये जाते हैं।

(iv) राजा जयचन्द्र की सोलहद्वारी तथा बारहद्वारी : कन्नौज से 3 कि०मी० की दूरी पर यह वह स्थान है जहाँ आल्हा व ऊदल की कचहरी लगती थी। यहाँ आज भी प्राचीन भवनों के अवशेष उपलब्ध हैं। चिन्तामणि मंदिर, गौरीशंकर मंदिर, मकदूर जहानियाँ की मस्जिद, हाजी शरीफ मंदिर, अजयपाल, जामा मस्जिद, बालापीर, फूलवती देवी का मंदिर आदि दृष्टव्य हैं।

नैमिषारण्य (जिला सीतापुर) : पृथ्वी पर सत्य की स्थापना के लिए देवताओं ने यहीं पर वृत्रासुर के वध हेतु अस्त्र बनाने के लिए महर्षि दधीचि से प्रार्थना की थी। नैमिषारण्य आध्यात्मिक विकास का केन्द्र रहा है। यह अट्ठासी हजार ऋषियों की तपस्थली रही है। यहाँ तीस हजार तीर्थ स्थल हैं। कहा जाता है कि यहाँ पर साधना करने वाले की सिद्धि-प्राप्ति निश्चित है।

नैमिषारण्य में अनेक पुण्य तीर्थ हैं जिनकी यात्रा के लिए भारत के कोने-कोने से लाखों यात्री आते हैं। महर्षि दधीचि की पुण्य स्मृति में चौरासी कोस परिक्रमा फाल्गुन महीने की अमावस्या से प्रारम्भ होकर पूर्णिमा को मिश्रिख में समाप्त होती हैं। यहाँ के कुछ तीर्थ हैं :-

(i) चक्रतीर्थ : नैमिष के तीर्थो में चक्रतीर्थ सर्वोपरि है। इसके समान पृथ्वीतज पर दूसरा कोई तीर्थ नहीं है। प्रसिद्ध है कि ब्रह्मा जी की मानसिक शक्ति से निर्मित दिव्य चक्र के पृथ्वी पर गिरने से एक गोलाकार कुण्ड बन गया जो चक्रतीर्थ कहलाया।

(ii) व्यास गद्दी : चक्रतीर्थ के निकट व्यास गद्दी तीर्थ है, जहाँ व्यास ने वेद को चार भागों में विभाजित किया तथा पुराणों की रचना की थी।

(iii) सूत गद्दी : यहाँ सूत और शौनक सम्वाद हुआ था।

(iv) श्री ललिता देवी का मन्दिर : यह स्थान चक्रतीर्थ के निकट ही स्थिति है। कहते हैं कि ब्रह्मा जी के आदेश से यहाँ ललित नामक शक्ति ने

अवतरित होकर ब्रहाजी के चक्र की शिखा पकड़कर उसे स्तंभित कर दिया था। भक्तजनों में इस मंदिर का बहुत महत्व है।

(v) श्री हनुमान गढ़ी एवं पंचपाण्डव : यहाँ हनुमान जी की एक विशाल मूर्ति है। जनश्रुति के अनुसार हनुमान जी अहिरावण का वध कर श्री राम तथा लक्ष्मण को लेकर इसी स्थान पर पाताल तोड़कर प्रकट हुए थे। यहीं पर पाण्डवों ने अज्ञातवास के समय निवास किया था।

(vi) मिश्रिख : नैमिषारण्य से 10 किलोमीटर दूरी मिश्रिख स्थित है। कथा है कि यहाँ पर महर्षि दधीचि ने अपनी अस्थि दान करने के पूर्व समस्त तीर्थों के जल से स्नान किया था, जिससे इसका नाम मिश्रित अथवा मिश्रिख पड़ा। यहाँ महर्षि दधीचि आश्रम और सीताकुण्ड दर्शनीय हैं।

गोरखनाथ मंदिर (गोरखपुर) : जिस स्थान पर महायोगी गोरखनाथ जी ने खिचड़ी का प्रसाद बाँटा था और चमत्कार दिखाया था, उसी स्थान पर गोरखनाथ जी का मंदिर स्थापित है। इस नगर का नाम भी तभी से महायोगी के नाम से गोरखपुर पड़ा। महायोगी जी की यह तपस्थली है और नाथ सम्प्रदाय की सिद्ध पीठ है।

शुक्रताल (जिला-मुजफ्फरनगर) : यहाँ वट वृक्ष के नीचे बैठकर महर्षि शुक्राचार्य जी ने राजा परीक्षित को महाभारत की कथा सुनाई थी। कार्तिक में पूर्णमासी व एकादशी पर हजारों भक्त दर्शन के लिए यहाँ आते हैं। प्रायः प्रत्येक मास में भागवत सप्ताह का आयोजन होता है। यहाँ अनेक धर्मो के अनुयायियों के मन्दिर हैं।

भरत कुण्ड (जिला फैजाबाद) : फैजाबाद से 25 कि०मी० दूर नन्दिग्राम के नाम से यह स्थान प्रसिद्ध है। यहाँ पर भरत जी ने श्री रामचन्द्र जी के वनवास की अवधि 14 वर्ष तक तपस्या की थी।

किछौछा (जिला फैजाबाद) : यहाँ मुस्लिम संत सैयद महमूद शाह अशरफ जहाँगीर की दरगाह है।

बांगरमऊ (जिला उन्नाव) : यह जिला उन्नाव में एक छोटा कस्बा है। इसकी प्रसिद्धि का कारण यहाँ स्थित राजराजेश्वरी श्री विद्या का मन्दिर है। इसमें जगदम्बा की एक बड़ी सुन्दर प्रतिमा है, जो अष्ट धातुओं के मिश्रण से बनी है। मन्दिर कुण्डलिनी-योग विचारधारा पर आधारित है तथा स्थापत्य कला की दृष्टि से विशिष्ट महत्व का है।

बांसा (जिला बाराबंकी) : बाराबंकी से लगभग 16 कि०मी० दूर स्थित मुसलमानों के लिए सुप्रसिद्ध सूफी संत सैयद शाह अब्दुल रज्जाक की दरगाह के कारण एक तीर्थ स्थान बन गया।

बाराबंकी : लखनऊ से लगभग सत्ताइस किलोमीटर की दूरी पर जनपद बाराबंकी है, जहाँ महादेवा, किन्तूर, कोटवाधाम आदि प्रसिद्ध तीर्थ स्थान हैं। यहाँ महादेव की स्थापना, कहा जाता है कि स्वयं महाराजा युधिष्ठिर ने की थी। किन्तूर ग्राम में महारानी कुन्ती द्वारा स्थापित कुन्तेश्वर मन्दिर है। इसी जनपद के ग्राम बदोसराय में हिन्दू-मुस्लिम एकता की प्रतीक सलामत शाह की मजार है।

निम्नलिखित तालिका में ऐसे मेलों के नाम दिये गये हैं, जिनमें एक लाख या उससे अधिक लोग एकत्र होते हैं:-

मेलों के नाम	स्थान, जहाँ मेले लगते हैं	तिथि	अनुमानित भीड़
1. कार्तिक	बिजनौर, खीरी झल्लू वि० खण्ड	कार्तिक सुदी	15,00,000
2. कार्तिक	मुरादाबाद, गजरौला वि० खण्ड (टिगरी)	कार्तिक सुदी	3,00,000
3. कार्तिक	बदायूं, कादरचौर वि० खण्ड (काकोरा)	कार्तिक सुदी	1,00,000
4. कार्तिक	बरेली, कैरा वि० खण्ड (चौबारी)	कार्तिक सुदी	2,00,000
5. कार्तिक	मुजफ्फरनगर, मौराना वि० खण्ड (शुक्रताल)	कार्तिक सुदी	1,00,000
6. कार्तिक	गढ़मुक्तेश्वर, टाउन एरिया (मेरठ)	कार्तिक सुदी	3,00,000
7. कार्तिक	बुलन्दशहर (अनूपशहर)	कार्तिक सुदी	1,50,000
8. कार्तिक	उन्नाव, सिकन्दरपुर, सरौनी वि०खण्ड (गंगाघाट)	कार्तिक सुदी	1,00,000
9. कार्तिक	फैजाबाद, मायाबाजार वि० खण्ड		

	(अयोध्या)	कार्तिक सुदी	4,00,000
10.	कार्तिक बलिया म्यूनिसिपिल बोर्ड (ददरी)	कार्तिक सुदी	4,00,000
11.	कार्तिक शिवरात्री रामपुर, मिलक वि० खण्ड (रथेंदा)	फाल्गुन बदी	1,31,00,000
12.	कार्तिक नगर महापालिका, वाराणसी		
	(क) विश्वनाथ मंदिर	फाल्गुन बदी	1,00,000
	(ख) दशाश्वमेघ	फाल्गुन बदी	1,00,000
	(ग) अन्नपूर्णा मन्दिर	फाल्गुन बदी	1,00,000
13.	टपकेश्वर सिद्ध, देहरादून, सहसपुर वि० खण्ड (गढ़ी)	फाल्गुन बदी	1,00,000
14.	अन्नकूट नगर महापालिका, वाराणसी		
	(क) विश्वनाथ मन्दिर	कार्तिक सुदी-I	1,00,000
	(ख) अन्नपूर्णा मन्दिर	कार्तिक सुदी-II	1,00,000
15.	रंगभरी एकादशी नगर महापालिका वाराणसी, विश्वनाथ मन्दिर	फाल्गुन वदी-II	1,00,000
16.	परिक्रमा मिश्रिख और नीमसार नगरपालिका सीतापुर	फाल्गुन वदी-II	1,00,000
17.	माघ संक्रांति, नगर महापालिका, इलाहाबाद	माघ	6,00,000
18.	दशहरा नगर महापालिका, इलाहाबाद	क्वार	3,00,000
19.	रामनवमी, फैजाबाद अयोध्या नगर पालिका (अयोध्या)	चैतसुदी-9	4,00,000
20.	रामलीला, नगर महापालिका, वाराणसी (नाटी इमली)	आश्विन	1,50,000
21.	नक-कटैया नगर महापालिका, वाराणसी (चेतगंज)	(तिथि अनिश्चित)	2,00,000
22.	देवी पाटन, बलरामपुर तहसील (तुलसीपुर)	चैत्र सुदी 1-15	1,00,000
23.	महावीर जी नगर महापालिका का मेला लखनऊ (अलीगंज)	ज्येष्ठ का पहला मंगलवार	1,00,000
24.	जन्माष्टमी नगरपालिका (मथुरा)	भाद्र बदी-8	1,00,000
25.	शाकम्भरी देवी सहारनपुर, संधोली कदर वि० खण्ड, इन्द्रपुर भवन	अश्विन सुदी-14	1,00,000

26.	गोविन्द साहब आजमगढ़ अतरौलिया का मेला वि० खण्ड (अमारी) सुदी 10	अग्रहायण	2,00,000
27.	सैयद सालार नगरपालिका, बहराइच	ज्येष्ठ का पहला रविवार	1,00,000
28.	उर्स मुरादाबाद, हसनपुर वि० खण्ड	अषाढ़	1,00,000
29.	झण्डा मेला नगरपालिका, देहरादून	चैत्र बदी-5	1,00,000
30.	पशु मेला नगरपालिका, इटावा एवं प्रदर्शनी	कार्तिका या अग्रहायण	1,00,000

वाराणसी नगर महापालिका में फातमा (चेतगंज) में लगभग 1,00,000 आदमी मुहर्रम दसवें दिन एकत्र होते हैं।

प्रति बारहवें और छठे वर्ष कुम्भ एवं अर्द्धकुम्भ में मेला इलाहाबाद तथा हरिद्वार में लगता है। इनमें बहुत विशाल संख्या में लोग आते हैं।

सूर्य एवं चन्द्र-ग्रहण के अवसरों में गंगा स्नान के लिए भी बहुत बड़ी संख्या में लाग वाराणसी एवं अन्य तीर्थ स्थानों पर एकत्र होते हैं।

राज्य में विभिन्न सम्प्रदायों के लोगों द्वारा लगभग 40 त्योहार मनाये जाते हैं। हिन्दुओं द्वारा मनाये जाने वाले प्रमुख त्योहार हैं :- अष्टमी, रक्षा बन्धन, बैशाखी-पूर्णिमा, बरगदी अमावस्या, ज्येष्ठ दशहरा, गुरू पूर्णिमा, नाग पंचमी, हलषष्ठी, कृष्ण जन्माष्टमी, हरतालिका तीज, गणेश चतुर्थी अनन्त चतुर्दशी, पितृ विसर्जन अमावस्या, दुर्गा-नवमी, दशहरा, करवा चौथ, दीपावली, गोवर्धन पूजा, भैया दूज, देवोत्थानी, एकादशी, कार्तिक पूर्णिमा, शकट चौथ, मकर संक्रान्ति, बसन्त पुचमी, शिवरात्रि और होली।

बौद्ध बुद्ध पूर्णिमा, जैन महावीर जयन्ती तथा सिख गुरू नानक जन्मदिवस मनाते हैं। इन त्यौहारों में हिन्दू भी बड़ी संख्या में भाग लेते हैं।

मुसलमानों के प्रमुख त्यौहार हैं- रमजान, ईदुज्जुहा, मोहर्रम, ईदुलफितर, बारावफात और शब-ए-बारात। ईसाइयों के मुख्य पर्व हैं- नववर्ष दिवस, गुड-फ्राईडे, ईस्टर और क्रिसमस।

पर्यटन उत्सवों पर लगने वाले मेले

	स्थान	उत्सव
1.	लखनऊ	लखनऊ महोत्सव
2.	वाराणसी	वाराणसी पर्यटन उत्सव
3.	इलाहाबाद	इलाहाबाद पर्यटन उत्सव
4.	आगरा	आगरा पर्यटन उत्सव
5.	मथुरा	होलिकोत्सव
6.	अयोध्या	परिक्रमा मेला
7.	देवा (बाराबंकी)	देवा मेला
8.	मगहर (बस्ती)	कबीर मेला
9.	कम्पिल	कम्पिल पर्यटनोत्सव
10.	कन्नौज	पर्यटनोत्सव
11.	चित्रकूट	रामायण मेला

प्रमुख मस्जिदें

आगरा : जवाब मस्जिद जो कि ताजमहल परिसर में स्थित है जो कि लाल पत्थरों से बनी है तथा अपनी सुन्दरता के लिए विख्यात है। चूँकि यह मस्जिद पूर्वोन्मुखी है अतः इसमें नमाज नहीं पढ़ी जाती।

मोती मस्जिद एक सफेद संगमरमर की संरचना है जिसे शाहजहाँ ने अपने पारिवारिक सदस्यों तथा दरबारियों के लिए बनवाया था।

जहाँआरा मस्जिद किले के अन्दर स्थिति है तथा इसे 16548 में शाहजहाँ की पुत्री ने बनवाया था।

अलीगढ़ : मोती मस्जिद जो कि बिल्लौरी पत्थरों तथा बालू से बनी है, यहाँ की प्राचीनतम मस्जिदों में से है। यह एक तालाब के किनारे स्थित है। कहते हैं किसी समय यह मोती की तरह चमकती थी।

जामा मस्जिद को यहाँ के गवर्नर साबित खान द्वारा बनवाया गया था जिसे आज भी प्रयोग में लाया जाता है।

फतेहपुर सीकरी :- यहाँ पर अकबर ने 1571 में एक जामा मस्जिद बनवाई थी। इस अत्यन्त पवित्र मस्जिद में हर ओर सुन्दर छातों को अभिशिल्पित किया गया है।

जौनपुर : जहाँगीरी मस्जिद, तथा जामा मस्जिद यहाँ की प्रसिद्ध मस्जिदें हैं। इसके अतिरिक्त लाल दरवाजा मस्जिद तथा अटाला मस्जिद, जिसमें सामने की ओर एक विशाल किले जैसा दरवाजा बना है, यहाँ की अन्य विख्यात मस्जिदें हैं।

लखनऊ : वलीशाह मस्जिद को अवध के नवाब की बेगम की याद में बनवाया गया था।

आसिफुद्दौला मस्जिद बड़ा इमामबाड़ा परिसर में स्थित है, तथा अपनी प्रभावशाली संरचना के लिए प्रसिद्ध है।

मथुरा : यहाँ कुष्णदेव मन्दिर को ध्वस्त कर 1019 में महमूद गजनवी द्वारा भारत पर अपनी विजय की खुशी में जामा मस्जिद का निर्माण करवाया गया। ऊँचाई पर निर्मित इस मस्जिद को पूरे शहर में कहीं से भी देखा जा सकता है।

मिर्जापुर : 1663 में औरंगजेब के गवर्नर बहराम खान द्वारा यहाँ पर चुनार मस्जिद का निर्माण करवाया गया।

वाराणसी : औरंगजेब द्वारा अनेकों मन्दिरों को ध्वस्त करके ज्ञानवापी मस्जिद का निर्माण करवाया गया। यह एक विवादित स्थल है।

प्रमुख गिरजाघर :

सेन्ट जॉन्स चर्च : मेरठ छावनी क्षेत्र में स्थित यह गिरजाघर 1822 में बनकर पूरा हुआ। इस गिरजाघर में 15000 लोगों के बैठने का स्थान है। 1857 के स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान इस स्थान पर ब्रिटिस फौज एवं क्रान्तिकारियों के मध्य भयंकर संघर्ष हुआ। यह उत्तरी भारत का सबसे पुराना गिरजाघर है।

सरधना : मेरठ से 19 किमी उत्तर-पश्चिम में स्थित सरधना एक रूमानी तथा ऐतिहासिक रूप से प्रसिद्ध स्थान है 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में एक फ्रांसीसी

साहसिक यात्री वॉल्टर रेनहार्ट भारत आया तथा शीघ्र ही 'समरू' के नाम से लोकप्रिय हो गया। उसे सरधना दिल्ली के नजफ़ ख़ान ने उकी सेनाओं समर्थन करने के एवज में 1773 में भेंट किया तथा इस प्रकार सरधना प्रिंसिपैलिटी का औपचारिक रूप से गठन हुआ। 1778 में उसकी मृत्यु के बाद उसकी विधवा बेग़म समरू, जिसने रोमन कैथोलिक धर्म अपना लिया था, ने सत्ता संभाली।

बेगम समरू ने सरधना में एक शानदार रोमन कैथोलिक चर्च बनवाया जिसमें विभिन्न वास्तुकलाओं का सुन्दर मिश्रण है। इटली के वास्तुकार एन्टनी रेगेलिनी द्वारा अभिकल्पित इस गिरजाघर को बनाने में 1822 में 4 लाख रुपये खर्च हुये थे जो कि उस समय एक बहुत बड़ी धनराशि थी। इसके निकट दो विशाल झीलें हैं जो इस स्थान् को और भी अधिक सौन्दर्य प्रदान करती हैं। यह गिरजाघर 1957 में लेडी ऑफ ग्रेसेस की पवित्र प्रतिमूर्ति की स्थापना के बाद और भी अधिक प्रसिद्ध हुआ। इसके सम्मान में 1961 में और भी वृद्धि हुई जब पोप जॉन 23 ने इसे 'माइनर बैसेलिका' का स्तर प्रदान किया।

इलाहाबाद

होली ट्रिनिटी चर्च (1839) : लेफ्टिनेन्ट शार्प तथा वास्तुकार मेजर स्मिथ द्वारा 1839 में निर्मित यह गिरजाघर इलाहाबाद का पहला गिरजाघर था। यह लन्दन स्थित सेन्ट मार्टिन-इन-द-फील्डस की प्रतिकृति था। इसका प्रतिष्ठा 19 फरवरी 1841 को कलकत्ता के पाँचवें बिशप डेविड विल्सन ने की तथा इसे उक्त नाम दिया।

जमुना चर्च (1847) : जॉन फ्रीमेन जो कि इलाहाबाद आने वाले पहले अमेरिकी पादरियों में से थे, ने इस गिरजाघर का निर्माण करवाया। यह गिरजाघर 19वीं शताब्दी के पहले चतुर्थांश में प्रचलित औपनिवेशिक वास्तुकला का प्रतिनिधित्व करता है।

ऑल सेन्टस कैथिड्रल (1870) : 1870 के दशक में विलियम इमर्सन द्वारा अभिकल्पित यह गिरजाघर 1887 में प्रतिकल्पित किंया गया। इसे एशिया का सर्वोत्कृष्ट एंग्लिकन कैथिड्रल कहा जाता है।

सेन्ट पीटर्स चर्च (1874) : म्यूराबाद स्थित यह गिरजाघर 1874 में बनवाया गया।

सेन्ट जोसेफस रोमन कैथोलिक कैथिड्रल (1879) : एल्फ्रेड पार्क के पश्चिमी कोने पर एडमोन्सटोन रोड तथ थार्नहिल रोड के मध्य स्थित इतालवी वास्तुकला में बना यह गिरजाघर 1879 में बनवाया गया।

आगरा सेन्ट ज्यॉर्जेस चर्च : आगरा का छावनी क्षेत्र सामान्य ग्रिड-आधार पर बना हुआ है तथा सेन्ट ज्यॉर्जेस चर्च विशिष्ट छावनी गिरजाघर ही है। कर्नल जे. टी. बुआलो 1826 में अभिकल्पित यह गिरजाघर गेरू मिटटी पर श्वेत अत्मंकरण से सजा हुआ है।

गोरखपुर

सेन्ट जोसेफ्स कैथोलिक चर्च : 1860 में निर्मित यह कैथोलिक कत का गिरजाघर गोरखपुर के सिविल लाइन्स क्षेत्र में स्थित है। यह उत्तर प्रदेश का पाँचवा सबसे पुराना गिरजा घर है।

कानपुर

कानपुर मेमोरियल चर्च अथवा ऑल सोल्स कैथिड्रल : 1875 में दो लाख रूपये की कीमत से बना यह गिरजाघर वॉल्टर एल.बी.ग्रान्वीय द्वारा अभिकल्पित किया गया था। इसका संगमर का फर्श महाराजा जयपुर द्वारा भेंट किया गया था।

वाराणसी

सेन्टमेरीज चर्च : छावनी क्षेत्र में निर्मित इस गिरजाघर में एक नीची बुर्जी मीनार तथा उभरा हुआ पोर्टिको है। इसमें खिड़कियों के स्थान पर धूम्ररन्ध युक्त दरवाजे हैं तथा कार्निश के नीचे भी धूम्ररन्ध हैं। यह विख्यात गिरजाघर इसाई मतावलम्बियों के लिए श्रद्धा तथा विनय का स्थल है।

प्रमुख किले

- **अकबर का किला :** इलाहाबाद में संगम के तट पर स्थित यह किला 1584 में अकबर ने बनवाया था। इस किले के परिसर में अशोक का एक स्तम्भ भी है जिसका अकबर ने पुनरूद्धार करवाया था।

❊ बरुआसागर किला : ओरछा के शासकों ने झांसी के निकट बरूआसागर में यह किला 1785 में बनवाया था। इस किले में चंदेलों के दो टूटे-फूटे मन्दिर हैं। 1857 की लड़ाई में ताँत्या टोपे को ब्रिटिश सेना ने इसी किले में हराया था।

❊ चुनार किला : गंगा तथा घाघरा के संगम स्थल पर मिर्जापुर में यह किला सम्राट विक्रमादित्य ने बनवाया था। यह किला जहाँपर एक 'तुर्की बाथटब' भी है अपनी प्राच्य वास्तुकला के लिए विख्यात है।

❊ **देवगढ़ किला** : गुप्तकाल का 1400 वर्ष पुराना यह किला ललितपुर में स्थित है। इसके परिसर में लगभग 30 मन्दिर हैं। यह किला अपनी पत्थर की शिल्प कला के लिए विख्यात है।

❊ **फतेहपुर सीकरी का किला** : आगरा के निकट फतेहपुर सीकरी में यह किला अकबर ने 1574 में शेखसलीम चिश्ती से प्रभावित होकर बनवाया था। इस किले में शेख सलीम चिश्ती की दरगाह भी है।

❊ **झाँसी का किला** : यह किला 17वीं शताब्दी में राजा वीर सिंह जू देव द्वारा बानवाया गया था। इस किले को रानी झाँसी ने भी अपने निवास की तरह प्रयुक्त किया उन्होंने ब्रिटिश सेना के साथ यहीं पर संघर्ष किया था।

❊ **कालाकांकर का किला** : राजा तेज सिंह ने यह किला प्रतापगढ़ के पास गंगा नदी के तट पर 1628 में बनवाया था। उनके परिवार के सदस्य अभी भी वहीं निवास करते हैं।

❊ **कालिंजर का किला** : चंदेला वास्तुकला का विशिष्ट नमूना यह किला अपने एक महल, एक मन्दिर, एक मस्जिद तथा कुछ जलक्षेत्र हैं। 1000 फीट की ऊँचाई पर स्थित इस किले की वास्तुकला में यत्र खुजराहो का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

❊ **कंस का किला** : मथुरा स्थित प्राचीनतम काल के इस किले का राजा मानसिंह ने पुनरूद्धार करवाया। कालांतर में सवाई जयसिंह ने यहाँ पर एक वेद्यशाला बनवाई।

❊ **लाल किला :** दिल्ली के लाल किले की प्रतिकृति बनवाने के लिये अकबर ने आगरा में यह किला 1564 में बनवाया। इसके परिसर में प्रसिद्ध मोती मस्जिद भी है।

❊ **मुबारक किला :** यह किला अवध के शासक सआदत अली खाँ द्वारा फैजाबाद में बनवाया जो कि उस समय अवध की राजधानी थी। लक्ष्मण घाट के पास स्थित इस किले में दो महल तथा बानो बेगम का मकबरा है।

❊ **रामनगर किला :** यह दन कुछ किलों में से एक है जहाँ अभी भी लोग रहते है। इस किले को राजा बलवन्त सिंह ने 1750 में वाराणसी में बनवाया। इसमें एक विशिष्ट म्यूज़ियम भी है।

❊ **पाण्डव किला :** बरनवा (मेरठ) में स्थित उस किले को महाभारत काल का माना जाता है। इस किले में प्राचीन मूर्तियाँ तथा एक लम्बी सुरंग है। जनश्रुति के अनुसार पाण्डव इसी सुरंग से निकल भागे थे।

❊ **सारकी किला :** इस किले को 14 वीं शताब्दी में सार की शासकों ने जौनपुर में बनवाया था। यह किला मात्र पत्थरों और बालू से बना है।

□□□

मनोज दीक्षित
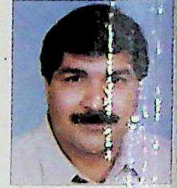
निशीथ राय

डा०मनोज दीक्षित : जन्म १९६१।१९८८ से एक शोधार्थी के रूप में पर्यटन से जुड़े। १९८९ से लोक प्रशासन विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रवक्ता के रूप में कार्यरत। १९९२ से प्रदेश के विभिन्न पर्यटन संस्थानों बाह्य विशेषज्ञ के रूप के रुप में अध्यापन। १९९७ से पर्यटन अध्ययन संस्थान, लखनऊ विश्वविद्यालय में समन्वयक के रूप में कार्यरत। विभिन्न शोधपत्रिकाओं एवं पुस्तकों में दो दर्जन से भी अधिक शोध-पत्र प्रकाशित।

प्रकाशित पुस्तकें :

(1) नेपाल : संस्कृति एवं पर्यटन (सम्पादित)

(2) नेपाल : एक चित्रावलोकन (सम्पादित)

(3) Tourism Products

(4) Dimensions of Indian Tourism.

शीघ्र प्रकाश्य :

(1) Public Administration.

(2) Adventure Tourism.

(3) ABC of Tourism.

डा० निशीथ राय : जन्म-1 अक्टूबर 1963 (इलाहाबाद)। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राचीन भारतीय इतिहास में स्नातकोत्तर तथा पी० एच० डी०। लखनऊ विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग में रीडर, एवं पर्यटन अध्ययन संस्थान लखनऊ विश्वविद्यालय में निदेशक के पद पर कार्यरत। अनेक शोध पत्रों के साथ ही तीन पुस्तकों का स्वतंत्र लेखन तथा दो पुस्तकों का सम्पादन।

शीघ्र प्रकाश्य :

Anthropology and Tourism (सम्पादन)

आई. एस. बी. एन. - 81-85936-31-5

मूल्य - 595/ रुपये